चन्द्रापीडकथा

(उत्तरार्द्धभागः)

महाकवि बाणभट्ट : जीवनवृत्त एवं कर्तृत्व

संस्कृत गद्यसाहित्य के स्वर्णयुग के तीन (3) उल्लेखनीय कवियों में आचार्य दण्डी, सुबन्धु एवं बाणभट्ट हैं। इनमें बाणभट्ट संस्कृत साहित्य के प्रतिष्ठित गद्यकार एवं कवि हैं। संस्कृत साहित्य के कवियों की प्रवृत्ति के विपरीत बाणभट्ट ने स्वयं अपने विषय में 'हर्षचरित' के आरम्भिक उच्छ्वासों में तथा 'कादम्बरी' के मङ्गलपद्यों में विस्तार से लिखा है। इसके आधार पर बाणभट्ट के पूर्वज कान्यकुब्ज प्रदेश में शोण नदी के तट पर प्रीतिकूट नगर में निवास करते थे। बाणभट्ट के प्रथम उल्लिखित पूर्वज वत्स थे, जो अक्षमाला के पुत्र तथा सरस्वती और दधीचि के पुत्र सारस्वत के चचेरे भाई थे। बाण का वंश प्राचीन समय से धर्म व विद्या के लिए प्रसिद्ध था। इनके एक पूर्वज का नाम कुबेर था। बाण के पिता का नाम चित्रभानु तथा माता का नाम राजदेवी था। बाल्यकाल में ही इनकी माता का निधन हो गया तथा चौदह वर्ष की किशोरावस्था में ही पिता का भी स्वर्गवास हो गया। अपार पैतृक सम्पत्ति प्राप्त होने से बाण स्वच्छन्द हो गये, और मित्रों के साथ देशाटन पर निकल गये। भ्रमण के दौरान वे राजदरबारों तथा गुरुकुलों में भी गये। विद्वानों के मध्य रहते हुए उनकी प्रकृति बदल गयी और परिपक्व बुद्धि, उदात्त विचार, सांसारिक अनुभवों के साथ घर लौटे। बाणभट्ट के गुरु का नाम भर्वु, भत्सु अथवा भर्त्स प्राप्त होता है। वे शिव के उपासक थे। सम्राट हर्ष ने उन्हें **'वश्यवाणीकविचक्रवर्ती'** की उपाधि से विभूषित किया है।

स्थितिकाल–बाण थानेश्वर और कन्नौज के राजा हर्ष के समकालिक व सभाकवि थे। उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर हर्ष का राज्याभिषेक 606 ई. व मृत्यु 648 ई. में हुई। साथ ही ह्वेनसांग के संस्मरणों के आधार पर भी बाण का समय सातवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध सिद्ध होता है।

रचनाएँ–मुख्य रूप से बाणभट्ट की 2 रचनाएँ हैं–

1. हर्षचरित
2. कादम्बरी।

इनके नाम से 3 अन्य ग्रन्थ भी माने जाते हैं –

1. चण्डीशतक
2. मुकुटताडितक
3. पार्वती परिणय

1. हर्षचरित–यह आठ उच्छ्वासों में लिखी हुई आख्यायिका है। प्रथम ढाई उच्छ्वासों में बाण की आत्मकथा एवं शेष में महाराज प्रभाकरवर्धन से लेकर चिता में जलने को उद्यत राज्यश्री को हर्ष द्वारा बचाने तक का वर्णन है।

2. कादम्बरी– यह सम्पूर्ण संस्कृतगद्य-साहित्य की सर्वोत्कृष्ट रचना है। इसमें एक काल्पनिक कथा वर्णित है। इसके दो भाग हैं– पूर्वभाग तथा उत्तरभाग। पूर्वभाग को बाणभट्ट की तथा उत्तरभाग को उनके पुत्र भूषणभट्ट (पुलिनभट्ट) की रचना मानी जाती है। भाव-भाषा-शैली-अलङ्कार आदि सभी दृष्टियों से कादम्बरी एक उत्कृष्ट रचना है, तभी तो इसके लिए कहा जाता है कि कादम्बरी के रसज्ञों को भोजन भी अच्छा नहीं लगता–

''कादम्बरीरसज्ञानामाहारोऽपि न रोचते।'' इससे अतिरिक्त अन्य उक्ति भी प्रचलित है– **कादम्बरी रसभरेण समस्त एव मत्तो न किञ्चिदपि चेतयते जनोऽयम्।**

3. पार्वतीपरिणय–यह पाँच अङ्कों में निबद्ध एक नाटक है, जिसमें भगवान् शिव व पार्वती का विवाह वर्णित है।

4. चण्डीशतक–नाम से ही स्पष्ट है कि इसमें 100 पद्यों में भगवती चण्डिका की स्तुति की गयी है। यह स्रग्धरा छन्द में निबद्ध स्तोत्रकाव्य है।

5. मुकुटताडितक–यह भी एक नाटक है, किन्तु अप्राप्त है। आचार्य बलदेव उपाध्याय ने इसे महाभारत के कथानक पर आधृत बताया है जिसमें भीम दुर्योधन को मारकर उसका मुकुट तोड़ डालते हैं।

बाण की गद्यशैली

बाण गद्यकाव्य के क्षेत्र में शीर्ष पर हैं। पद्य की अपेक्षा गद्य लेखन कठिन और दुरूह होता है, इसलिए कहा जाता है– **''गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति''** अर्थात् गद्य कवियों की कसौटी है। बाण के समय में संस्कृत साहित्य की दोनों विधाओं गद्य तथा पद्य में प्रभूत सृजनकार्य चल रहा था। गद्य के प्रतिनिधि कवि दण्डी, सुबन्धु और बाणभट्ट हैं। लम्बे–लम्बे समास, कठिन पदबन्ध, कठोर वर्णों का प्रयोग– गौडी रीति की विशेषता है। दूसरी ओर प्रसाद–माधुर्य गुण युक्त वैदर्भी रीति थी, जिसमें सरल–सहज भाषा के माध्यम से भावों को प्रस्तुत किया जाता था। बाण दोनों ही शैलियों से प्रभावित थे, अतः इनकी शैली को 'पाञ्चाली रीति' नाम दिया गया है जो गौडी व वैदर्भी दोनों का मिश्रण है। बाण जिस सहजता से दीर्घ समास व क्लिष्ट रचना करने में समर्थ हैं, उसी सहजता से मधुर भावों की अभिव्यक्ति में छोटे–छोटे वाक्यों के प्रयोग में भी निष्णात हैं। पाञ्चाली रीति में भाव और भाषा का अद्भुत समन्वय देखने को मिलता है। बाण के काव्य में गद्य के तीन रूप मिलते हैं–

1. **उत्कलिका**–लम्बे समस्तपद का प्रयोग कर दृश्य का वर्णन किया जाता है।
2. **चूर्णक**–अल्पसमासों द्वारा विषय का स्पष्टीकरण चूर्णक शैली है।
3. **मुक्तक**–समासरहित लघुपदावली मुक्तक है।

उत्कलिका– उज्जयिनी लौटते समय मार्ग में भीषण वन में वृद्ध द्रविड पुजारी से युक्त चण्डिका मन्दिर का वर्णन दर्शनीय है। **'तदभिमुखश्च कञ्चिदध्वानं गत्वा केतकीसूचिखण्डपाण्डुरेण वनद्विरददन्तकपाटेन परिवृतां लोहतोरणेन सनाथीकृतद्वारदेशाम्, लौहमहिषेण अध्यासित–शिलावेदिकाम् निस्संकारतया यत्किञ्चनकारिणा खञ्जतया मन्दं मन्दं सञ्चारिणा, बधिरतया संज्ञाव्यवहारिणा, लम्बोदरतया प्रभूताहारिणा, विस्फोटकव्रणबिन्दुभिः कल्माषितसकलशरीरेण क्षणमप्यमुक्तकालकम्बलखण्डेन जरद्द्रविडधार्मिकेण अधिष्ठितां चण्डिकावसितम् अपश्यत्।'**

चूर्णक–कादम्बरी से पान ग्रहण करते चन्द्रापीड का चित्रण– **'चन्द्रापीडस्तु स्वभावपाटलं धनुर्गुणाकर्षणकृतकिणश्यामलं पाणिं प्रसार्य ताम्बूलं प्रतिजग्राह।'**

मुक्तक– वार्तालाप के समय **'कथं राजा तारापीडः? कथं देवी विलासवती? कथम् आर्यः शुकनासः? कीदृशी च उज्जयिनी? कियत्यध्वनि सा? कीदृशं भारतं वर्षम्।' इत्यशेषं पप्रच्छ।**

महाकवि बाण का कथन उनकी कला का आश्रय ले जगत् के कण–कण का स्पर्श करता है, कुछ भी कहने को नहीं बचता है। कवि के सर्वतोन्मुखी प्रतिभा, व्यापक ज्ञान, अद्भुत वर्णनशैली, वर्ण्य विषय का सूक्ष्मातिसूक्ष्म चित्रण और विपुल शब्द भण्डार के बाद क्या कुछ अवशिष्ट रह सकता है? इसीलिए परवर्ती कवि जो कुछ भी कह रहे हैं, सब बाण का उच्छिष्ट है, जो उन्होंने पहले ही वर्णित कर मानो जूठा कर दिया है। अतः उक्ति प्रसिद्ध है–**'बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्'**।

साहित्य सौन्दर्य की दृष्टि से बाण ने रसों एवम् अलंकारों का प्रभूत प्रयोग किया है। शृङ्गार उनका प्रिय रस है अन्य रसों का उपयोग वे सहायक की भाँति करते हैं। रसों से भावों की उद्भावना कर एक मनोवैज्ञानिक की भाँति मानव मन के सूक्ष्म परिवर्तनों का भी वर्णन महाकवि बाण ने किया है। 'चन्द्रापीड को पान देती कादम्बरी का चित्रण द्रष्टव्य है–**'महाश्वेतामुखात् अनाकृष्टदृष्टिरेव वेपमानाङ्गमयष्टिः प्रसारयामास च ताम्बूलगर्भं हस्तपल्लवम्।'**

प्रतापी राजा शूद्रक की विजयों के प्रसंग में वीर रस का, हारित और जाबालि ऋषि के प्रसंग में शान्त रस का, विन्ध्याटवी वर्णन में भयानक रस का, शबरसैन्य वर्णन में वीभत्स रस का, महाश्वेता एवं कादम्बरी के प्रसंग में शृङ्गार रस का अतिरंजित वर्णन बाण की प्रतिभा के परिचायक हैं। रसों के बहुरंगी चित्र सजाने के लिए कवि ने अलंकारों के प्रयोग को पदे–पदे प्रधानता दी है। उपमा, उत्प्रेक्षा, विरोधाभास, परिसंख्या आदि अलंकारों ने मंजुल और भयावह, पवित्र और वासनापूरित दोनों प्रकार की कल्पनाओं को साकार करने में योगदान दिया है।

महाकवि बाणभट्ट ने भारतीय परम्परा में प्राप्त प्रेम के आदर्श एवम् अलौकिक रूप का अंकन किया है। कादम्बरी और चन्द्रापीड, महाश्वेता और पुण्डरीक परस्पर गुण–दोष का विचार न कर केवल रूप–सौन्दर्य के पक्षपात से एक दूसरे के प्रति आसक्त होते हैं। एक ओर पुण्डरीक काम के अनतिक्रमणीय प्रभाव से प्राणों का त्याग करता है, दूसरी ओर चन्द्रापीड की मृत्यु का समाचार प्राप्त होता है। मन पर नियन्त्रण खो देने वाली ऐसी कामविकृति की भावभूमि पर स्थित प्रेम अस्थायी, निष्फल होता है। महाश्वेता ने संसार से विरक्त हो तपस्या का मार्ग अपनाया और कादम्बरी ने भी राजसी वैभव और भोगविलासों को त्याग श्वेतवस्त्र धारण किये। विरह और अनन्यता तथा साधना की आग में तपकर वह प्रेम सफल हुआ। तीन जन्मों में तपःपूत होकर वही चरम परिणति विवाह को प्राप्त हुआ।

वस्तुतः बाणभट्ट की गद्यशैली कवियों के लिए आदर्शभूत है। वे पाञ्चाली रीति का आश्रय लेकर वर्ण्यविषय के अनुरूप पदों के विन्यास में नितान्त कुशल हैं। यदि विषय भयावह तथा घनघोर हैं तो वाणी अप्रसिद्ध तथा कठिन शब्दों से मण्डित और यदि विषय कोमल है तो शब्दावली नितान्त कोमलकान्त तथा ललित। विषय के अनुरूप शैली का परिवर्तन कर बाण ने यदि दीर्घ समासों की छटा से गद्यग्रन्थों को सजाया है तो लघु पदावली और छोटे–छोटे वाक्यों से भी गद्यग्रन्थों की शोभा बढ़ायी है।

श्री 'चन्द्रदेव' कवि ने लिखा है कि कुछ कवि श्लेष, कुछ शब्दयोजना, कुछ रसाभिव्यक्ति, कुछ अर्थगौरव या कथा वर्णन में चतुर होते हैं; परन्तु बाण कविकुंजरों के गण्डस्थल का भेदन करने वाले तथा गहन कवितारूपी विन्ध्याटवी में चतुरतापूर्वक विचरण करने वाले सिंह हैं–

श्लेषे केचन शब्दगुम्फविषये केचिद् रसे चापरे–
ऽलङ्कारे कतिचित् सदर्थविषये चान्ये कथावर्णने।
आः सर्वत्र गभीरधीरकविता–विन्ध्याटवीचातुरी
सञ्चारी कविकुम्भिकुम्भभिदुरो बाणस्तु पञ्चाननः।।

चन्द्रापीडकथा : कथासार

प्राचीन काल में शूद्रक नाम के एक राजा हुए। उनकी राजधानी विदिशा थी। एक बार प्रातःकाल ही राजा के दरबार में एक चाण्डालकन्या पिंजड़े में शुक को लेकर उपस्थित हुई। शुक ने मनुष्य की वाणी में अपना नाम 'वैशम्पायन' बताते हुए आर्या छन्द में निबद्ध पद्य द्वारा राजा का अभिवादन किया। आश्चर्यचकित राजा को अपना वृत्तान्त बताते हुए शुक ने कथा प्रारम्भ की–

भारतवर्ष के मध्यभाग में विन्ध्याटवी नामक महावन है, जहाँ से कुछ दूर स्थित पम्पा नामक सरोवर के पश्चिम दिशा में विशाल शाल्मली (सेमल) वृक्ष है, जिस पर देश-विदेश से आए अनेक पक्षियों के घोंसले हैं। उसी वृक्ष पर अपने जीवन की सान्ध्य बेला में जीते हुए शुक-दम्पती की मैं एकमात्र सन्तान था। मेरी माता तो मुझे जन्म देते समय ही स्वर्गवासी हो गयी और वृद्ध पिता ने मेरा पालन-पोषण किया। किन्तु दुर्भाग्य से शिकार के लिए आए भीलों की सेना में से एक वृद्ध भील द्वारा मेरे पिता को घोंसले से खींच कर निकाला गया और जमीन पर पटक दिया गया। पिता की गोदी में छिपा मैं भी भूमि पर आ गिरा और दैवयोग से पत्तों के ढेर पर गिरने से मेरे अंग नहीं टूटे। भील के चले जाने पर वहाँ से एक मुनि कुमार, जिनका नाम हारीत था, स्नान के लिए गुजरे। उनकी नजर मुझ पर पड़ी उन्होंने जल पिला कर मेरी प्राणरक्षा की और मुझे लेकर अपने पिता जाबालि के आश्रम पहुँचे। जाबालि मुनि ने मुझे देखकर 'यह अपने ही किये पापों का दण्ड भोग रहा हैं'– ऐसा कहा। उत्पन्न हुए कौतुहल वाले अपने शिष्यों को तब उन्होंने यह कथा सुनायी–

उज्जयिनी में राजा तारापीड और उनके मंत्री शुकनास थे, दोनों परममित्र थे और दैवयोग से दोनों को कोई सन्तान नहीं थी। सन्तान हेतु व्रत इत्यादि करने पर राजा तारापीड की पत्नी विलासवती को चन्द्रापीड नामक पुत्र हुआ, और उसी समय शुकनास की पत्नी मनोरमा को भी वैशम्पायन नामक पुत्र हुआ। चन्द्रापीड और वैशम्पायन दोनों अभिन्न मित्र थे, और साथ-साथ उनका लालन–पालन व शिक्षा-दीक्षा हुयी। युवावस्था में प्रवेश करने पर दिग्विजय हेतु युवराज चन्द्रापीड मित्र वैशम्पायन के साथ निकला। दिग्विजय के प्रसंग में चन्द्रापीड उत्तर में सुवर्णपुर पहुँचा। वहाँ विश्राम के लिए सेना ने पड़ाव डाला। एक दिन मनोरञ्जन हेतु इन्द्रायुध पर सवार होकर शिकार के लिए निकला, और एक किन्नर युगल का पीछा करते मार्ग भटक कर अच्छोद सरोवर पर पहुँचा, जहाँ उसकी मुलाकात गन्धर्वराजपुत्री महाश्वेता से हुई। महाश्वेता ने चन्द्रापीड को अपनी कथा सुनाई–गन्धर्वराज हंस और गौरी की पुत्री मैं महाश्वेता हूँ। एक बार देव दर्शन को माता के साथ आयी मेरी भेंट श्वेतकेतु के पुत्र मुनिकुमार पुण्डरीक से हुई जो अपने मित्र कपिञ्जल के साथ वहाँ से गुजर रहे थे। वे मेरी ओर आसक्त हो गये और उनके प्राण संकट में पड़ गये। मेरे विरह में उन्होंने प्राण त्याग दिए, जब यह समाचार मुझे कपिञ्जल से मिला तो अपराधभाव से भरी मैं उनके साथ सती होने को तैयार हुई तभी आकाशवाणी हुई कि तुम यहीं रहकर प्रतीक्षा करो तुम्हारा तुम्हारे प्रिय से मिलन होगा और उसी के

साथ एक दिव्य पुरुष पुण्डरीक की देह को लेकर आकाश में उड़ गया। कपिञ्जल भी उनके पीछे-पीछे चला गया। तब से मैं उनके लौटने की आशा में यहाँ तप करती जीवन व्यतीत कर रही हूँ। मेरे प्रेम में मेरी सखि कादम्बरी भी आजीवन अविवाहित रहने का संकल्प ले बैठी हैं। आप कृपया उसे समझाइए। यह कहकर चन्द्रापीड को लेकर कादम्बरी के पास हेमकूट पर्वत पर स्थित प्रासाद में गयी। वहाँ कादम्बरी और चन्द्रापीड परस्पर आकर्षित हो गये। चन्द्रापीड अपनी सेविका पत्रलेखा को कादम्बरी के पास छोड़कर अपनी सेना के पास लौट आया और सेना को वैशम्पायन के साथ बाद में आने को कहकर पिता की आज्ञा पर उज्जयिनी लौट आया। कुछ दिनों बाद सेना उज्जयिनी आयी किन्तु वैशम्पायन नहीं लौटा और सैनिकों ने बताया कि प्रयाण के पूर्व अच्छोद सरोवर में स्नान के लिए जाने पर वहाँ से लौटने को तैयार नहीं हुए। आश्चर्यचकित चन्द्रापीड अच्छोद सरोवर पहुँचा। वैशम्पायन की खोज में महाश्वेता के आश्रम गया, जहाँ महाश्वेता ने उसे बताया कि एक ब्राह्मणयुवक जो उसके साथ दुर्व्यवहार कर रहा था उसे शाप देकर शुक योनि में भेज दिया। बाद में मुझे ज्ञात हुआ कि वह आपका मित्र है, यह सुनकर चन्द्रापीड ने अपने प्राण त्याग दिये। पत्रलेखा द्वारा कादम्बरी को चन्द्रापीड के आने का समाचार मिला तो वह महाश्वेता से मिलने के बहाने अच्छोदसरोवर पर आयी। वहाँ चन्द्रापीड की दशा देखकर उसके साथ सती होने को तत्पर हुई किन्तु तभी आकाशवाणी हुई की तुम दोनों का तुम्हारे प्रेमियों से मिलन होगा, तब तक चन्द्रापीड के शरीर की रक्षा करना। इसी बीच पत्रलेखा अचानक इन्द्रायुध को लेकर अच्छोद सरोवर में कूद जाती है, और कुछ देर बाद ही एक जटाधारी युवक जल से निकलता है जिसे देखकर महाश्वेता उससे पूछती है मुनि कपिञ्जल आप कहाँ चले गये थे ? आपके मित्र कहाँ हैं ? कपिञ्जल ने बताया कि पुण्डरीक के शरीर को ले जाने वाले पुरूष का मैनें पीछा किया, वह चन्द्रलोक में गया और उन्होंने अपना परिचय चन्द्रमा के रूप में दिया। पुण्डरीक के शरीर को वहाँ सुरक्षित रखते हुए मुझे बताया कि मैनें और पुण्डरीक ने एक-दूसरे को शाप दिया है, फलस्वरूप दोनों को मृत्युलोक में दो बार जन्म लेकर प्रेमिका के वियोग का दुःख भोगना होगा। तुम महर्षि श्वेतकेतु के पास जाकर उपाय पूछना। वहाँ से मैं शीघ्रता में निकला और आकाशमार्ग में एक देवता से टकरा गया जिसने मुझे घोड़ा हो जाने का शाप दिया; और बाद में शाप मुक्ति का उपाय यह बताया कि तुम जिसकी सवारी में रहोगे उसकी मृत्यु के बाद स्नान कर पूर्वरूप में आ जाओगे। उसी ने मुझे बताया कि चन्द्रमा तारापीड के घर चन्द्रापीड नाम से पुत्र रूप में जन्म लेंगे उनके मंत्री शुकनास का पुत्र तुम्हारा मित्र वैशम्पायन नाम से होगा। उसी चन्द्रापीड की तुम सवारी बनोगे। वहाँ से श्वेतकेतु के पास गया उन्होंने दिव्य दृष्टि से देखकर बताया कि तुम्हारा मित्र शुक रूप में जाबालि के आश्रम में है, उससे कहना मेरा अनुष्ठान समाप्त होने तक वहीं रहे। उनका सन्देश मैंने वैशम्पायन को दिया और वहाँ से चल दिया। वैशम्पायन जाबालि के मुख से कथा सुनकर सोकर जागे के समान महाश्वेता की याद में पुनः अच्छोद सरोवर के लिए उड़ा किन्तु बीच में ही चाण्डालकन्या द्वारा पकड़ लिया गया तब वह शुक बोला आपके समान मुझे भी यह जानने की इच्छा है कि ये कौन है और इन्होंने मुझे क्यों पकड़ा है ?

इस पर चाण्डालकन्या अपना परिचय देती है, और शूद्रक को रोहिणीपति, कादम्बरीप्रिय चन्द्रापीड कहकर सम्बोधित करती है, और बताती है कि मैं इस शुक की माता हूँ। पिता की आज्ञा न मानने से ये निम्न योनि में न चला जाए अतः उन्होंने मुझे इसे पकड़ने को कहा। सबकी दृष्टि से बचने के लिए मैनें चाण्डालकन्या का रूप बनाया। अब इस शरीर का त्याग कर तुम दोनों का अपनी प्रेमिकाओं से मिलन होगा। यह कहकर वह चली गयी। इधर कादम्बरी ने प्रेम से चन्द्रापीड के शरीर को गले लगाया और अचानक वह जीवित हो उठा उसी समय आकाशमार्ग से कपिञ्जल के साथ पुण्डरीक भी आ पहुँचा। दोनों प्रेमी युगलों का मिलन हुआ दोनों के माता-पिता की उपस्थिति में विवाह-समारोह हुआ और उनके दिन प्रसन्नतापूर्वक व्यतीत होने लगे।

प्रमुख पात्रों का चरित्र–चित्रण

1. चन्द्रापीड

परिचय– उज्जयिनी के राजा तारापीड की दीर्घ साधना से प्राप्त पुत्र चन्द्रापीड कथा का नायक है। शास्त्रीय भाषा में उसे धीरोदात्त प्रकृति का नायक कहा जा सकता है। चन्द्रापीड के तीन जन्मों के अवतरण में चन्द्रमा तथा राजा शूद्रक के जन्म में इसके चरित्र का वैसा प्रांजल तथा स्पष्ट विकास नहीं हुआ है जैसा चन्द्रापीड के रूप में। बाल्यावस्था के अनुशासन और गुरुकुल के संयमित वातावरण ने उसके जीवन को सुव्यवस्थित बनाया है। उसमें उन समग्र संस्कारों को भी समारोपित कर दिया है जो एक कुलीन, यशस्वी, श्रेष्ठ, सुयोग्य सम्राट के लिए अनिवार्य है।

विनयशील– विद्याध्ययन करके उज्जयिनी लौटने पर वह पिता के समक्ष बैठकर उनके चरणों में बैठता है। पिता का मान सम्मान उसके लिए सर्वोपरि है तथा आज्ञा अनुल्लंघनीय। महाश्वेता के आश्रम में वह तुरन्त लौट आने को पिता का संदेश पाता है और निःसंकोच आश्रम छोड़ देता है।

अद्वितीय पराक्रमी– चन्द्रापीड दिग्विजय के लिए निकलने पर केवल तीन वर्ष में धरा को अपने अधीन कर लेता है। व्यसनों में वह केवल मृगयाप्रेमी है। औदार्य, सहानुभूति एवं व्यवहारकुशलता उसके स्वाभाविक गुण हैं। पत्रलेखा को वह दासी नहीं अपितु सखी का पद प्रदान करता है। महाश्वेता उस पर अनायास भ्रातृप्रेम रखती है, और उससे अपना दुःख कहती है।

धैर्यशील– कादम्बरी के प्रति आकृष्ट होने पर भी विवेक को जागरूक रखता है और प्रणय निवेदन के पूर्व उसके भाव को जान लेना चाहता है।

संयमी– प्रेम में आकण्ठ निमग्न रहकर भी वह कर्तव्य से प्रमाद नहीं करता है और पुनर्मिलन के लिए अच्छोद सरोवर जाने से पूर्व गुरुजनों की अनुमति प्राप्त करता है।

परम मित्र– चन्द्रापीड वैशम्पायन के प्रति अनुपम स्नेह रखता है। मित्र का हित उसके लिए सर्वोपरि है। वैशम्पायन के अच्छोद सरोवर से वापस न लौटने पर अनेक शंकाओं से घिरा वह स्वयं अच्छोद सरोवर तक आता है और महाश्वेता से मित्र के शापग्रस्त हो शुकयोनि को प्राप्त होने का दुःखद समाचार सुनते ही उसका हृदय विदीर्ण हो जाता है तथा मृत शरीर पृथिवी पर गिर पड़ता है।

चन्द्रापीड अपने उपर्युक्त सभी गुणों से कादम्बरी का प्रेमपात्र बनता है और कथान्त में नायिका से विवाह कर उदात्त नायक की गरिमा को सार्थक करता है।

2. कादम्बरी

परिचय– चन्द्रापीडकथा की नायिका कादम्बरी है। यह गन्धर्वराज चित्ररथ और अप्सरा कुल में उत्पन्न महारानी मदिरा की पुत्री है। कथा के मध्य में कादम्बरी का परिचय प्राप्त होता है, यद्यपि नायिका का इतने विलम्ब से प्रवेश खटकता है तथापि प्रवेश के अनन्तर वह कथा की आत्मा बनकर सर्वत्र व्याप्त रहती है और कथा को जीवन्त व रसान्वित करती है।

सौन्दर्यवती– अप्सरा कुल से सम्बद्ध होने के कारण उसका नखशिख सौन्दर्य चारुतम और अप्रतिम है। न केवल बाह्य सौन्दर्य, अपितु आन्तरिक सौन्दर्य में भी वह असाधारण है।

स्त्रियोचित स्वभाव– कादम्बरी में स्त्रियोचित लज्जा का भाव है। चन्द्रापीड को देखकर वह मदनविकारों से सन्तप्त तो होती है, किन्तु लज्जा के कारण मनोभावों को प्रकट करने में संकोच करती है। महाश्वेता के कहने से वह पान देने के लिए चन्द्रापीड की ओर केवल हाथ बढ़ाती है, दृष्टि नहीं। दृष्टि तो महाश्वेता की ओर ही लगी रहती है–

'महाश्वेतामुखात् अनाकृष्टदृष्टिरेव वेपमानाङ्गयष्टिः प्रसारयामास च ताम्बूलगर्भं हस्तपल्लवम्।'

परम सखी– कादम्बरी का अपनी सखी के प्रति अनन्य सख्यभाव है। वह अपनी सखी के प्रति सदा स्नेह से पूरित हो उसके सुख–दुःख में एकरस है। महाश्वेता से उसकी मात्र मौखिक सहानुभूति नहीं है, उसके दुःख को वह अपना समझती है। महाश्वेता के व्रत धारण कर लेने पर वह स्वयं भी विवाह न करने की प्रतिज्ञा करती है। सखी के वन में रहने से स्वयं को महल में रहने का अपराध करने वाली मानती है।

'सा तु सखीप्रेम्णा गृहनिवासेन कृतापराधेव लज्जमाना कृच्छ्रादिव कुशलम् आचचक्षे'।

सच्ची प्रेमिका– चन्द्रापीड के प्रति उसका प्रेम सच्चा है। चन्द्रापीड के देह–त्याग पर वह उसके साथ सती होने को तत्पर थी। मिलन की आशा में चन्द्रपीड के शरीर की रक्षा करते हुए तपस्या में रत रहती है।

उदारहृदया– परिजनों के प्रति भी उसका हृदय बड़ा उदार है। पत्रलेखा को देखकर उसके प्रति प्रेमपूर्ण हो उसे अपने पास रोक लेती है। मदलेखा व तरलिका से भी सखीतुल्य व्यवहार करती है।

वस्तुतः कथा की नायिका के रूप में कादम्बरी के चित्रण में कवि को पूर्ण सफलता मिली है।

3. महाश्वेता

परिचय– महाश्वेता कथा की दो प्रमुख स्त्रीपात्रों में एक, कथा की उपनायिका तथा प्रासंगिक कथा की नायिका है। प्रभावोत्पादक चरित्र से कथा में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लेने के कारण वह मानो कथा की नायिका ही है। यह गन्धर्वराज हंस एवं गौरी नामक अप्सरा की सन्तान हैं उसके चरित्र की विशेषताएँ निम्नलिखित है–

सौन्दर्यवती– अप्सरा की पुत्री होने से वह सौन्दर्य में अनुपम है। अत्यन्त गौर वर्ण की होने से उसका नाम महाश्वेता रखा गया। महाश्वेता केवल शरीर से ही नहीं, हृदय से भी श्वेत अर्थात् निर्मल है।

दृढ़ तपस्विनी– कथा में अच्छोद सरोवर के तट पर ध्यानमग्न मुद्रा में शिव मन्दिर में बैठी तपस्विनी के रूप में महाश्वेता का प्रवेश होता है। चन्द्रापीड से वह निश्छल निःसंकोच भाव से मिलती है, उसे अपने मधुर व्यवहार से प्रभावित करती है किन्तु उसके आचरण की गरिमा चन्द्रापीड के हृदय में उसके प्रति आकर्षण नहीं आदर उत्पन्न करती है।

प्रगल्भ स्वभाव– चन्द्रापीड से अपनी प्रेमकथा वर्णित करते समय यह स्पष्ट होता है कि प्रिय के प्रति प्रेम की पहल कराकर कवि ने उसके चरित्र में प्रगल्भ स्वभाव को व्यक्त किया है। वह स्वयं पुण्डरीक के सहचर कपिञ्जल से पुण्डरीक का परिचय प्राप्त करती है, पुण्डरीक की माला उठाकर स्वयं धारण कर लेती है, पुण्डरीक के बारे में जानकर कुलोचित मर्यादा का त्याग कर उससे मिलने चल देती है।

धैर्यशील प्रेमिका– महाश्वेता सच्ची प्रेमिका है जो अपने प्रिय की मृत्यु पर उसका अनुगमन करना चाहती है, परन्तु आकाशवाणी को सुनकर अत्यन्त धैर्य से प्रिय से मिलन की प्रतीक्षा करती हुई अपना समय जप-तप में व्यतीत करती है।

व्यावहारकुशल– जीवन के अनन्त दुःखों में भी वह सखी के शुभ चिन्तन में व्यग्र है। कादम्बरी को प्रेमोन्मुख करने के लिए वह सुन्दर, सुयोग्य चन्द्रापीड को उसके पास ले जाती है और कादम्बरी के ही हाथ से चन्द्रापीड को पान दिलवाती है।

वस्तुतः महाश्वेता का चरित्र अधिक प्राञ्जल और मार्मिक बन पड़ा है। कवि ने कथा के प्रारम्भ में ही उसका प्रवेश कराकर उसके चरित्र के विकास को अधिक अवकाश दिया है। कथानक में प्रारम्भ से अन्त तक प्रणयिनी, तपस्विनी बनकर और करुणा की मूर्ति बनकर अपनी पवित्रता और लालित्य से वह पाठक के हृदय-साम्राज्य पर राज्य करती-सी प्रतीत होती है।

4. पुण्डरीक

चन्द्रापीडकथा का एक प्रमुख पात्र पुण्डरीक है। वह महर्षि श्वेतकेतु एवं लक्ष्मी का मानस पुत्र है। उसके चरित्र में निम्न प्रमुख विषेषताएँ हैं–

सुन्दर एंव चंचल– महामुनि श्वेतकेतु से आकृष्ट लक्ष्मी के मानसपुत्र होने से पुण्डरीक अन्यन्त सुन्दर है क्योंकि तीनों लोकों में श्वेतकेतु सर्वाधिक सुन्दर हैं। लक्ष्मी पुत्र होने से उसमें नैसर्गिक चंचलता भी है। तभी तो महाश्वेता के आकृष्ट होते ही वह अपनी मानसिक दुर्बलता के कारण उस पर आसक्त हो जाता है।

कुशल प्रेमी– महाश्वेता के पुष्पमंजरी विषयक कौतूहल को देखकर वह उसके पास चला आता है और उस पुष्पमञ्जरी को अपने कानों से उतार कर उसके कानों में पहनाते समय अनजाने ही महाश्वेता के गालों के स्पर्श से उसकी अँगुलियाँ काँप जाती हैं तथा रुद्राक्षमाला उसके हाथ से गिर जाती है। मुनिपुत्र होने पर भी पुण्डरीक प्रणयव्यापार में प्रवीण है।

वाक्पटु– महाश्वेता के प्रेमपाश में आबद्ध हो जाने से कपिञ्जल उसकी भर्त्सना करता है, तो वह असत्य भी बोल जाता है और कहता है कि वह कामवशी नहीं है। बनावटी क्रोध से वह महाश्वेता को प्रेम फटकार भी सुनाता है, किन्तु अवसर मिलते ही वह तरलिका के पास पहुँच जाता है और महाश्वेता के बारे में सारी बातें पूछता है। वह प्रेमपत्र भी तरलिका के माध्यम से महाश्वेता के पास पहुँचा देता है।

पुण्डरीक की धार्मिकता, विद्वत्ता, तपस्विता एवं मित्रता आदि का मूल्यांकन कपिञ्जल के विलाप से किया जा सकता है– **'हा तपः ! निराश्रयमसि हा सत्य ! अनाथमसि। हा सरस्वति! विध्ावाऽसि। सखे प्रतिपालय माम्। अहमपि भवन्तम् अनुयास्यामि।'**

5. वैशम्पायन

परिचय– वैशम्पायन महर्षि श्वेतकेतु के पुत्र पुण्डरीक का ही पुनर्जन्म है। बाणभट्ट ने वैशम्पायन को मन्त्रीपुत्र एवं शुक वैशम्पायन के रूप में चित्रित किया है। चन्द्रमा द्वारा शाप दिये जाने पर मृत्युलोक में पुण्डरीक ने राजा तारापीड के मन्त्री शुकनास के पुत्र वैशम्पायन के रूप में जन्म लिया। पूर्वजन्म के संस्कार के कारण महाश्वेता के प्रति उसका अनुराग कम नहीं हुआ, परिणामस्वरूप महाश्वेता द्वारा उसे शुक होने का शाप दिया गया। शुकरूप में भी उसे पूर्वजन्म के संस्कारवशात् शास्त्रों का ज्ञान है। इसके चरित्र की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं–

सच्चा मित्र– वैशम्पायन सच्चे मित्र के लक्षणों से युक्त है। वह जीवन–पर्यन्त चन्द्रापीड के साथ ही रहता है। चन्द्रापीड एवं वैशम्पायन की मित्रता की पराकाष्ठा इससे सूचित होती है कि वैशम्पायन के शुक बन जाने पर चन्द्रापीड भी प्राण त्याग देता है।

महाश्वेता का प्रेमी– पूर्वजन्म के संस्कारवशात् महाश्वेता से इसका प्रेम कम नहीं हुआ। अच्छोद सरोवर में स्नान के बाद महाश्वेता के प्रति उसका प्रेम जाग्रत हो जाता है। महाश्वेता से प्रणय–निवेदन करने के कारण उसे शापग्रस्त होना पड़ता है।

दुर्भाग्यशाली– महाश्वेता के द्वारा शप्त होकर वैशम्पायन का शुक योनि को प्राप्त होना इसके दुर्भाग्य को दर्शाता है।

संयम का अभाव– वैशम्पायन के चरित्र में संयम का अभाव है। पुण्डरीक के रूप में भी कामवेग को न सह सकने से मृत्यु को प्राप्त हुआ। वैशम्पायन के रूप में पुनर्जन्म प्राप्त होने पर महाश्वेता को देखते ही उसके मना करने पर भी प्रणयनिवेदन करता है, परिणामस्वरूप शुक–योनि को प्राप्त होता है।

इस प्रकार वैशम्पायन के चरित्र में पूर्वजन्म के स्वभाव की निरन्तरता को बनाये रखते हुए उसका चित्रण करने में बाण को पूर्ण सफलता मिली है।

6. वैशम्पायन शुक

परिचय – यह तोता अपने पूर्व के दो जन्मों में क्रमशः श्वेतकेतु का पुत्र पुण्डरीक तथा शुकनास नामक मन्त्री का पुत्र वैशम्पायन था। चन्द्रमा के शाप के कारण यह मनुष्य लोक में शुकनास के यहाँ

उत्पन्न हुआ। पूर्वजन्म के संस्कार के कारण इसका शास्त्रज्ञान तथा महाश्वेता के प्रति अनुराग आदि नष्ट नहीं हुए। इसकी चारित्रिक विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

शास्त्रज्ञ तथा कलाओं में निपुण– पूर्वजन्म के संस्कार के कारण शुक सम्पूर्ण विद्याओं, कलाओं, शास्त्रों, पुराणों इतिहास तथा राजनीति का ज्ञानी था। उसका ज्ञान 'शूद्रक' के लिए आशीर्वाद रूप में कहें निम्न आर्या में स्पष्ट हो जाता है–

स्तनयुगमश्रुस्नातं समीपतरवर्ति हृदयशोकाग्नेः।
चरति विमुक्ताहारं व्रतमिव भवतो रिपुस्त्रीणाम्।।

मनुष्य की वाणी में बोलने वाला– इसकी वाणी मनुष्य के समान स्पष्ट थी। स्वयं राजा शूद्रक उसकी इस चमत्कारयुक्त वाणी से प्रभावित होकर उसके बारे में जानने की इच्छा से भर उठा।

महाश्वेता का प्रेमी– पूर्वजन्म के संस्कार के कारण इसे महाश्वेता से अतिप्रेम था। अतः जैसे ही इसके पंखों में उड़ने की शक्ति आयी, वह महाश्वेता से मिलने के लिए उड़ चला।

मन्दभाग्यशाली– यह दुर्भाग्यशाली भी था। जन्म लेते ही इसकी माता स्वर्ग चली गयी और बचपन के आरम्भ में ही इसके पिता को वृद्ध भील ने मार डाला।

पूर्वजन्म का ज्ञाता– इसे अपने पहले के दो जन्मों का पूर्ण ज्ञान था। इसी ज्ञान के आधार पर वह राजा शूद्रक को कहानी सुनाता है। संक्षेप में इसके सम्पूर्ण गुण चाण्डालकन्या द्वारा शूद्रक के समक्ष निम्नलिखित कथन से स्पष्ट है–

'देव! विदितसकलशास्त्रार्थः राजनीतिप्रयोगकुशलः, पुराणेतिहासकथालापनिपुणः सकल–भूतलरत्नभूतोऽयं वैशम्पायनो नाम शुकः।

इसी ज्ञान के आधार पर वह राजा शूद्रक से स्वयं सम्मान प्राप्त करता है, और राजा उसके चरित्र से प्रभावित होकर जिज्ञासावश अपने विषय में समस्त जानकारी देने का निवेदन करता है।

7. शूद्रक

परिचय – राजा शूद्रक के नाम और गुणों के उल्लेख से चन्द्रापीड कथा का आरम्भ होता है। वे प्रथम जन्म में चन्द्रमा, द्वितीय जन्म में राजा चन्द्रापीड तथा तृतीय जन्म में राजा शूद्रक के रूप में उत्पन्न हुए थे। शास्त्रीय भाषा में उन्हें धीरोदात्त प्रकृति का नायक कहा जा सकता है। धीरोदात्त नायक अपनी प्रशंसा न करने वाला, क्षमाशील, अतिगम्भीर, महाबली, स्थिर–प्रकृति, निरहंकारी, कठोर संकल्प वाला होता है।

सुदर्शन व्यक्तित्व एवं तेजस्वी – राजा शूद्रक सुदर्शन, बलिष्ठ शरीर एवं भव्य व्यक्तित्व के स्वामी थे। इन्द्र के समान तेजस्वी, विष्णु के समान एकच्छत्र शासक, शंकर के समान जितेन्द्रिय तथा ब्रह्मा के समान सर्वोपरि हैं। समस्त धन–वैभव का उत्पत्तिश्रोत होकर भी वे धर्माचरण में संलग्न रहते हैं।

समुद्रपर्यन्त पृथिवी के पति राजा शूद्रक के अग्नि सदृश प्रताप और सूर्य सदृश तेज के सम्मुख सभी राजगण नतमस्तक थे, उनके शौर्य और साहस को वैशम्पायन शुक के द्वारा इस आर्या में भलीभाँति गाया गया था–

स्तनयुगमश्रुस्नातं समीपतरवर्ति हृदयशोकाग्नेः।
चरति विमुक्ताहारं व्रतमिव भवतो रिपुस्त्रीणाम्।।

कलाप्रेमी – राजा शूद्रक सभी श्रेष्ठ वस्तुओं के गुणग्राही व एकमात्र आश्रय थे। चाण्डालकन्या ने सम्पूर्ण पृथिवी पर रत्नस्वरूप, मानव सदृश स्पष्ट वाणी और ज्ञान से सम्पन्न शुक उपहार में दे कर रत्ना पारखी राजा का सम्मान बढ़ाया।

विनम्र स्वभाव – सर्वगुणसम्पन्न होते हुए भी राजा गर्व से रहित एवं जिज्ञासा से युक्त थे। वैशम्पायन शुक की स्पष्ट मधुर मानव वाणी में किये गये आर्या पाठ के प्रति सम्पूर्ण सभा भवन में निस्संकोच प्रकट की गयी जिज्ञास शूद्रक की विनम्रता को प्रकट करती है।

8. चाण्डालकन्या

परिचय – चाण्डालकन्या महामुनि श्वेतकेतु की पत्नी एवं पुण्डरीक की माता है। अपने पुत्र के शापग्रस्त हो जाने पर उसकी रक्षा के लिए चाण्डाल–कुल में जन्म लेती है, जिससे लोगों के संपर्क से बची रहे। वैशम्पायन शुक के शापमुक्त होने पर वह पुनः अपने लोक को चली जाती है।

वात्सल्यमयी – चाण्डालकन्या का हृदय स्नेह तथा वात्सल्य से परिपूर्ण है। पिंजडे में बन्द तोते के रूप में भी पुत्र के लिए उसके हृदय में अगाध स्नेह तथा वात्सल्य है। वह अपने पुत्र की देख–रेख तथा रक्षा के लिए मृत्युलोक में निवास करना स्वीकार करती है और चाण्डाल कुल में जन्म लेकर अपने आचरण को पवित्र रखती है। शुकरूप में स्थित पुत्र के शाप का अन्त समीप समझकर वह सम्पूर्ण वृत्तान्त राजा को सुनाती है।

चतुर – वह अत्यन्त चतुर है। शूद्रक के समक्ष पहले शुक को ले जाती है, जिससे शूद्रक के मन में चमत्कारी शुक के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न हो, जिसके शमनार्थ शुक अपनी सम्पूर्ण कथा राजा को सुनाता है और अन्त में स्वयं अपनी भी जिज्ञासा चाण्डालकन्या के प्रति प्रकट करता है। इस प्रकार सही अवसर पर बुद्धिमत्ता पूर्ण वचन के द्वारा चाण्डालकन्या कथा के रहस्य को उद्घटित करती है, उसका सम्बोधन– भुवनभूषण, रोहिणीपते, कादम्बरीलोचनानन्दकरः इत्यादि उसकी व्यवहारकुशलता व बुद्धिमत्ता को प्रकट करता है।

कथा के प्रारम्भ से अन्त तक पाठक उसके रहस्यपूर्ण व्यक्तित्व से बँधे रहते हैं।

9. कपिञ्जल

कपिञ्जल कादम्बरीकथा के प्रमुख पात्रों में से एक है। यह एक तपस्वी कुमार है। महर्षि श्वेतकेतु एवं लक्ष्मीपुत्र पुण्डरीक का परममित्र है। यही कपिञ्जल जन्मान्तर में इन्द्रायुध अश्व के रूप में पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। इसकी विद्वतापूर्ण चारित्रिक विशेषताएँ समस्त पाठकों को प्रभावित करती हैं। इसकी कुछ विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

विद्वान्– कादम्बरी में प्रस्तुत उसके चरित्र से स्पष्ट होता है कि वह अत्यन्त विद्वान् है। उसे विविधशास्त्रों का, कर्तव्याकर्तव्य का सम्यक् ज्ञान है। पुण्डरीक के द्वारा महाश्वेता पर आसक्त होने

पर उसके द्वारा प्रदत्त विविध उपदेशों से उसकी विद्वता स्पष्टरूपेण परिलक्षित होती है।

आदर्श मित्र– कपिञ्जल आदर्श मित्र की प्रतिमूर्ति है। वह मित्रता के सभी गुणों से परिपूर्ण है। एक सच्चा मित्र वही है, जो अपने मित्र को अकृत्य कर्मों से दूर करके, कृत्य कर्मों में नियुक्त करता है। जैसा कि मित्र का लक्षण भी दिया गया है–**"पापान्निवारयति योजयते हिताय...।।"** पुण्डरीक द्वारा महाश्वेता पर अनुरक्त होने पर कपिञ्जल उसे विविध प्रकार से समझाता है। उसे उलाहना भी देता है–**"सखे पुण्डरीक! नैतदनुरूपं भवतः। क्षुद्रजनक्षुण्ण एष मार्गः।"** अर्थात् "हे मित्र पुण्डरीक! यह आचरण आपके अनुरूप नहीं है। यह तो नीचों द्वारा अपनाया जाने वाला मार्ग है।" उसके समझााने के बाद भी महाश्वेता में अनुरक्तिवशात् पुण्डरीक के अस्वस्थ होने पर वह सर्वविध उसके प्राणों की रक्षा करने का प्रयत्न करता है और महाश्वेता के समक्ष इसी आशय को प्रकट भी करता है–**"सर्वथा रक्षणीयाः सुहृदसवः"**। पुण्डरीक की मृत्यु होने पर वह अत्यन्त करुण क्रन्दन करता है।

सदाचारी– कपिञ्जल एक तपस्वी है और उसे तपस्वियों के आचरण विधिवत् ज्ञात हैं, इसीलिए वह सदैव सदाचरण का पालन करता है। पुण्डरीक की आसक्ति के विषय में उसे समझाते हुए कहता भी है कि हम जैसे साधु लोग धैर्यरूपी धनवाले होते हैं अर्थात् हमें अपने इन्द्रियों पर नियन्त्रण रखना चाहिए– **"धैर्यधना हि साधवः"।**

मानव मन का पारखी– कपिञ्जल मानव मन को परखने में पूर्णतया सक्षम है। वह पुण्डरीक एवं महाश्वेता के प्रथम मुलाकात में ही एक–दूसरे पर आसक्त होने के भाव को समझ जाता है, इसीलिए पुण्डरीक कोई अकृत्य न करे यह सोचकर उसे विविध प्रकार से समझाता है। और उसके बाद उसकी आसक्ति की तीव्रता देखकर यह भी समझ जाता है कि यदि पुण्डरीक का महाश्वेता के साथ समागम नहीं होगा तो अनिष्ट हो जायेगा, इसीलिए वह उसके लिए महाश्वेता के पास जाकर प्रणयनिवेदन करता है।

इस प्रकार हम कादम्बरी कथा के माध्यम से यह अवबोध करते हैं कि कपिञ्जल एक विद्वान् आदर्शमित्र, सदाचारी और मनोभावों को परखने वाला तपस्वी कुमार है।

10. पत्रलेखा

कादम्बरीकथा में पत्रलेखा को चन्द्रापीड के ताम्बूलकरङ्कवाहिनी के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यह राजा तारापीड द्वारा कुलूतदेश को जीतने के बाद कैदियों के साथ लायी गयी है। यह कुलूतराज की पुत्री है। अनाथ होने के कारण महारानी द्वारा पुत्री के रूप में इसका पालन–पोषण किया गया है और तत्पश्चात् इसे चन्द्रापीड की ताम्बूलकरङ्कवाहिनी के रूप में नियुक्त किया गया है। इसीलिए महारानी ने चन्द्रापीड को विशिष्ट सन्देश द्वारा इसके परिचय के साथ इसको विशिष्ट स्थान प्रदान करने को कहा।

रूपवती– पत्रलेखा अत्यन्त रूपवती एवं आकर्षक शरीर वाली है। उसको देखते ही कादम्बरी का चित्त उसके प्रति आकर्षित हो जाता है। वह उसका आलिङ्गन करती है और अपने हथेलियों

से उसका बारम्बार स्पर्श करती है। कादम्बरी उसके सौन्दर्य को देखकर कहती भी है–**''अहो! मानुषीषु पक्षपातः प्रजापतेः।''** अर्थात् पत्रलेखा को विशेष सौन्दर्य प्रदान कर प्रजापति ब्रह्मा ने मनुष्य जाति की स्त्रियों के प्रति पक्षपात किया है।

योग्य परिचारिका– पत्रलेखा चन्द्रापीड की सुयोग्य परिचारिका परिलक्षित होती है। वह अपने कर्त्तव्य का पूर्णतया निर्वहन करती है। वह सदैव चन्द्रापीड की सेवा में समर्पित रहती है। वह चन्द्रापीड के साथ उज्जयिनी से सुवर्णपुर तक जाती है। उसकी सुयोग्यता के कारण ही चन्द्रापीड उसे कादम्बरी के पास छोड़कर वापस आ जाता है।

कर्त्तव्यपरायण– पत्रलेखा अपने कर्त्तव्य के प्रति सदैव सजग रहती है, चाहे वह उज्जयिनी के महल में हो, चाहे दिग्विजय यात्रा में अथवा चाहे सुवर्णपुर में हो। वह अपने कर्त्तव्यों से कभी भी पराङ्गमुख नहीं होती है। वह चन्द्रापीड की सेविका, सलाहकार एवं मित्र के रूप में अपने दायित्वों को निभाती है।

विश्वासपात्र– पत्रलेखा चन्द्रापीड के प्रति अत्यधिक विश्वसनीय है। वह चन्द्रापीड के मनोगतभावों को समझने में पूर्णतः समर्थ है, इसीलिए चन्द्रापीड उससे सभी बातों को स्पष्टतया कह भी देता है। चन्द्रापीड कादम्बरी के प्रति स्वयं के अनुराग को भी उससे बताता है। इसी तरह कादम्बरी भी चन्द्रापीड के प्रति अपने प्रेम के विषय में बताती है।

इस प्रकार कादम्बरी कथा में पत्रलेखा को एक आदर्श पात्र के रूप में प्रस्तुत किया गया है। वह रूपवती, योग्य परिचारिका, कर्त्तव्यपरायण एवं विश्वासपात्र भी है।

■

महाकविश्रीबाणभट्टविरचिता

चन्द्रापीडकथा

(उत्तरार्द्ध भागः)

1. **सा तु समुत्थाय महाश्वेतां स्नेहनिर्भरं कण्ठे जग्राह। महाश्वेतापि दृढतरदत्तकण्ठग्रहा, ताम् अवादीत्– ''सखि कादम्बरि! भारते वर्षे राजा तारापीडो नाम। तस्यायम् आत्मजः चन्द्रापीडो नाम दिग्विजयप्रसङ्गेन अनुगतो भूमिमिमाम्। एष च दर्शनात् प्रभृति मे निष्कारणबन्धुतां गतः। कथिता चास्य बहुप्रकारं प्रियसखी। तत् अपूर्वदर्शनोऽयम् इति विमुच्य लज्जाम्, अविज्ञातशीलः इत्यपहाय शंकाम्, यथा मयि तथा अत्रापि वर्तितव्यम्'' इत्यावेदिते तया चन्द्रापीडः प्रणामम् अकरोत्।**

व्याकरणात्मक टिप्पणी–दृढतरदत्तकण्ठग्रहा = दृढतरः दत्तः कण्ठग्रहः यया सा (बहुव्रीहि)। **तस्यायम्** = तस्य + अयम्। **भूमिमिमाम्** = भूमिम् + इमाम्। **अविज्ञातशीलः** = अविज्ञातं शीलं यस्य सः (बहुव्रीहि)। **इत्यपहाय** = इति + अपहाय। **वर्तितव्यम्** = वृत् + तव्यत्।



शब्दार्थः – स्नेहनिर्भरम् = स्नेहवश। **सा** = उसने (कादम्बरी ने)। **समुत्थाय** = उठकर। **कण्ठे** = गले से। **जग्राह** = लगा लिया। **दृढतरदत्तकण्ठग्रहा** = दृढतापूर्वक गले लगाती हुई। **ताम्** = उसको। **अवादीत्** = कहा। **तस्यायम्** = यह उसका। **आत्मजः** = पुत्र। **दिग्विजयप्रसंगेन** = चारो दिशाओं में विजय के सम्बन्ध में। **अनुगतः** = आया है। **भूमिमिमाम्** = इस स्थल पर। **एषः** = यह। **निष्कारणबन्धुताम्** = बिना किसी कारण के ही भ्रातृत्वपूर्ण स्नेहभाव को। **गतः** = पहुँच गये हैं। **कथिता** = कही गयी है। **बहुप्रकारम्** = बहुत प्रकार से। **तत्** = अतः (इसलिए)। **अपूर्वदर्शनः** = पूर्व में अर्थात् पहले न देखा हुआ। **विमुच्य** = त्यागकर। **अविज्ञातशीलः** = जिसे शील-स्वभाव ज्ञात न हो। **अपहाय** = छोड़कर। **यथा मयि** = जैसा मुझमें। **वर्तितव्यम्** = व्यवहार करना चाहिए। **इत्यावेदिते** = ऐसा कहने पर।

हिन्दी अनुवाद – वह (कादम्बरी) उठकर महाश्वेता को स्नेह से पूर्ण होकर गले लगा लिया। महाश्वेता ने भी उसे कसकर गले से लगाते हुए कहा – सखी कादम्बरी! भारतवर्ष में तारापीड राजा प्रसिद्ध हैं। यह उनके पुत्र चन्द्रापीड नाम से विख्यात चारों दिशाओं को विजय करते हुए इस स्थल पर (यहाँ) आए हैं। मैंने इन्हें जब से देखा है अर्थात् प्रथम साक्षात्कार होते ही ये बिना किसी कारण ही मेरे भाई बन गये हैं। इनसे मैंने तुम्हारे विषय में बहुत कुछ कह दिया है। अतः पहली बार मिलने से उत्पन्न होने वाली (स्वाभाविक) लज्जा तथा उनके आचरण एवं स्वभाव से अनजान होने के कारण होने वाले संदेह को छोड़कर तुम इनके साथ भी उसी प्रकार का व्यवहार करो जो मेरे साथ करती हो। उसके (महाश्वेता) के ऐसा कहने पर चन्द्रापीड ने कादम्बरी को प्रणाम किया।

प्रश्नाः

1. चन्द्रापीडस्य जनकः कः आसीत् ?
2. का समुत्थाय महाश्वेतां स्नेहनिर्भरां कण्ठे जग्राह ?
3. अस्य गद्यांशस्य प्रणेता कः ?
4. 'भारतवर्षे राजा तारापीडो नाम'–रेखांकित अंश का अनुवाद लिखिए।
5. चन्द्रापीडः कं प्रणामम् अकरोत् ?

2. कादम्बर्यपि सविभ्रमकृतप्रणामा महाश्वेतया सह पर्यङ्के निषसाद। ससंभ्रमं परिजनोपनीतायां हेमपादाङ्कितायां पीठिकायां चन्द्रापीडः समुपाविशत्। परिजनोपनीतेन सलिलेन कादम्बरी स्वयम् उत्थाय महाश्वेतायाः चरणौ प्रक्षाल्य उत्तरीयांशुकेन अपमृज्य, पुनः पर्यङ्कम् आरुरोह। चन्द्रापीडस्यापि कादम्बर्याः सखी मदलेखा प्रक्षालितवती चरणौ।

व्याकरणात्मक टिप्पणी–सविभ्रमकृतप्रणामा = विभ्रमेण सहितं सविभ्रमं कृतः प्रणामः यया सा (बहुव्रीहि)। **समुपाविशत्** = सम् + उप + आविशत्। **परिजनोपनीतेन** = परिजनैः + उपनीतं यत् (बहुव्रीहि)। **चन्द्रापीडस्यापि** = चन्द्रापीडस्य + अपि।

शब्दार्थः – सविभ्रमकृतप्रणामा = हड़बड़ाहट में प्रणाम करती हुई। **परिजनोपनीतायाम्** = सेवकों द्वारा लायी गयी। **हेमपादाङ्कितायाम्** = सोने के पैरों (पावा) वाली। **पीठिकायाम्** = छोटे से सिंहासन रूपी चौकी पर। **समुपाविशत्** = बैठ गया। **सलिलेन** = जल से। **स्वयम् उत्थाय** = स्वयं उठकर। **प्रक्षाल्य** = धोकर। **उत्तरीयांशुकेन** = दुपट्टे के अग्र भाग से (आँचल से)। **अपमृज्य** = पोंछकर। **आरुरोह** = बैठ गयी। **प्रक्षालितवती** = धोया। **अपि** = भी।

हिन्दी अनुवाद–घबड़ाहट में (चन्द्रापीड को) प्रणाम करके कादम्बरी भी महाश्वेता के साथ शैय्या पर बैठ गयी। हड़बड़ाये हुए परिजनों द्वारा लाये गये स्वर्णिम पैरों वाली पीठिका पर चन्द्रापीड बैठ गया। सेविकाओं द्वारा लाये गये पानी से कादम्बरी ने स्वयं उठकर महाश्वेता के पैरों को धो कर (और) आँचल से पोंछकर फिर पलंग (शैय्या) पर जा बैठी। चन्द्रापीड के पैरों को भी कादम्बरी की सखी मदलेखा ने धोया।

प्रश्नाः

1. कादम्बरी कया सह पर्यङ्के निषसाद ?
2. कादम्बर्याः सखी मदलेखा कस्य चरणौ प्रक्षालितवती ?
3. गद्यांशोऽयं कस्मात् ग्रन्थात् सङ्कलितः ?
4. 'कादम्बरी स्वयम् उत्थाय महाश्वेतायाः चरणौ प्रक्षाल्य उत्तरीयांशुकेन अपमृज्य, पुनः पर्यङ्कम् आरुरोह।' रेखांकित अंश का हिन्दी अनुवाद लिखिए।
5. हेमपादाङ्कितायां पीठिकायां कः समुपाविशत् ?

3. अथ महाश्वेता कादम्बरीम् अनामयं पप्रच्छ। सा तु सखीप्रेम्णा गृहनिवासेन कृतापराधेव लज्जमाना कृच्छ्रादिव कुशलम् आचचक्षे। मुहूर्तापगमे च महाश्वेता ताम्बूलदानोद्यतां ताम् अभाषत– ''सखि कादम्बरि, सर्वाभिरस्माभिः अयम् अभिनवागतः चन्द्रापीडः आराधनीयः। तदस्मै तावत् दीयताम्'' इति। इत्युक्ता सा शनैः अव्यक्तमिव ''सखि, लज्जेऽहम् अनुपजातपरिचया प्रागल्भ्येनानेन। गृहाण त्वमेव अस्मै प्रयच्छ'' इत्युवाच। पुनः पुनः अभिधीयमाना च तया ग्राम्येव चिरात् दानाभिमुखं मनश्चक्रे। महाश्वेतामुखात् अनाकृष्टदृष्टिरेव वेपमानाङ्गयष्टिः प्रसारयामास च ताम्बूलगर्भं हस्तपल्लवम्। चन्द्रापीडस्तु स्वभावपाटलं धनुर्गुणाकर्षणकृतकिणश्यामलं पाणिं प्रसार्य ताम्बूलं प्रतिजग्राह। अथ सा गृहीत्वा अपरं ताम्बूलं महाश्वेतायै प्रायच्छत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी–ताम्बूलदानोद्यताम् = ताम्बूलदानाय उद्यताया सा (बहुव्रीहि)। **अनुपजातपरिचयः** = अनुपजातः परिचयः यस्य (बहुव्रीहि)। **प्रागल्भ्येनानेन** = प्रागल्भ्येन + अनेन। **इत्युवाच** = इति + उवाच। **ग्राम्येव** = ग्राम्या + इव। **अनाकृष्टदृष्टिः** = न आकृष्टा दृष्टिः यया सा (बहुव्रीहि)। **वेपमानाङ्गयष्टिः** = वेपमाना अंगयष्टिः यस्या सा (बहुव्रीहि)। **धनुर्गुणाकर्षणकृतकिणश्यामलम्** = धनुःर्गुणस्य आकर्षणेन कृतः किणः तेन श्यामलम् यत् तत् (बहुव्रीहि)। **स्वभावपाटलम्** = स्वभावतः पाटलम् यस्य सः (बहुव्रीहि)।

शब्दार्थः – अनामयम् = रोगहीनता, कुशलक्षेम। **सखीप्रेम्णा** = सखी के स्नेह से। **गृहनिवासेन** = घर में रहने के कारण। **कृतापराधेव** = मानो अपराध करने के कारण डरी हुई–सी (अपराधिनी जैसी)। **कृच्छ्रादिव** = कठिनता से। **आचचक्षे** = कही। **मुहूर्तापगमे** = कुछ समय बीतने पर। **ताम्** = उससे (कादम्बरी से)। **अभाषत** = बोली। **सर्वाभिरस्माभिः** = सभी लोगों द्वारा। **अभिनवागतः** = तुरन्त-तुरन्त आया हुआ। **आराधनीयः** = (अतिथि रूप में) सत्कार योग्य हैं। **दीयताम्** = दो (प्रदान करो)। **अव्यक्तमिव** = अप्रकट रूप से। **अनुपजातपरिचयः** = परिचय न होने से। **प्रागल्भ्येनानेन** = इस प्रगल्भता से। **इत्युवाच** = इस प्रकार कहा। **अभिधीयमाना** = कही जाने पर। **ग्राम्येव** = ग्रामीण स्त्री के समान। **चिरात्** = बड़ी देर के बाद। **दानाभिमुखम्** = देने की ओर। **मनश्चक्रे** = मन किया। **अनाकृष्टदृष्टिरेव** = अपलक अर्थात् बिना दृष्टि हटाये ही। **वेपमानाङ्गयष्टिः** = कांपते हुए देह से। **प्रसारयामास** = फैलाया। **ताम्बूलगर्भम्** = ताम्बूल युक्त। **स्वभावपाटलम्** = मूलरूप से लाल। **धनुर्गुणाकर्षणकृतकिणश्यामलम्** = धनुष की डोरी खींचने से पड़े हुए घट्ट के कारण काले। **पाणिम्** = हाथ को। **प्रसार्य** = फैलाकर। **प्रतिजग्राह** = ले लिया। **अपरम्** = दूसरा। **प्रायच्छत्** = दिया।

हिन्दी अनुवाद– महाश्वेता ने इसके बाद कादम्बरी से उसका कुशलक्षेम पूछा। अपनी सखी के प्रेम से पूर्ण होते हुए भी घर में निवास करने के कारण अर्थात् वनवासिनी नहीं बनने के कारण अपने-आप को अपराधी के रूप में स्वीकार करती हुई कादम्बरी ने ग्लानि के साथ बड़ी कठिनता से अपना कुशल समाचार कहा। थोड़ी देर बीतने पर पान देने को तैयार कादम्बरी से महाश्वेता ने कहा – ''सखि हम सभी को यह पहली बार आए अतिथि चन्द्रापीड का स्वागत करना चाहिए। अतः पान पहले इन्हें दो''। ऐसा कहने पर बहुत धीरे से अव्यक्त रूप में कादम्बरी ने कहा – ''सखि! पूर्व में चन्द्रापीड से परिचय न होने के कारण इस प्रकार की धृष्टता करने में मुझे संकोच हो रहा है। इसलिए लो तुम्हीं इन्हें (पान) दे दो''। महाश्वेता के बार-बार कहने पर ग्रामीण स्त्री की भाँति कादम्बरी ने बहुत देर बाद पान देने का निर्णय किया। महाश्वेता की ओर लगातार देखते हुए (अर्थात् चन्द्रापीड की ओर बिना देखे ही) काँपते हुये शरीर वाली कादम्बरी ने पानयुक्त पल्लव सदृश हाथ को फैलाया। स्वाभाविक रूप से लाल, किन्तु धनुष की डोरी खींचने के रगड़ से काले पड़े हुए हाथ को बढ़ाकर चन्द्रापीड ने पान ले लिया। इसके बाद उसने (कादम्बरी ने) दूसरा पान लेकर महाश्वेता को दिया।

प्रश्नाः

1. उपर्युक्त गद्यांश किस पुस्तक से उद्धृत है ?
2. महाश्वेतायै ताम्बूलं का प्रायच्छत् ?
3. ''अस्मै'' में कौन-सी विभक्ति है ?
4. ''महाश्वेतामुखात् अनाकृष्टदृष्टिरेव वेपमानाङ्गयष्टिः प्रसारयामास च ताम्बूलं गर्भं हस्तपल्लवम्'' – रेखांकित अंश का अनुवाद लिखिए।
5. महाश्वेता कादम्बरीम् किं पप्रच्छ ?

4. अत्रान्तरे कञ्चुकी समागत्य महाश्वेताम् अवोचत्– ''आयुष्मति, देवः चित्ररथः देवी च मदिरा त्वां द्रष्टुम् आह्वयतः'' इति। इत्येवम् अभिहिता गन्तुकामा महाश्वेता ''सखि! चन्द्रापीडः क्वास्ताम्?'' इति कादम्बरीम् अपृच्छत्। असौ तु ''सखि महाश्वेते, किमेवम् अभिदधासि ? दर्शनादारभ्य शरीरस्याप्ययमेव प्रभुः किमुत भवनस्य विभवस्य परिजनस्य वा, यत्रास्मै रोचते प्रियसखीहृदयाय वा, तत्र अयमास्ताम्'' इत्यवदत्। तत् श्रुत्वा महाश्वेता ''तत् अत्रैव त्वत्प्रासादसमीपवर्तिनि प्रमदवने क्रीडापर्वतकमणिवेश्मनि आस्ताम्'' इत्यभिधाय, गन्धर्वराजं द्रष्टुं ययौ। चन्द्रापीडोऽपि तयैव सह निर्गत्य, केयूरकेण उपदिश्यमानमार्गः, मणिमन्दिरम् अगात्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – क्वास्ताम् = क्व + आस्ताम्। **शरीरस्याप्ययमेव** = शरीरस्य + अपि + अयम् + एव। **यत्रास्मै** = यत्र + अस्मै। **इत्यभिधाय** = इति + अभिधाय। **त्वत्प्रासादसमीपवर्तिनी** = त्वत् + प्रासादस्य + समीपवर्तिनी।

शब्दार्थः – रोचते = अच्छा लगता है। **अत्रान्तरे** = इसी बीच। **समागत्य** = आकर। **अवोचत्** = कहा। **द्रष्टुम्** = देखने के लिए। **आह्वयतः** = बुला रहे हैं। **अभिहिता** = कही गयी। **गन्तुकामा** = जाने की इच्छावाली। **क्वास्ताम्** = कहाँ रहे। **अभिदधासि** = कहती हो। **प्रभुः** = स्वामी। **यत्रास्मै** = जहाँ इन्हें। **त्वत्प्रासादसमीपवर्तिनि** = तुम्हारे महल के पास। **प्रमदवने** = प्रमदवन में। **क्रीडापर्वतकमणिवेश्मनि** = क्रीड़ा पर्वत पर बने मणिगृह में। **आस्ताम्** = रहें। **इत्यभिधाय** = ऐसा कहकर। **ययौ** = चली गयी। **निर्गत्य** = निकलकर। **उपदिश्यमानमार्गः** = बताये हुए मार्ग से। **अगात्** = गया।

हिन्दी अनुवाद – इसी बीच महाश्वेता से कंचुकी ने आकर कहा – देवी, महाराज चित्ररथ और महारानी मदिरा आपको देखने के लिए बुला रहे हैं। इस प्रकार कहे जाने पर जाने की इच्छा वाली महाश्वेता ने ''सखि! चन्द्रापीड कहाँ रहेंगे''? ऐसा कादम्बरी से पूछा। उसने (कादम्बरी) ने कहा –''सखि महाश्वेता, ऐसा क्यों कह रही हो ? दर्शन के प्रारम्भ से (अर्थात् जब से मैंने इन्हें देखा है तभी से) ये (चन्द्रापीड) मेरे शरीर के स्वामी बन गये हैं, फिर महल, धन-वैभव और सेवकों की क्या बात है – जहाँ इन्हें अच्छा लगे और जहाँ तुम्हें अच्छा लगे, वहाँ ये रहें। महाश्वेता ने यह सुनकर कहा – ''तब यहाँ ही तुम्हारे महल के समीप प्रमदवन में बने क्रीडापर्वतक के मणिमन्दिर में रहेंगे'' – ऐसा कहकर (वह) गंधर्वराज को देखने चली गयी। उसके साथ निकल कर चन्द्रापीड भी केयूरक के दिखाये मार्ग से (क्रीडापर्वतक के) मणिमय भवन (मणि महल) में चला गया।

प्रश्नाः

1. उपर्युक्त गद्यांश की पुस्तक तथा लेखक का नाम लिखिए।
2. कः समागत्य महाश्वेताम् अवोचत् ?
3. ''आयुष्मति, देवः चित्ररथः देवी च मदिरा त्वां द्रष्टुम् आह्वयतः'' रेखांकित अंश का अनुवाद लिखिए।
4. चन्द्रापीडः केयूरकेण उपदिश्यमानमार्गः कुत्र अगात् ?
5. चन्द्रापीडः कस्याः प्रसादसमीपवर्तिनि प्रमदवने क्रीडापर्वतकमणिवेश्मनि आस्ताम् ?

5. गते च तस्मिन् गन्धर्वराजपुत्री, विसृज्य सकलं सखीजनम् परिजनं च प्रासादम् आरुरोह। तत्र च शयनीये निपत्य, एकाकिनी एवं चिन्तयामास– "अहो! किमिदम् आरब्धं चपलया मया। न परीक्षिता अस्य चित्तवृत्तिः। परित्यक्तः कुलकन्यकानां क्रमः। गुरुजनात् न त्रस्तम्। लोकापवादात् नोद्विग्नम्। आसन्नवर्ती, सखीजनोऽपि उपलक्षयतीति मन्दया मया न लक्षितम्। तथा महाश्वेताव्यतिकरेण प्रतिज्ञा कृता श्रुत्वैतं वृत्तान्तं किं वक्ष्यति अम्बा तातो वा ? किं करोमि ? केनोपायेन स्खलितम् इदं प्रच्छादयामि ? पूर्वकृतापुण्यसंचयेनैवायम् आनीतो मम विप्रलम्भकः चन्द्रापीडः' इति संचिन्त्य गुर्वीम् लज्जाम् उवाह।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – इत्यवदत् = इति + अवदत। **लोकापवादात्** = लोकस्य अपवादः तस्मात् (षष्ठी तत्पुरुषः)। **केनोपायेन** = केन + उपायेन। **विसृज्य** = वि + सृज् + ल्यप्। **निपत्य** = नि + पत् + ल्यप्। **सञ्चिन्त्य** = सम् + चिन्त् + ल्यप्।

शब्दार्थः – गते च तस्मिन् = उसके चले जाने पर। **गन्धर्वराजपुत्री** = गन्धर्वराज चित्ररथ की बेटी। **विसृज्य** = छोड़कर। **परिजनम्** = सेविकाओं को। **प्रासादम् आरुरोह** = महल पर चढ़ गयी। **शयनीये** = बिस्तर पर। **निपत्य** = लेटकर। **एकाकिनी** = अकेली। **चिन्तयामास** = विचार किया। **आरब्धम्** = किया। **चपलया मया** = मुझ चंचला ने। **न परीक्षिता** = पता नहीं लगाया। **अस्य चित्तवृत्तिः** = इसके (चन्द्रापीड के) मन के भावों को। **परित्यक्तः** = छोड़ दिया। **कुलकन्यकानां क्रमः** = कुलीन कन्याओं की परिपाटी। **न त्रस्तम्** = नहीं डरी। **लोकापवादात्** = संसार की बदनामी से। **नोद्विग्नम्** = घबरायी नहीं। **आसन्नवर्ती** = समीप में स्थित। **सखीजनोऽपि** = सखियाँ भी। **उपलक्षयतीति** = देखती है। **मन्दया मया** = मुझ मन्द बुद्धि ने। **न लक्षितम्** = नहीं देखा, नहीं सोचा। **महाश्वेता व्यतिकरेण** = महाश्वेता के सम्बन्ध में। **प्रतिज्ञा कृता** = प्रतिज्ञा की। **किं वक्ष्यति** = क्या कहेंगे। **केनोपायेन** = किस उपाय से। **स्खलितम् इदम्** = इस गलती को। **प्रच्छादयामि** = ढकूँ छिपाऊँ। **पूर्वकृतापुण्यसंचयेनैव** = मेरे पूर्व जन्म के संचित पापों द्वारा ही। **आनीतः** = लाया गया है। **मम विप्रलम्भकः** = मुझे ठगने वाला। **संचिन्त्य** = सोचकर। **गुर्वीम्** = बहुत भारी। **उवाह** = धारण किया।

हिन्दी अनुवाद–गंधर्वराजपुत्री अर्थात् कादम्बरी (चन्द्रापीड के) उसके चले जाने पर सभी सखियों और सेविकाओं को छोड़कर महल पर चढ़ गयी और वहाँ बिस्तर पर लेट कर अकेली इस प्रकार विचार करने लगी – अरे, मुझ चंचला ने यह क्या कर डाला। इसकी (चन्द्रापीड की) भावनाओं की (मनोभावों अर्थात् कादम्बरी के प्रति आसक्ति की) परीक्षा नहीं ली। कुलवन्ती कन्याओं (कुलीन कन्याओं) की परम्परा को छोड़ दिया। गुरुजनों से (भी) भयभीत नहीं हुई। लोकापवाद अर्थात् संसार की निंदा से भी व्याकुल (उद्विग्न) नहीं हुयी। समीप में रहने वाली सखियाँ भी देख रही हैं (समझ रही हैं) मुझ मूर्ख (मन्द बुद्धि) ने इसका भी ध्यान नहीं रखा। और महाश्वेता के सम्बन्ध से अविवाहित रहने की प्रतिज्ञा की थी, किन्तु इस घटना को (चन्द्रापीड के प्रति मेरे आकर्षण को) सुनकर (जानकर) माता-पिता क्या कहेंगे। क्या करूँ ? किस प्रकार से इस गलती पर पर्दा डालूँ अर्थात् किस प्रकार इस प्रकरण को छिपाऊँ ? मेरे पूर्व जन्म के संचित पापों द्वारा ही मुझे छलने वाले इस चन्द्रापीड को यहाँ लाया गया है। इस प्रकार विचार कर (वह) बहुत अधिक लज्जित हो उठी।

प्रश्नाः

1. ''आसन्नवर्ती, सखीजनोऽपि उपलक्षयतीति मन्दया मया न लक्षितम्'' – रेखांकित अंश का अनुवाद लिखिए।
2. कस्य न परीक्षिता चित्तवृत्तिः ?
3. कासां क्रमः परित्यक्तः ?
4. गन्धर्वराजपुत्री, विसृज्य सकलं सखीजनं परिजनं च कुत्र आरुरोह ?
5. कादम्बरी कुत्र निपत्य, एकाकिनी एवं चिन्तयामास ?
6. **चन्द्रापीडोऽपि प्रविश्य मणिगृहम्, शिलातलास्तीर्णायाम् उभयतः उपर्युपरि निवेशित-बहूपधानायां कुथायां निपत्य, केयूरकेण उत्सङ्गे गृहीतचरणयुगलः दोलायमानेन चेतसा चिन्तां विवेश। 'किं तावत् अस्याः कादम्बर्याः सहभुवः एते विलासाः ? आहोस्वित् अनाराधितप्रसन्नेन मकरकेतुना मयि नियुक्ताः ? येन मां सरागेण चक्षुषा तिर्यक् विलोकयति, आलोकिता च लज्जया आत्मानम् आवृणोति' इति। भूयश्चाचिन्तयत् 'किमनेन वृथैव मनसा खेदितेन ? यदि सत्यमेवेयं धवलेक्षणा मय्येवं जातचित्तवृत्तिः, न चिरात् स एवैनाम् अप्रार्थितानुकूलः मन्मथः प्रकटीकरिष्यति, स एवास्य संशयस्य छेत्ता भविष्यति' स इत्यवधार्य, विनोदार्थं कादम्बर्या प्रहिताभिः कन्यकाभिः सह अक्षैः, गेयैः विपञ्चीवाद्यैः, स्वरसंदेहविवादैः सुभाषितगोष्ठीभिः अन्यैश्च सरसालापैः क्रीडन् आसांचक्रे।**

व्याकरणात्मक टिप्पणी – शिलातलास्तीर्णायाम् = शिलातले आस्तीर्णायाम् (सप्तमी तत्पुरुष)। **निवेशितबहूपधानायाम्** = निवेशितानि बहुपधानानि यस्याम् (बहुव्रीहि)। **गृहीतचरणयुगलः** = गृहीतं चरणयुगलम् यस्य सः (बहुव्रीहि)। **भूयश्चाचिन्तयत्** = भूयः + च + अचिन्तयत्। **सत्यमेवेयम्** = सत्यम् + एव + इयम्। **मय्येव** = मयि + एव। **जातचित्तवृत्तिः** = जाता चित्तवृत्तिः यस्याः सा (बहुव्रीहि)। **इत्यवधार्य** = इति + अवधार्य। **अप्रार्थितानुकूलः** = न प्रार्थितः अप्रार्थितः सन् अनुकूलः (नञ् तत्पुरुष)।

शब्दार्थः – उभयतः = दोनों। **उपर्युपरि** = ऊपर-ऊपर। **निवेशितबहूपधानायाम्** = जिसके ऊपर बहुत तकिये रखे हुए हैं। **शिलातलास्तीर्णायाम्** = शिला तल पर बिछाई गई। **कुथायाम्** = कालीन पर। **निपत्य** = लेट कर। **उत्सङ्गे** = गोद में। **गृहीतचरणयुगलः** = जिसके दोनों पैर पकड़ लिये गये हैं। **दोलायमानेन** = हिलते हुए (अर्थात् चंचल)। **चेतसा** = हृदय (मन) से। **चिन्तां विवेश** = चिन्ता में पड़ गया अर्थात् सोचने लगा। **सहभुवः** = साथ उत्पन्न होने वाली (स्वाभाविक)। **एते विलासाः** = यह काम क्रीड़ाएं। **अनाराधितप्रसन्नेन** = बिना आराधना के प्रसन्न होने वाले। **मकरकेतुना** = कामदेव द्वारा। **मयि नियुक्ताः** = मुझमें उत्पन्न की गयी। **सरागेण चक्षुषा** = प्रेमयुक्त नेत्रों से। **तिर्यक् विलोकयति** = तिरछा देखती है। **आलोकिता** = देखी जाने पर। **लज्जया** = लज्जा के कारण। **आत्मानम्** = अपने आप को। **आवृणोति** = छिपा लेती है। **भूयश्चाचिन्तयत्** = फिर सोचा। **वृथैव** = व्यर्थ ही। **मनसा खेदितेन** = मन के दुःखी होने से। **सत्यमेवेयम्** = सचमुच

ही यह। **धवलेक्षणा** = स्वच्छ दृष्टि वाली। **मय्येव** = मुझ पर इस प्रकार। **न चिरात्** = जल्दी ही, शीघ्र ही। **अप्रार्थितानुकूलः** = बिना प्रार्थना के ही अनुकूल। **मन्मथः** = कामदेव। **प्रकटीकरिष्यति** = प्रकट करेगा। **स एव** = वही। **संशयस्य** = शंका का। **छेत्ता भविष्यति** = काटने वाला होगा। **इत्यवधार्य** = ऐसा निश्चय करके। **विनोदार्थम्** = मनोरंजन के लिए। **प्रहिताभिः** = भेजी गयी। **अक्षैः** = जुआ से। **गेयैः** = गीतों से। **विपञ्चीवाद्यैः** = वीणा बजाने से। **स्वरसंदेहविवादैः** = स्वर में संदेह होने के तर्क से। **सुभाषितगोष्ठीभिः** = मधुर गोष्ठियों से। **सरसालापैः** = मधुर बातचीत से, वार्तालाप से। **क्रीडन् आसांचक्रे** = खेलता रहा।

हिन्दी अनुवाद – मणिगृह में जाकर शिला पर बिछी हुई तथा दोनों ओर ऊपर–ऊपर रखी हुई अनेक तकियों वाले गलीचे (कालीन) पर लेट गया। केयूरक के द्वारा अपनी गोद में रखे हुए पैरों वाला चन्द्रापीड चलायमान (चंचल) चित्त से सोचने लगा – 'क्या कादम्बरी की ये विलासपूर्ण क्रियाएँ स्वभाविक हैं ? क्या बिना प्रार्थना (अर्चना) के ही प्रसन्न हो जाने वाले कामदेव ने उसे (कादम्बरी को) मुझमें आसक्त किया है? जिससे वह अनुरागपूर्वक मुझे तिरछी दृष्टि से देखती है और (मेरे द्वारा) देखे जाने पर लज्जा से अपने को छिपा लेती है। पुनः सोचा कि इस प्रकार मन ही मन में दुःखी होना व्यर्थ हैं। यदि सच में उस चमकदार आँखों वाली (कादम्बरी) का प्रेम मेरे प्रति होगा तो बिना चाहे ही अर्थात् बिना आराधना के ही मेरे प्रति अनुकूल हो जाने वाला कामदेव शीघ्र ही उसके प्रेम को प्रकट कर देगा। वही इस संदेह को काटने (दूर करने) वाला होगा।' ऐसा निर्णय करके वह चन्द्रापीड मनोरंजन लिए कादम्बरी द्वारा भेजी गई कन्याओं के साथ जुआ, गीत, वीणावादन, स्वरों के विषय में तर्क-वितर्क, सुभाषित, गोष्ठी तथा अन्य मधुर वार्तालाप द्वारा क्रीडाएँ करता रहा।

प्रश्नाः

1. उपर्युक्तगद्यांशस्य पुस्तकस्य लेखकस्य नाम किम्?
2. 'आलोकिता च लज्जा आत्मानम् आवृणोति'– रेखांकित अंश का अनुवाद लिखिए।
3. मणिगृहं कः प्राविशत् ?
4. अनाराधितप्रसन्नेन केन मयि नियुक्ताः ?
5. चन्द्रापीडः मणिगृहं प्रविश्य कस्याम् निपत्य चिन्तां विवेश ?

7. एवं मुहूर्तं स्थित्वा, कादम्बरीपरिजनेन निर्वर्तितस्नानविधिः, अर्चिताभिमतदैवतः, क्रीडापर्वतके एव सर्वम् आहारादिकम् अहःकर्म चक्रे। अथ क्रीडापर्वतकस्य प्राग्भागे मनोहारिणि मरकतशिलातले समुपविष्टः दृष्टवान् सहसैव धवलेनालोकेन विलिप्यमानम् अम्बरतलम्। अद्राक्षीच्च मदलेखाम् आगच्छन्तीम् तस्याश्च समीपे तरलिकाम्, तया च सितांशुकोपच्छदे पटलके गृहीतं शरच्छशिनम् इव प्रभावर्षिणम् अतितारं हारम्। दृष्ट्वा च 'इदम् अस्य धवलिम्नः कारणम्' इति निश्चित्य, प्रत्युत्थानादिना समुचितेन उपचारेण मदलेखां

प्रतिजग्राह। सा तस्मिन्नेव मरकतग्राव्णि मुहूर्तम् उपविश्य, स्वयम् उत्थाय, चन्द्रापीडं चन्दनेन अनुलिप्य, द्वे दुकूले परिधाप्य, तैश्च मालतीकुसुमदामभिः आरचितशेखरं कृत्वा, तं हारम् आदाय उवाच।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– प्रत्युत्थानादिना = प्रति + उत्थान + आदिना। **कादम्बरीपरिजनेन** = कादम्बर्याः परिजनः तेन (षष्ठी तत्पुरुष)। **निवर्तितस्नानविधिः** = निर्वर्तितः स्नानविधिः यस्य सः (बहुव्रीहि)। **अर्चिताभिमतदैवतः** = अर्चितः अभिमतदैवतः येन सा (बहुव्रीहि)। **धवलेनालोकेन** = धवलेन + आलोकेन। **अद्राक्षीच्च** = अद्राक्षीत् + च। **शरच्छशिनम्** = शरत् + शशिनम्। **आरचितशेखरम्** = आरचितः शेखरः यस्य तम् (बहुव्रीहि)।

शब्दार्थः–कादम्बरीपरिजनेन = कादम्बरी के सेवकों द्वारा। **निवर्तितस्नानविधिः** = स्नान क्रिया को समाप्त करने वाला। **अर्चिताभिमतदैवतः** = इष्टदेव की पूजा करने वाला। **क्रीडापर्वतके एव** = क्रीडापर्वत पर ही। **आहारादिकम्** = भोजनादि। **अहःकर्म** = दिन का कार्य। **प्राग्भागे** = पूर्व की ओर। **मनोहारिणि** = सुन्दर। **मरकतशिलातले** = मरकतमणि की चट्टान पर। **समुपविष्टः** = बैठा हुआ। **सहसैव** = अचानक। **धवलेनालोकेन** = शुभ्र प्रकाश से। **विलिप्यमानम्** = लिपा हुआ। **अद्राक्षीच्च** = और देखा। **आगच्छन्तीम्** = आती हुई। **सितांशुकोपच्छदे** = श्वेत रेशम में लिपटे। **पटल के** = संपुट में। **शरच्छशिनम्** = शरद के चन्द्रमा के समान। **प्रभावर्षिणम्** = प्रकाश की वर्षा करने वाले। **अतितारम्** = तारों से भी अधिक। **हारम्** = माला को। **धवलिम्नः** = उज्ज्वलता का। **प्रत्युत्थानादिना** = उठाने आदि से। **उपचारेण** = स्वागत से। **प्रतिजग्राह** = गृहण किया। **मरकतग्राव्णि** = मरकत मणि पर। **उपविश्य** = बैठकर। **अनुलिप्य** = लेप करके। **द्वे दुकूले** = दो कपड़े। **मालतीकुसुमदामभिः** = मालती पुष्प की माला से। **आरचितशेखरम्** = सिर को सजाकर। **आदाय** = लेकर। **उवाच** = बोली।

हिन्दी अनुवाद – इस प्रकार थोड़ी देर रुककर चन्द्रापीड ने कादम्बरी के सेवकों की सहायता से स्नानक्रिया समाप्त करके, अभीष्ट देवताओं की पूजा आदि को पूरा करके, क्रीडापर्वतक पर ही भोजनादि प्रतिदिन किये जाने वाले सभी कार्यों को पूरा किया। तत्पश्चात् चन्द्रापीड ने क्रीडापर्वतक के पूर्वी हिस्से में सुन्दर मरकत की शिला पर बैठे हुए अचानक अत्यन्त चमकदार हो जाने वाले आकाश को देखा और उसने उजले रेशम से ढकी हुई पोटली में चन्द्रमा के समान प्रकाश फैलाने वाले तारों से भी उत्तम हार को लिए हुए तरलिका के साथ आती हुई मदलेखा को भी देखा और हार को देखकर यही इस धवलता (उज्ज्वलता) का कारण है, ऐसा निश्चय करके उठकर उचित शिष्टाचारपूर्वक मदलेखा का स्वागत किया। उसी मरकतशिला पर थोड़ी देर बैठने के उपरान्त मदलेखा ने स्वयं उठकर चन्द्रापीड को चन्दन का लेप लगाया, दो वस्त्रों को पहनाया, मालती पुष्पों की माला को मस्तक पर सजाया और उस हार को लेकर कहा।

प्रश्नाः

1. कः मदलेखां प्रतिजग्राह ?
2. मदलेखा केन दृष्टा ?
3. चन्द्रापीडः केन निर्वर्तितस्नानविधिः ?
4. 'अथ क्रीडापर्वतकस्य प्राग्भागे मनोहारिणि मरकतशिलातले समुपविष्टः दृष्टवान्'– रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।

8. ''कुमार! शेषनामा हारोऽयं भगवता अम्भसां पत्या गृहम् उपगताय प्रचेतसे दत्तः। पाशभृतापि गन्धर्वराजाय, गन्धर्वराजेनापि कादम्बर्यै, तयापि त्वद्वपुः अस्य अनुरूपमिति विभावयन्त्या अनुप्रेषितः। अतः अर्हति इयं बहुमानं त्वत्तः महाश्वेतयापि कुमारस्य संदिष्टम् न खलु महाभागेन मनसापि कार्यः कादम्बर्याः प्रथमप्रणयभङ्गः'' इति उक्त्वा तं तस्य वक्षःस्थले बबन्ध। चन्द्रापीडस्तु विस्मयमानः प्रत्यवादीत् ''मदलेखे, निपुणासि। जानासि ग्राहयितुम्। उत्तरावकाशम् अपहरन्त्या कृतं वचसि कौशलम्'' इत्युक्त्वा कादम्बरीसंबद्धाभिरेव कथाभिः सुचिरं स्थित्वा, विसर्जयाम्बभूव मदलेखाम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी–पाशभृतापि = पाशभृता + अपि। **त्वद्वपुः** = त्वत् + वपुः। **अनुरूपमिति** = अनुरूपम् + इति। **मनसापि** = मनसा + अपि। **उत्तरावकाशम्** = उत्तर + अवकाशम्। **इत्युक्त्वा** = इति + वच् + क्त्वा। **ग्राहयितुम्** = ग्रह् + णिच् + तुमुन्। **हारोऽयम्** = हारः + अयम्। **उपगताय** = उप + गम् + क्त, चतुर्थी एकवचन। **प्रत्यवादीत्** = प्रति + अवादीत् (यण् सन्धि)। **कादम्बरीसंबद्धाभिरेव** = कादम्बर्या + संबद्धाभिः + एव।

शब्दार्थः– अम्भसां पत्या = जलपति (समुद्र) द्वारा। **प्रचेतसे** = वरुण को। **पाशभृतापि** = वरुण द्वारा भी। **गन्धर्वराजाय** = गन्धर्वराज के लिये। **त्वद्वपुः** = तुम्हारा शरीर। **अस्य अनुरूपमिति** = इसके योग्य है। **विभावयन्त्या** = विचार करती हुई। **अनुप्रेषितः** = भेजा है। **अर्हति इयम् बहुमानं त्वत्तः** = यह (कादम्बरी) आप से सम्मान पाने योग्य है। **संदिष्टम्** = संदेश दिया है। **मनसापि** = मन से भी। **कार्यः** = कराना चाहिए। **प्रथमप्रणयभङ्गः** = पहले कामभावना का नाश। **उक्त्वा** = कहकर। **वक्षस्थले** = छाती पर। **बबन्ध** = बाँध दिया। **विस्मयमानः** = चकित होते हुए। **प्रत्यवादीत्** = उत्तर दिया। **निपुणासि** = चतुर हो। **जानासि** = जानती हो। **ग्राहयितुम्** = ग्रहण कराना। **उत्तरावकाशम्** = उत्तर का अवसर। **अपहरन्त्या** = दूर करती हुई। **वचसि** = वाणी में। **कादम्बरीसम्बद्धाभिः** = कादम्बरी से सम्बन्धित। **कथाभिः** = बातचीत से। **सुचिरम्** = देर तक। **विसर्जयाम्बभूव** = विदा किया।

हिन्दी अनुवाद–''कुमार! 'शेष' नाम का हार है, भगवान् जलपति (समुद्र) ने घर आये हुए वरुण को, वरुण द्वारा भी गन्धर्वराज (चित्ररथ) को और चित्ररथ द्वारा भी कादम्बरी को दिया गया था, यह आपके अनुरूप (अंग पर ही शोभायमान होने) योग्य है ऐसा सोचकर कादम्बरी ने इसे (हार को) आपके

पास भिजवाया है, अतः इसे ग्रहण करके आपको (कादम्बरी का) सम्मान करना चाहिए। देवी महाश्वेता ने भी आपको संदेश भेजा है कि आप कादम्बरी के इस प्रथम प्रणय (प्रथम प्रेमोपहार) को अस्वीकार न करें, ऐसा कहकर मदलेखा ने हार को चन्द्रापीड के वक्षःस्थल पर बाँध दिया। चन्द्रापीड ने आश्चर्यचकित होकर कहा – "मदलेखा, तुम बहुत चतुर हो। ग्रहण कराना जानती हो। (मुझे) उत्तर का अवसर दिये बिना ही तुमने अपने वाक्चातुर्य्य को प्रकट कर दिया। ऐसा कहकर उसने बहुत देर तक कादम्बरी के विषय में वार्तालाप करके मदलेखा को विदा किया।

प्रश्नाः

1. पाशभृता गन्धर्वराजाय किं दत्तः ?
2. 'कादम्बरीसंबद्धाभिरेव कथाभिः सुचिरं स्थित्वा, विसर्जयांबभूव मदलेखाम्' रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।
3. हारस्य किं नामास्ति ?
4. भगवता अम्भसां पत्या गृहम् उपगताय हारः कस्मै दत्तः ?

9. अथ अदर्शनम् उपगते भगवति गभस्तिमालिनि, चन्द्रापीडः गृहकुमुदिन्याः तीरे चन्दनरसैः क्षालितम् कादम्बरीपरिजनोपदिष्टम् शिलापट्टम् अधिशिश्ये। कादम्बरी तु मदलेखया सह तत्र आगत्य, कंचित् कालं स्थित्वा, कृतप्रस्तावा "कथं राजा तारापीडः ? कथं देवी विलासवती ? कथम् आर्यः शुकनासः ? कीदृशी च उज्जयिनी ? कियत्यध्वनि सा ? कीदृशं भारतं वर्षम् ?" इत्यशेषं पप्रच्छ। एवं विविधाभिश्च कथाभिः सुचिरं स्थित्वा उत्थाय कादम्बरी, केयूरकं चन्द्रापीडसमीपशायिनम् आदिश्य, शयनसौधशिखरम् आरुरोह। तत्र च सितदुकूलवितानतलास्तीर्णम् शयनम् अभजत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी–कियत्यध्वनि = कियति + अध्वनि। **इत्यशेषम्** = इति + अशेषम्। **सितदुकूलवितानतलास्तीर्णम्** = सितं दुकूलं इति सितदुकूलं तन्निर्मितं वितानं तस्य तले आस्तीर्णम्। **स्थित्वा** = स्था + क्त्वा। **कादम्बरीपरिजनोपदिष्टम्** = कादम्बर्याः परिजनैः उपदिष्टम्। **शिलापट्टम्** = शिलायाः पट्टम्। **आगत्य** = आ + गम् + ल्यप्। **उत्थाय** = उद् + स्था + ल्यप्। **चन्द्रापीडसमीपशायिनम्** = चन्द्रापीडस्य समीपे शायिनम्।

शब्दार्थः– अदर्शनम् उपगते = छिप जाने पर। **गभस्तिमालिनि** = किरणमाली सूर्य। **गृहकुमुदिन्याः तीरे** = घर की बावड़ी के किनारे। **परिजनोपदिष्टम्** = सेविकाओं द्वारा बताये गये। **अधिशिश्ये** = सो गया। **आगत्य** = आकर। **कंचित् कालम्** = कुछ समय। **स्थित्वा** = ठहरकर। **कृतप्रस्तावा** = बातचीत करती हुई। **कीदृशी** = कैसी। **कियत्यध्वनि** = कितनी दूर। **इत्यशेषम्** = इस प्रकार सब। **पप्रच्छ** = पूछा। **विविधाभिश्च** = तरह-तरह की। **समीपशायिनम्** = पास में सोने का। **आदिश्य** = आज्ञा देकर। **शयनशौधशिखरम्** = शयन करने के महल के ऊपरी भाग में। **आरुरोह** = चढ़ गयी। **सितदुकूलवितानतलास्तीर्णम्** = श्वेतमण्डप के नीचे बिछी हुई। **शयनम् अभजत्** = शयन किया।

हिन्दी अनुवाद– तत्पश्चात् चन्द्रापीड ने किरणमाली भगवान सूर्य के अस्त हो जाने पर, घर की बावड़ी के तट पर कादम्बरी की सेविकाओं द्वारा बतायी गयी, चन्दन के रस से धुली शिला पर शयन किया। मदलेखा के साथ कादम्बरी ने वहाँ आकर, कुछ देर रुककर ''राजा तारापीड कैसे हैं ? देवी विलासवती कैसी हैं ? आर्य शुकनास कैसे हैं ? उज्जयिनी कैसी है ? वह कितनी दूर है ? भारतवर्ष कैसा है ? इस प्रकार सब पूछा और तरह-तरह की बातों में देर तक रुककर कादम्बरी ने उठकर केयूरक को चन्द्रापीड के पास सोने का आदेश देकर सोनेके लिए महल के ऊपर छत पर चली गयी, और वहाँ (उसने) सफेद, वितान के नीचे बिछे हुए पलंग पर शयन किया।

प्रश्नाः

1. ''शयनसौधशिखरम्'' का शाब्दिक अर्थ लिखिए।
2. ''भगवति'' इत्यस्मिन् पदे विभक्तिः वचनञ्च निर्दिशत।
3. चन्द्रापीडः कस्याः तीरे शिलापट्टम् अधिशिश्ये ?
4. ''कादम्बरी तु मदलेखा सह तत्र आगत्य'' – रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।

10. चन्द्रापीडोऽपि तत्रैव शिलातले, निरभिमानताम् अतिगम्भीरतां च कादम्बर्याः, निष्कारणवत्सलतां महाश्वेतायाः, अतिसमृद्धिं च गन्धर्वराजलोकस्य मनसा भावयन्, केयूरकेण संवाह्यमानचरणः, क्षणादिव क्षणदां क्षपितवान्। अथ समुद्गते सवितरि, शिलातलात् उत्थाय चन्द्रापीडः प्रक्षालितमुखकमलः, कृतसन्ध्यानमस्कृतिः गृहीतताम्बूलः ''केयूरक! विलोकय, देवी कादम्बरी प्रबुद्धा वा न वा ? क्व सा तिष्ठति ?'' इत्यवोचत्। गतप्रतिनिवृत्तेन च तेन ''देव! मन्दरप्रासादस्य अधस्तात्, अङ्गणसौधवेदिकायां महाश्वेतया सह अवतिष्ठते'' इत्यावेदिते, ताम् आलोकितुम् आजगाम। दृष्ट्वा च कादम्बरीं समुपसृत्य, तस्यामेव सुधावेदिकायां विन्यस्तम् आसनं भेजे।

व्याकरणात्मक टिप्पणी–संवाह्यमानचरणः = संवाह्यमानौ चरणौ यस्य सः (बहुव्रीहि)। **प्रक्षालितमुखकमलः** = प्रक्षालितं मुखकमलं येन सः (बहुव्रीहि)। **कृतसंध्यानमस्कृतिः** = कृता संध्यायाः नमस्कृतिः येन सः। **इत्यवोचत्** = इति + अवोचत्। **इत्यावेदिते** = इति + आवेदिते। **समुपसृत्य** = सम् + उप + सृ + ल्यप्। **गृहीतताम्बूलः** = गृहीतं ताम्बूलं येन सः (बहुव्रीहि)। **चन्द्रापीडोऽपि** = चन्द्रापीडः + अपि। **समुद्गते** = सम् + उत् + गम् + क्त सप्तमी वि0 एकवचन। **उत्थाय** = उद् + स्था + ल्यप्। **दृष्ट्वा** = दृश् + क्त्वा। **समुपसृत्य** = सम् + उप + सृ + ल्यप्। **तस्यामेव** = तस्याम् + एव।

शब्दार्थः–निरभिमानताम् = अभिमानहीनता। **अतिगम्भीरताम्** = अत्यन्त गम्भीरता को। **निष्कारणवत्सलताम्** = निःस्वार्थ स्नेह को। **अतिसमृद्धिम्** = अत्यन्त वैभव। **मनसा भावयन्** = मन में सोचते हुए। **संवाह्यमानचरणः** = जिसके पैरों को दबाया जा रहा हो। **क्षणादिव** = पलभर के समान। **क्षणदाम्** = रात को। **क्षपितवान्** = बिता दिया। **समुद्गते सवितरि** = सूर्य निकलने पर।

प्रक्षालितमुखकमलः = कमल जैसे मुख को धोने वाले। **कृतसंध्यानमस्कृतिः** = प्रातःकालीन सन्ध्या-वन्दन करने वाले। **गृहीतताम्बूलः** = पान ग्रहण करने वाले। **विलोकय** = देखो। **प्रबुद्धा** = जगी हुई। **इत्यवोचत्** = इस प्रकार कहा। **प्रतिनिवृत्तेन** = जाकर वापस आने वाले। **मन्दरप्रासादस्य** = मन्दर महल के। **अधस्तात्** = नीचे। **अङ्गणसौधवेदिकायाम्** = महल के आँगन की सफेद वेदी पर। **अवतिष्ठते** = बैठी हैं। **इत्यावेदिते** = ऐसा निवेदन करने पर। **आलोकितुम्** = देखने के लिए। **आजगाम** = आया। **समुपसृत्य** = पास जाकर। **सुधावेदिकायाम्** = उज्ज्वल वेदी पर। **विन्यस्तम्** = रखे हुए। **आसनम् भेजे** = आसन को ग्रहण किया।

हिन्दी अनुवाद– कादम्बरी की गर्वहीनता अर्थात् सरलता तथा अत्यन्त गम्भीरता, महाश्वेता का निष्प्रयोजन प्रेम और गन्धर्वराज की समृद्धि के विषय में मन ही मन सोचते हुए (और) केयूरक द्वारा दबाये जाते हुए पैर वाले चन्द्रापीड ने भी उसी शिला तल पर पूरी रात को (मानों) क्षण भर के समान व्यतीत कर दिया। तत्पश्चात् चन्द्रापीड ने सूर्योदय होने पर शिलातल से उठकर अपने कमलरूपी मुख को धोया, प्रातः वंदन किया और पान ग्रहण कर (खाकर) (केयूरक को) आदेश दिया–''हे केयूरक! देखो, देवी कादम्बरी जगी हैं या नहीं ? वह (इस समय) कहाँ हैं ?'' वहाँ जाकर और वापस आकर केयूरक बोला–''देव! वह महाश्वेता के साथ महल के अंदर नीचे आँगन की सफेद वेदिका पर बैठी हैं।'' ऐसा कहे जाने पर उसको (कादम्बरी को) देखने के लिए आया और देखकर, कादम्बरी के समीप जाकर उसी उज्ज्वल वेदी पर रखे हुए आसन को ग्रहण किया।

प्रश्नाः

1. कः क्षणादिव क्षणदां क्षपितवान्?
2. कादम्बरी अङ्गणसौधवेदिकायां कया सह अवतिष्ठते ?
3. 'अथ समुद्गते सवितरि, शिलातलात् उत्थाय चन्द्रपीडः प्रक्षालितमुखकमलः' – रेखांकित अंश का अनुवाद लिखिए।
4. कादम्बरीं दृष्ट्वा चन्द्रापीडः कुत्र आसनं भेजे ?

11. स्थित्वा च कंचित् कालम् महाश्वेतायाः वदनं विलोक्य, मन्दस्मितम् अकरोत्। असौ तु तावतैव विदिताभिप्राया कादम्बरीम् अब्रवीत्– ''सखि ! जिगमिषति खलु कुमारः, पृष्ठतः राजचक्रम् अविदितवृत्तान्तं दुःखम् आस्ते। युवयोः दूरस्थितयोरपि कमलिनीकमल-बान्धवयोरिव स्थिरेयं प्रीतिः आप्रलयात्। अतः अभ्यनुजानातु भवती'' इति। अथ कादम्बरी 'स्वाधीनोऽयं जनः कुमारस्य, कोऽत्रानुरोधः ? इत्यभिधाय गन्धर्वकुमारान् आहूय, ''प्रापयत कुमारं स्वां भूमिम्'' इति आदिदेश। चन्द्रापीडोऽपि उत्थाय प्रणम्य प्रथमं महाश्वेताम्, ततः कादम्बरीम् ''देवि ! किं ब्रवीमि ? बहुभाषिणः न श्रद्दधाति लोकः। स्मर्तव्योऽस्मि परिजनकथासु'' इत्यभिधाय, कन्यकान्तःपुरात् निर्जगाम।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– मन्दस्मितम् = मन्दम् + स्मितम्। **तावतेव** = तावत् + एव। **विदिताभिप्राया** = विदिताः अभिप्रायः यया सा (बहुव्रीहि)। **जिगमिषति** = गम् + सन् प्रत्यय। **अविदितवृत्तान्तम्** = अविदितः वृत्तान्तः यस्य तत् (बहुव्रीहि)। **दूरस्थितयोरपि** = दूरे + स्थितयोः + अपि। **आप्रलयात्** = प्रलयपर्यन्त। **अभ्यनुजानातु** = अभि + अनु + जानातु। **परिजनकथासु** = परिजनानां कथा तासु।

शब्दार्थः– कंचित् कालम् = कुछ देर तक। **वदनम्** = मुख। **विलोक्य** = देखकर। **मंदस्मितम्** = हल्की मुस्कानरूपी हँसी। **अकरोत्** = किया। **तावतैव** = तुरन्त ही। **विदिताभिप्राया** = अभिप्राय (प्रयोजन) जानने वाली। **जिगमिषति** = जाना चाहता है। **पृष्ठतः** = पीछे। **राजचक्रम्** = राजकुल। **अविदितवृत्तान्तम्** = समाचार न जानने वाला। **दुःखम् आस्ते** = दुःखी है। **युवयोः** = तुम दोनों का। **दूरस्थितयोः** = दूर स्थित रहने पर। **कमलिनीकमलबान्धवयोरिव** = कमलिनी और सूर्य के समान। **स्थिरेयम्** = स्थिर है। **आप्रलयात्** = प्रलय तक। **अभ्यनुजानातु** = अनुमति दें। **भवती** = आप। **स्वाधीन** = स्वतंत्र है। **अयम् जनः** = यह व्यक्ति। **कोऽत्रानुरोधः** = इसमें निवेदन कैसा ? **आहूय** = बुलाकर। **प्रापयत** = पहुँचा दो। **स्वां भूमिम्** = अपने स्थान को। **आदिदेश** = आज्ञा दिया। **बहुभाषिणः** = बहुत बोलने वाले का। **न श्रद्दधाति** = नहीं श्रद्धा रखता है। **स्मर्तव्योऽस्मि** = याद करने योग्य हूँ। **परिजनकथासु** = सखियों के वार्तालाप में। **कन्यकान्तःपुरात्** = कन्याओं के अन्तःपुर से। **निर्जगाम** = निकल गया।

हिन्दी अनुवाद–महाश्वेता के मुख की ओर देख कर थोड़ी देर रुककर चन्द्रापीड मुस्कुरा दिया। उसके (चन्द्रापीड के) मुस्कुराने के कारण को जानकर उसने कादम्बरी से कहा–''सखी, कुमार जाना चाहते हैं। पीछे रह गये राजकुल (सैनिक) समाचार न मिलने से दुःखी है। तुम दोनों का यह स्नेह परस्पर दूर रहने पर भी कमलिनी और सूर्य के प्रेम की भाँति, प्रलयकाल तक स्थिर रहे। अतः आप जाने की आज्ञा प्रदान करें। कादम्बरी ने कहा–''मैं तो कुमार के अधीन हूँ, अतः मुझसे अनुरोध की बात ही क्या है ?'' ऐसा कहकर गन्धर्वकुमारों को बुलाकर उसने (कादम्बरी ने) आदेश दिया कि कुमार को उनके गंतव्य तक पहुँचा दो। चन्द्रापीड ने भी उठकर पहले महाश्वेता को और तत्पश्चात् कादम्बरी को प्रणाम करते हुए कहा–देवि! क्या कहूँ ? अधिक बोलने वाले पर लोग विश्वास नहीं करते। मुझे भी सखियों से बातचीत करते समय स्मरण कीजिएगा। ऐसा कहकर वह कन्याओं के साथ अंतःपुर से बाहर निकल गया।

प्रश्नाः

1. कः मन्दस्मितम् अकरोत्?
2. कयोः प्रीतिः कमलिनीकमलबान्धवयोरिव भवेत्?
3. ''स्वधीनोऽयं जनः कुमारस्य'' कस्याः उक्तिरियम्?
4. ''बहुभाषिणः न श्रद्दद्धाति लोकः'' इत्यंशस्य अनुवादं कुरुत ?

12. कादम्बरीवर्जम् अशेषः कन्यकाजनः तं व्रजन्तम् आबहिस्तोरणात् अनुवव्राज। निवृत्ते च कन्यकाजने, चन्द्रापीडः केयूरकेण उपनीतं वाजिनम् आरुह्य, गन्धर्वकुमारैः तैः अनुगम्यमानः, हेमकूटात् निर्गत्य, प्राप्य महाश्वेताश्रमम्, अच्छोदसरस्तीरे संनिविष्टम् इन्द्रायुधखुरपुटानुसारेणैव आगतम् आत्मनः स्कन्धावारम् अपश्यत्। निवर्तिताशेषकुमारश्च, सानन्देन सकुतूहलेन सविस्मयेन च स्कन्धावारजनेन प्रणम्यमानः स्वभवनं विवेश।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– इन्द्रायुधखुरपुटानुसारेण = इन्द्रायुधस्य खुरपुटानाम् अनुसारेण (तृतीया तत्पुरुष)। **निवर्तिताशेषकुमाराः** = निवर्तिताः अशेषाः कुमाराः येन सः (बहुव्रीहि)। **अनुगम्यमानः** = अनु + गम् + शानच् प्रत्यय। **निर्गत्य** = निर् + गम् + ल्यप् प्रत्यय। **सविस्मयेन** = विस्मयेन सह।

शब्दार्थः – व्रजन्तम् = जाते हुए। **आबहिस्तोरणात्** = मुख्य द्वार तक। **अनुवव्राज** = पीछे गयी। **निवृत्ते** = लौटने पर। **उपनीतम्** = लाये गये। **आरुह्य** = सवार होकर। **अनुगम्यमानः** = अनुगमन किया गया। **निर्गत्य** = निकलकर। **प्राप्य** = पाकर, पहुँचकर। **सन्निविष्टम्** = स्थित। **इन्द्रायुधखुरपुटानुसारेण** = इन्द्रायुध के खुर चिह्नों के अनुसार। **आगतम्** = आये हुए। **स्कन्धावारम्** = सेना के पड़ाव को। **अपश्यत्** = देखा। **निवर्त्तिताशेषकुमाराः** = सभी कुमारों (गन्धर्वों) को लौटा देने वाले। **सकुतूहलेन** = जिज्ञासा के साथ। **सविस्मयेन** = आश्चर्य के साथ। **स्कन्धावारजनेन** = सेना के लोगों द्वारा। **प्रणम्यमानः** = प्रणाम किया गया।

हिन्दी अनुवाद – उसके (चन्द्रापीड के) पीछे-पीछे कादम्बरी के अतिरिक्त शेष सभी कन्याएँ मुख्यद्वार तक गयीं। कन्याओं के वापस जाने पर केयूरक के द्वारा लाये गये अश्व पर सवार होकर अनुसरण करने वाले उन गन्धर्वकुमारों के साथ चन्द्रापीड हेमकूट से निकलकर महाश्वेता के आश्रम में पहुँचकर, वहाँ उसने अच्छोद तालाब के किनारे इन्द्रायुध के खुर-चिह्नों को देखते हुए वहाँ तक पहुँची और रुकी हुई अपनी सेना के पड़ाव को देखा। उसने सभी गन्धर्व कुमारों को वापस कर दिया। पूरी सेना ने उसे हर्ष, जिज्ञासा और आश्चर्य के साथ प्रणाम किया। इसके पश्चात् उसने अपने भवन में प्रवेश किया।

प्रश्नाः

1. केन उपनीतं वाजिनम् आरूह्य चन्द्रापीडः गतः?
2. 'अनुगम्यमानः' का शाब्दिक अर्थ लिखिए।
3. 'स्कन्धावारजनेन प्रणम्यमानः स्वभवनं विवेश' – रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।
4. चन्द्रापीडः अच्छोदसरस्तीरे संनिविष्टं किम् अपश्यत्?

13. तत्र च वैशम्पायनेन पत्रलेखया च सह, 'एवं महाश्वेता, एवं कादम्बरी, एवं मदलेखा, एवं केयूरकः' इत्यनयैव कथया दिवसम् अनैषीत्। तामेव कादम्बरीं चिन्तयतः जाग्रत एव सा जगाम रात्रिः। अपरेद्युश्च समुत्थिते भगवति रवौ, आस्थानमण्डपगतः सहसैव

प्रतीहारेण सह प्रविशन्तं केयूरकं ददर्श। दूरादेव कृतप्रणामम् एनम् 'एहि एहि' इत्युक्त्वा गाढम् आलिङ्ग्य, आत्मनः समीपे एव समुपावेशयत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– इत्यनयैव = इति + अनया + एव। **अपरेद्युश्च** = अपरेद्युः + च। **सहसैव** = सहसा + एव। **कच्चित्** = कत् + चित्। **समुपावेशयत्** = सम् + उप + आ + विश् + लङ् प्र0 पु0 एकवचन। **आस्थानमण्डपगतः** = आस्थाने निर्मितमण्डपं गतः (सप्तमी तत्पुरुष)। **कृतप्रणामम्** = कृतः प्रणामः येन तम् (बहुव्रीहि)। **समुत्थिते** = सम् + उत्थिते। **इत्युक्त्वा** = इति + उक्त्वा। इति + वच् + क्त्वा प्रत्यय।

शब्दार्थः – इत्यनयैव = ऐसी ही। **कथया** = बातचीत द्वारा। **अनैषीत्** = बिताया। **चिन्तयतः** = विचार करते हुए। **जाग्रत एव** = जागते हुए ही। **जगाम** = गयी (बीत गयी)। **अपरेद्युश्च** = और दूसरे दिन। **समुत्थिते** = निकलने पर। **आस्थानमण्डपगतः** = सभामंडप में गये हुए। **सहसैव** = अचानक। **प्रतीहारेण सह** = द्वारपाल के साथ। **प्रविशन्तम्** = प्रवेश करते हुए। **कृतप्रणामम्** = अभिवादन करने वाले को। **एहि एहि** = आओ आओ। **गाढम् आलिङ्ग्य** = भलीभाँति गले लगा कर। **समुपावेशयत्** = बिठाया।

हिन्दी अनुवाद – महाश्वेता ऐसी है, कादम्बरी ऐसी है, मदलेखा ऐसी है, केयूरक ऐसा है–इस प्रकार के वार्तालाप में वहाँ चन्द्रापीड ने वैशम्पायन और पत्रलेखा के साथ दिन को बिता दिया। उसी कादम्बरी का स्मरण करते हुए, जागते हुए ही उस रात्रि को व्यतीत किया। सभामण्डप में आये हुये (चन्द्रापीड) ने दूसरे दिन सूर्योदय होते ही सहसा द्वारपाल के साथ अंदर आते हुए केयूरक को देखा। दूर से ही प्रणाम करनेवाले केयूरक को 'आओ-आओ' कहते हुए चन्द्रापीड ने कसकर आलिंगन किया (और) अपने पास ही बैठा लिया।

प्रश्नाः

1. उपर्युक्तः गद्यांशः कस्मात् पुस्तकात् उद्धृतः अस्ति ?
2. इत्यनयैव कथया कः दिवसम् अनैषीत् ?
3. चन्द्रापीडः केन सह प्रविशन्तं केयूरकं ददर्श ?
4. चन्द्रापीडः आत्मनः समीपे कं समुपावेशयत् ?
5. "तामेव कादम्बरीं चिन्तयतः जाग्रत एव सा जगाम रात्रिः"– रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।

14. पप्रच्छ च– "केयूरक ! कथय, कच्चित् कुशलिनी ससखीजना देवी कादम्बरी भगवती महाश्वेता च" इति। असौ तु "अद्य कुशलिनी, याम् एवं देवः पृच्छति" इत्यभिधाय, कादम्बरीप्रहितानि अभिज्ञानानि अदर्शयत्– मरकतहरिन्ति, व्यपनीतत्वञ्चि पूगीफलानि, शुककपोलपाण्डूनि ताम्बूलदलानि, मृगमदामोदमनोहरमलयजविलेपनं चेति। अब्रवीच्च– "अञ्जलिना देवम् अर्चयति कादम्बरी, महाश्वेता च कुशलवचसा। नमस्कारेण च मदलेखा। संदिष्टं च तव महाश्वेतया।"

व्याकरणात्मक टिप्पणी – कच्चित् = कत् + चित्। **मृगमदामोदमनोहरमलयजविलेपनम्** = मृगमदामोदेन मनोहरम् यत् मलयजस्य विलेपनम्। **शुककपोलपाण्डूनि** = शुकस्य कपोलस्य इव पाण्डूनि (कर्मधारय)। **इत्यभिधाय** = इति + अभिधाय, यण् सन्धि। **कादम्बरीप्रहितानि** = कादम्बर्या प्रहितानि (तृतीया तत्पुरुष)।

शब्दार्थः – पप्रच्छ = पूछा। **कच्चित्** = क्या। **ससखीजना** = सखियों के साथ। **असौ** = यह। **याम्** = जिसको। **पृच्छति** = पूछते हैं। **प्रहितानि** = भेजे गये। **अभिज्ञानानि** = पहचान चिह्नों को। **अदर्शयत्** = दिखाया। **मरकतहरिन्ति** = मरकतमणि जैसी हरी। **व्यपनीतत्वञ्चि** = छिलके रहित। **पूगीफलानि** = सुपाड़ी। **शुककपोलपाण्डूनि** = तोते के गाल जैसे पीले। **ताम्बूलदलानि** = पान के पत्ते। **मृगमदामोद** = कस्तूरी की गंध से युक्त। **मनोहरमलयजविलेपनम्** = मनोहर चन्दन का लेप। **अब्रवीच्च** = और कहा। **अञ्जलिना** = हाथों को मिलाते हुए, जोड़कर। **कुशलवचसा** = कुशल समाचार से। **अर्चयति** = अभिनन्दन करती है। **संदिष्टम्** = संदेश दिया है, सूचना दी है।

हिन्दी अनुवाद – और पूछा–''केयूरक! कहो, क्या कादम्बरी और देवी महाश्वेता सखियों सहित कुशलतापूर्वक (तो) हैं ? देव (राजकुमार) जिनके विषय में इस प्रकार पूछते हैं वे कुशल हैं, ऐसा कहकर उसने कादम्बरी द्वारा भेजे गये पन्नामणि जैसे हरे, छिलके रहित पूगीफल (सुपाड़ी), तोते के गाल जैसे पीले पान तथा कस्तूरी की गन्धयुक्त चन्दन के लेप आदि स्मृति के प्रतीकों को दिखाया और कहा – आपका अभिनन्दन देवी कादम्बरी ने हाथ जोड़कर, महाश्वेता ने कुशल समाचार से तथा मदलेखा ने प्रणाम द्वारा किया है और आपको देवी महाश्वेता ने सन्देश भेजा है।

प्रश्नाः

1. ''अब्रवीच्च– अञ्जलिना देवम् अर्चयति कादम्बरी, महाश्वेता च कुशलवचसा।'' रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।
2. कादम्बरीप्रहितानि किम् अदर्शयत् ?
3. चन्द्रापीडः कं प्रप्रच्छ ?
4. ''इत्यभिधाय'' का शाब्दिक अर्थ लिखिए।

15. ''धन्याः खलु ते येषां न गतोऽसि चक्षुषोर्विषयम्। स्पृहयन्ति खलु जनाः सर्वे व्यतीतदिवसाय। त्वया वियुक्तं विनिवृत्तमहोत्सवमिव वर्तते गन्धर्वराजनगरम्। जानासि च मां कृतसकलपरित्यागाम्। तथापि 'अकारणपक्षपातिनं भवन्तं द्रष्टुम् इच्छति मे हृदयम्।' अपि च बलवत् अस्वस्थशरीरा कादम्बरी। स्मरति च स्मेराननं स्मरकल्पं त्वाम्। अतः पुनरागमनेन अर्हसि इमां सम्भावयितुम्। अवश्यं सोढव्या चेयं कदर्थना कुमारेण। भवत्सुजनतैव जनयति अनुचिते संदेशप्रागल्भ्यम् इति, इत्युक्त्वा, एषः देवस्य शयनीये विस्मृतः हारः प्रहितः'' इत्युत्तरीयपटान्तसंयतं तत्सर्वं विमुच्य चामरग्राहिण्याः करे समर्पितवान्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी–चक्षुषोर्विषयम् = चक्षुषोः + विषयम्। **गतोऽसि** = गतः + असि। **विनिवृत्तमहोत्सवमिव** = विनिवृत्तमहा + उत्सवम् + इव। **स्मेराननम्** = स्मेर + आननम्। **पुनरागमनेन** = पुनः + आगमनेन। **भवत्सुजनतैव** = भवत् + सुजनता + एव । **उत्तरीयपटान्तसंयतम्** = उत्तरीय–पटस्य अन्तः तेन संयतम्। **विमुच्य** = वि + मुच् + ल्यप्।

शब्दार्थः–चक्षुषोर्विषयम् = नेत्रों का विषय। **स्पृहयन्ति** = चाहते हैं। **वियुक्तम्** = रहित (अलग)। **विनिवृत्तमहोत्सवमिव** = बीते हुए महोत्सव के समान अर्थात् उदास। **कृतसकलपरित्यागाम्** = सबका परित्याग करने वाली। **अकारणपक्षपातिनम्** = अकारण पक्षपात करने वाले। **बलवत्** = बहुत अधिक। **अस्वस्थशरीरा** = रुग्ण (बीमार)। **स्मेराननम्** = हँसता हुआ मुख। **स्मरकल्पम्** = कामदेव के समान। **पुनरागमनेन** = फिर से आने के द्वारा। **सम्भावयितुम् अर्हसि** = सम्मान करने योग्य हैं। **सोढव्या** = सहन करें। **कदर्थना** = पीड़ा। **भवत्सुजनतैव** = आपकी शालीनता ही। **जनयति** = उत्पन्न करती है। **संदेशप्रागल्भ्यम्** = समाचार भेजने की धृष्टता। **शयनीये** = बिस्तर पर। **विस्मृतः** = भूला हुआ। **प्रहितः** = भेजा है। **उत्तरीयपटान्तसंयतम्** = चादर के आँचल में बँधे। **विमुच्य** = खोल कर। **समर्पितवान्** = दे दिया।

हिन्दी अनुवाद – जिन्होंने आपका दर्शन नहीं किया है वे लोग धन्य हैं। उन्हीं बीते दिनों की इच्छा यहाँ के सभी लोग करते हैं। गन्धर्वराज का नगर उत्सव के समाप्त हो जाने के समान आपके बिना उदासी से भर गया है। मैंने सब कुछ त्याग दिया है अर्थात् सभी चीजों का परित्याग कर दिया है आप जानते हैं फिर भी मेरा हृदय आपके प्रति निष्प्रयोजन प्रेम के कारण आपको देखना चाहता है। देवी कादम्बरी और भी रुग्ण हो गयी हैं। वह मुस्कानयुक्त कामदेव तुल्य आपके मुख को याद करती रहती हैं, अतः उन्हें अपने फिर से आने के द्वारा सम्मानित करें। कुमार (आप) इतना कष्ट अवश्य उठाएँ। उचित न होने पर भी इस संदेश को भेजने की धृष्टता आपकी सज्जनता ही करा रही है। ऐसा कहकर उसने कहा कि आपकी शैय्या पर छूटे हुए इस हार को उन्होंने भेजा है। इसके बाद उसने चमर डुलानेवाली सेविका को दुपट्टे के छोर में बँधी हुई सभी वस्तुओं को खोलकर दे दिया।

प्रश्नाः

1. ''स्पृहयन्ति खलु जनाः सर्वे व्यतीतदिवसाय''– रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।
2. जनाः कस्मै स्पृहयन्ति ?
3. का बलवत् अस्वस्थशरीरा ?
4. ''भवत्सुजनतैव'' का शाब्दिक अर्थ लिखिए।

16. चन्द्रापीडश्च तत् सर्वं शिरसि कृत्वा, स्वयमेव जग्राह। तेन च विलेपनेन विलिप्य, कण्ठे हारम् अकरोत्। आगृहीतताम्बूलश्च मुहूर्तादिव उत्थाय, केयूरकद्वितीय एव मन्दुरां प्रविवेश। प्रविश्य च लीलामन्दं सकुतूहलम् उवाच– "केयूरक ! कथय, मन्निर्गमादारभ्य को वा वृत्तान्तो गन्धर्वराजकुले ? केन वा व्यापारेण वासरम् अतिनीतवती गन्धर्वराजपुत्री? के वा अभवन् आलापाः परिजनस्य ? आसीद्वा कच्चित् अस्मदाश्रयिणी कथा ?" इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – कृत्वा = कृ + क्त्वा। **मन्निर्गमादारभ्य** = मत् + निर्गमात् + आरभ्य। **स्वयमेव जग्राह** = स्वयम् + एव + जग्राह। **अस्मदाश्रयिणी** = अस्मत् + आश्रयिणी। **आगृहीतताम्बूलश्च** = आगृहीतम् ताम्बूलं येन सः (बहुव्रीहि)। **आसीद्वा** = आसीद् + वा। **कञ्चित्** = कम् + चित्।

शब्दार्थः– शिरसि कृत्वा = सिर पर करके (सम्मान के साथ)। **जग्राह** = ले लिया। **विलेपनेन** = लेप द्वारा। **विलिप्य** = लेप करके। **आगृहीतताम्बूलश्च** = और पान को खाकर। **उत्थाय** = उठकर। **केयूरकद्वितीयः** = केयूरक के साथ। **मन्दुराम्** = घुड़साल में। **प्रविवेश** = प्रवेश किया। **लीलामन्दम्** = प्रसन्नता के साथ। **मन्निर्गमादारभ्य** = मेरे निकलने के समय से। **व्यापारेण** = कार्य द्वारा। **वासरम्** = दिन को। **अतिनीतवती** = बिताया। **गन्धर्वराजपुत्री** = कादम्बरी। **के** = कौन सी। **अभवन्** = हुई। **आलापाः** = बातें। **अस्मदाश्रयिणी** = मुझसे सम्बन्धित।

हिन्दी अनुवाद– वे सारी वस्तुएँ चन्द्रापीड ने सिर से लगाकर स्वयं ही ग्रहण कीं अर्थात् सम्मान के साथ स्वीकार कर ले लीं। उसके द्वारा (चन्दन से) लेप करके, हार को गले में डाल लिया गया। और पान खाकर थोड़ी ही देर में उठकर वह केयूरक के साथ अस्तबल में चला गया और आनन्द तथा कुतूहल के साथ धीरे-धीरे बोला – केयूरक! बताओ गन्धर्व–राजकुल में मेरे वहाँ से यहाँ आने तक का क्या समाचार है ? किन कार्यों द्वारा कादम्बरी ने दिन व्यतीत किया। सखियों के साथ क्या वार्ता हुई ? क्या मेरे सम्बन्ध में कोई बात भी हुई थी?

प्रश्नाः

1. उपर्युक्तः गद्यांशः कस्मात् पुस्तकात् उद्धृतः अस्ति ?
2. "केन वा व्यापारेण वासरम् अतिनीतवती गन्धर्वराजपुत्री"– रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।
3. कः मन्दुरां प्रविवेश ?
4. कः कण्ठे हारम् अकरोत् ?

17. केयूरकस्तु सर्वम् आचचक्षे–"देव श्रूयताम्–निर्गते त्वयि, देवी कादम्बरी सौधशिखरम् आरुह्य देवस्यैव गमनमार्गम् आलोकितवती। तिरोहितदर्शने च देवे, सखेदम् अवतीर्य, तमेव क्रीडापर्वतकम् आगतवती यत्र स्थितवान् देवः। तम् उपेत्य च 'देवेन अत्र स्थितम् अत्र स्नातम् अत्र भुक्तम् अत्र सुप्तम्' इति देवस्यैव स्थानचिह्नानि पश्यन्ती क्षपितवती दिवसम्। दिवसावसाने च महाश्वेतायाः प्रयत्नात् तस्मिन्नेव मणिवेश्मनि आहारम् अकरोत्।

अस्तमिते च भगवति रवौ, उदिते च चन्द्रमसि, तत्रैव कंचित् कालं स्थित्वा, शय्यागृहम् अगात्। तत्र प्रबलया शिरोवेदनया दारुणेन दाहज्वरेण च अभिभूयमाना, दुःखदुःखेन क्षणदाम् अनैषीत्। उषसि च माम् आहूय, देवस्य वार्तोपलम्भार्थम् आदिष्टवती'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – सौधशिखरम् = सौधस्य शिखरम् (षष्ठी तत्पुरुष)। **आरुह्य** = आ + रुह् + ल्यप्। **शिरोवेदनया** = शिरस्य वेदना तया (षष्ठी तत्पुरुष)। **देवस्यैव** = देवस्य + एव। **गमनमागर्म** = गमनस्य मार्गम् (षष्ठी तत्पुरुष)। **भुक्तम्** = भुज् + क्त। **पश्यन्ती** = दृश् + शतृ प्रत्यय + ङीप् प्रत्यय। **दिवसावसाने** = दिवसस्य अवसाने इति (षष्ठी तत्पुरुष)। **तस्मिन्नेव** = तस्मिन् + एव। **मणिवेश्मनि** = मणिनिर्मिते वेश्मनि। **तत्रैव** = तत्र + एव।

शब्दार्थः – आचचक्षे = बताया। **निर्गते त्वयि** = तुम्हारे चले आने पर। **सौधशिखरम्** = महल के ऊपर। **गमनमार्गम्** = जाने का रास्ता। **आलोकितवती** = देखती रही। **तिरोहितदर्शने** = आँखों से ओझल हो जाने पर। **सखेदम्** = दुःख के साथ। **अवतीर्य** = उतरकर। **क्रीडापर्वतकम्** = आमोद-प्रमोद के लिये बने पर्वत पर। **आगतवती** = आयी। **स्थितवान्** = ठहरे थे। **उपेत्य** = पहुँचकर। **स्नातम्** = स्नान किया था। **भुक्तम्** = भोजन किया था। **स्थानचिह्नानि** = ठहरने की निशानियों को। **क्षपितवती** = बिताया। **दिवसावसाने** = शाम में। **मणिवेश्मनि** = मणिमहल में। **आहारम् अकरोत्** = भोजन किया। **अस्तमिते** = अस्त हो जाने पर। **उदिते च चन्द्रमसि** = चन्द्रमा के निकल आने पर। **कंचित् कालम्** = कुछ समय। **स्थित्वा** = रुककर। **अगात्** = आयी। **शिरोवेदनया** = सिर के दर्द से। **दारुणेन** = कठिन। **दाहज्वरेण** = दाह (जलन) ज्वर (बुखार) से। **अभिभूयमाना** = अभिभूत होकर। **दुःखदुःखेन** = दुःख के साथ। **क्षणदाम्** = रात को। **अनैषीत्** = बिताया। **उषसि** = सबेरे। **वार्तोपलम्भार्थम्** = कुशलता जानने के लिये। **आदिष्टवती** = आदेश दिया।

हिन्दी अनुवाद– चन्द्रापीड को केयूरक ने सभी बातें बतायीं। उसने कहा – 'राजकुमार सुनिए – आपके जाते ही देवी कादम्बरी महल के ऊपर के भाग में जाकर जाने वाले आपके मार्ग को देखती रहीं। आपके आँखों से दूर हो जाने पर वहाँ से उतरकर, दुःखी होकर जहाँ आप ठहरे थे उसी क्रीडापर्वतक पर आयीं। आपने जहाँ आराम किया था, जहाँ स्नान किया था, जहाँ भोजन किया था, जहाँ शयन किया था – इस प्रकार आपके क्रियाकलापों के स्थलों के निशानों को देखते हुए सारा दिन व्यतीत कर दिया। उन्होंने महाश्वेता के प्रयत्न से उसी मणिमहल में शाम को भोजन किया। चन्द्रमा के निकल आने पर तथा भगवान सूर्य के अस्ताचल को जाने पर कुछ देर रुककर सोने के लिए घर में चली गईं। वहाँ सिर की तीव्र पीड़ा और तेज (भयंकर) बुखार के कारण बड़े कष्ट के साथ रात बितायीं। प्रातःकाल ही उन्होंने मुझे बुलाकर आपका समाचार जानने के लिए आज्ञा दी।

प्रश्नाः

1. उपर्युक्त गद्यांश की पुस्तक और लेखक का नाम लिखिए।
2. ''तत्र प्रबलया शिरोवेदनया दारुणेन दाहज्वरेण च अभिभूयमाना, दुःखदुःखेन क्षणदाम् अनैषीत्'' रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।
3. कादम्बरी कस्य वार्तोपलम्भार्थम् आदिष्टवती ?
4. कादम्बरी सौधशिखरम् आरुह्य कस्यैव गमनमार्गम् आलोकितवती ?
5. चन्द्रापीडं सर्वं कः आचचक्षे ?

18. चन्द्रापीडः तत् आकर्ण्य जिगमिषुः 'अश्वः अश्वः' इति वदन् भवनात् निर्ययौ। आरोपितपर्याणम् इन्द्रायुधम् आरुह्य, पश्चात् आरोप्य पत्रलेखाम्, वैशम्पायनं स्कन्धावारे स्थापयित्वा, अन्यतुरगारूढेन केयूरकेण अनुगम्यमानः हेमकूटं ययौ।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – अन्यतुरगारूढेन = अन्ये तुरगे आरूढेन (तत्पुरुष)। **आरोपितपर्याणम्** = आरोपितम् पर्याणम् यस्मिन् तम् (बहुव्रीहि)। **जिगमिषुः** = गम् + सनन्त प्रत्यय। **निर्ययौ** = निर् + या लिट् लकार प्रथम पुरुष एकवचन। **आरुह्य** = आ + रूह् + ल्यप्। **आरोप्य** = आ + रोप् + ल्यप्। **स्थापयित्वा** = स्था + पुक् + णिच् + क्त्वा। **अनुगम्यमानः** = अनु + गम् + शानच्।

शब्दार्थः – तत् = उसे। **आकर्ण्य** = सुनकर। **जिगमिषुः** = जाने की इच्छा वाला। **अश्वः अश्वः** = घोड़ा घोड़ा। **वदन्** = कहता हुआ। **भवनात् निर्ययौ** = घर से निकल पड़ा। **आरोपितपर्याणम्** = जीन कसे हुए। **पश्चात्** = पीछे। **पत्रलेखाम् आरोप्य** = पत्रलेखा को बिठाकर। **स्कन्धावारे** = सैन्य शिविर में। **स्थापयित्वा** = नियुक्त करके। **अन्यतुरगारूढेन** = दूसरे घोड़े पर सवार। **ययौ** = गया।

हिन्दी अनुवाद – यह सुनकर घोड़ा-घोड़ा कहता हुआ जाने के लिए तैयार चन्द्रापीड घर से बाहर निकल पड़ा। अपने पीछे पत्रलेखा को बिठाकर जीन कसे हुए इन्द्रायुध पर सवार होकर तथा वैशम्पायन को सैन्यशिविर में नियुक्त करके, पीछे-पीछे आने वाले अन्य घोड़े पर सवार केयूरक के साथ हेमकूट को चल पड़ा।

प्रश्नाः

1. उपर्युक्तः गद्यांशः कस्मात् पुस्तकात् उद्घृतः ?
2. ''चन्द्रापीडः तत् आकर्ण्य जिगमिषुः अश्वः अश्वः इति वदन् भवनात् निर्ययौ''– रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।
3. चन्द्रापीडः केन अनुगम्यमानः हेमकूटं ययौ ?
4. चन्द्रापीडः किं वदन् भवनात् निर्ययौ ?

19. आसाद्य कादम्बरीभवनद्वारम्, अवतीर्य द्वारपालार्पिततुरङ्गः कादम्बरीप्रथमदर्शनकुतूहलिन्या पत्रलेखया अनुगम्यमानः, प्रविश्य, ''क्व देवी कादम्बरी तिष्ठति ?'' इति संमुखागतम् अन्यतमं वर्षवरम् अप्राक्षीत्। कृतप्रणामेन च तेन ''देव क्रीडापर्वतकस्य अधस्तात् कमलवनदीर्घिकातीरे विरचितं हिमगृहम् अध्यास्ते'' इत्यावेदिते केयूरकेण उपदिश्यमानवर्त्मा, हिमगृहस्य मध्यभागम् आससाद। तस्य च एकदेशे सखीकदम्बकपरिवृताम्, मृणालदण्डमण्डपिकायाः तले कुसुमशयनम् अधिशयानाम् कादम्बरीं व्यलोकयत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – कादम्बरीभवनद्वारम् = कादम्बर्याः भवनस्य द्वारम्। **द्वारपालार्पिततुरङ्गः** = द्वारपालम् अर्पितः तुरङ्गः येन सः (बहुव्रीहि)। **कादम्बरीप्रथमदर्शनकुतूहलिन्या** = कादम्बर्याः प्रथमदर्शनस्य कुतूहलिनी तया। **कमलवनदीर्घिकातीरे** = कमलवनस्य दीर्घिका तस्याः तीरे (षष्ठी तत्पुरुष)। **इत्यावेदिते** = इति + आवेदिते। **हिमगृहस्य** = हिमस्य गृहम् तस्य (षष्ठी तत्पुरुष)। **कृतप्रणामेन** = कृतः प्रणामः येन सः तेन (बहुव्रीहि)। **सखीकदम्बपरिवृताम्** = सखीनां कदम्बकेन परिवृताम् (तृतीया तत्पुरुष)। **मृणालदण्डमण्डपिकायाः** = मृणालस्य दण्डेन निर्मिता मण्डपिका तस्याः।

शब्दार्थः– कादम्बरीभवनद्वारम् = कादम्बरी के महल के द्वार पर। **द्वारपालार्पिततुरङ्गः** = द्वारपाल को घोड़ा सौंपकर। **कादम्बरीप्रथमदर्शनकुतूहलिन्या** = कादम्बरी के प्रथम दर्शन के कौतूहल से। **सम्मुखागतम्** = सामने से आते हुए। **अन्यतमं वर्षवरम्** = एक नपुंसक को। **अप्राक्षीत्** = पूछा। **कमलवनदीर्घिकातीरे** = कमल वन की बावड़ी के किनारे। **विरचितम्** = बने हुए। **हिमगृहम्** = हिमगृह में। **अध्यास्ते** = विराजमान है। **इत्यावेदिते** = ऐसे निवेदन करने पर। **उपदिश्यमानवर्त्मा** = बताये गये मार्ग से। **आससाद** = पहुँचा। **एकदेशे** = एक भाग में। **सखीकदम्बकपरिवृताम्** = सखियों के समूह से घिरी हुई। **मृणाल दण्डमण्डपिकायाः** = कमल के नाल से बने छोटे सभा मण्डप के। **कुसुमशयनम्** = फूलों की शय्या पर। **अधिशयानाम्** = सोई हुई। **व्यलोकयत्** = देखा।

हिन्दी अनुवाद– कादम्बरी के महल के दरवाजे पर पहुँचकर (चन्द्रापीड) घोड़े से उतरकर घोड़ा द्वारपाल को दे दिया और कादम्बरी को पहली बार देखने की जिज्ञासा वाली पत्रलेखा के द्वारा अनुगमन किया जाता हुआ (चन्द्रापीड) महल के भीतर प्रवेश करके सामने से आते हुए एक नंपुसक दास से पूछा कि–''देवी कादम्बरी कहाँ हैं ?'' प्रणाम करके उसने कहा–राजकुमार! क्रीडा पर्वतक के नीचे कमलवन की बावड़ी के किनारे बने हुये हिमगृह में स्थित है। उसके ऐसा कहने पर चन्द्रापीड केयूरक द्वारा बताये गये रास्ते से हिमगृह के मध्यभाग में पहुँचा। उसने वहाँ कमलदण्ड के बने छोटे-से मण्डप में फूलों की सेज पर सखियों से घिरी हुई और सोई हुई कादम्बरी को देखा।

प्रश्नाः

1. उपर्युक्तगद्यांशस्य लेखकस्य नाम किम् ?
2. ''कादम्बरी प्रथमदर्शनकुतूहलिन्या पत्रलेखया अनुगम्यमानः, प्रविश्य संमुखागतम् अन्यतमं वर्षवरम् अप्राक्षीत्।'' रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।
3. चन्द्रापीडः संमुखागतम् अन्यतमं वर्षवरं किम् अप्राक्षीत् ?
4. चन्द्रापीडः कम् आससाद ?

20. अथ सा संमुखम् आपतन्तं तं दूरादेव दृष्ट्वा कुसुमशयनात् उत्तस्थौ। चन्द्रापीडस्तु समुपसृत्य पूर्ववदेवम् तां महाश्वेताप्रणामपुरस्सरं दर्शितविनयः प्रणनाम। कृतप्रतिप्रणामायां च तस्यां तस्मिन्नेव कुसुमशयने समुपविष्टायाम्, प्रतिहार्या समुपनीतां जाम्बूनदमयीम् आसन्दिकां पादेनैव उत्सार्य क्षितावेव उपाविशत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– दूरादेव = दूरात् + एव। **पादेनैव** = पादेन + एव। **समुपविष्टायाम्** = सम् + उप + विष्टायाम्। **समुपसृत्य** = सम् + उपद + ल्यप्। **कसुमशयने** = कुसुमानां शयने। **समुपनीता** = सम् + उप + नी + क्त + टाप्। **जाम्बूनदमयीम्** = जाम्बूनद + मयट् + स्त्री प्रत्यय। **क्षितावेव** = क्षितौ + एव।

शब्दार्थः – सम्मुखम् = सामने। **आपतन्तम्** = आते हुए। **दूरादेव** = दूर ही से। **कुसुमशयनात्** = फूलों की शय्या से। **उत्तस्थौ** = उठ खड़ी हो गई। **समुपसृत्य** = पास जाकर। **पूर्ववदेव** = पहले जैसे ही। **महाश्वेताप्रणामपुरस्सरम्** = पहले महाश्वेता को प्रणाम करके। **दर्शितविनयः** = नम्रता दिखाते हुए। **प्रणनाम** = प्रणाम किया। **कृतप्रतिप्रणामायाम्** = बदले में प्रणाम करने पर। **समुपविष्टायाम्** = बैठ जाने पर। **समुपनीताम्** = पास लाई गई। **जाम्बूनदमयीम्** = सोने से बनी हुई। **आसन्दिकाम्** = मञ्चिका (मचिया) को। **पादेनैव** = पैर से ही। **उपाविशत्** = बैठ गया।

हिन्दी अनुवाद– इसके बाद वह (कादम्बरी) सामने की ओर से आने वाले उसको (चन्द्रापीड को) दूर से ही देखकर फूलों की शय्या से उठ खड़ी हुई। पहले की ही तरह चन्द्रापीड ने पहले महाश्वेता को प्रणाम किया, फिर बड़े आदर के साथ कादम्बरी के पास जाकर उसको भी प्रणाम किया। जब कादम्बरी प्रणाम के बदले प्रणाम करके उसी फूलों की सेज पर बैठ गयी तो प्रतीहारी द्वारा लाई गई सोने की मञ्चिका को पैर से हटाकर (चन्द्रापीड भी) भूमि पर ही बैठ गया।

प्रश्नाः

1. उपर्युक्तगद्यांशस्य लेखकः कः ?
2. ''समुपसृत्य पूर्ववदेव तां महाश्वेताप्रणामपुरस्सरं दर्शितविनयः प्रणनाम''–रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।
3. चन्द्रापीडः कुत्र उपाविशत् ?
4. आसन्दिका कीदृशी आसीत् ?
5. का चन्द्रापीडं दूरादेव दृष्ट्वा कुसुमशयनात् उत्तस्थौ ?

21. अथ केयूरकः ''देवि ! देवस्य चन्द्रापीडस्य प्रसादभूमिः एषा पत्रलेखा नाम ताम्बूलकरङ्कवाहिनी'' इत्यभिधाय पत्रलेखाम् अदर्शयत्। अथ कादम्बरी दृष्ट्वा तां ''अहो मानुषीषु पक्षपातः प्रजापतेः'' इति चिन्तयांबभूव। कृतप्रणामां च तां सादरम् 'एह्येहि' इत्याहूय, आत्मनः समीपे समुपावेशयत्। दर्शनादेव उपारूढप्रीत्यतिशया च मुहुर्मुहुरेनाम् करतलेन पस्पर्श।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– एह्येहि = एहि + एहि। **उपारूढप्रीत्यतिशया** = प्रीतेः अतिशयः प्रीत्यतिशयः उपारूढः प्रीत्यतिशयः यस्यां सा तया (बहुव्रीहि)। **मुहुर्मुरेनाम्** = मुहुः + मुहुः + एनाम्। **ताम्बूलकरङ्कवाहिनी** = ताम्बूलकरङ्कं वोढुं शीलं यस्याः सा (बहुव्रीहि)। दृष्ट्वा = दृश् + क्त्वा।

शब्दार्थः– प्रसादभूमिः = कृपापात्र। **ताम्बूलकरङ्कवाहिनी** = पान का पात्र (डब्बा) लेकर चलने वाली। **अदर्शयत्** = दिखाया। **मानुषीषु** = मनुष्य जाति की स्त्री पर। **प्रजापतेः** = ब्रह्मा का। **चिन्तयांबभूव** = विचार में डूब गई। **कृतप्रणामा** = प्रणाम कर लेने वाली। **एह्येहि** = आओ आओ। **इत्याहूय** = इस प्रकार बुलाकर। **आत्मनः समीपे** = अपने पास। **समुपावेशयत्** = बिठाया। **दर्शनादेव** = देखने के समय से ही। **उपारूढप्रीत्यतिशया** = अत्यधिक प्रेम के कारण। **मुहुर्मुहुरेनाम्** = बार-बार इसको। **करतलेन** = हाथ से। **पस्पर्श** = छुआ, सहलाया।

हिन्दी अनुवाद– इसके बाद पत्रलेखा को इंगित करते हुए केयूरक ने कहा देवि! यह राजकुमार चन्द्रापीड के पान का पात्र (डिब्बा) लेकर चलने वाली (ताम्बूलकरंकवाहिनी) कृपापात्री पत्रलेखा है। तत्पश्चात् उसे देखकर कादम्बरी ने एक स्त्री के प्रति ब्रह्मा के द्वारा किये गये पक्षपात के विषय में सोचने लगी (ब्रह्मा ने इसे कितना अलौकिक सौन्दर्य देकर मानों पक्षपातपूर्ण व्यवहार किया है) और प्रणाम कर चुकी उसको (पत्रलेखा को) सम्मान के साथ 'आओ, आओ' कहकर कादम्बरी ने उसे बुलाकर अपने पास बैठा लिया और उसको देखते ही आकर्षित हो जाने के कारण उसे बार-बार हाथ से स्नेहपूर्ण स्पर्श किया।

प्रश्नाः

1. ''दर्शनादेव उपारूढप्रीत्यतिशया च मुहुर्मुहुरेनाम् करतलेन पस्पर्श''– रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।
2. कादम्बरी पत्रलेखां दृष्ट्वा का चिन्तयांबभूव ?
3. पत्रलेखा का आसीत् ?
4. केयूरकः काम् अदर्शयत् ?
5. चन्द्रापीडस्य प्रसादभूमिः का?

22. चन्द्रापीडस्तु तदवस्थां चित्ररथतनयाम् आलोक्य निपुणालापेन अपृच्छत्– ''देवि ! जानामि कामरतिं निमित्तीकृत्य प्रवृत्तोऽयं व्याधिः। कुसुमेषु पीडया पतितां त्वाम् अवेक्ष्य दूयते मे हृदयम्। इच्छामि देहदानेनापि स्वस्थाम् अत्रभवतीम् कर्तुम्'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी–तदवस्थाम् = तत् + अवस्थाम्। **प्रवृत्तोऽयम्** = प्रवृत्तः + अयं। **देहदानेनापि** = देहदानेन + अपि। **चित्ररथतनयाम्** = चित्ररथस्य तनया ताम्। **निपुणालापेन** = निपुणश्चासौ आलापः निपुणालापः तेन निपुणालापेन।

शब्दार्थः– तदवस्थाम् = उस दशा में। **चित्ररथतनयाम्** = चित्ररथ की पुत्री कादम्बरी को। **आलोक्य** = देखकर। **निपुणालापेन** = चतुराई पूर्ण बातों से। **अपृच्छत्** = पूछा। **जानामि** = जानता हूँ। **कामरतिम्** = कामक्रीडा को। **निमित्तीकृत्य** = कारण बनाकर। **प्रवृत्तोऽयं व्याधिः** = यह रोग

उत्पन्न हुआ है। **अवेक्ष्य** = देखकर। **दूयते** = दुःखी हो रहा है। **देहदानेनापि** = शरीर देकर भी। **कुसुमेषु** = फूलों पर। **पीडया** = पीड़ा से।

हिन्दी अनुवाद–कादम्बरी को उस (व्याकुल) दशा में देखकर चन्द्रापीड ने कुशलतापूर्वक बातचीत करते हुए कहा–देवी! मैं जानता हूँ कि तुममें यह रोग रतिक्रिया के कारण ही उत्पन्न हुआ है। कामबाणों से उत्पन्न कष्ट के कारण फूलों पर पड़ी हुई तुमको देखकर मेरा हृदय बहुत दुःखी हो रहा है। अपना शरीर देकर भी अर्थात् हर प्रकार से मैं आपकी पीड़ा को दूर करना चाहता हूँ।

प्रश्नाः

1. उपर्युक्तः गद्यांशः कस्मात् पुस्तकात् उद्घृतः अस्ति ?
2. ''कुसुमेषु पीडया पतितां त्वाम् अवेक्ष्य दूयते मे हृदयम्''– रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।
3. 'निपुणालापेन' का शाब्दिक अर्थ लिखिए।
4. का चित्ररथकन्या?
5. ''इच्छामि देहदानेनापि स्वस्थाम् कर्तुम्'' इति केन कं प्रति उक्तः ?

23. कादम्बरी तु तम् अशेषम् अस्य अव्यक्तव्याहारसूचितम् अर्थं मनसा गृहीत्वापि शालीनताम् अवलम्बमाना तूष्णीमेव आसीत्। ततः मदलेखा प्रत्यवादीत्– ''कुमार ! किं कथयामि? अस्याः खलु कुमारभावोपेतायाः दारुणोऽयम् अकथनीयः संतापः। मृणालिन्याः किसलयमपि हुताशनायते। ज्योत्स्नापि आतपायते। धीरत्वमेव प्राणसंधारणमस्याः'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी–अव्यक्तव्याहारसूचितम् = अव्यक्तेन व्याहारेण सूचितम्। **गृहीत्वापि** = गृहीत्वा + अपि। **प्रत्यवादीत्** = प्रति + अवादीत्। **किसलयमपि** = किसलयम् + अपि। **ज्योत्स्नापि** = ज्योत्स्ना + अपि। **दारुणोऽयम्** = दारुणः + अयम्।

शब्दार्थ– अशेषम् = सम्पूर्ण। **अव्यक्तव्याहारसूचितम्** = अव्यक्त संकेत से सूचित होने वाले। **अर्थम्** = अभिप्राय को। **मनसा गृहीत्वापि** = मन में समझते हुए भी। **अवलम्बमाना** = आश्रय लेकर। **तूष्णीमेव आसीत्** = चुप ही हो गयी। **प्रत्यवादीत्** = बोली। **कुमारभावोपेतायाः** = कुमार के ही भावों से युक्त। **दारुण** = भयङ्कर। **अकथनीयः** = न कहने योग्य। **मृणालिन्या** = कमलिनी के। **किसलयमपि** = पत्ते भी। **हुताशनायते** = अग्नि के समान जलाता है। **ज्योत्स्नापि** = चाँदनी भी। **आतपायते** = धूप जैसी लगती है। **धीरत्वमेव** = धैर्य ही। **प्राणसन्धारणमस्याः** = इसके प्राणों को धारण करने वाला।

हिन्दी अनुवाद–कादम्बरी उसके अव्यक्त आचरण से सूचित होने वाले उस समस्त अर्थ को ग्रहण करके भी शालीनता का आश्रय लेते हुए चुप ही हो गई। तत्पश्चात् मदलेखा ने प्रत्युत्तर में कहा – कुमार! क्या कहूँ? कुमार (आप) के ही भावों (स्मृतियों) से युक्त इसका (कादम्बरी का) यह असह्य कष्ट अकथनीय है। कमलिनी का नवीनपत्ता भी (इसे) अग्नि के समान प्रतीत होता है। चाँदनी भी ताप के समान प्रतीत होती है। धैर्य ही इसके प्राणों को धारण करने वाला है।

प्रश्नाः

1. ''धीरत्वमेव प्राणसंधारणमस्याः''– रेखांकित अंश का अनुवाद लिखिए।
2. मृणालिन्याः किसलयमपि हुताशनायते काम् ?
3. ''प्रत्यवादीत्'' का संधि–विच्छेद कीजिए।
4. मदलेखा किम् प्रत्यवादीत् ?

24. चन्द्रापीडोऽपि उभयथा घटमानार्थतया संदेहदोलारूढेनैव चेतसा महाश्वेतया सह प्रीत्युपचयचतुराभिः कथाभिः महान्तं कालं स्थित्वा, महता यत्नेन मोचयित्वा आत्मानं स्कन्धावारगमनाय कादम्बरीभवनात् निर्ययौ।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– प्रीत्युपचयचतुराभिः = प्रीति + उपचय + चतुराभिः। **संदेहदोलारूढेनैव** = संदेहस्य दोलायाम् आरूढेन एव।

शब्दार्थः– उभयथा = दोनों ओर से। **घटमानार्थतया** = घटित होने वाली (बातों के कारण)। **सन्देहदोलारूढेनैव चेतसा** = सन्देह के झूले पर चढ़े हुए मन से। **प्रीत्युपचयचतुराभिः** = प्रेम से बढ़ने वाली चतुराइयों से। **कथाभिः** = बातचीत से। **महान्तम् कालम्** = बहुत देर तक। **स्थित्वा** = रुककर। **महता यत्नेन** = बड़े प्रयत्न से। **मोचयित्वा** = छुड़ाकर। **आत्मानम्** = अपने को। **स्कन्धावारगमनाय** = सेना शिविर में जाने के लिए। **निर्ययौ** = निकला।

हिन्दी अनुवाद– चन्द्रापीड भी दोनों ओर की घटनाओं के कारण सन्देहयुक्त चित्त से स्नेह को बढ़ाने वाली चतुराइयों से पूर्ण महाश्वेता के साथ वार्ता करता हुआ बहुत देर तक रुकने के पश्चात् बड़ी कठिनाई से स्वयं को वहाँ से निकाल कर सेना-शिविर में जाने के लिए कादम्बरी के भवन से निकला।

प्रश्नाः

1. ''स्कन्धावारगमनाय कादम्बरीभवनात् निर्ययौ''– रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।
2. चन्द्रापीडः कुतः निर्ययौ ?
4. संदेहदोलारूढेनैव चेतसा कः ?
4. कुत्र गमनाय चन्द्रापीडः कादम्बरीभवनात् निर्ययौ ?

25. निर्गतं च तम् तुरङ्गमम् आरुरुक्षन्तं पश्चात् आगत्य केयूरकः अभिहितवान्– ''देव ! मदलेखा विज्ञापयति–देवी कादम्बरी प्रथमदर्शनजनितप्रीतिः पत्रलेखां अनिवर्त्यमानाम् इच्छति। पश्चात् यास्यति'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – प्रथमदर्शनजनितप्रीतिः = प्रथमदर्शनात् जनिता प्रीतिः यस्यां सा। **आरुरुक्षन्तम्** = आ + रुक्ष् + सनन्त प्रत्यय। **आगत्य** = आ + गम् + ल्यप्। **विज्ञापयति** = वि + ज्ञा + लट् लकार प्र0पु0 एकवचन।

शब्दार्थः – निर्गतम् = निकले हुए। **तुरङ्गमम् आरुरुक्षन्तम्** = घोड़े पर सवार होने की इच्छा करने वाले। **पश्चात् आगत्य** = पीछे आकर। **अभिहितवान्** = कहा। **विज्ञापयति** = निवेदन करती है। **प्रथमदर्शनजनितप्रीतिः** = प्रथम दर्शन के कारण उत्पन्न होने वाले प्रेम के कारण। **निवर्त्यमानाम्** = लौटाना। **यास्यति** = जायेगी।

हिन्दी अनुवाद – घोड़े पर सवार होने की इच्छा वाले उस (चन्द्रापीड) के निकलने पर पीछे से आकर केयूरक ने कहा–राजकुमार मदलेखा ने निवेदन किया है कि प्रथम दर्शन के स्नेह के कारण देवी कादम्बरी पत्रलेखा को लौटाना नहीं चाहती हैं, (वह) बाद में जायेगी।

प्रश्नाः

1. ''निर्गतं च तम् तुरङ्गमम् आरुरुक्षन्तं पश्चात् आगत्य केयूरकः अभिहितवान्'' – रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।
2. कः तुरङ्गमम् आरुरुक्षन्तं चन्द्रापीडम् अभिहितवान् ?
3. कस्य पश्चात् केयूरकः आजगाम ?
4. मदलेखा किं विज्ञापयति ?

26. तदाकर्ण्य चन्द्रापीडः ''धन्या पत्रलेखा, यामेवम् अनुगृह्णाति। दुर्लभो देवीप्रसादः। प्रवेश्यताम्'' इत्यभिधाय, स्कन्धावारम् आजगाम। प्रविशन्नेव पितुः समीपात् आगतं लेखहारकम् अद्राक्षीत्। धृततुरङ्गमश्च, प्रीतिविस्फारितेन चक्षुषा दूरादेव अपृच्छत्– ''अङ्ग ! कच्चित् कुशली तातः सह सर्वेण परिजनेन ? अम्बा च सर्वान्तःपुरैः'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– प्रविशन्नेव = प्र + विश् + शतृ + एव। **तदाकर्ण्य** = तद् + आकर्ण्य। **इत्यभिधाय** = इति + अभिधाय। **धृततुरङ्गमश्च** = धृतः तुरङ्गम् यस्य सः। **आजगाम** = आ + गम् + लिट् प्र0पु0 एकवचन। **कच्चित्** = कत् + चित्। **सर्वान्तःपुरैः** = सर्व + अन्तःपुरैः।

शब्दार्थः– तदाकर्ण्य = यह सुनकर। **अनुगृह्णाति** = अनुग्रह (कृपा) करती हैं। **देवीप्रसादः** = देवी की कृपा। **प्रवेश्यताम्** = आया। **प्रविशन्नेव** = प्रवेश करते ही। **पितुः समीपात्** = पिता के पास से। **आगतम्** = आये हुए। **लेखहारकम्** = पत्रवाहक को। **अद्राक्षीत्** = देखा। **धृततुरङ्गमश्च** = घोड़ा थाम (पकड़) लेने पर। **प्रीतिस्फारितेन** = प्रेम से फैली हुई। **चक्षुषा** = नेत्रों द्वारा। **दूरादेव** = दूर ही से। **अपृच्छत्** = पूछा। **कच्चित्** = क्या। **सर्वेण परिजनेन** = सभी परिजनों के साथ। **अम्बा** = माता। **सर्वान्तःपुरैः** = सभी अन्तःपुर के लोगों के साथ।

हिन्दी अनुवाद–चन्द्रापीड ने यह सुनकर कहा – पत्रलेखा धन्य है जिस पर कादम्बरी का ऐसा अनुग्रह है, क्योंकि देवी का अनुग्रह दुर्लभ है। (पत्रलेखा को) अंदर ले जाओ। ऐसा कहकर वह सैन्य-शिविर में आ गया। (शिविर में) प्रवेश करते ही उसने पिता के पास से आये हुए पत्रवाहक को देखा।

घोड़े के थाम लेने के बाद प्रेम से विस्फारित आँखों से दूर से ही चन्द्रापीड ने पूछा–अङ्ग! पिता जी सभी आत्मीय जनों के संग तथा माताजी अन्तःपुरजनों के साथ सकुशल हैं न।

प्रश्नाः

1. ''प्रविशन्नेव पितुः समीपात् आगतं लेखहारकम् अद्राक्षीत्'' – रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।
2. कादम्बरी काम् निवर्त्यमानाम् न इच्छति ?
3. चन्द्रापीडः पितुः समीपात् आगतं कम् अद्राक्षीत्?
4. कः स्कन्धावारम् आजगाम ?

27. अथासौ उपसृत्य प्रणामानन्तरम् 'देव ! यथाज्ञापयसि' इत्यभिधाय, लेखद्वितयम् अर्पयांबभूव। युवराजस्तु शिरसि कृत्वा स्वयमेव तत् उन्मुच्य पपाठ– ''स्वस्ति ! उज्जयिनीतः परममाहेश्वरः महाराजः तारापीडः सर्वसम्पदाम् आयतनम् चन्द्रापीडम् उत्तमाङ्गे चुम्बन् नन्दयति। कुशलिन्यः प्रजाः। कियानपि कालः भवतः दृष्टस्य गतः। बलवत् उत्कण्ठितं नः हृदयम्। ततः लेखवाचनविरतिरेव प्रयाणकालतां नेतव्या'' इति। शुकनासप्रेषिते द्वितीयेऽपि अमुमेवार्थम् अवाचयत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– प्रणामानन्तरम् = प्रणामस्य + अनन्तरम्। **इत्यभिधाय** = इति + अभिधाय। **कृत्वा** = कृ + क्त्वा। **अमुमेवार्थम्** = अमुम् + एव + अर्थम्। **अथासौ** = अथ + असौ। **लेखवाचनविरतिरेव** = लेख + वाचन + विरतिः + एव। **उत्तमाङ्गे** = उत्तम + अङ्गे। **नेतव्या** = नी + तव्यत् + टाप् प्रत्यय। **प्रयाणकालतां** = प्रयाणस्य कालतां। **शुकनासप्रेषिते** = शुकनासेन + प्रेषिते। **अमुमेवार्थम्** = अमुम् + एव + अर्थम्।

शब्दार्थः – उपसृत्य = समीप में आकर। **प्रणामानन्तरम्** = प्रणाम करने के बाद। **यथाज्ञापयसि** = जैसी आज्ञा। **इत्यभिधाय** = ऐसा कहकर। **लेखद्वितयम्** = दो पत्र। **अर्पयाम्बभूव** = अर्पित किया। **शिरसि कृत्वा** = सिर पर धारण करके। **उन्मुच्य** = खोलकर। **पपाठ** = पढ़ा। **उज्जयिनीतः** = उज्जयिनी से। **परममाहेश्वरः** = बहुत बड़े शिवभक्त। **सर्वसंपदाम्** = सभी सम्पत्तियों के। **आयतनम्** = घर। **उत्तमांगे** = सिर पर। **चुम्बन्** = चुम्बन करते हुए। **नन्दयति** = प्रसन्न होते हैं। **कुशलिन्यः** = कुशलपूर्वक। **कियानपि कालः** = कितना समय। **भवतः** = आपके। **दृष्टस्य** = देखे हुए। **गतः** = बीत गया। **बलवत्** = अधिक। **नः** = हमलोगों का। **लेखवाचनविरतिरेव** = पत्र के समापन को ही। **प्रयाणकालताम् नेतव्या** = प्रस्थान का समय समझना। **शुकनासप्रेषिते** = शुकनास द्वारा भेजे गए। **द्वितीयेऽपि** = दूसरे पत्र में भी। **अमुमेवार्थम्** = उसी आशय को। **अवाचयत्** = पढ़ा।

हिन्दी अनुवाद – इसके पश्चात् पास जाकर प्रणाम के बाद (पत्रवाहक ने कहा) – ''राजकुमार! आप जैसा कह रहे हैं, (सभी कुशल हैं)। ऐसा कहकर उसने दो पत्र दिये। राजकुमार ने उसे मस्तक से लगाकर स्वयं खोलकर पढ़ा–''स्वस्ति (कल्याण हो) सभी सम्पत्तियों से युक्त उज्जयिनी से परम

शिवभक्त महाराज तारापीड चन्द्रापीड के मस्तक को चूमते हुए आनन्द का अनुभव कर रहे हैं। सारी प्रजा कुशलतापूर्वक है। कितना समय आपको देखे बीत गया। हम लोगों का चित्त अत्यन्त व्याकुल है। अतः पत्र वाचन का समाप्ति समय ही प्रस्थान का काल होना चाहिए।'' उसी आशय को शुकनास के द्वारा भेजे गये दूसरे पत्र में भी पढ़ा।

प्रश्नाः

1. ''युवराजस्तु शिरसि कृत्वा स्वयमेव तत् उन्मुच्य पपाठ''– रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।
2. चन्द्रापीडस्य समीपे कः अगच्छत् ?
3. युवराजः चन्द्रापीडः किम् उन्मुच्य पपाठ ?
4. 'लेखवाचनविरतिरेव' का शाब्दिक अर्थ लिखिए।

28. वैशम्पायनोऽपि समुपसृत्य लेखद्वितयम् अपरम् आत्मीयम् अस्मात् अभिन्नार्थम् अदर्शयत्। अथ 'यथाज्ञापयति तातः' इत्युक्त्वा, तथैव तुरगाधिरूढः प्रयाणपटहम् अवादयत्। समीपे स्थितं च महाबलाधिकृतं मेघनादनामानम् आदिदेश– ''भवता पत्रलेखया सह आगन्तव्यम्। नियतं च केयूरकः ताम् आदाय एतावतीं भूमिम् आगमिष्यति। तन्मुखेन च विज्ञाप्या देवी कादम्बरी। गरीयसी गुरोः आज्ञा इति कृत्वा गतोऽस्मि इदानीम् उज्जयिनीम्। स्मर्तव्योऽस्मि परिजनकथासु। जीवन् पुनः देवीचरणारविन्दवन्दनानन्दम् अननुभूय न स्थास्यति चन्द्रापीडः'' इति। इत्यादिश्य तम् वैशम्पायनं स्कन्धावारभारे नियुज्य स्वयं तथारूढ एंव सैन्येनानुगम्यमानः तमेव लेखहारकम् उज्जयिनीमार्गम् पृच्छन् प्रतस्थे।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – देवीचरणारविन्दवन्दनानन्दम् = देवीकादम्बर्याः चरणारविन्दस्य वन्दनायाः आनन्दम्। **समुपसृत्य** = सम + उप + सृ + ल्यप्। **तथैव** = तथा + एव। **महाबलाधिकृतम्** = महाबलम् + अधिकृतम्। **तन्मुखेन** = तत् + मुखेन। **गतोऽस्मि** = गतः + अस्मि। **इत्यादिश्य** = इति + आदिश्य। **परिजनकथासु** = परिजनैः कथासु। **तुरगाधिरूढः** = तुरग + अधिरूढः। **आगन्तव्यम्** = आ + गम् + तव्यत्। **सैन्येनानुगम्यमानः** = सैन्येन + अनु + गम् + शानच्।

शब्दार्थः– अपरम् = दूसरे। **आत्मीयम्** = अपने। **अस्मात्** = उससे। **अभिन्नार्थम्** = अभिन्न अर्थ वाले। **तथैव** = उसी प्रकार। **तुरगाधिरूढः** = घोड़े पर चढ़ते हुए। **प्रयाणपटहम्** = प्रस्थान का नगाड़ा। **अवादयत्** = बजवाया। **महाबलाधिकृतम्** = सेनापति को। **आदिदेश** = आज्ञा दी। **आगन्तव्यम्** = आइए। **नियतम्** = निश्चय ही। **एतावतीं भूमिम्** = यहाँ तक। **आगमिष्यति** = आएगा। **तन्मुखेन** = उसके मुख से। **गरीयसी** = सबसे बड़ी है। **गुरोः** = पिता की। **इति कृत्वा** = ऐसा करके। **स्मर्तव्योऽस्मि** = स्मरण करने योग्य हूँ। **परिजनकथासु** = पजिनों से बातचीत के प्रसंग में। **जीवन्** = जीवित रहते हुए। **देवीचरणारविन्दवन्दनानन्दम्** = देवी कादम्बरी के चरणों की वन्दना के आनन्द को। **अननुभूय** = बिना अनुभव किए। **न स्थास्यति** = नहीं रहेगा। **इत्यादिश्य** = ऐसा आदेश देकर। **स्कन्धवारभारे** = शिविर के भार में। **नियुज्य** = नियुक्त करके।

हिन्दी अनुवाद– वैशम्पायन ने भी पास जाकर अभिन्न अर्थ वाले अपने दो पत्र दिखाए। उसके बाद घोड़े पर उसी तरह सवार होकर 'पिता की जैसी आज्ञा', ऐसा कहकर प्रस्थान के लिए नगाड़ा बजवाया और अपने पास खड़े सेनापति मेघनाद को आदेशित किया–''आप पत्रलेखा के साथ आएँ। केयूरक उन्हें यहाँ तक लेकर निश्चय ही आयेगा। उसके मुख से अर्थात् उसके द्वारा देवी कादम्बरी को सूचित करना है कि पिता की आज्ञा सबसे महान होती है अतः (उसे स्वीकार कर) मैं इस समय उज्जयिनी चला गया हूँ। परिजनों से वार्तालाप करती हुई वह मुझे स्मरण (याद) करती रहें। जीवित रहने पर तो देवी (कादम्बरी) के चरणों की वन्दना द्वारा प्राप्त होने वाले आनन्द का अनुभव किये बिना यह चन्द्रापीड नहीं रहेगा।'' उसको ऐसा आदेश देकर सैन्यशिविर का भार वैशम्पायन को देकर स्वयं घोड़े पर सवार होकर सेना के द्वारा अनुसरण किए जाते हुए उसी पत्रवाहक से उज्जयिनी का रास्ता पूछते हुए प्रस्थान किया।

प्रश्नाः

1. ''वैशम्पायनोऽपि समुपसृत्य लेखद्वितयम् अपरम् आत्मीयम् अस्मात्।''–रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।
2. चन्द्रापीडः मेघनादं किम् आदिदेश ?
3. 'देवीचरणारविन्दवन्दनानन्दम्'–का शाब्दिक अर्थ लिखिए।
4. चन्द्रापीडस्य सेनापतिः कः आसीत् ?

29. क्रमेण च अतिप्रवृद्धपादपया वनगजपातितपादपपरिहारेण वक्रीकृतमार्गया पत्रसंकरकषाय–गिरिनदीजलया शून्यया दिवसम् अटव्या गत्वा, परिणतरविबिम्बे सन्ध्यारुणातपे वासरे रक्तचन्दनतरोः उपरि बद्धं सरसपिशितपिण्डनिभैः अलक्तकैः आर्द्रीकृतं महान्तं रक्तध्वजं दूरत एव ददर्श। तदभिमुखश्च कंचिदध्वानं गत्वा, केतकीसूचिखण्डपाण्डुरेण वनद्विरददन्तकपाटेन परिवृताम्, लौहतोरणेन सनाथीकृतद्वारदेशाम्, लौहमहिषेण अध्यासितशिलावेदिकाम्, निस्संस्कारतया यत्किंचनकारिणा खञ्जतया मन्दं मन्दं संचारिणा, बधिरतया संज्ञाव्यवहारिणा, लम्बोदरतया प्रभूताहारिणा, विस्फोटकव्रणबिन्दुभिः कल्माषितसकलशरीरेण क्षणमप्यमुक्तकालकम्बलखण्डेन जरद्द्रविडधार्मिकेण अधिष्ठितां चण्डिकावसतिम् अपश्यत्। तस्यामेव च आवासम् अरोचयत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– वनगजपातितपादपपरिहारेण = वनानां गजाः तैः पाताताः पादपाः तेषाम् परिहारः तेन। **वक्रीकृतमार्गया** = वक्रीकृतः मार्गः यस्याः सा तथा। **पत्रसंकरकषायगिरिनदीजलया** = पत्राणाम् संकरेण कषायम् गिरः नद्याः जलम् यस्याम् सा तया। **परिणतरविबिम्बे** = परिणतम् रविबिम्बकम् यस्याम् तस्याः। **केतकीसूचिखण्डपाण्डुरेण** = केतक्याः सूचिखण्डः तद्वत् पांडुरः तेन। **वनद्विरददन्तकपाटेन** = वनद्विरदानाम् दन्तकपाटः तेन। **सनाथीकृतद्वारदेशाम्** = सनाथीकृतः द्वारदेशः यस्याः ताम्। **अध्यासितशिलावेदिकाम्** = अध्यासिता शिलावेदिका यस्याः ताम्। **क्षणमप्यमुक्तकालकम्बलखण्डेन** = क्षणम् + अपि + अमुक्त + काल + कम्बल + खण्डेन। **विस्फोटकव्रणबिन्दुभिः** = विस्फोटक + व्रण + बिन्दुभिः। **जरद्द्रविडधार्मिकेण** = जरद् + द्रविड + धार्मिकेण।

शब्दार्थः– अतिप्रवृद्धपादपया = अत्यन्त बड़े-बड़े वृक्षों वाले। **वनगजपातितपादपपरिहारेण** = जंगली हाथियों द्वारा गिराये गये वृक्षों को बचाकर। **वक्रीकृतमार्गया** = टेढ़-मेढ़े रास्ते वाली। **पत्रसंकरकषायगिरिनदीजलया** = पत्तों के मिलने से पहाड़ी नदियों के कसैले जल वाली। **शून्यतया** = सुनसान। **अटव्या** = जंगल से। **परिणतरविबिम्बे** = सूर्यबिम्ब (सूर्य की परछाईं) के बदल जाने पर (बूढ़े हो जाने पर)। **सन्ध्यारुणातपे** = संध्याकालीन लाल धूप (ताप) वाले। **रक्तचन्दनतरोः** = लाल चन्दन के वृक्ष के। **उपरिबद्धम्** = ऊपर बँधे हुए। **सरसपिशितपिण्डनिभैः** = रक्तयुक्त मांस के लोथड़े के समान। **अलक्तकैः** = लाक्षा रस से। **आर्द्रीकृतम्** = गीला किये। **रक्तध्वजम्** = लाल पताका। **ददर्श** = देखा। **तदभिमुखश्च** = उसकी ओर। **कंचिदध्वानम्** = कुछ रास्ता। **केतकीसूचिखण्डपाण्डुरेण** = केवड़े के फूल जैसे पीले। **वनद्विरददन्तकपाटेन** = जंगली हाथियों के दाँतों के किवाड़। **परिवृताम्** = घिरी हुई। **लौहतोरणेन** = लोहे के तोरण से। **सनाथीकृतद्वारदेशाम्** = जिसका दरवाजे का हिस्सायुक्त है। **लौहमहिषेण** = लोहे के भैंसे से। **अध्यासितशिलावेदिकाम्** = युक्त है शिलावेदी जिसकी। **निस्संस्कारतया** = असंस्कृत (अनपढ़) होने के कारण। **यत्किंचनकारिणा** = जो कुछ भी करने वाले। **खञ्जतया** = लँगड़ा होने के कारण। **सञ्चारिणः** = चलने वाले। **बधिरतया** = बहरा होने से। **संज्ञाव्यवहारिणा** = संकेत से बात करने वाले। **लम्बोदरतया** = बड़ा पेट होने से। **प्रभूताहारिणा** = अधिक भोजन करने वाले। **विस्फोटकव्रणबिन्दुभिः** = चेचक के दागों से। **कल्माषितसकलशरीरेण** = काले शरीर वाले। **क्षणमप्यमुक्तकालकम्बलखण्डेन** = काले कम्बल के टुकड़े को क्षणभर को भी न छोड़ने वाले। **जरद्द्रविड-धार्मिकेण** = बूढ़े द्रविड़ धार्मिक से। **अधिष्ठिताम्** = युक्त। **चण्डिकावसतिम्** = चण्डिका देवी का मन्दिर। **अपश्यत्** = देखा। **आवासम् अरोचयत्** = निवास करना पसंद किया।

हिन्दी अनुवाद– इसी शृंखला में चलते हुए चन्द्रापीड ने बड़े-बड़े वृक्षों से सूने, जंगली हाथियों द्वारा गिराये गये वृक्षों को बचाते हुए, पत्तों के मिलने से कड़वे जलवाली पहाड़ी नदियों वाले जंगल में टेढ़े मेढ़े रास्तों के द्वारा जाकर सूर्यबिम्ब के परिणत होने पर (तथा) सायंकालीन लालिमायुक्त धूप के फैल जाने के समय, लाल चन्दन के पेड़ के ऊपर बँधे हुए रक्तयुक्त मांस के टुकड़े की तरह, आलक्तक से भीगे हुए बड़े से लाल रंग की पताका (ध्वज) को दूर से ही देखा। थोड़ा रास्ता उसी दिशा में पार करने के बाद केतकी के फूल जैसे पीले, जंगली हाथियों के दाँतों से निर्मित किवाड़ वाले, लोहे के तोरण (झालर) से युक्त दरवाजे वाले, लोहे से बने भैंसे (की आकृति) से युक्त शिलावेदी को संस्कारविहीन अर्थात् अनपढ़, स्वच्छंद, लँगड़ा होने के कारण धीरे-धीरे चलने वाला, बहरा होने के कारण संकेत द्वारा व्यवहार किये जाने योग्य, बड़ा पेट होने के कारण बहुत अधिक भोजन करने वाला, चेचक के काले दागों से भरे सम्पूर्ण शरीर वाला, काले कम्बल के टुकड़े को क्षणमात्र के लिए भी न छोड़ने वाले बूढ़े द्रविड धार्मिक से युक्त चण्डिका देवी के मन्दिर को देखकर (और) वहाँ ही निवास करना अर्थात् रुकना पसन्द किया।

प्रश्नाः

1. ''क्रमेण च अतिप्रवृद्धपादपया वनगजपातितपादपपरिहारेण वक्रीकृत-मार्गया पत्रसंकरकषायगिरिनदीजलया शून्या दिवसम् अटव्या गत्वा, महान्त रक्तध्वजं दूरत एव ददर्श''–रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।
3. चन्द्रापीडः कुत्र आवासम् अरोचयत् ?
4. कः कंचिदध्वानं गत्वा चण्डिकावसतिम् अपश्यत् ?
5. चन्द्रापीडः दूरत एव किं ददर्श ?

30. अथावतीर्य तुरगात् प्रविश्य भक्तिप्रवणेन चेतसा तां प्रणनाम। कृतप्रदक्षिणश्च पुनः प्रणम्य, प्रशस्तदेवतोद्देशदर्शनकुतूहलेन परिभ्रमन्, तं द्रविडधार्मिकम् अपश्यत्। न्यवारयच्च तेन सार्धम् प्रारब्धकलहान् उपहसतः स्वसैनिकान्। उपसान्त्वनैश्च कथमपि तं प्रशमम् उपनीय, क्रमेण जन्मभूमिम्, जातिम्, विद्याम्, कलत्रम्, अपत्यानि, विभवम्, वयःप्रमाणम्, प्रव्रज्यायाः, कारणञ्च स्वयमेव पप्रच्छ।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – अथावतीर्य = अथ + अवतीर्य। **न्यवारयच्च** = न्यवारयत् + च। **कथमपि** = कथम् + अपि। **कृतप्रदक्षिणश्च** = कृता प्रदक्षिणा येन सः। **प्रशस्तदेवतोद्देशदर्शनकुतूहलेन** = प्रशस्तदेवता + उद्देश + दर्शन + कुतूहलेन।

शब्दार्थः – तुरगात् = अश्व से। **भक्तिप्रवणेन** = श्रद्धा से भरे हुए। **चेतसा** = हृदय से। **प्रणनाम** = प्रणाम किया। **कृतप्रदक्षिणश्च** = परिक्रमा करके। **प्रशस्तदेवतोद्देशदर्शनकुतूहलेन** = कल्याणमय देवता के उद्देश्य से दर्शन की इच्छा के कारण। **परिभ्रमन्** = घूमते हुए। **न्यवारयच्च** = और रोका। **तेन सार्धम्** = उसके साथ। **प्रारब्धकलहान्** = झगड़ने वाले। **उपहसतः** = हँसते हुए। **स्वसैनिकान्** = अपने सैनिकों को। **उपसान्त्वनैः** = समझा–बुझाकर। **कथमपि** = किसी प्रकार। **प्रशमम् उपनीय** = शान्त करके। **कलत्रम्** = स्त्री। **अपत्यानि** = संतान। **विभवम्** = धन-सम्पत्ति। **वयः प्रमाणम्** = आयु। **प्रव्रज्यायाः** = संन्यास का।

हिन्दी अनुवाद – इसके बाद घोड़े से उतरकर देवी के मन्दिर में जाकर चन्द्रापीड ने भक्तिपूर्ण हृदय से प्रणाम किया। परिक्रमा करके फिर प्रणाम करके कल्याणकारी देवता को प्राप्त करने के लिए दर्शन की जिज्ञासा से घूमते हुए उसने उस बूढ़े धार्मिक को देखा और उसके साथ कलह करते हुए तथा उसका उपहास उड़ाते हुए अपने सैनिकों को मना किया। समझा-बुझाकर शान्त करके उसने क्रमशः उसके देश, जाति, विद्या, पत्नी, पुत्र, सम्पत्ति, आयु तथा संन्यास लेने का कारण पूछा।

प्रश्नाः

1. ''अथावतीर्य तुरगात् प्रविश्य भक्तिप्रवणेन चेतसा तां प्रणनाम।''–रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए ?
2. चन्द्रापीडः कस्मात् अवतीर्य भक्तिप्रवणेन चेतसा कां प्रणनाम ?
3. न्यवारयच्च केन सार्धम् प्रारब्धकलहान् उपहसतः स्वसैनिकान् ?
4. प्रशस्तदेवतोद्देशदर्शनकुतूहलेन परिभ्रमन् चन्द्रापीडः कम् अपश्यत् ?

31. पृष्टश्चासौ अवर्णयत् आत्मानम्। अतीतस्वशौर्यसौन्दर्यविभववर्णनावाचालेन तेन सुतराम् अरज्यत राजपुत्रः। कादम्बरीविरहातुरस्य तस्य तच्चरितं मनोविनोदनताम् अगात्। अस्तम् उपगते च भगवति सप्तसप्तौ, शाखावसक्तपर्याणेषु, पुरोनिखातकुन्तयष्टिसंयतेषु वाजिषु, दूरगमनखिन्ने परिकल्पितयामिके, सुषुप्सति सैनिकजने, चन्द्रापीडः परिजनेन एकदेशे संयतस्य इन्द्रायुधस्य पुरः परिकल्पितं शयनीयम् अगात्। निषण्णस्य चास्य पस्पर्श दुःखासिका हृदयम्। अनुपजातनिद्र एव ताम् अनयत् निशाम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – पृष्टश्चासौ = पृष्टः + च + असौ। **कादम्बरीविरहातुरस्य** = कादम्बर्याः विरहेण आतुरस्य। **तच्चरितम्** = तत् + चरितम्। **शाखावसक्तपर्याणेषु** = शाखासु अवसक्तानि पर्याणि येषाम् तेषु। **अस्तमुपगते** = अस्तम् + उपगते। **दूरगमनखिन्ने** = दूरगमनात् खिन्नः तस्मिन्। **अनुपजातनिद्रः** = अनुपजाता निद्रा यस्य सः। **पुरोनिखातकुन्तयष्टिसंयतेषु** = पुरः निखाताः कुन्ताः तेषाम् यष्टयः तासु संयताः तेषु।

शब्दार्थः – अतीतस्वशौर्यसौन्दर्य विभववर्णनावाचालेन = अपने अतीतकाल की वीरता, सुन्दरता, सम्पत्ति आदि को खूब बढ़ा-चढ़ाकर कहने वाले। **पृष्टश्चासौ** = पूछे जाने पर उसने। **तेन** = उससे। **सुतराम्** = अत्यन्त। **अरज्यत** = प्रसन्न हुआ। **कादम्बरी-विरहातुरस्य** = कादम्बरी के विरह से व्याकुल। **मनोविनोदनताम्** = मनोरजंन करने वाला। **अगात्** = पहुँच गया। **सप्तसप्तौ** = सूर्य के। **शाखावसक्तपर्याणेषु** = जिनकी जीनें डालियों पर लटका दी गई हों। **पुरोनिखातकुन्तयष्टिसंयतेषु** = सामने गाड़े गये भालों के डंडे में हुए। **दूरगमनखिन्ने** = बहुत दूर चलने से थके हुए। **परिकल्पितयमिके** = बिस्तर लगाकर। **सुषुप्सति सैनिकजने** = सैनिकों के सो जाने। **परिजनेन** = सेवक द्वारा। **संयतस्य** = हुए। **परिकल्पितम्** = लगाये गये। **अगात्** = आया। **निषण्णस्य** = बैठ जाने के लिए। **पस्पर्श** = स्पर्श किया। **दुःखासिका** = चिंता। **अनुपजातनिद्रः** = बिना नींद आए। **निशाम् अनयत्** = रात बिता दी।

हिन्दी अनुवाद – उस द्रविड़ ने चन्द्रापीड के द्वारा पूछे जाने पर अपने विषय में बताया। उसने अपने अतीत के शौर्य सुन्दरता और धन-वैभव का इतना अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन किया कि राजकुमार उससे बहुत प्रसन्न हुए। उसका चरित्र कादम्बरी के विरह में व्याकुल राजकुमार के लिए मनोविनोद का साधन बन गया। दूर से आने पर घोड़ों की जीने सूर्यास्त होने पर डालियों पर लटकाकर और सामने गड़े हुए भालों की लाठियों में घोड़ो को बाँधकर जब थके हुए सैनिक बिस्तर बिछाकर सोने लगे तब सेवक द्वारा लगाये गए बिस्तर पर चन्द्रापीड भी बँधे हुए इन्द्रायुध के सामने एक स्थान पर पहुँचा। बिस्तर पर बैठते ही उसके हृदय में उत्पन्न चिंता के कारण सारी रात उसने जागते ही बिता दी।

प्रश्नाः

1. अयं गद्यांशः कस्मात् पुस्तकात् उद्धृतः अस्ति ?
1. ''अनुपजातनिद्र एव ताम् अनयत् निशाम्।''–रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।
2. चन्द्रापीडः कथम् मनोविनोदम् अकरोत्।
3. केन पृष्टः द्रविडधार्मिकः आत्मानम् अवर्णयत् ?
4. कादम्बरीविरहातुरः कः आसीत् ?

32. उषसि च उत्थाय तस्य जरद्द्रविडधार्मिकस्य मनोरथं धनविसरैः पूरयित्वा, रमणीयेषु प्रदेशेषु कृतवसतिः अल्पैरेवाहोभिः उज्जयिनीम् आजगाम। तत्र पौराणां नमस्काराञ्जलिसहस्राणि प्रतीच्छन् विवेश नगरीम् दृष्ट्वा च पितरं दूरादेव अवतीर्य वाजिनः मौलिना महीम् अगच्छत्। अथ प्रसारितभुजेन 'एह्येहि' इत्याहूय, पित्रा सुचिरं गाढम्, उपगूढः, करे गृहीत्वा विलासवतीभवनम् अनीयत राज्ञा। तयापि तथैव प्रत्युद्गम्य अभिनन्दितागमनः दिग्विजयसंबद्धाभिरेव कथाभिः कंचित् कालं स्थित्वा, शुकनासं द्रष्टुम् आययौ। तत्रापि अमुनैव क्रमेण सुचिरं स्थित्वा, निवेद्य वैशम्पायनं स्कन्धावारवर्तिनं कुशलिनम् आलोक्य च मनोरमाम् आगत्य विलासवतीभवने एव सर्वाः स्नानादिकाः क्रियाः निरवर्तयत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी–कृतवसतिः = कृता वसतिः येन सः। **अल्पैरेवाहोभिः** = अल्पैः + एव + अहोभिः। **नमस्काराञ्जलिसहस्राणि** = नमस्कार + अञ्जलि + सहस्राणि। **प्रत्युद्गम्य** = प्रति + उद् + गम् + ल्यप्। **प्रसारितभुजेन** = प्रसारिते भुजे येन सः। **दृष्ट्वा** = दृश् + क्त्वा। **इत्याहूय** = इति + आहूय। **अभिनन्दितागमनः** = अभिनन्दितम् आगमनं यस्य सः। **द्रष्टुम्** = दृश् + तुमुन्। **आगत्य** = आ + गम् + ल्यप्।

शब्दार्थः– उषसि = प्रातःकाल। **उत्थाय** = उठकर। **जरद्द्रविडधार्मिकस्य** = बूढ़े द्रविड़धार्मिक का। **धनविसरैः** = धनराशि से। **कृतवसतिः** = निवास करने वाला। **अल्पैरेवाहोभिः** = थोड़े ही दिनों में। **पौराणाम्** = नगरवासियों के। **नमस्काराञ्जलिसहस्राणि** = हजारों नमस्कारों को। **प्रतीच्छन्** = स्वीकार करते हुए। **विवेश** = प्रवेश किया। **दूरादेव** = दूर ही से। **मौलिना** = सिर से। **महीम् अगच्छत्** = पृथ्वी पर पहुँचा, सिर झुकाकर प्रणाम किया। **प्रसारितभुजेन** = भुजा फैलाकर। **एह्येहि** = आओ–आओ। **इत्याहूय** = इस प्रकार बुलाकर। **पित्रा** = पिता द्वारा। **सुचिरम्** = देर तक। **गाढम् उपगूढः** = दृढ़ आलिंगन करने के बाद। **राज्ञा** = राजा द्वारा। **प्रत्युद्गम्य** = आगे बढ़कर। **अभिनन्दितागमनः** = आगमन का स्वागत किया गया है। **द्रष्टुम् आययौ** = देखने के लिए आया। **तत्रापि** = वहाँ भी। **अमुनैव क्रमेण** = उसी क्रम से। **सुचिरं स्थित्वा** = देर तक रुककर। **निवेद्य** = निवेदन करके। **स्कन्धावारवर्तिनम्** = शिविर में स्थित। **कुशलिनम्** = कुशलपूर्वक। **आलोक्य** = देखकर। **आगत्य** = आकर।

हिन्दी अनुवाद – प्रातःकाल उठकर (चन्द्रापीड ने) उस बूढ़े द्रविड़धार्मिक की इच्छा (अभिलाषा, मनोरथ) को धन से पूरी कर (अर्थात् धन देकर) मनोरम स्थलों में रुकता हुआ कुछ ही दिनों में उज्जयिनी आ गया। वहाँ के हजारों पुरवासियों अर्थात् नगरवासियों के नमस्कारों को स्वीकार करते हुए नगरी में प्रवेश किया और घोड़े से उतरकर और (अपने) पिता को दूर ही से देखकर सिर को भूमि तक झुका कर (अर्थात् मस्तक से भूमि का स्पर्श करते हुए) दंडवत् प्रणाम किया। इसके बाद अपनी फैली हुई भुजाओं के द्वारा आओ–आओ, कहकर पिता ने देर तक उसका दृढ़ता से आलिंगन किया और राजा उसका हाथ पकड़कर विलासवतीभवन को ले गये। उसने भी आगे बढ़कर आगमन का स्वागत किया। लम्बे समय तक दिग्विजय के संबंध में बातें करता हुआ (कुमार) वहाँ रुका रहा, (फिर) शुकनास से मिलने गया। उसी क्रम में वहाँ भी देर तक ठहर कर वैशम्पायन शिविर में ठहरा है, ऐसा कह करके मनोरमा का दर्शन किया और विलासवती के महल में आकर स्नानादि सारे दैनिक कार्य पूर्ण किये।

प्रश्नाः

1. अस्य गद्यांशस्य पुस्तकस्य नाम किम् ?
2. ''दिग्विजयसंबद्धाभिरेव कथाभिः कंचित् कालं स्थित्वा, शुकनासं द्रष्टुम् आययौ।''–रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।
3. शुकनासं द्रष्टुं कः आययौ ?
4. चन्द्रापीडः जरद्द्रविडधार्मिकस्य मनोरथं कैः अपूरयत् ?
5. चन्द्रापीडः कुत्र आजगाम ?

33. अपराह्णे निजमेव भवनम् अयासीत्। तत्र च रणरणकखिद्यमानमानसः, कादम्बर्या विना न केवलम् अवन्तिनगरम् सकलमेव महीमण्डलं शून्यम् अमन्यत। ततः गन्धर्वराजपुत्री–वार्ताश्रवणोत्सुकः पत्रलेखाया आगमनं प्रत्यपालयत्। कतिपयदिवसापगमे च मेघनादः पत्रलेखाम् आदाय आगच्छत्, कृतनमस्कारां च ताम् दूरादेव स्मितेन प्रकाशितप्रीतिः अब्रवीत् ''पत्रलेखे ! कथय तत्रभवत्याः महाश्वेतायाश्च देव्या कादम्बर्याः कुशलम् ? कुशली वा सकलः परिजनः।'' इति। सा अब्रवीत्– ''देव ! यथाज्ञापयसि, भद्रम्। त्वाम् अर्चयति शेखरकृताञ्जलिना कादम्बरी'' इत्येवम् उक्तवतीम् पत्रलेखाम् आदाय, मन्दिराभ्यन्तरं विवेश।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – गन्धर्वराजपुत्रीवार्ताश्रवणोत्सुकः = गन्धर्वराज्ञः पुत्री तस्याः वार्ता तां श्रवणाय उत्सुकः। **यथाज्ञापयसि** = यथा + आज्ञापयसि। **रणरणकखिद्यमानमानसः** = रणरणकेन + खिद्यमानः + मानसः। **प्रत्यपालयत्** = प्रति + अपालयत्। **कतिपयदिवसापगमे** = कतिपयानि दिवसानि अपगमे इति। **आदाय** = आ + दा + ल्यप्। **दूरादेव** = दूरात् + एव। **प्रकाशितप्रीतिः** = प्रकाशितः प्रीतिः इति। **शेखरकृताञ्जलिना** = शेखरे कृतः अञ्जलिः तया। **इत्येवम्** = इति + एवम्। **मन्दिराभ्यन्तरम्** = मन्दिरस्य अभ्यन्तरम्।

शब्दार्थः – अपराह्णे = दोपहर के बाद। **अयासीत्** = आया। **रणरणकखिद्यमानमानसः** = चिन्ता से दुःखी हृदय वाला। **कादम्बर्या विना** = कादम्बरी के बिना। **सकलमेव** = संपूर्ण। **महीमण्डलम्** = पृथ्वी को। **शून्यम्** = सुनसान। **अमन्यत** = समझ लिया। **गन्धर्वराजपुत्रीवार्ताश्रवणोत्सुकः** = कादम्बरी का समाचार सुनने के लिए उत्सुक। **आगमनम्** = आने की। **प्रत्यपालयत्** = प्रतीक्षा करने लगा। **दिवसापगमे** = कुछ दिन बीतने पर। **आदाय** = लेकर। **कृतनमस्काराम्** = नमस्कार करने वाली। **स्मितेन** = मुस्कान से। **प्रकाशितप्रीतिः** = प्रेम प्रकट करते हुए। **अब्रवीत्** = कहा। **कथय** = बताओ। **तत्रभवत्याः** = देवी। **परिजनः** = सेवकवर्ग, सखियाँ। **भद्रम्** = कल्याण, कुशल। **अर्चयति** = पूजा करती है। **शेखरकृताञ्जलिना** = सिर पर अंजलि करके। **उक्तवतीम्** = कहने वाली की। **आदाय** = लेकर। **मन्दिराभ्यन्तरम्** = मन्दिर के भीतर। **विवेश** = प्रवेश किया।

हिन्दी अनुवाद – अपराह्न काल में (चन्द्रापीड) अपने भवन में आया और वहाँ कादम्बरी के बिना न केवल अवन्तिनगरी को अपितु समस्त पृथ्वी को ही सुनसान समझने लगा। उसके बाद गन्धर्वराज की पुत्री (कादम्बरी) के विषय में समाचार जानने के लिए उत्सुक, पत्रलेखा के आने की प्रतीक्षा करने लगा और कुछ अवधि बीतने पर पत्रलेखा को लेकर मेघनाद आया, नमस्कार करती हुई उसको (पत्रलेखा) को दूर से ही मुस्कान के द्वारा प्रेम प्रदर्शित करते हुए चन्द्रापीड ने कहा "पत्रलेखा कहो — वहाँ देवी महाश्वेता और देवी कादम्बरी सकुशल हैं ? और सारे परिवार वाले कुशल तो हैं ? उसने कहा – "देव! जैसा आप कह रहे हैं, सब कल्याण है अर्थात् सब कुशल है। हाथ जोड़कर मस्तक पर लगाते हुए तुम्हें देवी कादम्बरी प्रणाम करतीं हैं।"– इस प्रकार कहती हुई पत्रलेखा को लेकर (चन्द्रापीड ने) महल में प्रवेश किया।

प्रश्नाः

1. अपराह्णे निजमेव भवनम् कः अयासीत् ?
2. चन्द्रापीडः अपराह्णे कुत्र अयासीत् ?
3. पत्रलेखायाः आगमनं कः प्रत्यपालयत् ?
4. कः पत्रलेखाम् आदाय आगच्छत्?
5. "ततः गन्धर्वराजपुत्रीवार्ताश्रवणोत्सुकः पत्रलेखाया आगमनं प्रत्यपालयत् ।"–रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।

34. उपविश्य च तत्र अप्राक्षीत्–"पत्रलेखे ! कथय, कथमसि स्थिता ? कियन्ति वा दिनानि? कीदृशो वा देवीप्रसादः ? का वा गोष्ठयः समभवन् ? को वा अतिशयेन अस्मान् स्मरति?" इति। इत्येवं पृष्टा व्यजिज्ञपत्–"देव ! श्रूयताम्– ततः खल्वागते देवे केयूरकेण सह प्रतिनिवृत्त्याहम् तथैव कुसुमशयनसमीपे समुपाविशम्। अतिष्ठं च सुखं नवनवान् अनुभवन्ती देवीप्रसादान्। अपराह्णे च मामेव अवलम्ब्य संचरन्ती प्रमदवनवेदिकाम् अध्यारोहत्। तस्यां च मणिस्थूणावष्टम्भा स्थिता। स्थित्वा च मुहूर्तमिव किमपि व्याहर्तुम्

इच्छन्ती निःस्पन्दपक्ष्मणा चक्षुषा मुखं मे सुचिरं व्यलोकयत्। अथ मया विदिताभिप्रायया 'आज्ञापय' इति विज्ञापिते, लज्जाकलितगद्गदा, कथमपि व्याहाराभिमुखम् आत्मानम् अकरोत्। अब्रवीच्च माम्–''पत्रलेखे दर्शनात् प्रभृति प्रियासि। न जाने केन कारणेन त्वयि विश्वसिति मे हृदयम्। अहं तावत् न संकल्पिता पित्रा। न दत्ता मात्रा। नानुमोदिता गुरुभिः। बलात् अवलिप्तेन गुरुगर्हणीयतां नीता कुमारेण चन्द्रापीडेन। कथय महतां किमयम् आचारः'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी–कथमसि = कथम् + असि। **खल्वागते** = खलु + आगते। **अध्यारोहत्** = अधि + आरोहत्। **विदिताभिप्रायः** = विदितः अभिप्रायः यया तया। **व्याहाराभिमुखम्** = व्याहार + अभिमुखम्। **उपविश्य** = उप + विश् + ल्यप् प्रत्यय। **इत्येवम्** = इति + एवम् यण्। **प्रतिनिवृत्त्याहम्** = प्रति + निवृत्त्य + अहम्। **कुसुमशयनसमीपे** = कुसुमानां शयनं तत्समीपे। **समुपाविशम्** = सम् + उप + अविशम्। **प्रमदवनवेदिकाम्** = प्रमद इति नाम्ना वने निर्मितां वेदिकाम्। **मणिस्थूणावष्टम्भा** = मणेः स्थूणा तस्याः अवष्टम्भः यस्याः सा।

शब्दार्थः – कियन्ति = कितने। **गोष्ठ्यः** = बातचीत। **पृष्टा** = पूछी गई। **व्यजिज्ञपत्** = निवेदन किया। **प्रतिनिवृत्त्याहम्** = मैं लौटकर। **नवनवान्** = नए-नए। **देवीप्रसादान्** = देवी की कृपा को। **मामेव अवलम्ब्य** = मेरा ही सहारा लेकर। **संचरन्ती** = घूमती हुई। **प्रमदवनवेदिकाम्** = प्रमदवन की वेदी पर। **अध्यारोहत्** = बैठ गई। **मणिस्थूणावष्टम्भा** = मणि-खम्भे का सहारा लेकर। **किमपि व्याहर्तुम्** = कुछ कहने के लिए। **निःस्पन्दपक्ष्मणा चक्षुषा** = अपलक नेत्रों से। **सुचिरम्** = लम्बे समय तक। **व्यलोकयत्** = देखा। **विदिताभिप्राय** = आशय समझकर। **विज्ञापिते** = कहने पर। **लज्जाकलितगद्गदा** = लज्जा से भर जाने वाली। **व्याहाराभिमुखम्** = बात करने के लिए तत्पर। **संकल्पिता** = दी गई। **नानुमोदिता** = नहीं अनुमोदित की गई। **अवलिप्तेन** = गर्वित। **गुरुगर्हणीयताम्** = गुरुजनों द्वारा निन्दनीय दशा को। **नीता** = प्राप्त करायी गई। **महताम्** = बड़े लोगों का।

हिन्दी अनुवाद– और चन्द्रापीड ने वहाँ बैठकर पूछा–''पत्रलेखा! बताओ वहाँ किस तरह रही ? कितने दिनों तक रही। तुम्हारे ऊपर देवी का अनुग्रह किस प्रकार का रहा ? और (उनसे) क्या बातें हुईं। और मुझे कौन अधिक स्मरण करता है ?'' इस प्रकार पूछने पर पत्रलेखा ने आदरपूर्वक कहा – ''देव (राजकुमार!) सुनिए, मैं आपके चले जाने पर केयूरक के साथ लौटकर उसी फूलों की सेज के पास बैठ गई। वहाँ रहकर मैंने देवी के नये-नये अनुग्रहों को जाना। दोपहर में मेरा अवलम्बन लेकर विचरण करती हुई (कादम्बरी) प्रमदवन की वेदी पर चढ़कर और वहीं मणिखम्भे का सहारा लेकर बैठ गयीं। कुछ बताने की इच्छा के कारण वह क्षणभर ठहर कर मेरे चेहरे की ओर निरन्तर कुछ समय तक बिना पलक झपकाये अर्थात् एकटक देखती रहीं। मैंने उनका आशय समझकर–'आज्ञा दीजिए' कहा। पर, लज्जा के कारण भरे हुए कण्ठ से बड़ी कठिनाई से बात करने को तैयार हुईं। मुझसे

बोलीं–पत्रलेखा, दर्शन के अर्थात् देखने के समय से ही तुम मेरी स्नेहभाजक बन गई हो। न जाने किस कारण से मेरा हृदय तुम पर विश्वास करता है। मेरा न तो पिता ने संकल्प किया, न ही माता ने दिया, न गुरुजनों ने अनुमोदन ही किया। मुझे राजकुमार चन्द्रापीड ने बलात् गुरुजनों द्वारा निन्दनीय दशा में पहुँचा दिया। बताओ, क्या महान् लोगों का यही आचरण है (उचित है)।

प्रश्नाः

1. उपर्युक्त गद्यांश की पुस्तक और लेखक का नाम लिखिए।
2. ''पत्रलेखे दर्शनात् प्रभृति प्रियासि''।– रेखंकित अंश का अनुवाद कीजिए।
3. लज्जाकलितगद्गदा का आसीत् ?
4. कया अवलम्ब्य कादम्बरी संचरन्ती प्रमदवनवेदिकाम् अध्यारोहत् ?
5. उपविश्य च तत्र कः अप्राक्षीत्।

35. अहं तु अविदितवृत्तान्ततया भीतेव सविषादं विज्ञापितवती–''देवि ! श्रोतुम् इच्छामि। आज्ञापय किं कृतम् देवेन चन्द्रापीडेन ? केन वा खलु अविनयेन खेदितम् देव्याः कुमुदकोमलं मनः ?'' इत्येवम् अभिहिता पुनरवदत् –''आवेदयामि ते। अवहिता शृणु। स्वप्नेषु प्रतिदिवसम् आगत्यागत्य मनोहरान् मदनलेखान् प्रेषयति। उपवनेषु एकाकिन्याः मे परिष्वङ्गम् आचरति। शीतलैः मुखमारुतैः कपोलौ वीजयति। मन्मथमूढमानसश्च, कथय, हे पत्रलेखे ! केन प्रकारेण निषिध्यते!'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– अविदितवृत्तान्ततया = अविदितः वृत्तान्तः तस्य भावः तया। **आगत्यागत्य** = आगत्य + आगत्य। **मन्मथमूढमानसः** = मन्मथेन मूढः मानसः यस्य सः। **भीतेव** = भीता + इव। श्रोतुम् = श्रु + तुमुन्। **कुमुदकोमलम्** = कुमुद इव कोमलम्। **इत्येवम्** = इति + एवम्। **पुनरवदत्** = पुनः + अवदत्।

शब्दार्थः– अविदितवृत्तान्ततया = समस्त वृत्तान्त से अनजान होने के कारण। **भीतेव** = डरी हुई-सी। **सविषादं** = खेद के साथ। **विज्ञापितवती** = निवेदन किया। **श्रोतुम् इच्छामि** = सुनना चाहती हूँ। **कुमुदकोमलम्** = कुमुद पुष्प के समान कोमल। **अभिहिता** = कही गई। **पुनरवदत्** = फिर कहा। **अवहिता शृणु** = ध्यान देकर सुनो। **आवेदयामि** = बताती हूँ। **आगत्यागत्य** = आ-आकर। **मदनलेखान्** = काम सम्बन्धी लेखों को। **प्रेषयति** = भेजते हैं। **एकाकिन्या** = अकेली का। **परिष्वङ्गम् आचरति** = आलिंगन करते हैं। **शीतलैः मुखमारुतैः** = शीतल साँसों से। **कपोलौ वीजयति** = कपोलों पर श्वाँस छोड़ते हैं। **मन्मथमूढमानसः** = कामवासना से मूढ़ मनवाले। **निषिध्यते** = रोका जाये।

हिन्दी अनुवाद – सभी वृत्तान्तों से अनजान एवं डरी हुई की भाँति मैंने दुःख के साथ कहा – देवि! मैं सुनना चाहती हूँ कि राजकुमार ने क्या किया है ? उनके किस अपराध ने आपके चित्त को दुःखी कर दिया है। बताइए। मेरे ऐसा पूछने पर वे फिर बोलीं – मैं तुम्हें बताती हूँ – ध्यान से सुनो। (मेरे) पास स्वप्नों में काम संदेश अर्थात् पत्र भेजते हैं। बगीचे में एकान्त में मेरा आलिंगन करते हैं। ठंडी श्वासों द्वारा मेरे गालों पर फूँक मारते हैं। पत्रलेखा! कामक्रीडा के प्रति मूर्ख बने हुए अपने मन को मैं कैसे समझाऊँ।

प्रश्नाः

1. प्रस्तुतगद्यांशस्य लेखकः कः ?
2. ''अहं तु अविदितवृत्तान्ततया भीतेव सविषादं विज्ञापितवती।''– रेखांकित अंश का अनुवाद कीजिए।
3. कस्याः कुमुदकोमलं मनः खेदितम् ?
4. कः स्वप्नेषु प्रतिदिवसम् आगत्य मनोहरान् मदनलेखान् प्रेषयति ?
5. 'मन्मथमूढमानसः' का शाब्दिक अर्थ लिखिए।

36. ताम् एवं वादिनीम् आकर्ण्य, प्रहर्षनिर्भरा, अहो चन्द्रापीडम् उद्दिश्य आकृष्टा खलु इयं मकरकेतुना इति विचिन्त्य विहस्य अब्रवम्– ''देवि ! यद्येवम् उत्सृज कोपम्। प्रसीद। नार्हसि कामापराधैः देवं दूषयितुम्। अनाराधितप्रसन्नेन कुसुमशरेण भगवता ते वरः दत्तः। का चात्र गुरुजनवक्तव्यता ! कति वा कथयामि ते, याः स्वयं वृतवत्यः पतीन्। यदि च नैवम् अनर्थक एव तर्हि धर्मशास्त्रोपदिष्टः स्वयंवरविधिः। तत् प्रसीद। संदिश प्रेषय माम्। यामि। आनयामि ते हृदयदयितम्'' इत्येवं वादिनीं माम् पुनरवदत्– ''पत्रलेखे ! हृदयात् अव्यतिरिक्तासि। जानामि ते गरीयसीं प्रीतिम्। न खलु प्रियम् इति ब्रवीमि। त्वामेव पश्यन्ती, संधारयामि जीवितम्। तथापि यद्ययं ते ग्रहः, तत् साधय समीहितम्'' इत्यभिधाय मां व्यसर्जयत्।'' इति। चन्द्रापीडस्तु तथा विज्ञप्तः पत्रलेखया धीरप्रकृतिरपि नितरां पर्याकुलोऽभवत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – यद्येवम् = यदि + एवम्। **नार्हसि** = न + अर्हसि। **नैवम्** = न + एवम्। **पुनरवदत्** = पुनः + अवदत्। **धीरप्रकृतिरपि** = धीरप्रकृतिः + अपि। **इत्यभिधाय** = इति + अभिधाय। **धर्मशास्त्रोपदिष्टः** = धर्मशास्त्रेण उपदिष्टः यः तम्। **उद्दिश्य** = उत् + दिश् + ल्यप्। **विचिन्त्य** = वि + चिन्त् + ल्यप्। **अनाराधितप्रसन्नेन** = न आराधितः इति अनाराधितः तेन विना प्रसन्नेन, इति अनाराधितप्रसन्नेन। **कुसुमशरेण** = कुसुमम् एव शरः, तेन। **चात्र** = च + अत्र। **पुनरवदत्** = पुनः + अवदत्। **पर्याकुलोऽभवत्** = पर्याकुलः + अभवत्।

शब्दार्थः – वादिनीम् = कहने वाली को। **प्रहर्षनिर्भरा** = प्रसन्न होकर। **मकरकेतुना** = कामदेव द्वारा। **विचिन्त्य** = विचार करके। **विहस्य** = हँसकर। **उत्सृज कोपम्** = कोध छोड़िये। **नार्हसि** = उचित नहीं। **कामापराधैः** = काम के दोषों से। **देवं दूषयितुम्** = देव को दोष देना। **अनाराधितप्रसन्नेन** = बिना अर्चना के ही स्वयं ही प्रसन्न होने वाले। **कुसुमशरेण** = पुष्प रूपी धनुष वाले अर्थात् कामदेव के द्वारा। **वरः दत्तः** = वरदान दिया है। **हृदयदयितम्** = प्राण प्रिय को। **पुनरवदत्** = फिर कहा। **अव्यतिरिक्तासि** = अभिन्न हो। **पश्यन्ती** = देखती हुई। **धारयामि जीवितम्** = जीवन धारण किये हूँ। **ग्रहः** = आग्रह। **साधय समीहितम्** = इच्छा पूरी करो। **व्यसर्जयत्** = विदा किया। **विज्ञप्तः** = कहे जाने पर। **धीरप्रकृतिरपि** = स्वभाव से धैर्यवान् होते हुए भी। **नितराम्** = अत्यन्त। **पर्याकुलः** = बेचैन।

हिन्दी अनुवाद–कादम्बरी को इस प्रकार बोलते हुए सुनकर मैं अत्यधिक प्रसन्न हो गई। कामदेव ने इसे चन्द्रापीड की ओर आकर्षित कर दिया है। ऐसा सोचकर हँसकर मैंने कहा–देवि, यदि ऐसी बात है तो क्रोध को छोड़ दीजिए। राजकुमार को कामदेव के कृत्यों के लिए दोष देना उचित नहीं है। बिना अर्चना के ही प्रसन्न हो जाने वाले कामदेव ने तुम्हें यह वरदान दिया है। इसमें श्रेष्ठजनों की आज्ञा की क्या बात है ? कितनी (कुमारियों) के विषय में बताऊँ जिन्होंने स्वयं अपने पतियों को चुना है। अन्यथा धर्मशास्त्रों में बताई गई स्वयंवर की विधि ही व्यर्थ है। इसलिए आनन्दित हों। संदेश देकर मुझे भेजिए। मैं जाकर तुम्हारे हृदय को हरने वाले (प्राणप्रिय) को ले आती हूँ। उसने इस प्रकार बोलने वाली मुझसे फिर कहा – ''पत्रलेखा, तुम मेरे हृदय से विलग नहीं हो अर्थात् अभिन्न हो। तुम्हारे गहरे (सच्चे) प्रेम को जानती हूँ। इतना ही कह रही हूँ कि तुम्हें भेजना ठीक नहीं है, क्योंकि तुमको ही देखकर जीवन धारण किये हूँ। तथापि (फिर भी) यदि यह तुम्हारा निवेदन है, तो अपनी इच्छा पूरी करो'', ऐसा कहकर मुझे विदा किया। धीरस्वभाव वाला होने पर भी चन्द्रापीड पत्रलेखा के द्वारा ऐसा कहने पर अत्यन्त व्याकुल हो गया।

प्रश्नाः

1. उपर्युक्त गद्यांशः कस्मात् पुस्तकात् उद्धृतः ?
2. ''पत्रलेखे! हृदयात् अव्यतिरिक्तासि। जानामि ते गरीयसीं प्रीतिम्''– रेखांकित अंश का हिन्दी में अनुवाद कीजिए।
3. कुसुमशरेण भगवता कस्मै वरः दत्तः ?
4. का हृदयात् अव्यतिरिक्ता अस्ति ?
5. स्वयंवरविधिः कुत्र उपदिष्टः ?

37. अत्रान्तरे प्रविश्य प्रतीहारी व्यज्ञापयत् – युवराज! देवी विलासवती समादिशति, ''श्रुतं मया पृष्ठतः स्थिता पत्रलेखा पुनः परागता इति। तवापि कापि महती वेला वर्तते दृष्टस्य, तत् अनया सहित एव आगच्छ'' इति। चन्द्रापीडस्तु तत् आकर्ण्य, चेतस्यकरोत्–

'अहो संदेहदोलाधिरूढं मे जीवितम्। एवम् अम्बा निमेषमपि माम् अपश्यन्ती दुःखमास्ते। एवम् आज्ञापितम् आगमनाय मे निष्कारणवत्सलया देव्या कादम्बर्या। बलवान् जननीस्नेहः। गरीयान् गन्धर्वराजसुतानुरागः। दुस्त्यजा जन्मभूमिः। परिग्राह्या कादम्बरी। कालातिपातासहं मे मनः। विप्रकृष्टमन्तरं हेमकूटविन्ध्याचलयोः इति इत्येवं चिन्तयन्नेव प्रतीहार्या उपदिश्यमानमार्गः जननीसमीपम् अगात्। तत्रैव च सोत्कण्ठं दिवसम् अनयत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – अत्रान्तरे = अत्र + अन्तरे। **तवापि** = तव + अपि। **निमेषमपि** = निमेषम् + अपि। **चेतस्यकरोत्** = चेतसि + अकरोत्। **कालातिपातासहम्** = कालस्य अतिपातं न सहते। **प्रविश्य** = प्र + विश् + ल्यप्। **समादिशति** = सम् + आ + दिशति। **सन्देहदोलाधिरूढम्** = सन्देहस्य दोला सन्देहदोला तस्यां अधिरूढः तम्। **निमेषमपि** = निमेषम् + अपि। **गन्धर्वराजसुतानुरागः** = गन्धर्वराजस्य सुता तस्याः अनुरागः इति। **दुस्त्यजा** = दुः + त्यजा। **जननीसमीपम्** = जनन्याः समीपम्। **हेमकूटविन्ध्याचलयोः** = हेमकूटः च विन्ध्याचलः च तयोः।

शब्दार्थः– अत्रान्तरे = इसी बीच। **प्रविश्य** = प्रवेश करके। **व्यज्ञापयत्** = निवेदन किया। **समादिशति** = आदेश देती हैं। **श्रुतं मया** = मैंने सुना है। **पृष्ठतः स्थिता** = पीछे ठहरी हुई। **परागता** = वापस आई है। **तवापि** = तुम्हे भी। **कापि महती वेला** = बहुत देर। **अनया सहितः** = इसके साथ। **आगच्छ** = आओ। **चेतस्यकरोत्** = मन में विचार किया। **सन्देहदोलाधिरूढम्** = सन्देह-रूपी झूले पर सवार। **जीवितम्** = जीवन। **अम्बा** = माँ। **निमेषमपि** = क्षण मात्र भी। **माम् अपश्यन्ती** = मुझे बिना देखे।

हिन्दी अनुवाद – इसी बीच प्रतीहारी ने प्रवेश करके कहा–राजकुमार, देवी विलासवती ने आज्ञा दी है,'मेरे द्वारा सुना गया है कि (चन्द्रापीड के आने के बाद) पीछे (हेमकूट) रुक जाने वाली पत्रलेखा फिर से आ गई है।'' काफी समय हो गया है तुम्हें भी देखे, इसलिए उसके ही सहित आ जाओ। चन्द्रापीड ने उसे सुनकर विचार किया– 'अरे मेरा मन संदेह रूपी झूले पर झूल रहा (अर्थात् निर्णय करने में असमर्थ) है। एक क्षण भी मुझको न देख पाने पर माता दुःखी हो जाती हैं। मुझसे निष्कारण प्रेम करने वाली देवी कादम्बरी ने मुझे आने की आज्ञा (संदेश) दी है। माता का स्नेह बलवान होता है। गन्धर्वराज की कन्या अर्थात् कादम्बरी का स्नेह भी महत्त्वपूर्ण है। जन्मभूमि का त्याग दुःसह्य (कठिन) है। कादम्बरी को स्वीकार करना भी आवश्यक है। मेरा मन विलम्ब को अधिक सहन करने वाला नहीं है। हेमकूट और विन्ध्याचल की दूरी भी बहुत अधिक है। चन्द्रापीड प्रतीहारी के द्वारा बताए गए मार्ग से इस प्रकार विचार करता हुआ माता के पास आया। वहाँ पर उसने बड़ी व्याकुलता से दिन बिताया।

प्रश्नाः

1. प्रस्तुत गद्यांशस्य लेखकः कः अस्ति ?
2. "विप्रकृष्टमन्तरं हेमकूटविन्ध्याचलयोः इति इत्येवं चिन्तयन्नेव प्रतीहार्या उपदिश्यमानमार्गः जननीसमीपम् अगात्"–रेखांकित अंश का हिन्दी में अनुवाद कीजिए।
3. 'श्रुतं मया पत्रलेखा पुनः परागता' इति। कस्यः उक्तिः ?
4. चन्द्रापीडः कया उपदिश्यमानमार्गः जननीसमीपम् अगात् ?
5. अत्रान्तरे प्रविश्य का व्यज्ञापयत् ?

38. एवमेव रात्रौ दिवा च अकृतनिर्वृतिः आयास्यमानोऽपि मनसिजेन मर्यादावशात् आत्मानं स्तम्भयन्, कथं कथमपि कतिपयेष्वतिक्रान्तेषु वासरेषु, एकदा निर्गत्य बहिर्नगर्याः, शिप्रातटानि अनुसरन्, अतित्वरया आगच्छतः दूरादेव अतिबहून् तुरङ्गमान् अद्राक्षीत्। दृष्ट्वा च समुत्पन्नकुतूहलः तेषां परिज्ञानाय पुरुषमन्यतमं प्राहिणोत्। आत्मनापि ऊरुदघ्नेन पयसा उत्तीर्य शिप्राम् भगवतः कार्त्तिकेयस्य आयतने तत्प्रतिवार्ताम् प्रतिपालयन् अतिष्ठत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– एवमेव = एवम् + एव। **बहिर्नगर्याः** = बहिः + नगर्याः। **कतिपयेष्वतिक्रान्तेषु** = कतिपयेषु + अतिक्रान्तेषु। **दृष्ट्वा** = दृश् + क्त्वा। **समुत्पन्नकुतूहलः** = समुत्पन्नं कुतूहलं यस्मिन् सः। **शिप्रातटानि** = शिप्रायाः तटानि।

शब्दार्थः – अकृतनिर्वृतिः = शान्ति न प्राप्त करता हुआ, अशान्त मन। **आयास्यमानोऽपि** = दुःखी किये जाने पर भी। **मनसिजेन** = काम के द्वारा। **मर्यादावशात्** = मर्यादा के कारण। **आत्मानम्** = अपने को। **स्तम्भयन्** = रोकता हुआ। **कतिपयेषु** = कुछ। **अतिक्रान्तेषु** = बीतने पर। **बहिर्नगर्याः** = नगरी के बाहर। **शिप्रातटानि** = शिप्रा नदी के तटों को। **अतित्वरया** = बड़ी शीघ्रता से, बड़े वेग से। **समुत्पन्नकुतूहलः** = उत्सुकता उत्पन्न होने पर। **परिज्ञानाय** = जानने के लिए। **अन्यतमम्** = दूसरे। **प्राहिणोत्** = भेजा। **ऊरुदघ्नेन** = जाँघ तक गहरे। **पयसा** = जल से। **उत्तीर्य** = पार करके। **आयतने** = मन्दिर में। **तत्प्रतिवार्ताम्** = उसके उत्तर की। **प्रतिपालयन्** = प्रतीक्षा करता हुआ। **अतिष्ठत्** = बैठा रहा।

हिन्दी अनुवाद – रात-दिन इस प्रकार अशान्त मनवाला तथा कामदेव के द्वारा व्याकुल किये जाने पर भी मर्यादा के कारण अपने को रोकता हुआ कुछ दिन बीतने पर किसी तरह से एक बार नगरी के बाहर निकल कर शिप्रा नदी के तट पर घूम रहा था, अत्यन्त वेग से दूर से ही आते हुए बहुत से घोड़ों को देखा। उसे देखकर कुतूहलवश और उनको जानने के लिए दूसरे व्यक्ति को भेजा। स्वयं भी शिप्रा नदी के जाँघ तक गहरे पानी को पार करके भगवान कार्तिकेय के मन्दिर में रुककर उसके उत्तर की प्रतीक्षा करने लगा।

प्रश्नाः

1. ''दृष्ट्वा च समुत्पन्नकुतूहलः तेषां परिज्ञानाय पुरुषमन्यतमं प्राहिणोत्।''–रेखांकित अंश का हिन्दी में अनुवाद कीजिए।
2. चन्द्रापीडः तेषां परिज्ञानाय कं प्राहिणोत् ?
3. चन्द्रापीडः कुत्र अतिष्ठत् ?
4. चन्द्रापीडः दूरादेव कान् अद्राक्षीत् ?

39. तत्रस्थ एव दूरादेव अवतीर्य तुरङ्गमात् आपतन्तं विषादशून्येन मुखेन कष्टाम् अवस्थाम् अनक्षरम् आवेदयन्तं केयूरकम् अद्राक्षीत्। दृष्ट्वा च दर्शितप्रीतिः 'एहि एहि' इति आहूय दूरप्रसारिताभ्यां दोर्भ्यां पर्यष्वजत तम्। अपसृत्य पुनः कृतनमस्कारे तस्मिन्, तेन सह स्वभवनम् अयासीत्। तत्र निर्वर्तिताशेषदिवसकरणीयः पत्रलेखाद्वितीयः केयूरकम् आहूय अब्रवीत्–''केयूरक ! कथय देव्याः कादम्बर्याः महाश्वेतायाश्च सन्देशम्'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी–निर्वर्तिताशेषदिवसकरणीयः = निर्वर्तितः अशेषं दिवसं करणीयं येन सः। **कृतनमस्कारे** = कृतः नमस्कार येन सः तस्मिन्। **दूरादेव** = दूरात् + एव। **अवतीर्य** = अव + तृ + ल्यप्। **विषादशून्येन** = विषादेन शून्यः तेन।

शब्दार्थः – तत्रस्थ एव = वहीं स्थित। **अवतीर्य** = उतरकर। **तुरङ्गमात्** = घोड़े से। **आपतन्तम्** = आते हुए। **विषादशून्येन** = विषादरहित। **अनक्षरम्** = बिना बोले। **कष्टाम् अवस्थाम्** = कष्ट की दशा को। **दूरप्रसारिताभ्याम्** = दूर ही से फैलायी गई। **दोर्भ्याम्** = भुजाओं से। **पर्यष्वजत्** = आलिंगन किया। **उपसृत्य** = पास जाकर। **कृतनमस्कारे** = प्रणाम करने पर। **अयासीत्** = आया। **निर्वर्तिताशेषदिवसकरणीयः** = दैनिक कार्यों को पूरा करके। **पत्रलेखा द्वितीयः** = पत्रलेखा के साथ। **आहूय** = बुलाकर। **कथय** = कहो।

हिन्दी अनुवाद – वहीं स्थित चन्द्रापीड ने दूर से ही केयूरक को घोड़े से उतरकर आते हुए देखा जिसका उदास चेहरा बिना बोले ही कष्ट को प्रकट कर रहा था। चन्द्रापीड ने उसे देखकर 'आओ, आओ' कहते हुए दूर तक फैली हुई अपनी भुजाओं में समेटकर उसका आलिंगन किया और फिर उसके समीप आकर नमस्कार करने पर वह उसके साथ महल में आया। चन्द्रापीड ने दिन के सभी कृत्यों को वहाँ पत्रलेखा के साथ पूरा करके केयूरक को बुलाकर कहा – ''केयूरक! बताओ, देवी कादम्बरी और महाश्वेता ने क्या संदेश दिया है?''

प्रश्नाः

1. अस्य गद्यांशस्य लेखकः कः ?
2. अपसृत्य पुनः कृतनमस्कारे तस्मिन्, तेन सह स्वभवनम् अयासीत् – रेखांकित अंश का हिन्दी में अनुवाद कीजिए।
3. चन्द्रापीडः केन सह स्वभवनम् अयासीत् ?
4. चन्द्रापीडः केयूरकम् आहूय किम् अब्रवीत् ?
5. चन्द्रापीडः तुरङ्गमात् अवतीर्य कम् अद्राक्षीत् ?

40. केयूरकः पुरः सप्रश्रयम् उपविश्य अब्रवीत्– "देव ! किं विज्ञापयामि। नास्ति मयि संदेशलवोऽपि देव्याः कादम्बर्याः महाश्वेतायाः वा। यदैव पत्रलेखां मेघनादाय समर्प्य, प्रतिनिवृत्य मया अयम् देवस्य उज्जयिनीगमनवृत्तान्तः निवेदितः तदैव ऊर्ध्वम् विलोक्य, दीर्घम् उष्णं च निःश्वस्य सनिर्वेदम् उत्थाय महाश्वेता पुनः तपसे स्वमेव आश्रमम् अभजत। देव्यपि कादम्बरी झटिति द्रुघणेनेव अभिहता निवारिताशेषपरिजनप्रवेशा, शयनीये निपत्य, उत्तरीयवाससा उत्तमाङ्गम् अवगुण्ठ्य, सकलमेव तं दिवसम् अस्थात्।"

व्याकरणात्मक टिप्पणी– संदेशलवोऽपि = संदेशलवः + अपि। **द्रुघणेनेव** = द्रुघणेन + इव। **निवारिताशेषपरिजनप्रवेशा** = निवारितः + अशेषजनानाम् प्रवेशः यया सा। **उज्जयिनीगमनवृत्तान्तः** = उज्जयिनीगमनस्य वृत्तान्तः। **प्रतिनिवृत्य** = प्रति + निवृत्य। **उत्थाय** = उद् + स्था + ल्यप्। **देव्यपि** = देवी + अपि। **उत्तरीयवाससा** = उत्तरीयस्य वासः तेन।

शब्दार्थः– पुरः = सामने। **सप्रश्रयम्** = विनम्रता के साथ। **उपविश्य** = बैठकर। **अब्रवीत्** = कहा। **विज्ञापयामि** = कहता हूँ। **संदेशलवोऽपि** = थोड़ा भी सन्देश। **समर्प्य** = सौंपकर। **प्रतिनिवृत्य** = लौटकर। **उज्जयिनीगमनवृत्तान्तः** = उज्जयिनी जाने का समाचार। **निवेदितः** = सुनाया। **ऊर्ध्वम् विलोक्य** = ऊपर देखकर। **दीर्घम् उष्णं च** = लम्बी और गरम। **निःश्वस्य** = साँस लेकर। **सनिर्वेदम्** = उदासीनता के साथ। **उत्थाय** = उठकर। **तपसे** = तपस्या के लिए। **अभजत** = आ गईं। **झटिति** = तुरन्त। **द्रुघणेनेव** = हथौड़े से। **अभिहता** = मारी हुई-सी। **निवारिताशेषपरिजनप्रवेशा** = सभी परिजनों का प्रवेश रोक देने वाली। **शयनीये** = बिस्तर पर। **निपत्य** = गिरकर। **उत्तरीयवाससा** = दुपट्टे से। **उत्तमाङ्गम्** = सिर को। **अवगुण्ठ्य** = लपेट कर। **अस्थात्** = पड़ी रहीं।

हिन्दी अनुवाद–सामने बैठकर नम्रता के साथ केयूरक ने कहा–देव! क्या कहूँ ? देवी कादम्बरी और महाश्वेता का कोई भी संदेश मेरे पास नहीं है। मेरे लौटने पर पत्रलेखा को मेघनाद को सौंपकर जैसे ही मैंने आपका (राजकुमार के) उज्जयिनी जाने का वृत्तान्त (समाचार) सुनाया तो ऊपर देखकर, दीर्घ और उष्ण साँस लेकर अत्यन्त उदासीनता के साथ महाश्वेता उठकर पुनः तपस्या के लिए अपने आश्रम आ गईं। हथौड़े से चोट खाई हुई की तरह अत्यन्त पीड़ित देवी कादम्बरी ने सभी परिजनों का प्रवेश रोक कर दुपट्टे से सिर को ढककर बिस्तर पर सारा दिन पड़ी रहीं।

प्रश्नाः

1. महाश्वेता पुनः कुत्र अगच्छत् ?
2. मेघनादाय का समर्पिता ?
3. "उत्तरीयवाससा उत्तमाङ्गम् अवगुण्ठ्य, सकलमेव तं दिवसम् अस्थात्।"–रेखांकित अंश का हिन्दी में अनुवाद कीजिए।
4. का दीर्घम् उष्णं च निःश्वस्य सनिर्वेदम् उत्थाय स्वमेव आश्रमम् अभजत ?

41. परेद्युश्च प्रातरेव उपसृतं माम् ''ध्रियमाणष्वेव भवत्सु अहम् ईदृशीम् अवस्थाम् अनुभवामि'' इति उपालंभमानेव पर्याकुलया दृष्ट्या सुचिरम् विलोकितवती। तथा दृष्टश्च तया दुःखितया देव्या, आदिष्टमेव गमनाय आत्मानं मन्यमानः, अहम् अनिवेद्यैव देव्यै देवपादमूलम् उपागतोऽस्मि। देव ! भवतः प्रथमागमनसमय एव आरूढवान् मकरकेतनः ताम्। इदानीं तु महान्तम् आयासम् अनुभवति त्वदर्थे कादम्बरी। तत् धैर्यम् अवलम्ब्य, गमनाय यत्नः क्रियताम्'' इति। इत्यावेदयन्तं केयूरकं चन्द्रापीडः प्रत्युवाच– ''केयूरक, सर्वमेवैतत् पत्रलेखया मय्याख्यातम्। अधुना दिवसक्रमगम्ये अध्वनि किं करोमि। तथापि देवीं संभावयितुं प्रयतामहे'' इति वदन् आदिदेश विश्रान्तये केयूरकम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – उपालम्भमानेव = उपालम्भमाना + इव। **दृष्टश्च** = दृष्टः + च। **आदिष्टमेव** = आदिष्टम् + एव। **अनिवेद्यैव** = अनिवेद्य + एव। **संभावयितुम्** = सम् + भू + णिच् + तुमुन्। **देवपादमूलम्** = देवस्य पादमूलम्। **परेद्युश्च** = परेद्युः + च। **प्रातरेव** = प्रातः + एव। **ध्रियमाणष्वेव** = ध्रियमाणेषु + एव।

शब्दार्थः – परेद्युः = दूसरे दिन। **उपसृतम्** = निकट गए हुये। **ध्रियमाणेषु** = जीवित रहते हुए। **उपालम्भमानेव** = उलाहना देती हुई–सी। **पर्याकुलया** = बेचैन। **दृष्ट्या** = दृष्टि से। **आदिष्टमेव** = आज्ञा दिया ही है। **मन्यमानः** = मानते हुए। **अनिवेद्यैव** = बिना निवेदन किए ही। **देवपादमूलम्** = आपके चरणों के पास। **उपगतोऽस्मि** =आया हूँ। **आरूढवान्** = सवार हो गया था। **मकरकेतनः** = कामदेव। **इदानीम्** = इस समय। **महान्तम् अयासम** = अधिक पीड़ा। **अनुभवति** = सह रही हैं। **त्वदर्थे** = तुम्हारे लिए। **अवलम्ब्य** = धारण करके। **इत्यावेदयन्तम्** = ऐसा कहने वाले। **मय्याख्यातम्** = मुझे बताया है। **दिवसक्रमगम्ये** = कई दिनों में तय करने योग्य। **अध्वनि** =रास्ता होने पर। **प्रयतामहे** = प्रयास करेंगे। **वदन्** = कहते हुए। **आदिदेश** = आज्ञा दी। **विश्रान्तये** = आराम करने के लिए।

हिन्दी अनुवाद – दूसरे दिन सबेरे वहाँ गये हुए मुझको ''आप लोगों के जीवित रहते हुए भी मैं इस प्रकार की दशा का अनुभव कर रही हूँ'' इस प्रकार उलाहना देती हुई व्याकुल दृष्टि से देर तक देखती रहीं और इस प्रकार देखकर उनके द्वारा मुझे आदेशित-सा किया गया (है), ऐसा समझ कर, मैं देवी से बिना निवेदन किए अर्थात् बिना बताए ही आपके पास आया हूँ। कुमार! आपके पहली बार आने पर ही उन पर कामदेव का प्रभाव हो गया है (अर्थात् प्रेम उत्पन्न हो गया है)। वह आपके लिए इस समय अत्यधिक विरह व्यथा का अनुभव कर रही हैं। इसलिए धीरज रखकर, प्रयास कीजिए। चन्द्रापीड ने ऐसा कहने वाले केयूरक को उत्तर दिया – केयूरक! यह सब पत्रलेखा ने भी मुझे बताया है। कई दिवसों में जाने वाले रास्ते के कारण वर्तमान में क्या करूँ? फिर भी देवी का सम्मान करने का प्रयत्न करेंगे। ऐसा कहकर केयूरक को आराम करने का आदेश दिया।

प्रश्नाः

1. प्रस्तुतस्य गद्यांशस्य लेखकः कः अस्ति ?
2. ''ध्रियमाणेष्वेव भवत्सु अहम् ईदृशीम् अवस्थाम् अनुभवामि''– रेखांकित अंश का हिन्दी में अनुवाद कीजिए।
3. उपालंभमानेव पर्याकुलया दृष्टया सुचिरं का विलोकितवती?
4. केयूरकः परेद्युः कस्याः समीपम् अगच्छत् ?
5. 'ध्रियमाणेष्वेव' का शाब्दिक अर्थ लिखिए।

42. अत्रान्तरे भगवान् तिग्मदीधितिः संजहार करसहस्रम्। उदयगिरिशिखरम् आरूढे भगवति चन्द्रमसि, गमनम् आत्मनः समुद्दिश्य एवं चिन्तयामास – ''तातेन खलु स्वभुजात् अवरोप्य मय्येव राज्यभारः समारोपितः। तम् अनाख्याय पदमपि निर्गन्तुं न शक्यते। स्कन्धावारोऽपि मे अद्यापि न परापतति। किं कारणं व्यपदिश्य आत्मानं मोचयामि। कथं वा मुञ्चतु मां तातः अम्बा वा। सुहृत्साध्येऽस्मिन् अर्थे किं करोमि एकाकी। वैशम्पायनोऽपि असंनिहितः पार्श्वे मे।'' इत्येवं चिन्तयत एवास्य सा क्षपा क्षयम् अगात्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – मय्येव = मयि + एव। **सुहृत्साध्येऽस्मिन्** = सुहृत् + साध्ये + अस्मिन्। **अत्रान्तरे** = अत्र + अन्तरे। **स्कन्धावारोऽपि** = स्कन्धावारः + अपि। **अद्यापि** = अद्य + अपि।

शब्दार्थः – तिग्मदीधितिः = सूर्य ने। **संजहार** = समेट लिया। **करसहस्रम्** = हजारों किरणों को। **उदयगिरिशिखरम्** = उदयाचल पर। **आरूढे** = स्थित होने पर। **गमनम्** = जाने को। **आत्मनः** = अपने। **समुद्दिश्य** = लक्ष्य करके। **चिन्तयामास** = विचार किया। **तातेन** = पिता द्वारा। **स्वभुजात्** = अपने कंधे से (भुजा से)। **अवरोप्य** = उतार कर। **मय्येव** = मुझ पर ही। **राज्यभारः** = राज्य का भार। **समारोपितः** = रख दिया है। **अनाख्याय** = बिना कहे। **पदमपि** = एक कदम भी। **निर्गन्तुं न शक्यते** = बाहर नहीं निकला जा सकता। **स्कन्धावारोऽपि** = सैन्य शिविर भी। **अद्यापि** = आज तक भी। **न परापतति** = लौटा नहीं है। **व्यपदिश्य** = बहाना करके। **मोचयामि** = छुटकारा लूँ। **मुञ्चतु** = छोड़ें। **सुहृत्साध्ये** = मित्र द्वारा सिद्ध होने वाले। **अस्मिन् अर्थे** = इस विषय में। **एकाकी** = अकेला। **क्षपा** = रात। **क्षयम् अगात्** = बीत गयी।

हिन्दी अनुवाद – इसी बीच भगवान् सूर्य ने अपनी हजारों किरणों को समेट लिया। भगवान् चन्द्रमा के उदयगिरि के शिखर पर आरूढ़ हो जाने पर अर्थात् चन्द्रोदय हो जाने पर अपने जाने के विषय में चन्द्रापीड सोचने लगा–पिता के द्वारा अपने कंधों से उतार कर राज्यभार मुझ पर ही (मेरे कंधों पर ही) रख दिया गया है। उन्हें बताये बिना अर्थात् बिना उनकी अनुमति के एक पग भी आगे नहीं बढ़ाया जा सकता है। आज तक सेना भी नहीं लौटी है। कौन-सा कारण (बहाना) बताकर यहाँ से छुटकारा लूँ और मुझको माता-पिता कैसे जाने देंगे? मित्र की सहायता से पूर्ण होने वाले इस कार्य में मैं अकेला क्या करूँ। इस समय मेरे पास वैशम्पायन भी नहीं है। ऐसा सोचते हुए ही इस (चन्द्रापीड) की वह रात्रि बीत गयी।

प्रश्नाः

1. प्रस्तुत गद्यांशः कस्मात् मूलग्रन्थात् उद्धृतः अस्ति?
2. ''अत्रान्तरे भगवान् तिग्मदीधितिः संजहार करसहस्रम्।'' – रेखांकित अंश का हिन्दी अनुवाद कीजिए।
3. 'अवरोप्य' का शब्दिक अर्थ लिखिए।
4. कम् उद्दिश्य चन्द्रापीडः किं चिन्तयामास ?
5. 'वैशम्पायनोऽपि असंनिहितः पार्श्वे मे' इति कस्य उक्तिः अस्ति?

43. प्रातरेव किंवदन्तीं शुश्राव– यथा किल 'दशपुरं यावत् परागतः स्कन्धावारः इति। तां च श्रुत्वा प्रहृष्टचेताः केयूरकम् अब्रवीत्–''केयूरक ! करतलवर्तिनीं सिद्धिम् अवधारय। प्राप्तः वैशम्पायनः'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – प्रहृष्टचेताः = प्रहृष्टं चेतः यस्य सः। **श्रुत्वा** = श्रु + क्त्वा। **करतलवर्तिनी** = करतले वर्तिनी इति। **अवधारय** = अव + धृ + णिच् + ल्यप्।

शब्दार्थः – प्रातरेव = प्रातःकाल ही। **किंवदन्तीम्** = जनश्रुति। **शुश्राव** = सुना। **परागतः** = लौट आया है। **स्कन्धावारः** = सैन्य शिविर। **प्रहृष्टचेताः** = प्रसन्नचित्त। **करतलवर्तिनीम्** = हाथ में आई हुई। **सिद्धिम्** = सफलता को। **अवधारय** = मानो। **प्राप्तः** = आ गया है।

हिन्दी अनुवाद – प्रातः ही (चन्द्रापीड ने) लोगों को कहते सुना कि सेना दशपुर नगर तक लौट आई है और उसे सुनकर आनन्दपूर्ण मन से उसने केयूरक से कहा–केयूरक! समझो, सफलता हाथ में आ गई है। वैशम्पायन आ गया।

प्रश्नाः

1. प्रस्तुतः गद्यांशः कस्मात् पुस्तकात् उद्धृतः अस्ति।
2. ''दशपुरं यावत् परागतः स्कन्धावारः इति''–रेखांकित अंश का हिन्दी में अनुवाद कीजिए।
3. चन्द्रापीडः किम् अब्रवीत् ?
4. चन्द्रापीडः प्रातरेव किम् शुश्राव ?
5. स्कन्धावारः कुत्र परागतः ?

44. स तु तदाकर्ण्य, ''देव ! किमपरं मया अत्र स्थितेन साधनीयम्। अकालक्षमा देव्याः कादम्बर्याः शरीरावस्था। सर्वो हि प्रत्याशया धार्यते। तत् देवागमनोत्सवम् आवेदयितुम् इदानीमेव गमनानुज्ञया प्रसादं क्रियमाणम् इच्छामि'' इति व्यजिज्ञपत्। एवं विज्ञापिते केयूरकेण, परितुष्टः चन्द्रापीडः प्रत्युवाच–''साधु चिन्तितम्। कस्य वा अपरस्य ईदृशी देशकालज्ञता। गम्यतां देव्याः प्राणसंधारणाय। मदागमनप्रत्ययार्थं च पत्रलेखा त्वयैव सह यातु देवीपादमूलम्''। इत्युक्त्वा मेघनादम् आहूय आदिदेश – ''मेघनाद ! यस्याम्

भूमौ पत्रलेखानयनाय पूर्वं मया त्वं स्थापितः तां भूमिं यावत् पत्रलेखाम् आदाय केयूरकेण सह अग्रतः गच्छ। अहमपि वैशम्पायनम् आलोक्य अनुपदमेव ते तुरङ्गमैः परागतोऽस्मि'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – मदागमनप्रत्ययार्थम् = मत् + आगमनप्रत्ययार्थम्। **तदाकर्ण्य** = तत् + आकर्ण्य। **देवागमनोत्सवम्** = देवस्य आगमनं तस्य उत्सवः। **इत्युक्त्वा** = इति + उक्त्वा। **इदानीमेव** = इदानीम् + एव। **परागतोऽस्मि** = परागतः + अस्मि।

शब्दार्थः– तदाकर्ण्य = वह सुनकर। **किमपरम्** = क्या दूसरा। **अत्र स्थितेन** = यहाँ रहने से। **साधनीयम्** = करने योग्य है। **अकालक्षमा** = समय के विलम्ब को न सहन कर सकने वाली। **शरीरावस्था** = शरीर की दशा। **प्रत्याशया** = आशा के सहारे। **व्यजिज्ञपत्** = निवेदन किया। **परितुष्टः** = प्रसन्न। **साधु चिन्तितम्** = अच्छा सोचा। **अपरस्य** = दूसरे को। **ईदृशी** = ऐसी। **प्राणसंधारणाय** = प्राणों की रक्षा के लिए। **मदागमनप्रत्ययार्थम्** = मेरे आने का विश्वास दिलाने के लिए। **देवीपादमूलम्** = देवी कादम्बरी के चरणों में। **आहूय** = बुलाकर। **आदिदेश** = आज्ञा दी। **यस्याम् भूमौ** = जिस स्थान पर। **पत्रलेखानयनाय** = पत्रलेखा को लाने के लिए। **स्थापितः** = ठहराये थे। **अग्रतः** = आगे। **अनुपदम्** = पीछे। **परागतोऽस्मि** = लौट रहा हूँ।

हिन्दी अनुवाद – केयूरक ने उसे सुनकर कहा – ''देव! मेरे द्वारा यहाँ रहकर और क्या करने योग्य है। देवी कादम्बरी की शारीरिक दशा समय के विलम्ब को सहने के अयोग्य है। आशा ही के सहारे सभी लोग जीवित रहते हैं। इसलिए देव के आगमन के उत्सव को बताने के लिए इसी समय जाने की अनुमति के द्वारा की इच्छा करता हूँ।'' ऐसा निवेदन किया। इस प्रकार केयूरक द्वारा निवेदन किए जाने पर सन्तुष्ट चन्द्रापीड ने उत्तर दिया – ''उत्तम विचार किया है। दूसरे किसी को देशकाल का इस प्रकार का ज्ञान कहाँ है ? देवी कादम्बरी के जीवन को बचाने के लिए जाओ। मेरे आने का विश्वास दिलाने के लिए तुम्हारे साथ देवी के चरणों में पत्रलेखा भी (कादम्बरी के पास) जायेगी।'' ऐसा कहकर मेघनाद को बुलाकर आज्ञा दिया – ''मेघनाद! जिस स्थल पर मेरे द्वारा तुम पत्रलेखा को लाने के लिए रोके गये थे, उसी स्थान तक केयूरक के साथ पत्रलेखा को लेकर आगे जाओ। मैं भी तुम्हारे पीछे वैशम्पायन को देखकर घोड़े पर लौट (आ) रहा हूँ।

प्रश्नाः

1. उपर्युक्तस्य गद्यांशस्य लेखकः कः ?
2. ''मदागमनप्रत्ययार्थं च पत्रलेखा त्वयैव सह यातु देवीपादमूलम्''–रेखांकित अंश का हिन्दी में अनुवाद कीजिए।
3. कस्याः प्राणसंधारणाय गम्यताम् ?
4. कस्याः शरीरावस्था अकालक्षमा आसीत् ?
5. कः प्रत्याशया धार्यते?

45. अथ च पत्रलेखाम् आहूय "पत्रलेखे ! त्वयापि यान्त्या अध्वनि न मद्विरहपीडा भावनीया। न शरीरसंस्कारे अनादरः करणीयः। न आहारवेला अतिक्रमणीया। न येन केनचित् अज्ञातेन पथा यातव्यम्। मम जीवितमपि तवैव हस्ते वर्तते। तत् नियतं त्वया आत्मा यत्नेन परिरक्षणीयः"। इत्युक्त्वा केयूरकं पुनः तदवधानदानाय संविधाय "महाश्वेताश्रमं यावत् त्वयैव सहानया मन्नयनाय आगन्तव्यम्" इत्यादिश्य व्यसर्जयत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– आहूय = आ + हू + ल्यप्। **मद्विरहपीडा** = मम विरहस्य पीडा। **भावनीया** = भू + णिच् + अनीयर् + टाप्। **शरीरसंस्कारे** = शरीरस्य संस्कारे। **अतिक्रमणीया** = अति + क्रम् + अनीयर। **यातव्यम्** = या + तव्यत्। **परिरक्षणीयः** = परि +रक्ष् + अनीयर्। **उक्त्वा** = वच् + क्त्वा। **संविधाय** = सम् + वि + धा + ल्यप्। **आगन्तव्यम्** = आ + गम् + तव्यत्। **आदिश्य** = आ + दिश् + ल्यप्।

शब्दार्थः– अथ = इसके बाद। **आहूय** = बुलाकर। **यान्त्या** = जाने वाली। **अध्वनि** = रास्ते में। **मद्विरहपीडा** = मेरे विरह की पीड़ा। **भावनीया** = अनुभव करना। **शरीरसंस्कारे** = शरीर की शुद्धि में। **न अनादरः करणीयः** = सावधानी करना। **आहारवेला** = भोजन का समय। **अतिक्रमणीया** = बिताना। **येन केनचित्** = जिस किसी। **अज्ञातेन पथा** = अनजान रास्ते से। **यातव्यम्** = जाना चाहिए। **जीवितमपि** = जीवन भी। **तवैव हस्ते** = तुम्हारे ही हाथ में। **वर्तते** = है। **नियत** = निश्चित रूप से।

हिन्दी अनुवाद– इसके पश्चात् चन्द्रापीड ने पत्रलेखा को बुला कर कहा – "पत्रलेखा! तुम मार्ग में जाते हुए मेरे वियोग की पीड़ा को अनुभव मत करना। शरीरशुद्धि में उपेक्षा मत करना, भोजन का समय मत बिताना, किसी अनजान मार्ग से मत जाना। तुम्हारे ही हाथ मे मेरा भी जीवन है, तो निश्चित रूप से तुम्हें यत्नपूर्वक अपनी रक्षा करनी है।" ऐसा कहकर केयूरक को उसके प्रति सावधान रहने का आदेश दिया। "महाश्वेता के आश्रम तक पत्रलेखा मुझे लेने के लिए आएगी" – ऐसा आदेश देकर विदा किया।

प्रश्नाः

1. "न आहारवेला अतिक्रमणीया" इति कस्य उक्तिः ?
2. काम् आहूय चन्द्रापीडः उक्तवान् ?
3. चन्द्रापीडस्य नयनाय कया आगन्तव्यम् ?
4. 'न येन केनचित् अज्ञातेन पथा यातव्यम्' अंश का हिन्दी में अनुवाद कीजिए।

46. निर्गतायां केयूरकेण सह पत्रलेखायां, पितुः पादमूलं गत्वा शुकनासमुखेन वैशम्पायनप्रत्युद्गमनाय आत्मानं मोचयित्वा, जननीभवने निर्वर्तितशरीरस्थितिः तं दिवसं यामिन्याः यामद्वयं च सुहद्दर्शनौत्सुक्येन जाग्रदेव नीत्वा अपररात्रवेलाम् इन्द्रायुधम् आरुह्य, सुबहुना तुरङ्गमबलेन अनुगम्यमानः, नगर्याः निर्गत्य, शिप्राम् उत्तीर्य, दशपुरगामिना मार्गेण प्रावर्तत गन्तुम्। तावत्यैव अपररात्रवेलया योजनत्रितयम् अलङ्घयत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– निर्गतायाम् = निर् + गम् + क्त, सप्तमी एकवचन। **पादमूलम्** = पादयोः मूलम्। **गत्वा** = गम् + क्त्वा। **प्रत्युद्गमनाय** = प्रति + उद् + गम्, चतुर्थी एकवचन। **मोचयित्वा** = मुच् + णिच् + क्त्वा। **जननीभवने** = जनन्याः भवने। **निवर्तितशरीरस्थितिः** – निवर्तितः शरीरस्य स्थितिः येन सः। **सुहृद्दर्शनौत्सुक्येन** = सुहृदः दर्शनम् इति सुहृद्दर्शनम् औत्सुक्यम् तस्य तेन। **नीत्वा** = नी + क्त्वा। **आरुह्य** = आ + रुह् + ल्यप्। **अनुगम्यमानः** = अनु + गम् + यक् + शानच्। **निर्गत्य** = निर् + गम् + ल्यप्। **उत्तीर्य** = उद् + तृ + ल्यप्। गन्तुम् = गम् + तुमुन्।

शब्दार्थः – निर्गतायाम् = निकलने पर। **पितुः पादमूलम्** = पिता के चरणों के पास। **शुकनासमुखेन** = शुकनास के मुख से। **प्रत्युद्गमनाय** = लौटाकर लाने के लिए। **आत्मानं मोचयित्वा** = अपने को छुड़ाकर। **जननीभवने** = माता के महल में। **निर्वर्तितशरीरस्थितिः** = शरीरक्रिया अर्थात् स्नान, भोजन आदि करके। **यामिन्याः** = रात के। **यामद्वयम्** = दो पहर को। **सुहृद्दर्शनौत्सुक्येन** = मित्र से मिलने की व्याकुलता से। **जाग्रदेव** = जागते ही। **नीत्वा** = बिताकर। **अपररात्रवेलाम्** = रात के तीसरे पहर में। **तुरङ्गमबलेन** = बहुत-से घुड़सवारों द्वारा। **नगर्याः निर्गत्य** = नगरी से निकलकर। **प्रावर्तत गन्तुम्** = चल दिया। **योजनत्रितयम्** = तीन योजन अर्थात 12 कोस। **अलङ्घयत्** = पार कर लिया।

हिन्दी अनुवाद– चन्द्रापीड ने केयूरक के साथ पत्रलेखा के चले जाने पर पिता के समीप जाकर, शुकनास से वैशम्पायन को पुनः लौटाकर लाने के लिए स्वयं को छुड़ाकर (आदेश पाकर) माता के महल में स्नान-भोजन आदि शारीरिक क्रियायें करके उस दिन और दो पहर रात्रि मित्र को देखने की उत्सुकता से जागते हुए ही बिताकर, रात्रि के तीसरे प्रहर में इन्द्रायुध नामक घोड़े पर चढ़कर अश्वारोही सेना से अनुगमित होता हुआ नगरी से निकलकर शिप्रा नदी को पार करके, दशपुर जाने वाले मार्ग पर चल दिया और शेष रात्रि में उसने तीन योजन (12 कोस) का मार्ग पार कर लिया।

प्रश्नाः

1. 'जननीभवने निवर्तितशरीरस्थितिः' अंश का हिन्दी अनुवाद कीजिए।
2. पत्रलेखा केन सह निर्गता ?
3. चन्द्रापीडः कस्य दर्शनाय उत्सुकः आसीत् ?
4. चन्द्रापीडस्य अश्वस्य नाम किमासीत् ?
5. प्रस्तुत गद्यांश के लेखक का नाम बताइए।

47. अथ च उदयगिरिशिखरम् आरूढे भगवति सप्तसप्तौ अग्रतः अर्धगव्यूतिमात्र एव आयातं स्कन्धावारम् अद्राक्षीत्। जवविशेषग्राहिणा इन्द्रायुधेन सत्वरम् आसाद्य, स्कन्धावारं प्रविश्य, 'क्व वैशम्पायनः' इत्यपृच्छत्। ततः ते स्कन्धावारवर्तिनः सर्वे जनाः सममेव

'अस्मिन् तरुतले अवतरतु तावत् देवः, ततः यथावस्थितं विज्ञापयामः'' इति न्यवेदयन्। चन्द्रापीडस्तु तेन कष्टतरेण वचसा अन्तःशल्य इव भूत्वा पुनः तान् अप्राक्षीत्– ''किं वृत्तम् अस्य, येनासौ नागतः क्व वा स्थितः? कथं वा तम् एकाकिनम् उत्सृज्य, आयाताः भवन्तः ?'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – उदयगिरिशिखरम् = उदयगिरेः शिखरम्। **आरूढे** = आ + रुह् + क्त, सप्तमी, एकवचन। **आसाद्य** = आ + सद् + णिच् + ल्यप्। **स्कन्धावारवर्तिनः** = स्कन्धावारे वर्तिनः। **नागतः** = न + आ + गम् + क्त । **उत्सृज्य** = उद् + सृज् + ल्यप्। **मोचयित्वा** = मुच् +क्त्वा। **अनुगम्यमानः** = अनु गम् + शानच्। **अप्राक्षीत्** = प्रच्छ् + लुङ् प्रथमपुरुष एकवचन।

शब्दार्थः – सप्तसप्तौ = सूर्य के। **आरूढे** = चढ़ने पर। **अग्रतः** = आगे से। **अर्धगव्यूतिमात्र एव** = दो कोस ही आगे आई हुई। **जवविशेषग्राहिणा** = तीव्र वेग से चलने वाले। **सत्वरम्** = शीघ्र ही। **आसाद्य** = पहुँचकर। **क्व** = कहाँ। **स्कन्धावारवर्तिनः** = सेना-शिविर में स्थित। **सममेव** = साथ ही। **अवतरतु** = उतर जायें। **यथावस्थितम्** = जो हुआ। **विज्ञापयामः** = बता रहे हैं। **न्यवेदयन्** = निवेदन किया। **कष्टतरेण** = अधिक कष्ट देने वाले। **वचसा** = वाणी से। **अन्तःशल्य इव** = हृदय में चुभे हुए काँटे-सा। **वृत्तम्** = समाचार। **नागतः** = नहीं आया। **उत्सृज्य** = छोड़कर। **अद्राक्षीत्** = देखा।

हिन्दी अनुवाद – इसके पश्चात् भगवान् सूर्य के उदयाचल पर चढ़ जाने पर चन्द्रापीड ने दो कोस ही आगे आई हुई अपनी सेना को देखा। वेग से चलने वाले इन्द्रायुध के द्वारा शीघ्र ही पहुँचकर, छावनी में प्रवेश करके–''वैशम्पायन कहाँ है?'' यह पूछा। तब छावनी में रहने वाले सभी सैनिकों ने एक साथ ही ''देव! इस वृक्ष के नीचे आप उतरिए, तब सम्पूर्ण वार्ता आपसे बतायेंगे'', ऐसा निवेदन किया। चन्द्रापीड ने उन कष्टदायी वचनों से हृदय में चुभी कील के समान अनुभव कर पुनः उनसे पूछा–क्या हो गया जो वह नहीं आया ? अथवा वह कहाँ स्थित है? आप लोग उसे अकेले छोड़कर क्यों चले आए?

प्रश्नाः

1. **'उदयगिरिशिखरम् आरुढे भगवति सप्तसप्तौ'**–पंक्ति का हिन्दी में अनुवाद कीजिए।
2. स्कन्धावारं प्रविश्य चन्द्रापीडः किमपृच्छत् ?
3. सर्वे जनाः किम् न्यवेदयन् ?
4. स्कन्धवारवर्तिनं नानां वचः कीदृशम् आसीत्?
5. प्रस्तुत गद्यांश किस पुस्तक से उद्धृत है ?

48. ते च एवं पृष्टाः व्यज्ञापयन् – ''देव ! श्रूयतां यथा वृत्तम्–पृष्ठतः स्कन्धावारम् अनुपालयद्भिः शनैः शनैः वैशम्पायनेन सह भवद्भिरागन्तव्यम्' इत्यादिश्य गतवति देवे, तस्मिन् दिवसे न दत्तमेव प्रयाणं स्कन्धावारेण। अन्यस्मिन् अहनि आहतायां प्रयाणभेर्यां प्रातरेव अस्मान् वैशम्पायनोऽभ्यधात्– 'अतिपुण्यं हि अच्छोदाख्यं सरः पुराणे श्रूयते। तत्

अस्मिन् स्नात्वा प्रणम्य च अस्यैव तीरभाजि सिद्वायतने भगवन्तं भवानीपतिं व्रजामः' इत्यभिधाय चरणाभ्यामेव अच्छोदसरस्तीरम् अयासीत्। तत्र च अतिरम्यतया सर्वतः दत्तदृष्टिः संचरन् अतिरमणीयं शीतलाभ्यन्तरशिलातलं तटलतामण्डपम् अद्राक्षीत्। अतिचिरान्तरितदर्शनं सुहृदमिव तं विस्मृतनिमेषेण चक्षुषा विलोकयन् समुपविश्य भूमौ किमपि अन्तरात्मनि स्मरन्निव तूष्णीम् अधोमुखः तस्थौ।

व्याकरणात्मक टिप्पणी–भवद्भिरागन्तव्यम् = भवद्भिः + आगन्तव्यम्। **आदिश्य** = आ + दिश् + ल्यप्। **इत्यभिधाय** = इति + अभिधाय। **अच्छोदसरस्तीरम्** = अच्छोदसरसः तीरम् (षष्ठी तत्पुरुष)। **शीतलाभ्यन्तरशिलातले** = शीतलम् अभ्यन्तरशिलातलं यस्मिन् तस्मिन् (बहुव्रीहिः)। **पृष्टाः** = प्रच्छ + क्त, प्रथमा बहुवचन। **व्यज्ञापयन्** = वि + ज्ञप् + णिचि + लुङि, प्रथमपुरुष बहुवचन। **विलोकयन्** = वि + लोक् + शतृप्रत्यय।

शब्दार्थः – यथावृत्तम् = जैसा घटित हुआ। **पृष्ठतः** = पीछे की ओर। **अनुपालयद्भिः** = रक्षा करते हुए। **इत्यादिश्य** = इस प्रकार आदेश देकर। **प्रयाणम्** = प्रस्थान। **प्रयाणभेर्याम्** = प्रस्थान करने के लिए नगाड़ा। **अस्मान्** = हम लोगों को। **अभ्यधात्** = कहा। **अच्छोदाख्यम्** = अच्छोद नामक। **सरः** = सरोवर। **तीरभाजि** = किनारे पर स्थित। **सिद्धायतने** = मन्दिर में। **भवानीपतिम्** = शिव को। **व्रजामः** = चलते हैं। **अतिरम्यतया** = अत्यन्त सुन्दरता के कारण। **सर्वतः** = सभी ओर से। **दत्तदृष्टिः** = देखते हुए। **संचरन्** = विचरण करते हुए। **तटलतामण्डपम्** = तट पर विद्यमान लताओं के मण्डप को। **अद्राक्षीत्** = देखा। **सुहृदमिव** = मित्र के समान। **विस्मृतनिमेषेणचक्षुषा** = निर्निमेष नेत्रों से। **विलोकयन्** = देखते हुए। **समुपविश्य** = बैठकर। **भूमौ** = भूमि पर। **अधोमुखः** = मुख नीचे करके। **तस्थौ** = बैठ गया। **व्यज्ञापयन्** = निवेदन किया। **अहनि** = दिन। **आहतायाम्** = बजने पर। **अतिचिरान्तरितदर्शनम्** = बहुत दिनों के पश्चात् देखे हुए। **तूष्णीम्** = चुपचाप।

हिन्दी अनुवाद– और चन्द्रापीड के इस प्रकार पूछने पर वे सैनिक बोले – 'देव! जैसा हुआ उसे सुनें –'पीछे स्कन्धावार की रक्षा करते हुए धीरे-धीरे वैशम्पायन के साथ आप लोग भी आ जाइयेगा' ऐसा आदेश देकर देव के जाने पर, उस दिन सेना ने प्रस्थान नहीं किया। दूसरे दिन प्रातः ही प्रस्थान का नगाड़ा बजने पर वैशम्पायन ने कहा–'पुराणों में अतिपुण्यशाली अच्छोद सरोवर का वर्णन है। तो इसमें स्नान करके और इसके किनारे स्थित मन्दिर में भगवान् भवानीपति को प्रणाम करके चलते हैं।' ऐसा कहकर पैदल ही अच्छोद सरोवर के किनारे आये। और वहाँ अतिरमणीयता से चारों ओर दृष्टिपात करते हुए अत्यन्त रमणीय, अन्दर शीतल शिलातल वाले, तट पर स्थित, लतामण्डप को देखा। बहुत दिनों के बाद देखे गए मित्र के समान निर्निमेष नेत्रों से देखते हुए भूमि पर बैठ कर कुछ अपने मन में सोचते हुए (स्मरण करते हुए) के समान चुपचाप मुँह नीचे करके बैठ गये।

प्रश्नाः

1. सैनिकाः कं स्कन्धावारस्य वृत्तान्तं व्यज्ञापयन् ?
2. पुराणे अतिपुण्यं किमाख्यं सरः प्रसिद्धम् ?
3. वैशम्पायनः कुत्र स्नातुं गतः ?
4. अच्छोदसरसि गत्वा वैशम्पायनः किं अद्राक्षीत् ?
5. 'विस्मृतनिमेषेण' शब्दस्य कः अर्थः ?

49. तथा अवस्थितं तम् अवलोक्य, जातचिन्ताः वयम् एवम् अवदाम। 'दृष्टा दर्शनीयानाम् अवधिः एषा भूमिः। तत् उत्तिष्ठ। निर्वर्तय स्नानविधिम्। प्रयाणाभिमुखः सकलः स्कन्धावारः त्वां प्रतिपालयन् आस्ते' इति। स तु एवम् उक्तोऽपि अस्माभिः अश्रुतास्मदीयालाप इव न किञ्चिदपि प्रत्युत्तरम् अदात्। तमेव केवलं लतामण्डपं अनिमेषपक्ष्मणा चक्षुषा विलोकितवान्। पुनः पुनश्चास्माभिः आगमनाय अनुरुध्यमानः परिच्छेदनिष्ठुरम् अस्मान् आह स्म– ''मया तु न यातव्यम् अस्मात् प्रदेशात्। गच्छन्तु भवन्तः स्कन्धावारम् आदाय'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– जातचिन्ताः = जाता चिन्ता येषाम् ते। **प्रयाणाभिमुखः** = प्रयाण + अभिमुखः। **अश्रुतास्मदीयालापः** = अश्रुत + अस्मदीय + आलापः। **किञ्चिदपि** = किञ्चित् + अपि। **विलोकितवान्** = वि + लोक् + क्तवतु प्रत्यय, प्रथमा एकवचन। **अनुरुध्यमानः** = अनु + रुध् + शानच्। **आदाय** = आ + दा + ल्यप्।

शब्दार्थः– जातचिन्ताः = चिन्तित होकर। **अवदाम** = बोला। **उत्तिष्ठ** = उठो। **सकलः** = सम्पूर्ण। **प्रतिपालयन् आस्ते** = प्रतीक्षा कर रहा है। **अनुरुध्यमानः** = अनुरोध किये जाते हुए। **यातव्यम्** = जाना चाहिए। **दर्शनीयानाम् अवधिः** = सुन्दरता की सीमा। **निर्वर्तय** = सम्पन्न करिए। **प्रयाणाभिमुखः** = प्रस्थान के लिए तैयार। **अश्रुतास्मदीयालाप** = हमारी बातों को न सुनते हुए। **अनिमेषपक्ष्मणा** = बिना पलक झपकाए। **परिच्छेदनिष्ठुरम्** = निर्णय करने में 'निष्ठुर'। **आदाय** = लेकर।

हिन्दी अनुवाद – उनको इस प्रकार बैठे हुए देखकर, चिन्तित होकर हम लोगों ने इस प्रकार कहा–'सुन्दरता की सीमा इस भूमि को देख चुके, तो उठिए, स्नानविधि सम्पन्न करिए। प्रयाण के लिए तत्पर समस्त स्कन्धावार आपकी प्रतीक्षा कर रहा है। उन्होंने तो ऐसा कहने पर भी मानों हमारी बातों को न सुनते हुए के समान कुछ भी उत्तर नहीं दिया। केवल उसी लतामण्डप को अपलक दृष्टि से देखते जा रहे थे। बार-बार हम लोगों द्वारा आने का अनुरोध करने पर अत्यन्त निष्ठुरतापूर्वक हमलोगों से कहा–''मैं इस स्थान से नहीं जाऊँगा। आप लोग सेना लेकर जाइये''।

प्रश्नाः

1. कं दृष्ट्वा सैनिकाः चिन्तातुराः अभवन् ?
2. प्रयाणसन्नद्धः स्कन्धावारः कस्य प्रतीक्षारतः ?
3. अनिमेषपक्ष्मणा वैशम्पायनः कं विलोकितवान् ?
4. "मया तु न यातव्यम् अस्मात् प्रदेशात्"—अयं कः उक्तवान् ?
5. अत्र कस्य प्रदेशस्य वर्णनं अस्ति ?

50. इत्युक्तवन्तं च तम् अकस्मादेव किञ्चिदस्य वैराग्यकारणम् उत्पन्नम् इति आशंक्य, सानुनयम् आगमनाय पुनः पुनः प्रतिबोध्य, तादृशासंबद्धानुष्ठानेन जातपीडाः निष्ठुरमपि अभिहितवन्तः वयम्। स तु "किमहम् एतावदपि न वेद्मि, यत् गमनाय मां भवन्तः प्रबोधयन्ति। अपि च, चन्द्रापीडेन विना क्षणमपि अहम् अन्यत्र न पारयामि स्थातुम्। तथापि किं करोमि ? अनेनैव क्षणेन सर्वत्र विगलितं मे प्रभुत्वम्।"

व्याकरणात्मक टिप्पणी– इत्युक्तवन्तम् = इति + उक्तवन्तम्, यण् सन्धि। **वैराग्यकारणम्** = वैराग्यस्य कारणम् (षष्ठी तत्पुरुष)। **आगमनाय** = आ + गम् + ल्युट् + चतुर्थी, एकवचन। **एतावदपि** = एतावत् + अपि (जश्त्व)। **स्थातुम्** = स्था + तुमुन् प्रत्यय।

शब्दार्थः– वैराग्यकारणम् = वैराग्य का कारण। **आशंक्य** = आशंका करके। **सानुनयम्** = अनुनयपूर्वक। **जातपीडाः** = दुःखी होकर। **निष्ठुरमपि** = निष्ठुर (बातें) भी। **वेद्मि** = जानता हूँ। **प्रबोधयन्ति** = समझा रहे हैं। **विगलितम्** = नष्ट हो गया है। **प्रभुत्वम्** = सामर्थ्य। **मे** = मेरा। **इत्युक्तवन्तम्** = ऐसा कहने वाले को। **प्रतिबोध्य** = समझाकर। **तादृशासंबद्धानुष्ठानेन** = उस प्रकार के असंबद्ध कार्य से। **अभिहितवन्तः** = कही।

हिन्दी अनुवाद– इस प्रकार कहने वाले उसके (वैशम्पायन के) प्रति इसके वैराग्य का क्या कारण है ? ऐसी शंका करते हुए अनुनयपूर्वक साथ आने के लिए बार-बार हमारे द्वारा समझाया गया, उस प्रकार के अनुचित कार्य के लिए दुःखी होकर हमने कठोर बातें भी कही। वे तो 'क्या मैं इतना भी नहीं जानता, कि आप लोग चलने के लिए मुझे समझा रहे हैं। और भी, चन्द्रापीड के बिना क्षणभर भी मैं अन्यत्र नहीं रह सकता। फिर भी क्या करूँ ? इस क्षण मेरी सारी शक्ति नष्ट हो गयी है।

प्रश्नाः

1. अत्र सैनिकाः कस्मिन् विषये उक्तवन्तः ?
2. 'किमहम् एतावदपि न वेद्मि' इति कः उक्तवान् ?
3. कस्य प्रभुत्वं विगलितम् ?
4. सैनिकाः वैशम्पायनं किं अकथयन् ?

51. स्मरदिव किमपि मनो नान्यत्र प्रवर्तते। निगलितावि‍व अन्यत्र पदमपि दातुं न चरणौ उत्सहेते। तत् अलं निर्बन्धेन गच्छन्तु भवन्तः इति उक्त्वा तेषु तेषु तरुतलेषु लतागहनेषु सरस्तीरेषु किमपि नष्टमिव अन्विष्यन् बभ्रामा वयमपि तत्प्रतिबोधनप्रत्याशया दिनत्रयं स्थित्वा, किमेतदिति विस्मितान्तरात्मानः निष्प्रत्याशाः सुकृतशम्बलसंविधानम् तत्परिकरम् तत्र स्थापयित्वा परागताः वयम्'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– नान्यत्र = न + अन्यत्र, दीर्घ सन्धि। **उक्त्वा** = वच् + क्त्वा प्रत्यय। **निगलितावि‍व** = निगलितौ + इव। **तत्प्रतिबोधनप्रत्याशया** = तस्य प्रतिबोधनस्य प्रत्याशा तेन (षष्ठी तत्पुरुष)। **बभ्राम** = भ्रम् + लिट्, प्रथम पुरुष एकवचन।

शब्दार्थः – स्मरदिव = याद करता हुए–से। **निगलितावि‍व** = बेड़ी पड़े हुए–से। **नान्यत्र** = अन्यत्र नहीं। **उत्सहेते** = उत्साहित हो रहे हैं। **निष्प्रत्याशाः** = निराशा वाले। **प्रवर्तते** = लगता है। **अलं निर्बन्धेन** = हठ मत करो। **अन्विष्यन्** = ढूँढ़ते हुए। **बभ्राम** = घूमने लगा। **तत्प्रतिबोधनप्रत्याशया** = उसको समझाने की आशा में। **विस्मितान्तरात्मनः** = आश्चर्यचकित हृदय वाले। **सुकृतशम्बल संविधानम्** = अच्छी तरह मार्ग के भोजनादि की व्यवस्था करके। **तत्परिकरम्** = उनके परिजनों को। **स्थापयित्वा** = नियुक्त करके। **परागताः** = वापस लौट आये।

हिन्दी अनुवाद– किसी बात का स्मरण करते हुए मेरा मन अन्यत्र नहीं जा रहा है। मानों बेड़ियों से बँधे मेरे पैर कहीं अन्यत्र जाने को उठ नहीं रहे हैं। अतः अब हठ छोड़ो, आप लोग जायें'–ऐसा कहकर उन-उन वृक्ष-लताओं के नीचे, सरोवर के किनारे किसी नष्ट हुई वस्तु को ढूँढ़ते हुए–से घूमने लगे। हमलोग भी उनको समझाने की आशा लगाये तीन दिनों तक रुककर, 'यह क्या है ?' इस प्रकार विस्मित चित्त वाले और आशा रहित होकर भोजनादि की अच्छी व्यवस्था करके तथा उनके सेवकों को वहीं रखकर लौट आये हैं।

प्रश्नाः

1. कस्य मनो नान्यत्र प्रवर्तते ?
2. 'निगलितावि‍व' पदस्य तात्पर्यं किम् ?
3. के दिनत्रयं स्थित्वा परागताः ?
4. 'सुकृतशम्बलसंविधानम्' पदस्य अर्थः कः ?
5. कः सैनिकैः सह न प्रत्यावर्त्तत ?

52. चन्द्रापीडस्तु स्वप्नेऽपि अनुत्प्रेक्षणीयम् वैशम्पायनवृत्तान्तम् आकर्ण्य, युगपत् उद्वेगविस्मयाभ्याम् आक्रान्तहृदयो बभूव। 'किं पुनः ईदृशस्य वैराग्यस्य कारणं भवेत्' इति बहुधा विचिन्त्य, 'प्रकारान्तरेण गमनम् उत्पादयता कादम्बरीसमीपगमनोपाय–चिन्तापर्याकुलमतेः उपकृतमेव वैशम्पायनवृत्तान्तेन' इति निश्चित्य, तत्कालकृतं वैशम्पायनवियोगदुःखम् परिणामसुखम् औषधमिव बहु मन्यमानः परापतितवान् उज्जयिनीम्। तत्र कृच्छ्रेण मात्रा पित्रा च विसर्जितः शुकनासं मनोरमां च प्रणम्य अग्रतः ढौकितमपि कृतापसर्पणम् अनाविष्कृतगमनोत्साहम् इन्द्रायुधम् आरुह्य, रयेणैव निरगान्नगर्याः।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– आक्रान्तहृदयः = आक्रान्तः हृदयः यस्य सः। **निरगान्नगर्याः** = निरगात् + नगर्याः। **रयेणैव** = रयेण + एव।

शब्दार्थः– अनुत्प्रेक्षणीयम् = अकल्पनीय। **आकर्ण्य** = सुनकर। **युगपत्** = एक साथ। **ईदृशस्य** = इस प्रकार के। **चिन्तापर्याकुलमतेः** = चिन्ता में व्याकुल मतिवाले (का)। **परापतितवान्** = लौट आया। **कृच्छ्रेण** = कठिनाई से। **ढौकितमपि** = कसे हुए। **कृतापसर्पणम्** = हट जाने वाले। **अनाविष्कृतगमनोत्साहम्** = जाने के उत्साह से रहित। **रयेणैव** = वेग से।

हिन्दी अनुवाद– चन्द्रापीड तो स्वप्न में भी अकल्पनीय वैशम्पायन के वृत्तान्त को सुनकर एक साथ उद्वेग एवं विस्मय से आक्रान्त हृदय वाला हो गया। 'फिर इस प्रकार के वैराग्य का क्या कारण होना चाहिए' ऐसा बहुत सोच विचार कर, प्रकारान्तर से कादम्बरी के समीप जाने के उपाय की चिन्ता में लगे चन्द्रापीड ने वैशम्पायन के वृत्तान्त से उपकृत ही होकर; उस समय उत्पन्न वैशम्पायन के वियोग से उत्पन्न दुःख को परिणाम में सुख देने वाली औषधि के समान मानकर उज्जयिनी लौट आया। वहाँ बड़ी कठिनाई से माता-पिता द्वारा विदा माँगकर, शुकनास और मनोरमा को प्रणाम करके पहले से ही जीन कसे हुए किन्तु प्रयाण के लिए अनिच्छुक इन्द्रायुध पर सवार होकर वेगपूर्वक नगर से निकल गया।

प्रश्नाः

1. कः उद्वेगविस्मयाभ्याम् आक्रान्तहृदयो बभूव ?
2. कस्य वृत्तान्तं श्रुत्वा चन्द्रापीडः विस्मितो जातः ?
3. कादम्बरीसमीपगमनोपायचिन्तापर्याकुलमतिः कः ?
4. काभ्याम् चन्द्रापीडः कृच्छ्रेण विसर्जितः ?
5. अनाविष्कृतगमनोत्साहः कः ?

53. निर्गत्य च उत्ताम्यता हृदयेन किमपि किमपि चिन्तयन्, दिवा रात्रौ च अवहत्। एवं वहतोऽप्यस्य दवीयस्तया अध्वनः अर्धपथ एव आशुगमनविघ्नकारी बभूव जलदकालः। तादृशेऽपि प्रावृट्काले कलामपि अकृतपरिलम्बः धाराहतिविकूणिताक्षेण अपचीयमानबलजवोत्साहेन वाजिसैन्येन अनुगम्यमानः तदेव अच्छोदम् आससाद। तत्र चतुर्ष्वपि पार्श्वेषु तुरगगत एव विचिन्वन् समन्तात् बभ्राम। भ्राम्यंश्च यदा न क्वचिदपि किञ्चित् अवस्थानचिह्नमपि नोपलक्षितवान् तदा महाश्वेता कदाचिदस्य वृत्तान्तस्य अभिज्ञा भवेदिति विचिन्त्य तदाश्रमम् उपजगाम।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– निर्गत्य = निर् + गम् + ल्यप् प्रत्यय। **वहतोऽप्यस्य** = वहतः + अपि + अस्य। **धाराहतिविकूणिताक्षेण** = धारा + हति + विकूणित + अक्षेण। **नोपलक्षितवान्** = न + उपलक्षितवान्। **अपचीयमानबलजवोत्साहेन** = अपचीयमान + बल + जव + उत्साहेन। **अनुगम्यमानः** = अनु + गम् + शानच्। **चतुर्ष्वपि** = चतुर्षु + अपि। **विचिन्त्य** = वि + चिन्त् + ल्यप्।

शब्दार्थः – उत्ताम्यता = संतप्त। **वहतोऽप्यस्य** = इस प्रकार चलते हुए भी। **दवीयस्तया** = बहुत दूरी होने से। **प्रावृट्काले** = वर्षा ऋतु में। **धाराहतिविकूणिताक्षेण** = वर्षा की बौछारों द्वारा बन्द नेत्रों वाले। **अपचीयमानबलजवोत्साहेन** = बल, वेग तथा उत्साह के कम होने पर। **अवहत्** = चलता रहा। **कलामपि** = क्षणमात्र भी। **अकृतपरिलम्बः** = बिना विलम्ब के। **वाजिसैन्येन** = घुड़सवार सेना द्वारा। **तुरगगत** = घोड़े पर स्थित। **उपजगाम** = पहुँचा।

हिन्दी अनुवाद – और निकलकर संतप्त हृदय से कुछ-कुछ सोचता हुआ, दिन और रात चलता रहा। इस प्रकार घोड़े पर चलते रहने से भी मार्ग के दूर होने से आधे रास्ते में ही शीघ्र चलने में बाधा डालने वाली वर्षा ऋतु आ गयी। ऐसी वर्षा से भी क्षणमात्र का विलम्ब किये बिना ही वर्षा की बौछार से बन्द आँखों वाले तथा बल, वेग और उत्साह से रहित होते हुए भी घुड़सवारों द्वारा अनुकरण किए जाते हुए चन्द्रापीड उसी अच्छोद सरोवर पर पहुँचा। वहाँ सरोवर के चारों ओर घोड़े पर बैठे-बैठे ही ढूँढ़ते हुए घूमने लगा और जब घूमने पर कहीं भी कोई भी ठहरने का चिह्न नहीं दिखाई पड़ा तब शायद महाश्वेता को कुछ ज्ञात हो–ऐसी आशा से, उसके आश्रम पहुँचा।

प्रश्नाः

1. उत्ताम्यता हृदयेन कः नगरात् निर्जगाम ?
2. आशुगमनविघ्नकारी कः कालः ?
3. अच्छोदसरोवरं गत्वा चन्द्रापीडः कम् अन्वेष्टुं बभ्राम ?
4. चन्द्रापीडः महाश्वेतायाः आश्रमं किमर्थम् अगच्छत् ?
5. 'वाजिसैन्येन' शब्दस्य अर्थम् लिखतु ?

54. प्रविश्य च गुहाद्वार एव धवलशिलातले समुपविष्टाम् अधोमुखीम् कथमपि तरलिकया विधृतशरीरां महाश्वेताम् अपश्यत्। दृष्ट्वा च किमेतदिति तरलिकाम् अपृच्छत्। अथ महाश्वेतैव प्रत्यवादीत् – महाभाग ! श्रूयताम्, केयूरकात् भवद्गमनम् आकर्ण्य, विदीर्णमानसा समुत्पन्नानेकगुणवैराग्या पुनः कष्टतरतपश्चरणाय यावत् अत्रैवाहम् आयाता, तावदत्र महाभागस्यैव तुल्याकृतिं ब्राह्मणयुवानम् अपश्यम्। स तु माम् उपसृत्य अदृष्टपूर्वोऽपि प्रत्यभिजानन्निव सुचिरम् आलोक्य अब्रवीत्–'वरतनु, सर्वो जनो जगति वयसः सदृशम् आचरति। तव पुनः विसदृशानुष्ठाने कोऽयं प्रयत्नः ? यदियं मालतीमालेव कण्ठप्रणयैकयोग्या तनुः अनुचितेन अनेन तपःकरणक्लेशेन ग्लानिम् उपनीयते' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– प्रविश्य = प्र + विश् + ल्यप् प्रत्यय। **विधृतशरीराम्** = विधृतं शरीरम् यस्याः सा ताम्। **समुत्पन्नानेकगुणवैराग्या** = समुत्पन्न + अनेक + गुण + वैराग्या। **प्रत्यभिजानन्निव** = प्रति + अभि + ज्ञा + शतृ (जानन्) + इव।

शब्दार्थः– समुपविष्टाम् = बैठी हुई। **विधृतशरीराम्** = पकड़े गए शरीर वाली। **विदीर्णमानसा** = दुःखी हृदय वाली। **प्रत्यभिजानन्निव** = पहचानता हुआ-सा। **श्रूयताम्** = सुनिए। **कष्टतरतपश्चरणाय** = कठिन तपस्या के लिए। **उपसृत्य** = समीप आकर। **अदृष्टपूर्वोऽपि** = पूर्व में न देखा जाता हुआ भी। **सुचिरम्** = देर तक। **वरतनु** = श्रेष्ठ शरीर वाली। **ग्लानिम्** = खिन्नता। **उपनीयते** = प्राप्त कराती हो।

हिन्दी अनुवाद – और प्रवेश करके गुफा के द्वार पर ही सफेद शिलातल पर बैठी हुई, नीचे मुँह किए हुए, किसी प्रकार तरलिका द्वारा पकड़े गए शरीर वाली महाश्वेता को देखा और देखकर 'यह क्या है' – ऐसा तरलिका से पूछा। इस पर महाश्वेता ने ही उत्तर दिया – महाभाग ! सुनिये, केयूरक से आपके जाने का समाचार सुनकर दुःखी मन से उत्पन्न वैराग्य वाली मैं पुनः कठिन तपस्या करने के लिए जब यहाँ आ गयी, तभी यहाँ आपके समान ही आकृति वाले एक ब्राह्मण युवक को देखा। वह तो मेरे पास आकर पहले कभी न देखे हुए भी पहचानता हुआ–सा देर तक देखकर बोला–"श्रेष्ठ शरीर वाली ! संसार में सभी लोग अपनी आयु के अनुसार आचरण करते हैं। तुम पुनः इसके विपरीत आचरण में क्यों लगी हो ? जो यह मालती की माला के समान गले लगाने योग्य शरीर को अनुचित तपजनित कष्ट दे रही हो।"

प्रश्नाः

1. शिलातले अधोमुखी का अतिष्ठत् ?
2. कया विधृतशरीराम् महाश्वेताम् अपश्यत् ?
3. समुत्पन्नानेकगुणवैराग्या का ?
4. महाश्वेता निजाश्रमे कम् अपश्यत् ?
5. सः ब्राह्मणयुवकः कः आसीत् ?

55. अहं तु तं वदन्तमपि किंचिदपि अपृष्ट्वा अन्यतः अगच्छम्। गत्वा च तरलिकाम् आहूय अब्रवम् – "तरलिके ! योऽयं युवा कोऽपि ब्राह्मणाकृतिः, अस्य अवलोकयतः वदतश्च अन्य एव अभिप्रायः मया उपलक्षितः। तत् निवार्यतामयम् यथा पुनरत्र नागच्छति। अथ निवारितोऽप्यागमिष्यति, तदा अवश्यमेव अस्य अभद्रकं भविष्यति" इति। स तु निवार्यमाणोऽपि नात्याक्षीदेव अनुबन्धनम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– किंचिदपि = किंचित् + अपि। **निवारितोऽप्यागमिष्यति** = निवारितः + अपि + आगमिष्यति। **नात्याक्षीदेव** = न + अत्याक्षीत् + एव।

शब्दार्थः– वदन्तमपि = बोलते हुए भी। **अन्यतः** = दूसरी जगह। **उपलक्षितः** = देखा गया है। **निवार्यताम्** = रोको। **अभद्रकम्** = अमङ्गल। **नात्याक्षीदेव** = नहीं छोड़ा। **अनुबन्धनम्** = आग्रह। **आहूय** = बुलाकर। **अवलोकयतः** = देखने का। **वदतः** = बोलने का।

हिन्दी अनुवाद – (महाश्वेता ने चन्द्रपीड से कहा)–मैं तो इस प्रकार कहते हुए उस (ब्राह्मण) से बिना कुछ पूछे ही (वहाँ) से दूसरी जगह चली गयी और जाकर तरलिका को बुलाकर बोली– तरलिके! यह नवयुवक जो ब्राह्मण जैसी आकृति वाला है, इसका देखना और बोलना अन्य ही अभिप्राय वाला प्रतीत होता है, इसलिये इसे रोको जिससे फिर वह यहाँ न आये। इसके पश्चात् मना करने पर भी आयेगा तो उसका बड़ा अकल्याण होगा। किन्तु मना करने पर भी उसने अपना आग्रह नहीं छोड़ा।

प्रश्नाः

1. काम् आहूय महाश्वेता अब्रवीत् ?
2. महाश्वेता कं निवारयितुम् इच्छति स्म ?
3. निवारितोऽप्यागमिष्यति तदा कस्य अभद्रकं भविष्यति ?
4. कः निवार्यमाणोऽपि नात्याक्षीदेव अनुबन्धनम् ?
5. 'अभद्रकम्' शब्दस्य पर्यायं लिखतु।

56. अतीतेषु केषुचित् दिवसेषु, एकदा गाढायां यामिन्यां सः माम् उपसृत्य अब्रवीत् – ''चन्द्रमुखि ! हन्तुम् उद्यतः माम् अयं कुसुमसायकः। तत् शरणम् आगतोऽस्मि। रक्ष माम् आत्मप्रदानेन'' इति। अहं तु तदाकर्ण्य, क्रोधावेगरूक्षाक्षरम् अवदम् ''आः पाप! कथम् एवं वदतः माम्, उत्तमाङ्गे न निपतितं व्रजम्। अवशीर्णा वा न सहस्रधा जिह्वा'' इत्युक्त्वा चन्द्राभिमुखी भूत्वा– ''भगवन् लोकपाल! यदि मया देवस्य पुण्डरीकस्य दर्शनात् प्रभृति, मनसापि अपरः पुमान् न चिन्तितः, तदा अयम् अलीककामी अनिरूपितस्थानास्थानवादी शुकवत् प्रलपन् शुकजातौ पततु'' इति अवदम्। स च मे वचसोऽस्यानन्तरमेव छिन्नमूलः तरुरिव क्षितौ अपतत्। अथ कृताक्रन्दात् तत्परिजनात् 'महाभागस्यैव मित्रम् असौ' इति श्रुतवती।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– हन्तुम् = हन् + तुमुन्, प्रत्यय। **तदाकर्ण्य** = तत् + आकर्ण्य। **क्रोधावेगरूक्षाक्षरम्** = क्रोध + आवेग + रूक्ष + अक्षरम् (क्रोधस्य आवेगः तेन रूक्षाणि अक्षराणि यस्मिन् तद् यथा स्यात्तथा)। **तत्परिजनात्** = तत् + परिजनात्। **छिन्नमूलः** = छिन्नं मूलं यस्य सः।

शब्दार्थः– गाढायां यामिन्याम् = अर्धरात्रि में। **उपसृत्य** = समीप आकर। **हन्तुम्** = मारने के लिए। **उद्यतः** = तैयार। **रक्ष** = रक्षा करो। **क्रोधावेगरूक्षाक्षरम्** = क्रोध के आवेग में कठोर अक्षर को। **आः पाप** = अरे पापी। **उत्तमाङ्गे** = सिर पर। **अवशीर्णा** = टुकड़े होकर। **चन्द्राभिमुखी** = चन्द्रमा की ओर मुख करके। **मनसापि** = मन से भी। **पुमान्** = पुरुष। **प्रलपन्** = प्रलाप करते हुए। **क्षितौ** = पृथ्वी पर। **अपतत्** = गिर पड़ा। **कुसुमसायकाः** = कामदेव। **अलीककामी** = असत्य ही काम का नाम लेने वाला।

हिन्दी अनुवाद– कुछ दिन बीतने पर एक बार आधी रात को वह मेरे पास आकर बोला–'चन्द्रमुखी! यह पुष्पधन्वा कामदेव मुझे मारने को तत्पर है। अतः तुम्हारी शरण में आया हूँ। स्वयं को प्रदान करके मेरी रक्षा करो।' मैं तो यह सुनकर क्रोध के आवेग से कड़े शब्दों में बोली–''अरे पापी! मुझसे इस प्रकार कहते हुए तुम्हारे सिर पर क्यों नहीं वज्र गिर पड़ा अथवा क्यों नहीं जीभ हजारों टुकड़ों में विभक्त हो गई, ऐसा कहकर चन्द्रमा की ओर देखकर'' भगवान् लोकपाल! यदि मेरे द्वारा देव पुण्डरीक के दर्शन से लेकर मैंने मन से भी किसी दूसरे पुरुष का चिन्तन नहीं किया हो, तो यह व्यर्थ ही काम की दुहाई देने वाला, अनुचित स्थान में तोते की तरह बोलने वाला शुक योनि में चला जाये।'' इस प्रकार कहा। वह मेरे ऐसा कहते ही मूल से कटे वृक्ष के समान पृथ्वी पर गिर गया। इसके पश्चात् विलाप करते हुए उसके सेवकों से मैंने सुना कि वह आपका ही मित्र है।

प्रश्नाः

1. कः गाढायां यामिन्याम् काम् उपसृत्य अब्रवीत् ?
2. महाश्वेता किमर्थं क्रोधावेगरूक्षाक्षरम् अवदत् ?
3. महाश्वेता वैशम्पायनाय कं शापं अददात् ?
4. छिन्नमूलः तरुरिव क्षितौ कः अपतत् ?

57. चन्द्रापीडस्य तु तत् आकर्ण्य स्वभावसरसं हृदयम् अस्फुटत्। अथ तरलिका महाश्वेतायाः शरीरम् उत्सृज्य ससंभ्रमं प्रतिपन्नचन्द्रापीडशरीरा ''हा देव चन्द्राकृते, चन्द्रापीड, कादम्बरीप्रिय ! क्वेदानीं गम्यते'' इत्यार्तनादं मुमोच। परिजनाश्च ''आः पापे दुष्टतापसि! किमिदं त्वया कृतम् ? तारापीडस्य कुलमुत्सादितम्। अनाथीकृताः प्रजाः। हा देव चन्द्रापीड ! परित्यज्य सर्वान् एकाकी क्व प्रस्थितोऽसि?'' इति करुणम् आचुक्रुशुः।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – स्वभावसरसम् = स्वभावेन सरसम् इति (तृतीया विभक्ति)। **क्वेदानीम्** = क्व + इदानीम्। **इत्यार्तनादम्** = इति + आर्तनादम्, यण् सन्धि। **परित्यज्य** = परि + त्यज् + ल्यप् प्रत्यय। **आचुक्रुशुः** = आ + क्रुश् + लिट् लकार (प्रथम पुरुष, बहुवचन)।

शब्दार्थः – अस्फुटत् = फट गया। **उत्सृज्य** = छोड़कर। **ससंभ्रमम्** = घबराकर। **मुमोच** = छोड़ा। **कुलमुत्सादितम्** = वंश को नष्ट कर दिया। **अनाथीकृताः** = अनाथ बना दिया। **प्रस्थितोऽसि** = जा रहे हो। **आचुक्रुशुः** = विलाप करने लगे।

हिन्दी अनुवाद – चन्द्रापीड का तो यह सुनकर स्वभाव से सरस हृदय फट गया। इसके पश्चात् तरलिका महाश्वेता के शरीर को छोड़कर घबराकर गिरते हुए चन्द्रापीड के शरीर को पकड़ कर ''हाय देव चन्द्रापीड! चन्द्र की आकृति वाले, कादम्बरी के प्रिय! इस समय कहाँ जा रहे हो' इस प्रकार (कहकर) जोर से रोने लगी और चन्द्रापीड के सेवक भी 'अरे पापिनी दुष्ट तापसी! तुमने यह क्या किया? तारापीड के कुल का नाश कर दिया। प्रजा को अनाथ बना दिया। हाय देव चन्द्रापीड! हम सबको छोड़कर अकेले कहाँ जा रहे हो ? ऐसा करुण विलाप करने लगे।

प्रश्नाः

1. कस्य हृदयं अस्फुटत् ?
2. का महाश्वेतायाः शरीरं विमुच्य चन्द्रापीडस्य शरीरम् अग्रहीत् ?
3. अत्र 'दुष्टतापसि' शब्दः कस्यै प्रयुक्तः ?
4. के करुणम् आचुक्रुशुः ?
5. 'हा देव चन्द्राकृते, चन्द्रापीड, कादम्बरीप्रिय!' इति का अवदत् ?

58. अत्रान्तरे पत्रलेखानिवेदितचन्द्रापीडागमना कादम्बरी महाश्वेतादर्शनं व्याजीकृत्य, पत्रलेखाकरावलम्बिनी मदलेखया सह तत्रैव आजगाम। तत्र च तत्क्षणोन्मुक्तजीवितं चन्द्रापीडं दृष्ट्वा 'हा हा किमिदम्' इति अधोमुखी धरातलम् उपयान्ती मदलेखया अधार्यत। चिरात् लब्धसंज्ञा कादम्बरी महाश्वेतां कण्ठे गृहीत्वा अवादीत्– "प्रियसखि! तवास्ति काचन प्रत्याशा। मम पुनः हताशायाः सापि नास्ति। तत आमन्त्रये प्रियसखीं पुनः जन्मान्तरसमागमाय। अहं पुनः इममात्मानं देवस्य कण्ठलग्ना विभावसौ निर्वापयामि" इत्यभिदधानैव चन्द्रापीडचरणौ कराभ्याम् उपक्षिप्य अङ्केन धृतवती।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– अत्रान्तरे = अत्र + अन्तरे। **पत्रलेखाकरावलम्बिनी** = पत्रलेखा + करौ + अवलम्बिनी। **तत्क्षणोन्मुक्तजीवितम्** = तत् + क्षण + उन्मुक्त + जीवितम्। **व्याजीकृत्य** = अव्याजं व्याजं कृत्वा इति। **लब्धसंज्ञा** = लब्धा संज्ञा यया सा (बहुव्रीहिः)।

शब्दार्थः– व्याजीकृत्य = बहाना करके। **धरातलम् उपयान्ती** = पृथ्वी पर गिरती हुई। **अधार्यत** = पकड़ ली गई। **लब्धसंज्ञा** = होश में आकर। **प्रत्याशा** = जीने की आशा। **विभावसौ** = अग्नि में। **निर्वापयामि** = समर्पित करती हूँ। **इत्यभिदधानैव** = इस प्रकार कहती हुई।

हिन्दी अनुवाद– इसी बीच पत्रलेखा द्वारा चन्द्रापीड के आगमन का समाचार पाकर कादम्बरी, महाश्वेता को देखने का बहाना बनाकर पत्रलेखा का हाथ पकड़ कर मदलेखा के साथ वहीं आ गयी और वहाँ तत्क्षण ही जीवन का परित्याग किए हुए चन्द्रापीड को देखकर 'हाय हाय, यह क्या है' ऐसे नीचे की ओर मुख करके पृथ्वी पर गिरती हुई मदलेखा के द्वारा पकड़ ली गयी। बहुत देर बाद होश में आने पर कादम्बरी महाश्वेता को गले लगाकर बोली– "प्रियसखि! तुम्हें तो जीवन की कुछ आशा है, पर मुझ हताश को तो वह भी नहीं है। तो हे प्रियसखी ! दूसरे जन्म में मिलने के लिए आमन्त्रित करती हूँ। मैं पुनः अपने आप को देव के गले से लगाकर अग्नि में जल जाऊँगी" ऐसा कहकर चन्द्रापीड के चरणों को हाथों में लेकर गोद में रख लिया।

प्रश्नाः

1. चन्द्रापीडागमनस्य वृत्तान्तं कादम्बरीं का निवेदितवती ?
2. कादम्बरी कया सह आजगाम ?
3. कादम्बरी तत्र किं अपश्यत् ?
4. अधोमुखी धरातलम् उपयान्ती कादम्बरी कया अधार्यत ?
5. कादम्बरी कस्य चरणौ अङ्केन धृतवती ?

59. अथ तत्करस्पर्शेन उच्छ्वसत इव चन्द्रापीडदेहात् झटिति अव्यक्तरूपं चन्द्रधवलं ज्योतिः उज्जगाम। अनन्तरं च अन्तरिक्षे क्षरन्तीव अमृतम् अशरीरिणी वाक् अश्रूयत– "वत्से महाश्वेते ! पुनरपि त्वं मयैव समाश्वासयितव्या वर्तसे। तत् ते पुण्डरीकशरीरं मल्लोके मत्तेजसा आप्याय्यमानम् अविनाशि भूयः त्वत्समागमाय तिष्ठत्येव। इदम् अपरं मत्तेजोमयं स्वतः एव अविनाशि विशेषतः अमुना कादम्बरीकरस्पर्शेन आप्याय्यमानं चन्द्रापीडशरीरम् अन्तरात्मना कृतशरीरान्तरसंक्रान्तेः योगिन इव शरीरम् अत्रैव भवत्योः प्रत्ययार्थम्, आशापक्षयात् आस्ताम्, यत्नतः परिपालनीयम् आसमागमप्राप्तेः" इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– क्षरन्तीव = क्षरन्ती + इव। **मल्लोके** = मत् + लोके (तोर्लि)। **अत्रैव** = अत्र + एव। **प्रत्ययार्थम्** = प्रत्यय + अर्थम्। **उज्जगाम** = उत् + गम् + लिट्। **क्षरन्तीव** = क्षरन्ती + इव (दीर्घ सन्धि)। **पुनरपि** = पुनः + अपि। **समागमाय** = सम + आ + गम् + अच् + चतुर्थी विभक्ति।

शब्दार्थः– उच्छ्वसतः इव = साँस लेते हुए जैसे। **उज्जगाम** = निकली। **आप्याय्यमानम्** = सिंचित होकर। **कृतशरीरान्तरसंक्रान्तेः** = दूसरे शरीर में चले जाने वाले (के)। **प्रत्ययार्थम्** = विश्वास के लिए।

हिन्दी अनुवाद– इसके पश्चात् उसके (कादम्बरी के) हाथ के स्पर्श से साँस लेते हुए से चन्द्रापीड के शरीर से सहसा अव्यक्तरूप वाली चन्द्रमा के समान उज्ज्वल ज्योति निकलकर ऊपर चली गयी और बाद में आकाश से अमृत की वर्षा के समान एक अशरीरी वाणी सुनाई पड़ी – "पुत्री महाश्वेता! मैं तुम्हें फिर से आश्वासन दे रहा हूँ। पुण्डरीक का शरीर मेरे लोक में मेरे तेज से सिंचित होकर फिर तुमसे मिलने के लिए पड़ा है। यह दूसरा मेरे तेज से पूर्ण, नाश रहित और कादम्बरी के हाथों के स्पर्श से सिंचित अपनी आत्मा से दूसरे शरीर में चले जाने वाले योगी के शरीर के समान चन्द्रापीड का शरीर यहीं तुम दोनों के विश्वास के लिए शाप नष्ट होने के समय तक रहेगा। अतः मिलन होने तक उसकी रक्षा करना।

प्रश्नाः

1. कस्याः करस्पर्शेन चन्द्रापीडदेहात् ज्योतिः उज्जगाम ?
2. कस्य देहात् अव्यक्तरूपं चन्द्रधवलं ज्योतिः उज्जगाम ?
3. किम् क्षरन्तीव अशरीरिणी वाक् अश्रूयत ?
4. चन्द्रापीडशरीरम् अत्रैव भवत्योः प्रत्ययार्थम् आस्ताम्'– अत्र 'भवत्योः' पदं कयोः वाचकः ?

60. पत्रलेखा मुहूर्तमिव निश्चेतना सती तस्य ज्योतिषः स्पर्शेन लब्धसंज्ञा उत्थाय आविष्टेव वेगात् धावित्वा, परिवर्धकहस्तात् इन्द्रायुधम् आच्छिद्य, तेनैव सह आत्मानम् अच्छोदसरसि अक्षिपत्। तयोः निमज्जनसमयानन्तरमेव, तस्मात् सरस्सलिलात् शिरसि जटाकलापम् उद्वहन् उद्विग्नाकृतिः तापसकुमारः सहसैव उदतिष्ठत्। उत्थाय च दूरत एव विलोकयन्तीं महाश्वेताम् उपसृत्य बभाषे– "गन्धर्वराजपुत्रि ! जन्मान्तरात् आगतोऽपि प्रत्यभिज्ञायतेऽयं जनः, न वा ?" इति। सा त्वेवं पृष्टा शोकानन्दमध्यवर्तिनी ससंभ्रमम् उत्थाय कृतप्रणामा प्रत्यवादीत्– "भगवन् कपिञ्जल ! नाहम् एवंविधा अपुण्यवती, या भवन्तमपि न प्रत्यभिजानामि, तत् कथय 'केनासौ उत्क्षिप्य नीतः ? किं वा तव उपजातम्, येन एतावता कालेन वार्तापि न दत्ता। कुतो वा त्वम् एकाकी देवेन विना समायातः" इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – मुहूर्तमिव = मुहूर्तम् + इव। **निश्चेतना** = निः + चेतना। **सरस्सलिलात्** = सरः + सलिलात्। **उद्विग्नाकृतिः** = उद्विग्न + आकृतिः। **उत्थाय** = उत् + स्था + ल्यप् प्रत्यय। **विलोकयन्तीम्** = वि + लोक् + शतृ प्रत्यय (स्त्रीलिङ्ग) + द्वितीया एकवचन। **उपसृत्य** = उप + सृ + ल्यप् प्रत्यय। **प्रत्यभिजानामि** = प्रति + अभि + ज्ञा + लट् उत्तमपुरुष एकवचन।

शब्दार्थः– निश्चेतना सती = चेतनाहीन होती हुई। **लब्धसंज्ञा** = होश में आकर। **आविष्टा इव** = भूत के वश में हुई–सी। **आच्छिद्य** = छीन कर। **अक्षिपत्** = डुबो दिया। **जटाकलापम्** = जटाओं को धारण किए हुए। **सहसैव** = अचानक। **प्रत्यभिजानामि** = जान पा रही हूँ। **किम् उपजातम्** = क्या हुआ? **सामायातः** = आये।

हिन्दी अनुवाद– पत्रलेखा क्षण भर चेतनाहीन होकर फिर प्रकाश के स्पर्श से होश में आकर, प्रेत–से ग्रसित–सी होकर दौड़ी और रक्षक के हाथ से इन्द्रायुध को छीन कर, उसके साथ ही स्वयं भी अच्छोद सरोवर में कूद गयी। उन दोनों के डूबने के बाद ही उस सरोवर के जल से सिर पर जटाएँ धारण किये घबराया हुआ एक तपस्वी कुमार निकला। वह निकलकर दूर से ही देखने वाली महाश्वेता के पास आकर बोला – "हे गन्धर्वराज पुत्री! दूसरे जन्म से आये इस व्यक्ति को आप पहचान रही हैं या नहीं ?" उसके ऐसा पूछने पर शोक और आनन्द के बीच स्थित महाश्वेता ने झटके से उठकर उसे प्रणाम किया और कहा – "भगवन् कपिञ्जल! मैं इतनी पापिनी नहीं हूँ जो आपको नहीं पहचानूँ। इसलिए बताइये–उन्हें कौन उठाकर ले गया ? आपको क्या हुआ जो इतने दिनों तक आपने समाचार भी नहीं दिया। आप देव पुण्डरीक के बिना अकेले ही क्यों आये ?

प्रश्नाः

1. का इन्द्रायुधम् आच्छिद्य अच्छोदसरसि अक्षिपत् ?
2. पत्रलेखा कस्य हस्तात् इन्द्रायुधम् आच्छिद्य अक्षिपत् ?
3. सरस्सलिलात् कः बहिः उदतिष्ठत् ?
4. तापसकुमारः कस्याः समीपम् अगच्छत् ?
5. महाश्वेता तापसकुमारं किं अकथयत् ?

61. स तु प्रत्यवादीत्– ''गन्धर्वराजपुत्रि ! श्रूयताम् – अहं हि कृतार्तप्रलापामपि त्वाम् एकाकिनीम् उत्सृज्य, तं पुरुषम् अनुबध्नन् जवेन उदपतम्। स तु मे प्रतिवचनम् अदत्त्वैव अतिक्रम्य तारागणं चन्द्रलोकम् अगच्छत्। तत्र च महोदयाख्यायां सभायाम् इन्दुकान्तमणे महति पर्यङ्के तत् पुण्डरीकशरीरं स्थापयित्वा, माम् अवादीत्–कपिञ्जल! जानीहि मां चन्द्रमसम्। अहं खलु अनेन ते प्रियवयस्येन कामापराधात् जीवितम् उत्सृजता निरपराधः संशप्तः– ''दुरात्मन् इन्दुहतक ! यथाहं त्वया करैः संताप्य प्राणैः वियोजितः, तथा त्वमपि भारते वर्षेऽस्मिन् जन्मनि जन्मन्येव उत्पन्नानुरागः असंप्राप्तसमागमसुखः तीव्रतरां हृदयवेदनाम् अनुभूय जीवितम् उत्स्रक्ष्यसि'' इति। अहं तु, 'किमनेन अगणितात्मदोषेन निरागाः शप्तोऽस्मि' इत्युत्पन्नकोपः 'त्वमपि मत्तुल्यसुखदुःख एव भविष्यसि' इति प्रतिशापम् अस्मै प्रायच्छम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – कृतार्तप्रलापामपि = कृतः आर्तप्रलापः यया ताम्। **अदत्त्वैव** = अदत्त्वा + एव। **जन्मन्येव** = जन्मनि + एव। **उत्पन्नानुरागः** = उत्पन्न + अनुरागः। **प्रत्यवादीत्** = प्रति + अवादीत्, यण् सन्धि। **उत्सृज्य** = उत् + सृज् + ल्यप्। **अतिक्रम्य** = अति + क्रम् + ल्यप्। **स्थापयित्वा** = स्था + णिच् + क्त्वा प्रत्यय। **संशप्तः** = सम् + शप् + क्त प्रत्यय।

शब्दार्थः – कृतार्तप्रलापामपि = दुःख के साथ रोती हुई भी। **अनुबध्नन्** = पीछा करता हुआ। **उदपतम्** = ऊपर चला गया। **अदत्त्वैव** = दिये बिना ही। **जीवितम् उत्सृजता** = जीवन त्याग करने वाले। **करैः संताप्य** = किरणों से जलाकर। **वियोजितः** = अलग किया। **उत्स्रक्ष्यसि** = छोड़ोगे।

हिन्दी अनुवाद – उस (कपिञ्जल) ने प्रत्युत्तर दिया– 'गन्धर्वराजपुत्रि! सुनो– मैं जोर से रोती हुई तुमको अकेली छोड़कर उस पुरुष का पीछा करते हुए वेग से ऊपर उड़ चला। वह तो मेरी बातों का उत्तर दिए बिना तारागणों के लोक का अतिक्रमण करके चन्द्रलोक को चला गया और वहाँ महोदय नाम की सभा में इन्दुकान्तमणि के विशाल पलंग पर उस पुण्डरीक के शरीर को रखकर, मुझसे बोला–कपिञ्जल! मुझे चन्द्रमा जानो। तुम्हारे इस प्रियमित्र ने कामदोष से अपने प्राणों का परित्याग करते समय मुझे शाप दिया कि पापी चन्द्रमा तुमने अपनी किरणों से मुझे मार डाला है, अतः तुम भी इस भारतवर्ष में दो जन्म लेकर प्रेम उत्पन्न होने पर बिना समागम सुख पाये हृदय की कठिन पीड़ा का अनुभव करके प्राणों का परित्याग करोगे। मुझे क्रोध आ गया और मैंने भी उसे शाप के बदले शाप दे दिया कि तुम्हें भी मेरे ही समान सुख-दुःख होगा।

प्रश्नाः

1. कः स्ववृत्तान्तं महाश्वेतां अकथयत् ?
2. दिव्यपुरुषः कपिञ्जलाय स्वपरिचयं कथम् अददात् ?
3. पुण्डरीकस्य शरीरं कुत्र अतिष्ठत् ?
4. चन्द्रः केन संशप्तः ?
5. पुण्डरीकाय कः क्रोधेन प्रतिशापं दत्तवान् ?

62. अपगतामर्षः विमृशन् महाश्वेताव्यतिकरमस्य अधिगतवानस्मि– ''वत्सा हि महाश्वेता, मन्मयूखसंभवात् अप्सरःकुलात् लब्धजन्मनि गौर्याम् उत्पन्ना। तया चायं भर्ता स्वयं वृतः। अनेन च स्वयं कृतादेव दोषात् मया सह मर्त्यलोके वरद्वयम् अवश्यम् उत्पत्तव्यम्। अन्यथा जन्मनि जन्मनि इत्येषा वीप्सा न चरितार्था भवति। तत् यावदयं शापदोषात् अपैति तावत् अस्य शरीरस्य मा विनाशः भूत् इति मया इदम् उत्क्षिप्य समानीतम्। वत्सा च महाश्वेता समाश्वासिता। अधुना त्वं गत्वा एनं वृत्तान्तम् श्वेतकेतवे निवेदय। महाप्रभावोऽसौ कदाचित् अत्र प्रतिक्रियां कांचित् करोति'' इत्युक्त्वा मां व्यसर्जयत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– कृतादेव = कृतात् + एव। **यावदयम्** = यावत् + अयम्। **इत्येषा** = इति + एषा। **अपगतामर्षः** = अपगतः अमर्षः यस्मात् सः (बहुव्रीहि)। **विमृशन्** = वि + मृश् +शतृ प्रत्यय। **उत्पत्तव्यम्** = उत् + पत् + तव्यत् प्रत्यय। **उत्क्षिप्य** = उत् + क्षिप् + ल्यप्।

शब्दार्थः – अपगतामर्षः = जिसका क्रोध दूर हो गया। **महाश्वेताव्यतिकरमस्य** = महाश्वेता के प्रति प्रेम सम्बन्ध को। **वीप्सा** = दो बार कहना। **अपैति** = मुक्त होता है। **उत्क्षिप्य** = उठाकर। **व्यसर्जयत्** = भेजा। **मन्मयूखसंभवा**त् = मेरी किरणों से उत्पन्न। **भर्ता** = पति।

हिन्दी अनुवाद – क्रोध दूर हो जाने पर मैंने विचार किया कि महाश्वेता के साथ इसके सम्बन्ध को जान गया हूँ। पुत्री महाश्वेता, मेरी किरणों से उत्पन्न अप्सराओं के कुल में जन्म लेने वाली गौरी से उत्पन्न हुई है। उसने इसे स्वयं पति रूप में वरण किया है और वह स्वयं अपने पापों से मेरे साथ मृत्युलोक में दो बार उत्पन्न होगा। अन्यथा 'जन्म-जन्म' ऐसा दो बार कहना चरितार्थ नहीं होगा। इसलिए शाप से मुक्त होने के समय तक इसका शरीर नष्ट न हो जाय इसलिए मैं इसे उठाकर लाया हूँ। पुत्री महाश्वेता को भी आश्वासन दे दिया है। इस समय तुम जाकर यह समाचार श्वेतकेतु से कहो। वे अत्यन्त प्रभावशाली हैं। सम्भवतः इसका कोई उपाय करें। ऐसा कहकर उन्होंने मुझे विदा किया।

प्रश्नाः

1. 'अपगतामर्षः' शब्दस्य कः अर्थः ?
2. कस्याः सम्बन्धं चन्द्रः अवगच्छत् ?
3. गौरी कस्मिन् कुले उत्पन्ना ?
4. गौरी का आसीत् ?
5. चन्द्रः कपिञ्जलं कुत्र प्रेषितवान् ?

63. अहं तु विना वयस्येन शोकावेगान्धः गीर्वाणवर्त्मनि प्रधावन् अतिक्रोधनं वैमानिकम् एकम् अलंघयम्। स दहन्निव निरीक्ष्य अब्रवीत्– ''दुरात्मन् ! यदेवम् अतिविस्तीर्णे गगनमार्गे त्वया अहं तुरङ्गमेणेव उल्लंघितः, तस्मात् तुरङ्गम एव भूत्वा मर्त्यलोके अवतर'' इति। अहं तु तं कृताञ्जलिः अवदम् – ''भगवन् ! वयस्यशोकान्धेन त्वं मया उल्लङ्घितः, नावज्ञया तत्प्रसीद। उपसंहर शापम् इमम्'' इति। स तु मां पुनः अवादीत्– ''यन्मयोक्तं तत् नान्यथा भवितुमर्हति। तदेतत् ते करोमि। कियन्तमपि कालं यस्य वाहनताम् उपयास्यसि, तस्यैव अवसाने स्नात्वा विगतशापः भविष्यसि'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – शोकावेगान्धः = शोकस्य आवेगः, तेन अन्धः। **भूत्वा** = भू + क्त्वा। **नावज्ञया** = न + अवज्ञया। **नान्यथा** = न + अन्यथा। **प्रधावन्** = प्र + धाव् + शतृ प्रत्यय।

शब्दार्थः– वयस्येन = मित्र के। **गीर्वाणवर्त्मनि** = आकाश मार्ग में। **वैमानिकम्** = विमान पर चढ़े देवता को। **वाहनताम् उपयास्यसि** = सवारी बनोगे। **तुरङ्गमेणेव** = घोड़े के समान। **मर्त्यलोके** = भूलोक में।

हिन्दी अनुवाद– मैंने तो मित्र के बिना शोक के आवेग से अन्धा होकर आकाश मार्ग में दौड़ते हुए एक विमान पर बैठे देवता का उल्लंघन कर दिया, जिससे वह (क्रोधाग्नि से) जलता हुआ-सा मेरी ओर देखकर बोला – ''दुष्ट! इतने चौड़े आकाशमार्ग के होते हुए भी तुमने घोड़े की तरह मेरा उल्लंघन किया है। इसलिए घोड़ा बनकर मृत्युलोक में जाओ।'' मैंने हाथ जोड़कर कहा – ''भगवन्! मित्र शोक में अन्धा होकर आपका उल्लंघन किया है, आपका अपमान करने के लिए नहीं। अतः कृपा करें, शाप को दूर कीजिए।'' उसने फिर मुझसे कहा – ''मैंने जो कहा है वह व्यर्थ नहीं हो सकता। तुम्हारे लिए मै इतना करता हूँ कि तुम बहुत समय तक जिसकी सवारी बनोगे, उसके मर जाने पर स्नान करके पापरहित हो जाओगे।

प्रश्नाः

1. कः विना वयस्येन शोकावेगान्धः बभूव ?
2. कपिञ्जलः गीर्वाणवर्त्मनि प्रधावन् कम् अलंघयत् ?
3. वैमानिकः कपिञ्जलं किम् अशपत् ?
4. 'उपसंहर शापम् इमम्'– कः कम् अवदत् ?
5. वैमानिकः कम् उपायम् अवदत् ?

64. एवमुक्तस्तु तमहम् अवदम्– ''भगवन् ! यद्येवम् ततः विज्ञापयामि। तेनापि मत्प्रियवयस्येन पुण्डरीकेण चन्द्रमसा सह शापदोषात् मर्त्यलोक एव उत्पत्तव्यम्। तत् एतावन्तमपि भगवान् प्रसादं करोतु मे दिव्येन चक्षुषा अवलोक्य, यथा तुरङ्गमत्वेऽपि मत्प्रियवयस्येन सह अवियोगेन कालः यायात्'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – यद्येवम् = यदि + एवम्। **अवलोक्य** = अव + लोक् + ल्यप्। **अवियोगेन** = न वियोगेन (नञ् तत्पुरुष समास)।

शब्दार्थः– अवदम् = बोला। **यद्येवम्** = यदि ऐसा है। **विज्ञापयामि** = निवेदन करता हूँ। **उत्पत्तव्यम्** = उत्पन्न होना होगा। **एतावन्तम्** = इतना। **दिव्येन चक्षुषा** = दिव्य दृष्टि से। **अवियोगेन** = अवियुक्त रूप से। **कालः यायात्** = समय यापन कर सकूँ।

हिन्दी अनुवाद – इस प्रकार कहा गया मैं उनसे बोला – ''भगवन्! यदि ऐसा है तो मैं निवेदन करता हूँ कि मेरे प्रिय मित्र पुण्डरीक के द्वारा भी शाप-दोष के कारण चन्द्रमा के साथ मृत्युलोक में ही उत्पन्न होना चाहिए। अतः हे भगवन् ! दिव्यदृष्टि से देखकर इतना अनुग्रह और करें कि जिस प्रकार अश्व बन जाने पर भी मैं प्रियमित्र के साथ अवियुक्त रूप से समय–यापन कर सकूँ।''

प्रश्नाः

1. 'भगवान् प्रसादं करोतु मे दिव्येन चक्षुषा अवलोक्य' इति कः कं प्रति उक्तवान्?
2. कपिञ्जलः केन सह तुरङ्गमत्वेऽपि अवियोगेन कालः यापयितुम् इच्छुकः?
3. 'चन्द्रमसा सह' इत्यस्य कः आशयः?

65. स तु एवम् उक्तः मुहूर्तमिव ध्यात्वा पुनः माम् अवादीत्–''उज्जयिन्याम् अपत्यहेतोः तपस्यतः तारापीडनाम्नः राज्ञः चन्द्रमसा तनयत्वम् उपगन्तव्यम्। वयस्येनापि ते पुण्डरीकेण तन्मन्त्रिणः एव शुकनासस्य। त्वमपि तस्य चन्द्रात्मनः राजपुत्रस्य वाहनताम् उपयास्यसि'' इति। अहं तु तद्वचनानन्तरमेव अधः स्थिते महोदधौ न्यपतम्। तस्माच्च तुरङ्गीभूयैव उदतिष्ठम्। संज्ञा तु मे तुरङ्गमत्वेऽपि न व्यपगता इति। येन अयं मया अस्यैवार्थस्य कृते किन्नरमिथुनानुसारी भूमिम् एताम् आनीतः देवश्चन्द्रमसोऽवतारः चन्द्रापीडः। योऽप्यसौ प्राक्तनानुरागसंस्कारात् अभिलषन् अजानत्या त्वया शापाग्निना निर्दग्धः स मे वयस्यस्य पुण्डरीकस्यावतारः'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – मुहर्तमिव = मुहूर्तम् + इव। **उपगन्तव्यम्** = उप + गम् + तव्यत् प्रत्यय। **तद्वचनानन्तरमेव** = तत् + वचन + अनन्तरम् + एव। **उपगन्तव्यम्** = उप + गम् + तव्यत्। **उपयास्यसि** = उप + या + लृट् मध्यम पुरुष एकवचन। **निर्दग्धः** = निर् + दह् + क्त प्रत्यय।

शब्दार्थः – अपत्यहेतोः = सन्तान के लिए। **महोदधौ** = समुद्र में। **न्यपतम्** = गिरा। **तुरंगीभूय** = घोड़ा बनकर। **उदतिष्ठम्** = निकला। **न व्यपगता** = नहीं गयी। **अजानत्या** = अनजाने में। **वयस्येनापि ते** = तुम्हारा मित्र भी। **शापाग्निना** = शाप की अग्नि द्वारा। **निर्दग्धः** = जला डाला गया।

हिन्दी अनुवाद – वह तो ऐसा कहकर कुछ क्षण ध्यान करके पुनः मुझसे बोला – ''उज्जयिनी में सन्तान के लिए तप करने वाले तारापीड नाम के राजा का पुत्र चन्द्रमा होगा। तुम्हारा मित्र पुण्डरीक उसके मन्त्री शुकनास का पुत्र होगा। तुम उसी चन्द्रमा के अवतार राजपुत्र चन्द्रापीड के वाहन बनोगे।'' मैं उसके ऐसा कहने के साथ ही समुद्र में गिर पड़ा और घोड़ा होकर निकला। घोड़ा होने पर भी मुझमें पूर्वजन्म की चेतना नहीं गयी थी। इसी कार्य के लिये किन्नरों का पीछा करने वाले चन्द्रमा के अवतार चन्द्रापीड को मैं इस स्थान पर ले आया था। पूर्व जन्म के संस्कार के कारण तुम्हारी कामना करने वाला यह अनजाने में जो तुम्हारे द्वारा शाप की अग्नि में जला डाला गया है, वह मेरे मित्र पुण्डरीक का ही अवतार था।

प्रश्नाः

1. कः दिव्यदृष्ट्या कपिञ्जलं चन्द्रस्य पुण्डरीकस्य च पुनर्जन्मवृत्तान्तम् अकथयत् ?
2. चन्द्रः कस्य पुत्रः भविष्यति ?
3. पुण्डरीकः कस्य पुत्रः भविष्यति ?
4. कपिञ्जलः कस्मिन् रूपे भूतले अवतीर्णः ?
5. चन्द्रापीडं कः पूर्वजन्मसंस्कारेण अच्छोदतीरे अनयत् ?

66. एतत् श्रुत्वा ''हा देव पुण्डरीक! जन्मान्तरेऽपि अविस्मृतमदनुराग! लोकान्तरगतस्यापि ते अहमेव राक्षसी, विनाशायोपजाता'' इत्युन्मुक्तार्त्तनादां महाश्वेतां कपिञ्जलः पुनरवादीत्– ''गन्धर्वराजपुत्रि! कस्तवात्र दोषः ? यथा च शापदोषात् इदमुपनतं भवत्योः द्वयोरपि दुःखं तथा मया कथितमेव। चन्द्रमसोऽपि भारती भवतीभ्यां श्रुतैव। भवत्या अङ्गीकृतं तपः तदेव अनुबध्यताम्'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– श्रुत्वा = श्रु + क्त्वा। **लोकान्तरगतस्यापि** = लोकान्तर + गतस्य + अपि। **कस्तवात्र** = कः + तव + अत्र। **उन्मुक्तार्त्तनादाम्** = उन्मुक्त + आर्त्तनादाम्। **द्वयोरपि** = द्वयोः + अपि।

शब्दार्थः– अविस्मृतमदनुरागः = मेरे प्रेम को न भूलने वाले। **विनाशायोपजाता** = विनाश के लिए उत्पन्न हुई। **इत्युन्मुक्तार्त्तनादाम्** = चिल्लाकर रोने वाली (को)। **अङ्गीकृतम्** = स्वीकार किया। **अनुबध्यताम्** = निर्वाह करें।

हिन्दी अनुवाद– यह सुनकर 'हाय देव पुण्डरीक! दूसरे जन्म में भी मेरे प्रेम को न भूलने वाले! दूसरे लोक में चले जाने पर भी, आपके विनाश के लिए ही मुझ राक्षसी का जन्म हुआ है' इस प्रकार कहकर जोर से रोने वाली महाश्वेता से कपिञ्जल पुनः बोला – ''गन्धर्वराजपुत्रि! इसमें तुम्हारा क्या दोष है ? शाप के कारण आप दोनों को यह दुःख जैसे मिला है वह सब मैंने आपसे कहा है। चन्द्रमा की भी वाणी आप दोनों ने सुनी ही है। आपने जिस तप को स्वीकार किया है उसका निर्वाह कीजिए।''

प्रश्नाः

1. 'हा देव पुण्डरीक!' इति का अवदत् ?
2. महाश्वेता किमर्थम् आर्त्तनादम् अकरोत् ?
3. वैशम्पायनः कः आसीत् ?
4. कः महाश्वेताम् अवबोधयत् ?
5. 'भवत्या अङ्गीकृतं तपः तदेव अनुबध्यताम्' इति कः अवदत् ?

67. अथ कादम्बरी कपिञ्जलम् अप्राक्षीत्–''भगवन् ! पत्रलेखया त्वया च अस्मिन् सरसि जलप्रवेशः कृतः। तत् किं तस्याः संवृत्तम् ? इत्यावेदनेन प्रसादं करोतु भवान्'' इति। स तु प्रत्यवादीत्–''राजपुत्रि ! सलिलपातानन्तरम् न कश्चिदपि तद्वृत्तान्तः मया ज्ञातः। तत् अधुना क्व चन्द्रापीडस्य जन्म ? क्व वैशम्पायनस्य ? किं वास्याः पत्रलेखायाः वृत्तम् ? सर्वस्यास्य वृत्तान्तस्य अवगमनाय भगवतः श्वेतकेतोः पादमूले गमिष्यामि'' इत्यभिदधान एव गगनम् उदपतत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– इत्यावेदनेन = इति + आवेदनेन, यण्सन्धि। **प्रत्यवादीत्** = प्रति + अवादीत्, यण् सन्धि। **वास्याः** = वा + अस्याः। **सर्वस्यास्य** = सर्वस्य + अस्य। **इत्यभिदधानः** = इति + अभिदधानः, यण् सन्धि।

शब्दार्थः– अप्राक्षीत् = पूछा। **संवृत्तम्** = हुआ। **आवेदनेन** = बताकर। **सलिपातानन्तरम्** = जल में प्रवेश करने के बाद। **अवगमनाय** = जानने के लिए। **उदपतत्** = उड़ गया।

हिन्दी अनुवाद– इसके पश्चात् कादम्बरी ने कपिञ्जल से पूछा – ''भगवन्! पत्रलेखा और आपने इस सरोवर के जल में प्रवेश किया। फिर उसका क्या हुआ ? यह बताने की आप कृपा करें।'' उसने **उत्तर** दिया – ''राजपुत्री! जल में प्रवेश के बाद उसका कोई भी समाचार मैं न जान सका। इस समय चन्द्रापीड का जन्म कहाँ हुआ है? वैशम्पायन कहाँ है ? पत्रलेखा की क्या दशा है ? इन सभी वृत्तान्तों को जानने के लिए मैं भगवान् श्वेतकेतु के पास जा रहा हूँ।'' ऐसा कहते हुए वह आकाश में उड़ गया।

प्रश्नाः

1. कादम्बरी पत्रलेखायाः विषये कम् अपृच्छत् ?
2. कपिञ्जलः कादम्बरीं किम् अकथयत् ?
3. सर्वस्य वृत्तान्तस्य अवगमनाय कपिञ्जलः कुत्र गतः ?
4. कपिञ्जलः किं कर्त्तुं श्वेतकेतोः समीपम् अगच्छत्?

68. अथ कादम्बरी तां निर्विकारवदनां चन्द्रापीडतनुं कस्मिंश्चित् शिलातले स्थापयित्वा स्नानशुचिः भूत्वा देवतोचिताम् अपचितिं सम्पाद्य, निराहारा दिवसम् अनयत्। यथैव दिवसम् तथैव मेघोपरोधभीमाम् क्षपामपि समुपविष्टैव क्षपितवती। अन्येद्युश्च महाश्वेतया

उपनीतानि फलानि तया सहैव उपभुक्तवती। अथ च मदलेखाम् अवादीत् – ''प्रियसखि! देवस्य शरीरम् इदम् उपचरन्तीभिः अस्माभिः आशापक्षयात् अत्र स्थातव्यम्। तत् इमम् अत्यद्भुतं वृत्तान्तं तातस्य अम्बायाश्च गत्वा निवेदय। यथा माम् एवंविधाम् आगत्य न पश्यतः तथा करिष्यसि'' इत्यभिधाय तां व्यसर्जयत्। गत्वा आगतया च तया, ''प्रियसखि! सिद्धं ते अभिवाञ्छितम् एवं सन्दिष्टम् तातेन अम्बया च–शापावसाने जामात्रा सहैव आनन्दवाष्पनिर्भरम् आननं ते द्रक्ष्यावः'' इति आवेदिते निर्वृतेन अन्तरात्मना अतिष्ठत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– भूत्वा = भू + क्त्वा प्रत्यय। **समुपविष्टा** = सम् + उप + विश् + क्त + टाप्। **अत्यद्भुतम्** = अति + अद्भुतम्। **निर्विकारवदनाम्** = निर्गतः विकार यस्मात् तत् निर्विकारं तथाभूतं वदनं यस्याः ताम् (बहुव्रीहि)। **स्नानशुचिः** = स्नानेन शुचिः (तृतीया विभक्ति)। **मेघोपरोधभीमाम्** = मेघस्य उपरोधेन भीमाम् (षष्ठी तत्पुरुष)। **आनन्दवाष्पनिर्भरम्** = आनन्दस्य वाष्पः तेन निर्भरम् (षष्ठी तत्पुरुष)। **शापावसाने** = शापस्य अवसाने (षष्ठी तत्पुरुष)।

शब्दार्थः– निर्विकारवदनाम् = शान्तमुखवाले। **अपचितिम्** = पूजा को। **सम्पाद्य** = करके। **मेघोपरोधभीमाम्** = बादलों के व्याप्त हो जाने से भयंकर। **क्षपाम्** = रात को। **समुपविष्टैव** = बैठे हुए ही। **उपचरन्तीभिः** = सेवा करती हुई। **आशापक्षयात्** = शाप के नष्ट होने तक। **क्षपितवती** = बिता दिया। **व्यसर्जयत्** = विदा किया।

हिन्दी अनुवाद– इसके पश्चात् कादम्बरी ने शान्त मुख वाले चन्द्रापीड के शरीर को किसी शिलातल पर रखकर स्नान से शुद्ध करके देवता के योग्य पूजा करके, निराहार रहकर ही दिन को बिता दिया। जिस प्रकार दिन, उसी प्रकार मेघों के व्याप्त हो जाने से भयंकर रात्रि को भी बैठे-बैठे ही बिता दिया। दूसरे दिन, महाश्वेता द्वारा लाए गए फलों को उसी के साथ खाया और तत्पश्चात् मदलेखा से बोली – ''प्रिय सखि! देव चन्द्रापीड के शरीर की रक्षा करते हुए हम लोगों को शाप का अन्त होने तक यहीं रहना चाहिए। अतः इस अति अद्भुत वृत्तान्त को माता-पिता के पास जाकर बता दो और मुझे इस प्रकार आकर न देखें – ऐसा उपाय करो।'' ऐसा कहकर उसे विदा किया। जाकर लौटी हुई उसके द्वारा 'प्रियसखि! तुम्हारी मनोकामना पूर्ण हुई, माता-पिता ने यह संदेश भेजा है – ''शाप के बीत जाने पर जामाता के साथ आनन्द के अश्रु से युक्त तुम्हारे मुख को देखेंगे।'' ऐसा कहने पर निश्चिन्त मन से कादम्बरी रहने लगी।

प्रश्नाः

1. कादम्बरी कस्य शरीरं शिलातले स्थापयित्वा अपूजयत् ?
2. कया सह कादम्बरी फलानि भुक्तवती ?
3. कादम्बरी कां स्वपितुः समीपं प्रेषितवती ?
4. तातेन अम्बया च किं सन्दिष्टम् ?

69. अत्रान्तरे चन्द्रापीडः चिरयति इति उत्ताम्यता तारापीडेन वार्ताहराः प्रहिताः। ते च कादम्बरीमुखात् सर्वं वृत्तान्तम् अधिगम्य प्रतिनिवृत्त्य तारापीडाय राज्ञे यथादृष्टं यथाश्रुतं च सर्वं निवेदयामासुः। श्रुत्वा च विस्मयेन कुतूहलेन शोकेन चाविष्टं तारापीडं शुकनासः प्रोवाच– ''देव! विचित्रेऽस्मिन् संसारे किं किं संभाव्यते। सर्वम् आगमप्रामाण्यात् अभ्युपगतमेव। मुद्राबन्धनात् ध्यानाद् वा विषप्रसुप्तस्य उत्थापनम्। अयस्कान्तस्य चायस्समाकर्षणम्। वैदिकैः अवदिकैर्वा मन्त्रैः कर्मसु सिद्धिः। आगमेषु च पुराणरामायणभारतादिषु बहुप्रकाराः शापवार्ताः श्रूयन्ते। तद्यथा-नहुषस्य राजर्षेः अगस्त्यशापात् अजगरता सौदासस्य वसिष्ठसुतशापात् मानुषादत्वम्। ययातेः असुरगुरुशापात् तारुण्य एव जरसा भङ्गः। त्रिशंकोः पितृशापात् चाण्डालभावः'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– प्रतिनिवृत्य = प्रति + नि + वृत् + ल्यप्। **प्रोवाच** = प्र + उवाच। **प्रहिताः** = प्र + हि + क्त प्रत्यय। **अधिगम्य** = अधि + गम् + ल्यप्। **निवेदयामासुः** = नि + विद् + णिच् + लिट् प्रथम पुरुष बहुवचन। **उपगतः** = उप + गम् + क्त। **चिरयति** = चिरमिव आचरति। **कादम्बरीमुखात्** = कादम्बर्याः मुखात् (षष्ठी तत्पुरुष)। **आगमप्रामाण्यात्** = आगमस्य प्रामाण्यं तस्मात् (षष्ठी तत्पुरुषः)।

शब्दार्थः – उत्ताम्यता = संतप्त हृदय वाले। **वार्ताहराः** = समाचार ले जाने वाले। **प्रहिताः** = भेजे गये। **अधिगम्य** = जानकर। **प्रतिनिवृत्त्य** = लौटकर। **आविष्टम्** = पूर्ण होकर। **उत्थापनम्** = उठाना। **अयस्कान्तस्य** = चुम्बक। **मानुषादत्वम्** = मनुष्य का भोजन करने वाले (नर-भक्षी)।

हिन्दी अनुवाद– इसके पश्चात् चन्द्रापीड के विलम्ब करने से दुःखी तारापीड ने सन्देशवाहकों को भेजा और उन्होंने कादम्बरी के मुख से सारा समाचार जानकर और लौटकर तारापीड से जैसा देखा और जैसा सुना, सब निवेदन किया और सुनकर विस्मय, कुतूहल और शोक से आविष्ट तारापीड से शुकनास ने कहा – ''देव! इस विचित्र संसार में क्या-क्या नहीं सम्भव है। शास्त्रों के प्रमाण के अनुसार सब कुछ सिद्ध है। मुद्राओं तथा ध्यान द्वारा विष से अचेत होश में आये हैं। वैदिक या लौकिक मन्त्रों से कार्य की सिद्धि हुई है। वेदों, पुराणों, रामायण, महाभारत आदि में बहुत प्रकार के शाप की कथायें सुनी जाती हैं। जैसे अगस्त्य के शाप से राजा नहुष का अजगर बनना, वशिष्ठपुत्र के शाप से सौदास का नरभक्षी होना, शुक्र के शाप से ययाति का जवानी में ही बुढ़ापे से पीड़ित होना, पितरों के शाप से त्रिशंकु का चांडाल बनना।''

प्रश्नाः

1. केन सन्देशवाहकाः प्रेषिताः ?
2. कस्याः मुखात् ते सर्वं वृत्तान्तम् अधिगतवन्तः ?
3. 'देव! विचित्रेऽस्मिन् संसारे किं किं न संभाव्यते' इति कः कम् उक्तवान् ?
4. कः कस्य शापात् अजगरता प्राप्तवान् ?
5. कस्य पितृशापात् चाण्डालभाव इति ?

70. श्रूयते च स्वर्गलोकनिवासी महाभिषः भूमौ शान्तनुः उत्पन्नः गङ्गायां वसूनाम् अष्टानाम् उत्पत्तिः। तिष्ठन्तु तावदन्ये, अयमादिदेवः भगवान् अज एव जमदग्नेः आत्मजताम् उपगतः, पुनश्चतुर्धा आत्मानं विभज्य राजर्षेः दशरथस्य तथैव मथुरायां वसुदेवस्य। तन्मनुष्येषु देवानाम् उत्पत्तिः नैवासंभाविनी। अपि च, गर्भारम्भसंभवे देव्या वदने विशन् चन्द्रमा एव दृष्टः। तथा ममापि स्वप्ने पुण्डरीकस्य दर्शनं समुपजातम्। विनष्टयोः तयोः कथं पुनः जीवितप्रतिलम्भः इत्यत्रापि अमृतमेव कारणम् आवेदितम्। तच्च चन्द्रमसि विद्यते। तत् अस्मिन् वस्तुनि न मनागपि शोकः कार्यः'' इत्युक्तवति शुकनाशे सशोक एव राजा सद्य एव गमनसंविधानम् अकारयत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – तावदन्ये = तावत् + अन्ये। **अयमादिदेवः** = अयम् + आदिदेवः। **नैवासंभाविनी** = न + एव + असंभाविनी। **विभज्य** = वि + भज् + ल्यप् प्रत्यय। **समुपजातम्** = सम् + उप + जन् + क्त प्रत्यय।

शब्दार्थः– पुण्डरीकस्य = श्वेत कमल का। **जीवितप्रतिलम्भः** = पुनः जीवित होना। **आवेदितम्** = बताया गया है। **मनागपि** = थोड़ा भी। **वस्तुनि** = विषय में। **गमन संविधानम्** = जाने की तैयारी। तिष्ठन्तु = रहने दीजिए। **विभज्य** = बाँटकर।

हिन्दी अनुवाद – ऐसा सुना जाता है कि स्वर्गवासी महाभिष नाम के राजा पृथ्वी पर शान्तनु हुए जिन्होंने गङ्गा द्वारा आठ वसुओं को उत्पन्न किया। दूसरों की बात छोड़िए, यह आदि देव ब्रह्मा भी जमदग्नि के पुत्र बने, इसी प्रकार अपने को चार भागों में बाँट कर दशरथ के पुत्र तथा मथुरा में वसुदेव के पुत्र हुए थे। अतः मनुष्यों में देवताओं की उत्पत्ति असम्भव नहीं है। इसके अतिरिक्त गर्भ के आरम्भ के समय आपने देवी के मुख में चन्द्रमा को प्रवेश करते हुए देखा था उसी प्रकार मेरे द्वारा भी स्वप्न में पुण्डरीक (श्वेत कमल) का दर्शन किया था। नष्ट हुए उन दोनों को फिर से जीवन मिलने का कारण अमृत बताया गया है, वह चन्द्रमा में विद्यमान है। इसलिए इन विषय में आप थोड़ा भी शोक न करें। शुकनास के ऐसा कहने पर शोक के साथ राजा शीघ्र ही प्रस्थान की तैयारी करने लगे।

प्रश्नाः

1. कः भूमौ शान्तनुः नाम नृपः अभवत् ?
2. भगवान् अजः कस्य आत्मजताम् उपगतः ?
3. कः देव्या वदने चन्द्रमाः विशन् दृष्टः ?
4. स्वप्ने कः पुण्डरीकस्य दर्शनम् अकरोत् ?
5. कः सद्य एव गमनसंविधानम् अकारयत् ?

71. अथ उत्ताम्यता हृदयेन राजा सततम् अविच्छिन्नैः प्रयाणकैः आससाद महाश्वेताश्रमम्। अथ सहसैव तत् चन्द्रापीडगुरुजनागमनम् आकर्ण्य, धावित्वा ह्रिया महाश्वेता गुहाभ्यन्तरमविशत्। चित्ररथतनयापि लज्जावनम्रमुखी प्रतिपत्तिमूढा परवत्येव मदलेखया यथाक्रमम् अकारयत् वन्दनं गुरूणाम्। नरपतिस्तु अनतिक्रमणीया नियतिरिति कृत्वा संनिहितान्यपि परित्यज्य सर्वसुखानि तपस्विजनोचिताः क्रियाः कुर्वन् सपरिवारः समं देव्या शुकनासेन च तत्रैव अतिष्ठत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– चन्द्रापीडगुरुजनागमनम् = चन्द्रापीडस्य गुरुजनानाम् आगमनम्। **गुहाभ्यन्तरम्** = गुहा + अभि + अन्तरम्। **चित्ररथतनयापि** = चित्ररथस्य + तनया + अपि। **तत्रैव** = तत्र + एव। **लज्जावनम्रामुखी** = लज्जया अवनम्रं मुखं यस्याः सा (बहुव्रीहि)। **यथाक्रमम्** = क्रमम् अनतिक्रम्य (अव्ययीभाव)। **सर्वसुखाणि** = सर्वाणि तानि सुखानि (कर्मधारय)। **अविशत्** = विश् + लङ् प्रथम पुरुष एकवचन। **कुर्वन्** = कृ + शतृ प्रत्यय।

शब्दार्थः– उत्ताम्यता = सन्तप्त। **अविच्छिन्नैः प्रयाणकैः** = लगातार प्रस्थानों से। **आससाद** = पहुँचा। **प्रतिपत्तिमूढा** = कर्त्तव्यज्ञान से रहित। **परवत्येव** = पराधीन-सी। **सन्निहितान्यपि** = समीप में ही उपस्थित होते हुए भी। **परित्यज्य** = छोड़कर।

हिन्दी अनुवाद– इसके पश्चात् दुःखी हृदय से राजा लगातार यात्रा करते हुए महाश्वेता के आश्रम पहुँचे। इसके पश्चात् अचानक ही चन्द्रापीड के गुरुजनों (माता-पिता) का आना सुनकर महाश्वेता लज्जा के कारण दौड़कर गुफा के भीतर चली गई। चित्ररथ की पुत्री कादम्बरी ने भी लज्जा से मुख नीचे करके कर्त्तव्यज्ञान से रहित पराधीन-सी होकर मदलेखा द्वारा क्रमशः गुरुजनों की वन्दना कराया। भाग्य को अनुल्लंघनीय जानकर राजा भी सभी सुलभ सुखों को छोड़कर तपस्वियों के योग्य क्रियायें करते हुए सपरिवार देवी विलासवती तथा शुकनास के साथ वहीं रहने लगे।

प्रश्नाः

1. कः उत्ताम्यता हृदयेन महाश्वेताश्रमम् आससाद ?
2. का गुहाभ्यन्तरमविशत् ?
3. का प्रतिपत्तिमूढा लज्जावनम्रमुखी अभूत ?
4. गुरूणाम् वन्दनं का अकारयत् ?
5. राजा केन सह महाश्वेताश्रमे अतिष्ठत् ?

72. एवं कथयित्वा भगवान् जाबालिः स्मितं कृत्वा हारीतप्रमुखान् सर्वान् अवादीत् "दृष्टं कथारसस्य चित्ताक्षेपसामर्थ्यम्। यत् कथयितुं प्रवृत्तोऽस्मि तत् परित्यज्यैव कथारसात् अतिदूरम् अतिक्रान्तोऽस्मि। यः स कामोपहतचेताः स्वयं कृतादेव अविनयात् दिव्यलोकतः परिभ्रश्य, मर्त्यलोके वैशम्पायननामा शुकनाससूनुः अभवत्, स एवैष पुनः स्वयंकृतेन

अविनयेन अस्यां शुकजातौ पतितः'' इति। एवं वदत्येव भगवति जाबालौ सुप्तप्रबुद्धस्येव मे पूर्वजन्मोपार्जिताः सर्वाः विद्याः जिह्वाग्रे अभवन्। मनुजस्येव चेयं विस्पष्टा भारती समुत्पन्ना। मनुष्यशरीरात् ऋते सर्वमन्यत् महाश्वेतानुरागादिकम् उपगतम्। अथ भगवान् जाबालिः ''अहो प्रभातप्राया रजनी'' इत्युक्त्वा गोष्ठीं भङ्क्त्वा उदतिष्ठत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – कृत्वा = कृ + क्त्वा। **प्रवृत्तोऽस्मि** = प्रवृत्तः + अस्मि। **कामोपहतचेताः** = कामेन उपहतः चेतः यस्य सः। **वदत्येव** = वदति + एव। **इत्युक्त्वा** = इति + उक्त्वा। **स्मितम्** = स्मिञ् + क्त प्रत्यय। **उपगतम्** = उप + गम् + क्त प्रत्यय। **चित्ताक्षेपसामर्थ्यम्** = चित्तस्याक्षेपः तस्य सामर्थ्यम् (षष्ठी तत्पुरुष)। **कामोपहतचेताः** = कामेन उपहतः चेतो यस्य ते (बहुव्रीहिः)। **पूर्वजन्मोपार्जिताः** = पूर्वजन्मनि उपार्जिताः (सप्तमी तत्पुरुष)। **आत्मपर्णशालाम्** = आत्मनः पर्णशाला ताम् (षष्ठी तत्पुरुष)। **भङ्क्त्वा** = भञ्ज् + क्त्वा प्रत्यय।

शब्दार्थः – स्मितं कृत्वा = मुस्कुराकर। **चित्ताक्षेपसामर्थ्यम्** = मन को खींच लेने की शक्ति। **अतिक्रान्तोऽस्मि** = चला गया हूँ। **कामोपहतचेताः** = काम से नष्ट ज्ञान वाला। **सुप्तप्रबुद्धस्येव** = सोकर जगे हुए के समान। **विस्पष्टा भारती** = स्पष्ट वाणी। **गोष्ठीम्** = सभा को। **भङ्क्त्वा** = भङ्ग करके। **कथयित्वा** = कहकर। **अविनयात्** = अविनय के कारण। **परिभ्रश्य** = गिरकर। **पूर्वजन्मोपार्जिताः** = पूर्व जन्म में उपार्जित। **जिह्वाग्रे** = जिह्वा के अग्रभाग पर।

हिन्दी अनुवाद – इस प्रकार कहकर भगवान् जाबालि ने मुस्कुराकर हारीत इत्यादि सभी श्रोताओं से कहा – ''मन को हरण कर लेने वाली कथा के रस की शक्ति आप लोगों ने देख ली। मैं जो कह रहा था उसे छोड़कर कथारस में बहुत दूर तक चला गया हूँ। कामवासना से नष्ट ज्ञान वाला वह अपने ही किये पापों के कारण स्वर्गलोक से भ्रष्ट होकर मृत्युलोक में शुकनास का पुत्र वैशम्पायन हुआ था और वही फिर अपने ही पापों से इस शुक की योनि में आया है।'' भगवान् जाबालि के ऐसा कहते ही सोकर जगे हुए के समान मेरे पूर्वजन्म की सारी विद्याएँ याद हो गयी। मनुष्य के समान यह चेष्टा और वाणी भी उत्पन्न हो गई। मनुष्य–शरीर को छोड़कर महाश्वेता का अनुराग आदि सब प्राप्त हो गया। ''अरे प्रातःकाल हो गया'' – ऐसा कहकर गोष्ठी भंग करके भगवान् जाबालि उठ खड़े हुए।

प्रश्नाः

1. 'दृष्टं कथारसस्य चित्ताक्षेपसामर्थ्यम्'–इति कः अवदत् ?
2. हारीतः कः आसीत् ?
3. मर्त्यलोके शुकनासस्य पुत्रः कः अभवत् ?
4. कः स्वयंकृतेन अविनयेन शुकजातौ पतितः ?
5. सुप्तप्रबुद्धस्येव कस्य पूर्वजन्मोपार्जिताः सर्वाः विद्याः जिह्वाग्रे अभवन् ?

73. उत्थिते जाबालौ समस्तैव सा परिषत् यथास्थानं जगाम। हारीतस्तु माम् आत्मपर्णशालां नीत्वा स्वशयनीयैकदेशे स्थापयित्वा प्राभातिकक्रियाकरणाय निर्ययौ। अथ कपिञ्जलः मम पितुः श्वेतकेतोः पादमूलात् आगत्य हारीतेन प्रवेशितः करद्वयेन उत्क्षिप्य मां भूयसा मन्युवेगेन अरोदीत्। अहं तु तम् अवदम्– "सखे कपिञ्जल! धन्योऽसि बालोऽपि त्वं न स्पृष्ट एव अमीभिः संसारदोषैः। उपविश्य तावत् कथय यथावृत्तम्। अपि कुशलं तातस्य? मदृवृत्तान्तम् आकर्ण्य किमुक्तवान् ? कुपितो वा न वा" इति। स त्वेवम् आख्यातवान्–सखे! कुशलं तातस्य, अयं च अस्मद्वृत्तान्तः प्रथमतरमेव तातेन दिव्येन चक्षुषा दृष्टः। दृष्ट्वा च प्रतिक्रियायै कर्म प्रारब्धम्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– समस्तैव = समस्ता + एव। **उत्क्षिप्य** = उत् + क्षिप् + ल्यप्। **किमुक्तवान्** = किम् + उक्तवान्। **आत्मपर्णशालाम्** = आत्मनः पर्णशाला ताम् (षष्ठी तत्पुरुष)। **अरोदीत्** = रुद् लुङ् प्रथमपुरुष एकवचन। **आख्यातवान्** = आ + चक्षिङ्(ख्या) + क्तवतु प्रत्यय। **दृष्टः** = दृश् + क्त प्रत्यय। दृष्ट्वा = दृश् + क्त्वा प्रत्यय।

शब्दार्थः– स्वशयनीयैकदेशे = अपनी शय्या के एक किनारे। **प्राभातिक** = प्रातःकाल की। **निर्ययौ** = चले गये। **भूयसा** = अत्यधिक। **मन्युवेगेन** = क्रोध के वेग से। **अमीभिः** = इन। **आख्यातवान्** = कहा। **प्रतिक्रियायै** = उसकी शान्ति के उपाय के लिए। **अरोदीत्** = रोने लगा। **पादमूलात् आगत्य** = पास से आकर। **करद्वयेन उत्क्षिप्य** = दोनों हाथों से उठाकर। **अनपसर्पन्तम्** = दूर रहते हुए। **आज्ञापितवान्** = आज्ञा दी। **परिसमाप्यते** = समाप्त किया जाता है।

हिन्दी अनुवाद– जाबालि के उठ जाने पर सारी सभा यथास्थान चली गई। हारीत मुझे अपनी कुटिया में लाकर अपने बिस्तर के एक किनारे रखकर प्रातःकालीन क्रियाओं को करने के लिये चले गये। इसके पश्चात् कपिञ्जल ने मेरे पिता श्वेतकेतु के पास से लौटकर हारीत के साथ कुटिया में आकर दोनों हाथों से मुझे उठा लिया और अत्यन्त दुःख के साथ रोने लगा। मैंने उससे कहा – "मित्र कपिञ्जल! तुम धन्य हो, बचपन से ही तुम इन सांसारिक वासनाओं से अछूते रहे हो, बैठकर सारा समाचार कहो, पिता कुशल से तो हैं न ? मेरा समाचार सुनकर उन्होंने क्या कहा ? क्रुद्ध हुए अथवा नहीं ?" उसने मुझसे इस प्रकार कहा – पिताजी कुशल से हैं। पिताजी ने दिव्य दृष्टि से इस समाचार को पहले ही जान लिया था और उसी के लिए कार्य भी आरम्भ कर दिया था।

प्रश्नाः

1. कस्य उत्थिते परिषत् यथास्थानं जगाम ?
2. हारीतः कम् आत्मपर्णशालां आनयत् ?
3. कपिञ्जलः कस्मात् जाबालेः आश्रमम् आगतः ?
4. कः शुकं गृहीत्वा मन्युवेगेन अरोदीत् ?
5. वैशम्पायनः कपिञ्जलं किम् अपृच्छत् ?

74. समारब्धे एव कर्मणि तुरगभावात् विमुक्तः गतोऽस्मि तस्य पादमूलम्। गत्वा च भयात् अनपसर्पन्तं माम् आहूय आज्ञापितवान्–''वत्स कपिञ्जल! परित्यज्यतां स्वदोषशङ्का। बलवती हि भवितव्यता। शुकजातौ इदानीं सुहृत् ते पतितः। तत् गत्वापि तम् अद्य नैवं वेत्सि। नाप्यसौ त्वां वेत्ति। मया तु वत्सस्य कृते समारब्धम् आयुष्यकरं कर्म। अधुना सिद्धप्रायमेवेदम्। तत् अत्रैव तावत् स्थीयताम्'' इति। अद्य च प्रातरेव आहूय माम् आज्ञापितवान्– ''वत्स कपिञ्जल! महामुनेः जाबालेः आश्रमं सुहृत् ते प्राप्तः। जन्मान्तरस्मरणं चास्योपजातम्। तत् गच्छ सम्प्रति तं द्रष्टुम्। मदीयया च आशिषा अनुगृह्य वक्तव्योऽसौ– ''वत्स ! यावदिदं कर्म परिसमाप्यते तावत् त्वया अस्मिन्नेव जाबालेराश्रमे स्थातव्यम्'' इति। इत्युक्त्वा कपिञ्जलः क्षणमिव स्थित्वा 'सखे व्रजामि' इत्युक्त्वा अन्तरिक्षम् अतिक्रम्य क्वापि अदर्शनम् अगात्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – गतोऽस्मि = गतः + अस्मि। **गत्वापि** = गत्वा + अपि। **नाप्यसौ** = न + अपि + असौ। **अत्रैव** = अत्र + एव । **चास्योपजातम्** = च + अस्य + उपजातम्। **यावदिदम्** = यावत् + इदम्। **अस्मिन्नेव** = अस्मिन् + एव। **अनपसर्पन्तम्** = न अपसर्पन्तम्। **जन्मान्तरस्मरणम्** = जन्मान्तरस्य स्मरणम् (षष्ठी तत्पुरुष)। **अदर्शनम्** = न दर्शनम् (नञ् तत्पुरुष)। **समारब्धम्** = सम् + आ + रभ् + क्त प्रत्यय। **अनुगृह्य** = अनु + ग्रह् + ल्यप् प्रत्यय। **स्थातव्यम्** = स्था + तव्यत् प्रत्यय।

शब्दार्थः – समारब्धे = आरम्भ होते ही। **विमुक्तः** = मुक्त होकर। **स्वदोषशङ्का** = अपने दोषों की शङ्का। **भवितव्यता** = होनहार। **आयुष्करम्** = आयुवर्धक। **आशिषा** = आशीर्वचनों से। **अनपसर्पन्तम्** = पास न जाने वाले। **आहूय** = बुलाकर। **मदीयया** = मेरे। **अतिक्रम्य** = लाँघकर। **तुरगभावात्** = घोड़ेपन से। **परित्यज्यताम्** = छोड़ दो। **हि** = निश्चित रूप से। **सिद्धप्रायमेवेदम्** = लगभग सिद्ध हो चुका है। **स्थीयताम्** = ठहरें। **परिसमाप्यते** = समाप्त किया जाता है। **अगात्** = हो गया।

हिन्दी अनुवाद – कार्य के आरम्भ होने पर मैं घोड़े की योनि से मुक्त होकर उनके चरणों में पहुँचा था। जाकर डर के मारे उनके पास न जाने पर मुझे बुलाकर बोले–वत्स कपिञ्जल! अपने अपराध की आशंका छोड़ दो। होनी बलवान् होती है। शुकयोनि में इस समय तुम्हारा मित्र पड़ा है। वहाँ जाकर भी आज तुम उसे नहीं पहचानोगे और न ही वह तुम्हें पहचानेगा। मैंने पुत्र के कल्याण के लिए कर्म आरम्भ किया है। अब वह सिद्ध होने के निकट है, अतः तब तक यहीं रहो।'' आज प्रातःकाल ही उन्होंने मुझे बुलाकर कहा – ''पुत्र कपिञ्जल! महामुनि जाबालि के आश्रम में तुम्हारा मित्र है। उसे अब देखने जाओ और मेरा आशीर्वाद कहकर उससे कहना कि जब तक यह कर्म समाप्त नहीं हो जाता तब तक वह उसी जाबालि के आश्रम में ही रहे।'' ऐसा कहकर कपिञ्जल थोड़ी देर तक रुककर 'मित्र! मैं जा रहा हूँ'–ऐसा कहकर आकाश में लुप्त हो गया।

प्रश्नाः

1. कः तुरगभावात् विमुक्तः आसीत् ?
2. तुरगभावात् विमुक्ते कपिञ्जलः कुत्र अगच्छत् ?
3. श्वेतकेतुः कपिञ्जलं किम् अकथयत् ?
4. कपिञ्जलस्य सुहृद् कः ?
5. कपिञ्जलः अन्तरिक्षम् अतिक्रम्य कुत्र अगात् ?

75. गते च तस्मिन्, हारीतेन प्रतिदिनम् आहारादिभिः उपचारैः संवर्ध्यमानः संजातपक्षोऽभवम् उत्पन्नोत्पतनसामर्थ्यश्च 'गगनक्षमस्तु संवृत्तोस्मि। नास्ति चन्द्रापीडोत्पत्तिपरिज्ञानम्। महाश्वेता पुनः सैवास्ते। भवतु, तत्रैव गत्वा तिष्ठामि' इति निश्चित्य एकदा प्रातर्विहारनिर्गत एव उत्तरां ककुभं गृहीत्वा अवहम्। अनभ्यस्तगमनतया स्तोकमेव गत्वा शिथिलितपक्षतिः कस्यचित् सरस्तीरतरुनिकुञ्जस्योपरि आत्मानम् अमुञ्चम्। ततश्च अध्वश्रमसुलभविनिद्राम् अगच्छम्। चिरादिव लब्धप्रबोधः बद्धम् आत्मानम् अपश्यम्। अग्रतश्च कालपुरुषमिव परुषं पुरुषम् अद्राक्षम्। आलोक्य च तम् आत्मनः उपरि निष्प्रत्याश एव अपृच्छम्– ''भद्र! कस्त्वम् ? किमर्थं वा त्वया बद्धोऽस्मि?'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– उत्पन्नोत्पतनसामर्थ्यश्च = उत्पन्नम् उत्पतनस्य सामर्थ्यं यस्मिन् सः (बहुव्रीहि)। **सरस्तीरतरुनिकुञ्जस्योपरि** = सरसः तीरे तरोः निकुञ्जस्य उपरि। **सञ्जातपक्षः** = सञ्जातः पक्षः यस्य सः (बहुव्रीहि)। **शिथिलपक्षतिः** = शिथिलिता पक्षतिः यस्याः सा (बहुव्रीहि)। **तत्पादमूलम्** = तस्य पादमूलम् (षष्ठी तत्पुरुष)। **संवर्ध्यमानः** = सम् + वृध् + शानच् प्रत्यय। **अमुञ्चम्** = मुञ्च् + लुङ् उत्तम पुरुष एकवचन। **उक्तवान्** = वच् + क्तवतु प्रत्यय। **आसादित** = आ + सद् + णिच् + क्त।

शब्दार्थः– उपचारैः = उपायों से। **संवर्ध्यमानः** = बड़ा होकर। **सञ्जातपक्षः** = उत्पन्न पंखों वाला। **उत्तरां ककुभम्** = उत्तर दिशा को। **अनभ्यस्तगमनतया** = चलने का अभ्यास न होने के कारण। **स्तोकमेव** = थोड़ा ही। **परुषम्** = कठोर। **निष्प्रत्याश एव** = निराश होकर। **परिज्ञानम्** = ज्ञान। **अवहम्** = उड़ गया। **सरस्तीरतरुनिकुञ्जस्योपरि** = तालाब के किनारे वृक्षों के झाड़ी के ऊपर। **पक्कणाधिपति** = मांसाहारी कबीले का नेता। **आसादितोऽस्मि** = प्राप्त हुआ हूँ।

हिन्दी अनुवाद–और उसके (कपिञ्जल के) जाने पर, हारीत के द्वारा प्रतिदिन आहारादि उपचारों से बढ़ाया गया, पंखों के उग आने पर मुझमें आकाश में उड़ने की सामर्थ्य आ गयी। मुझे चन्द्रापीड की उत्पत्ति का ज्ञान नहीं था। महाश्वेता वहीं पर है। तो वहीं जा कर रुकता हूँ, ऐसा निश्चय करके एकबार सुबह घूमने के लिए निकल कर उत्तर दिशा में जाने लगा। उड़ने का अभ्यास न होने के कारण थोड़ी दूर जाने पर मेरे पंख शिथिल हो गए। इसलिए मैं तालाब के किनारे वृक्ष के ऊपर बैठ गया। तत्पश्चात् मार्ग की थकान के कारण मुझे निद्रा आ गई। बड़ी देर के बाद जब मैं जगा तो अपने को बँधा हुआ पाया

और अपने सामने यम के समान एक कठोर पुरुष को देखा। उसे देखकर निराश होकर पूछा–''भद्र! तुम कौन हो ? अथवा तुमने मुझे क्यों पकड़ा है ?''

प्रश्नाः

1. कैः संवर्ध्यमानः शुकः सञ्जातपक्षः अभवत् ?
2. उत्पन्ने उत्पतनसामर्थ्ये शुकः कुत्र गन्तुम् इच्छति ?
3. मार्गे शुकं कः अग्रहीत् ?
4. 'उत्तरां ककुभम्' इति शब्दस्य तात्पर्यं किम् ?
5. 'अध्वश्रमसुलभविनिद्राम्' शब्दस्य विग्रहं कुरुत।

76. स माम् उक्तवान्– ''महात्मन्! अहं खलु जात्या चाण्डालः। मम खलु स्वामी पक्कणाधिपतिः इतः नातिदूरे कृतावस्थानः। तस्य दुहिता प्रथमे वयसि वर्तते। तस्याः त्वं केनापि दुरात्मना कथितः। तया च कौतुकात् त्वद्ग्रहणाय बहवः मादृशाः समादिष्टाः। तत् अद्य पुण्यैः मया आसादितोऽसि। तदहं तत्पादमूलं त्वां प्रापयामि। बन्धे मोक्षे वा सा प्रभवति'' इति। अहं तु तत् श्रुत्वा चेतस्यकरवम्– ''अहो मे मन्दपुण्यस्य दारुणः कर्मणां विपाकः, येन मया जगत्त्रयनमस्यस्य भगवतः श्वेतकेतोः स्वहस्तसंवर्धितेन भूत्वा, अधुना पक्कणमपि प्रवेष्टव्यम्। चाण्डालैः सह एकत्र स्थातव्यम्। चाण्डालबालजनस्य क्रीडनीयकेन भवितव्यम्। जरन्मातङ्गाङ्नाकरोपनीतैः कवलैः आत्मा पोषणीयः'' इत्येतान्यन्यानि च चेतसा विलपन्तं माम् आदाय स चाण्डालः सर्वपापानाम् आवासभूतम् अतिभयंकरसंनिवेशं पक्कणं प्रविश्य, तस्यै चाण्डालदारिकायै दर्शितवान्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – इत्येतान्यन्यानि = इति + एतानि + अन्यानि। **स्वहस्तसंवर्धितेन** = स्वस्य हस्तः तेन, संवर्धितः तेन (तत्पुरुष)। **जरन्मातङ्गाङ्गनाकरोपनीतैः** = जरन्मातङ्गाङ्गनानां कराभ्याम् उपनीताः कवलाः तैः (तत्पुरुष)। **क्षुत्पिपाशोपशमाय** = क्षुत् च पिपासा च तयोः उपशमाय (द्वितीया तत्पुरुष)। **प्रवेष्टव्यम्** = प्र + विश् + तव्यत्। **आदाय** = आ + दा + ल्यप्। **दर्शितवान्** = दृश् + णिच् + क्तवतु प्रत्यय।

शब्दार्थः– पक्कणाधिपतिः = चाण्डालों की बस्ती का मालिक। **आसादितोऽसि** = पाये गये हो। **प्रापयामि** = पहुँचा देता हूँ। **चेतस्यकरवम्** = मन में विचार किया। **क्रीडनीयकेन** = खिलौना। **जरन्मातङ्गाङ्गनाकरोपनीतैः** = बूढ़ी मातङ्गस्त्रियों के हाथों से लाये गये। **अतिभयंकरसंनिवेशम्** = अति भयंकर स्थान।

हिन्दी अनुवाद– उसने मुझसे कहा – ''महात्मन्! मैं जाति से चाण्डाल हूँ। मेरा स्वामी चांडाल की बस्ती का मालिक समीप में ही रहता है। उसकी कन्या नवयुवती है। उससे किसी दुष्ट ने तुम्हारे विषय में कहा था। उसने तुम्हें पकड़ने के लिए मेरे जैसे अनेक लोगों को आदेश दिया है। आज बड़े पुण्य से मैंने तुम्हें पा लिया है। इसलिए मैं तुम्हें उसके पास पहुँचा दूँगा। तुम्हें बाँधने या छोड़ देने में वही समर्थ है।'' मैंने यह सुनकर विचार किया कि ''मुझ अभागे के कर्मों का ही यह बुरा फल मिल

रहा है, जिससे मैं तीनों लोकों में वन्दनीय भगवान् श्वेतकेतु के हाथों से पाला-पोसा हुआ होकर भी इस समय चाण्डालों की बस्ती में जाऊँगा। चाण्डालों के साथ एक ही जगह रहूँगा। चाण्डाल बालकों का खिलौना बनूँगा। बूढ़ी चाण्डालिनों के हाथों से लाये गये भोजन से अपनी आत्मा का पालन करूँगा।'' इस प्रकार से तथा अन्य अनेक प्रकार से विलाप करने वाले मुझको लेकर उस चाण्डाल ने सभी प्रकार के पापों की निवास भूमि अत्यन्त भयंकर चाण्डालों की बस्ती में आकर उस चाण्डाल कन्या को दिखाया।

प्रश्नाः

1. 'अहं खलु जात्या चाण्डालः' इति कः उक्तवान् ?
2. चाण्डालः शुकं किम् अकथयत् ?
3. 'बन्धे मोक्षे वा सा प्रभवति'–अत्र सा का ?
4. केन चाण्डालबालजनस्य क्रीडनीयकेन भवितव्यम् ?
5. 'सर्वपापानाम् आवासभूतम्' इति विशेषणम् कस्य पदस्य अस्ति ?

77. सा तु प्रहृष्टवदना स्वकरयुगेन आदाय माम् 'आः पुत्रक! प्राप्तोऽसि इत्यभिदधानैव मनाक् उद्घाटितद्वारे दारुपञ्जरे माम् आक्षिप्य अर्गलितद्वारा 'अत्रैव निर्वृतः तिष्ठ' इत्यभिधाय तूष्णीम् अस्थात्। अहं तु तथा संरुद्धः चेतस्यकरवम्–'अहो महासंकटे पतितोऽस्मि। सर्व एवायम् अनियतेन्द्रियत्वस्य दोषः। तत् सर्वेन्द्रियाण्येव नियमयामि' इति निश्चित्य मौनग्रहणम् अकार्षम्। अथ च तया स्वपाणिनोपनीतेषु फलपानीयादिषु क्षुत्पिपासोपशमाय अशनक्रियाम् अङ्गीकृतवान् अस्मि।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– स्वकरयुगेन = स्वस्य करयुगम् तेन। **इत्याभिधानैव** = इति + अभिधाना + एव। **उद्घाटितद्वारे** = उद्घाटितं द्वारं यस्य तस्मिन्। **चेतस्यकरवम्** = चेतसि + अकरवम्।

शब्दार्थः– प्रहृष्टवदना = प्रसन्न मुखवाली। **स्वकरयुगेन** = अपने दोनों हाथों से। **अनियतेन्द्रियत्वस्य** = इन्द्रियों पर नियन्त्रण न करने से। **क्षुत्पिपासोपशमाय** = भूख-प्यास मिटाने के लिए। **इत्यभिदधानैव** = इस प्रकार कहती हुई। **मनाक्** = थोड़ा-सा। **अर्गलितद्वारा** = दरवाजा बन्द कर देने वाली। **चेतस्यकरवम्** = मन में विचार किया। **नियमयामि** = संयमित करूँ। **अकार्षम्** = किया। **अशनक्रियाम्** = भोजन करना।

हिन्दी अनुवाद– उसने प्रसन्न मुख से अपने दोनों हाथों में मुझे लेकर 'अरे पुत्र! तुम मिल गए, ऐसा कहते हुए थोड़ा-सा द्वार खोलकर लकड़ी के पिंजड़े में मुझे डालकर द्वार बन्द करके 'यहीं निश्चिन्त होकर रहो' ऐसा कहकर चुप हो गयी। मैंने इस प्रकार बन्द हो जाने पर विचार किया– 'अरे! मैं बड़े संकट में पड़ गया। यह सब मेरी अनियत इन्द्रियों का दोष है। अतः समस्त इन्द्रियों को नियन्त्रित करूँगा' – ऐसा निश्चय करके मौन धारण कर लिया। तदनन्तर उसके हाथों से लाए गए फल-पानी आदि से भूख-प्यास दूर करने के लिए मैंने भोजन करना स्वीकार किया।

प्रश्नाः

1. प्रहृष्टवदना का शुकम् अग्रहीत् ?
2. चाण्डालकन्या शुकं कुत्र अक्षिपत् ?
3. 'अत्रैव निर्वृतः तिष्ठ' इति का अवदत् ?
4. कः महासङ्कटे पतितोऽस्ति ?
5. कया उपनीतेषु फलपानीयादिषु शुकः अशनक्रियाम् अङ्गीकृतवान् ?

78. एवम् अतिक्रामति काले, एकदा प्रयातायां यामिन्याम् उन्मीलितलोचनः अद्राक्षमस्मिन् कनकपञ्जरे स्थितम् आत्मानम्। सापि चाण्डालदारिका देवेनापि दृष्टैव। सकलमेव च तं पक्कणम् अमरपुरसदृशम् आलोक्य, किमेतदिति प्रष्टुकामं माम् आदाय झटिति देवपादमूलम् आयाता। तत् केयम् ? किमर्थं वाहं बद्धः ? किमर्थम् इह आनीतः ? इत्यत्र अहमपि देव इव अनपगतकुतूहल एव'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– उन्मीलितलोचनः = उन्मीलिते लोचने येन सः। **अनपगतकुतूहलः** = न अपगतः कुतूहलः यस्मात् सः। **किमेतदिति** = किम् + एतत् + इति। **आदाय** = आ + दा + ल्यप् प्रत्यय।

शब्दार्थः– अतिक्रामति काले = समय बीतने पर। **उन्मीलितलोचनः** = आँखें खोलकर। **प्रष्टुकामम्** = पूछने की इच्छा वाले। **अनपगतकुतूहलः** = जिसका कुतूहल दूर न हुआ हो। **कनकपञ्जरे** = सोने के पिंजड़े में।

हिन्दी अनुवाद – इस प्रकार कुछ समय बीतने पर एक बार (रात्रि के बीत जाने पर) प्रातःकाल आँखें खोलने पर स्वयं को इस सोने के पिंजड़े में देखा। वह चाण्डालकन्या भी महाराज द्वारा देखी गयी है। चाण्डालों की उस सारी बस्ती को देवताओं की नगरी के समान देखकर यह क्या है ? यह पूछना चाहता था कि वह तुरन्त मुझे लेकर आपके पास आ गई। इसलिए वह कौन है ? किसलिए मुझे बाँधा है ? यहाँ क्यों ले आई है ? इस विषय में आप ही के समान मेरी भी उत्सुकता दूर नहीं हुई है।

प्रश्नाः

1. एकदा शुकः उन्मीलितलोचनः आत्मानं कुत्र अद्राक्षीत् ?
2. कनकपञ्जरे शुकम् आदाय का देवपादमूलम् आयाता ?
3. कनकपञ्जरे आत्मानं स्थितं कः दृष्टवान् ?
4. चाण्डालदारिका केन दृष्टैव ?
5. देव इव अनपगतकुतूहल कः ?

79. राजा तु तत् श्रुत्वा, समुपजाताभ्यधिककुतूहलः तदाह्वानाय प्रतीहारीम् आदिदेश। न चिरादेव प्रविश्य सा पुरस्तात् ऊर्ध्वस्थितैव बभाषे–''भुवनभूषण, रोहिणीपते, कादम्बरीलोचनानन्दकर, सर्वस्त्वयास्य दुर्मतेः आत्मनश्च पूर्वजन्मवृत्तान्तः श्रुत एव। अहमस्य दुरात्मनः जननी। तथा पितुः आज्ञाम् उल्लङ्घ्य वधूसमीपं प्रस्थितम् एनम्

दिव्येन चक्षुषा दृष्ट्वा अस्य पित्रा अहम् आदिष्टास्मि। अयं ते तनयः कदाचित् अस्या अपि तिर्यग्जातेः अधस्तात् पतति। तद्यावदिदं कर्म न परिसमाप्यते, तावदेनं मर्त्यलोके एव बद्ध्वा धारय। तदस्य विनयायेदं विनिर्मितं मया। सर्वमधुना तत्कर्म परिसमाप्तम्। शापावसानसमयो वर्तते। शापावसाने च युवयोः सममेव सुखेन भवितव्यम् इति त्वत्समीपमानीतो मयायम्। अत्रापि यच्चाण्डालजातिः ख्यापिता तत् लोकसंपर्कपरिहाराय। तत् अनुभवतां सम्प्रति द्वावपि सममेव जन्मजरादिदुःखबहुले तनू परित्यज्य इष्टजनसमागमसुखम्'' इत्यभिदधानैव सा गगनम् उदपतत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– भुवनभूषण = भुवनानां भूषणः तत्सम्बुद्धौ। **कादम्बरीलोचनानन्दकर** = कादम्बर्याः लोचनयोः आनन्दकरः तत्सम्बुद्धौ। **सर्वस्त्वयास्य** = सर्वः + त्वया + अस्य। **पूर्वजन्मवृत्तान्तः** = पूर्वजन्मनः वृत्तान्तः (षष्ठी तत्पुरुष)। **शापावसानसमयः** = शापस्य अवसानसमयः (षष्ठी तत्पुरुष)। **भवितव्यम्** = भू + तव्यत् प्रत्यय। **ख्यापिता** = चक्षिङ् (ख्या) + णिच् + क्त प्रत्यय।

शब्दार्थः– पुरस्तात् = सामने। **ऊर्ध्वस्थिता** = ऊपर ही खड़े। **अभिदधाना** = कहती हुई। **दुर्मतेः** = दुर्बुद्धि का। **तनयः** = पुत्र। **परित्यज्य** = परित्याग करके। **समुपजाताभ्यधिककुतूहलः** = और अधिक कुतूहल उत्पन्न होने से। **आदिदेश** = आदेश दिया। **उल्लङ्घ्य** = उल्लंघन कर। **आदिष्टास्मि** = आदेशित हूँ। **तिर्यग्जातेः** = पक्षी की योनि से। **अधस्तात्** = नीचे। **शापावसानसमयः** = शाप समाप्ति का समय। **वर्तते** = है। **ख्यापिता** = बताई। **लोकसम्पर्कपरिहाराय** = लोगों के सम्पर्क से बचने के लिए। **इत्यभिदधानैव** = ऐसा कहते हुए ही। **उदपतत्** = उड़ गई।

हिन्दी अनुवाद– राजा ने यह सुनकर और भी अधिक उत्सुक होकर उसे बुलाने के लिए प्रतीहारी को आदेश दिया। वह शीघ्र ही आकर सामने ऊपर ही स्थित होकर बोली – ''संसार की शोभा, रोहिणी के स्वामी, कादम्बरी को आनन्दित करने वाले! आपने इस दुष्ट और अपने पूर्वजन्म का वृत्तान्त सुना ही है। मैं इस दुष्ट की माता हूँ। इसके पिता ने अपने दिव्य दृष्टि से इसको पिता की आज्ञा का उल्लंघन करके बहू के पास जाते देखकर मुझे आदेश दिया कि तुम्हारा यह पुत्र कहीं पक्षी योनि से भी नीचे न गिर पड़े, इसलिये जब तक यह अनुष्ठान समाप्त नहीं होता तब तक तुम इसे मृत्यु लोक में बाँधकर रखो। अतः मैंने इसे शिक्षा देने के लिये ही यह सब किया। अब वह कर्म पूरा हो चुका है। शाप का समय समाप्त हो गया है। शाप के अन्त हो जाने पर तुम दोनों साथ ही सुखी होगे। इसीलिए मैं इसको तुम्हारे पास ले आई हूँ। यहाँ मैंने लोगों के सम्पर्क से दूर रहने के लिए अपनी जाति चाण्डाल बतायी थी। इसलिये अब तुम दोनों साथ ही जन्म और बुढ़ापे आदि के दुःख से भरे शरीर का परित्याग करके प्रियजनों के समागम का सुख भोगो।'' ऐसा कहती हुई वह आकाश में उड़ गयी।

प्रश्नाः

1. गद्यांशोऽयं कस्माद् ग्रन्थात् समुद्धृतः ?
2. समुपजाताभ्यधिककुतूहलः कः आसीत् ?
3. चाण्डालकन्या का आसीत् ?
4. का गगनम् उद्पतत् ?
5. द्वावपि सममेव–अत्र 'द्वावपि' इत्यस्य कः आशयः ?

80. अथ राज्ञः तद्वचनम् आकर्ण्य, संस्मृतजन्मान्तरस्य मकरकेतुः जीवितापहरणाय पदं चकार। तामेव कादम्बरीमभिध्यायतः विमुक्तसर्वान्यक्रियस्य सद्यः काष्ठीभूतम् तस्य शरीरम् परां कोटिमधिरूढः कामानलो ददाह। एवमेव महाश्वेतोत्कण्ठया राज्ञा तुल्यावस्थस्य पुण्डरीकात्मनो वैशम्पायनस्य च।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– संस्मृतजन्मान्तरस्य = संस्मृतं जन्मान्तरं येन तस्य। **जीवितापहरणाय** = जीवित + अप + हृ + ल्युट् + चतुर्थी एकवचन। **महाश्वेतोत्कण्ठया** = महाश्वेता + उत्कण्ठया। **विमुक्तसर्वान्यक्रियस्य** = विमुक्ताः सर्वाः अन्याः क्रियाः येन तस्य (बहुव्रीहि)।

शब्दार्थः – संस्मृतजन्मान्तरस्य = पूर्वजन्म का स्मरण करने वाले। **मकरकेतुः** = कामदेव। **काष्ठीभूतम्** = लकड़ी-सा हो गए। **आकर्ण्य** = सुनकर, **कादम्बरीमभिध्यायतः** = कादम्बरी के ध्यान में लगे।

हिन्दी अनुवाद– इसके पश्चात् उसके वचनों को सुनकर, पूर्वजन्म का वृत्तान्त याद आ जाने वाले उस राजा के प्राणों का हरण करने के लिए कामदेव आ पहुँचा। कादम्बरी के ध्यान में लगे तथा सभी क्रियाओं से रहित लकड़ी-सा हो गये शरीर को कामाग्नि जलाने लगी। इसी प्रकार राजा के ही समान अवस्था वाले महाश्वेता के प्रति उत्कंठा से पुण्डरीक के रूप वैशम्पायन का शरीर भी कामाग्नि में जलने लगा।

प्रश्नाः

1. संस्मृतजन्मान्तरः कः ?
2. काम् अभिध्यायतः शूद्रकस्य शरीरं कामानलो ददाह ?
3. महाश्वेतोत्कण्ठया कस्य शरीरं दग्धम् ?
4. 'मकरकेतुः' इति पदस्य कः अर्थः ?

81. तस्मिन्नेव चान्तरे दक्षिणानिलं प्रवर्तयन् मन्मथोल्लासकारी परावर्तत सुरभिमासः। तेन च पर्याकुलितहृदया कादम्बरी सायाह्ने स्नात्वा निवर्तितकामदेवपूजा चन्द्रापीडं सुरभिशीतलैः स्नापयित्वाम्भोभिः विलिप्य हरिचन्दनेन पुष्पैः अलंकृत्य भावार्द्रया दृशा सुचिरम् आलोक्य निर्भरं कण्ठे जग्राह। तेन कादम्बरीकण्ठग्रहेण चन्द्रापीडस्य कण्ठस्थानं पुनर्जीवितं प्रत्यपद्यत। सद्य एव उच्छ्वसितं हृदयम्। उन्मीलच्चक्षुः एवं च सुप्तप्रतिबुद्ध इव प्रत्यापन्नसर्वाङ्गचेष्टः चन्द्रापीडः कादम्बरीं दोर्भ्याम् आबध्नन् अवादीत्–''भीरु! परित्यज्यतां भयम्।''

व्याकरणात्मक टिप्पणी– पर्याकुलितहृदया = पर्याकुलितं हृदयं यस्याः सा। **मन्मथोल्लासकारी** = मन्मथ + उल्लासकारी, गुण सन्धि। **कादम्बरीकण्ठग्रहेण** = कादम्बर्याः कण्ठस्य ग्रहेण (षष्ठी तत्पुरुष)। **प्रवर्तयन्** = प्र + वृत् + णिच् + शतृ प्रत्यय। **विलिप्य** = वि + लिप् + ल्यप् प्रत्यय।

शब्दार्थः– दक्षिणानिलम् = दक्षिणी वायु को। **प्रवर्तयन्** = प्रेरित करता हुआ। **पर्याकुलितहृदया** = बेचैन हृदय वाली। **निर्भरम्** = भाववेश के साथ। **प्रत्यापन्नसर्वांगचेष्टः** = सभी अंगों की चेष्टा को प्राप्त कर लेने वाला। **निवर्तितकामदेवपूजा** = कामदेव की पूजा सम्पन्न करके। **स्नापयित्वा** = स्नान करके। **भावार्द्रया** = भावपूर्ण। **दृशा** = दृष्टि से। **उच्छ्वासितम्** = श्वास लेने लगा। **दोर्भ्याम्** = भुजाओं से। **आबध्नन्** = बाँधता हुआ। **अवादीत्** = बोला।

हिन्दी अनुवाद– और उसी बीच कामदेव को आनन्दित करने वाला चैत्रमास दक्षिणी वायु (मलयानिल) को चलाता हुआ आ गया। उससे बेचैन हृदय वाली कादम्बरी ने सांयकाल स्नान किया, कामदेव की पूजा की और चन्द्रापीड को सुगन्धित तथा शीतल जल से नहलाकर मलयगिरि चन्दन का लेप किया तथा फूलों से सजाकर भावपूर्ण नेत्रों से देर तक देखकर भावावेश में उसे गले लगा लिया। कादम्बरी के गले लगाने से चन्द्रापीड के शरीर में प्राण का संचार हो गया। शीघ्र ही शरीर में साँसें आने-जाने लगीं और सोकर जागे हुए के समान उसके सभी अंगों में चेष्टा होने लगी और उसने अपनी दोनों भुजाओं से कादम्बरी को जकड़ते हुए कहा—''भीरु! भय त्याग दो।''

प्रश्नाः

1. दक्षिणानिलं प्रवर्तयन् कः परावर्तत ?
2. सुरभिमासः कीदृशः अस्ति ?
3. 'मन्मथ' (इति) शब्दस्य पर्यायं लिखतु ?
4. कस्याः कण्ठग्रहेण चन्द्रापीडस्य कण्ठस्थानं पुनर्जीवितम् अभवत् ?
5. ''भीरु! परित्यज्यतां भयम्''– इति कः उक्तवान् ?

82. प्रत्युज्जीवितोऽस्मि तवैव अमुना कण्ठग्रहेण। त्वं खलु अमृतसम्भवात् अप्सरसां कुलात् उत्पन्ना। अद्य स मे व्यपगतः शापः। परित्यक्ता सा शूद्रकाख्या तनुः। अपि च प्रियसख्या अपि ते महाश्वेतायाः प्रियतमो मयैव सह विगतशापः संवृत्तः'' अभिदधत्येव चन्द्रापीडशरीरान्तरितवपुषि चन्द्रमसि, तथैव कण्ठेन एकावलीम् धारयन् अम्बरतलात् अवतरन् अदृश्यत कपिञ्जलकरावलम्बी समुत्सृष्टशुकशरीरः पुण्डरीकः। चन्द्रापीडस्तु तं कण्ठे गृहीत्वा अब्रवीत्– ''सखे पुण्डरीक, प्राग्जन्मसम्बन्धात् जामातासि। अनन्तरजन्माहितेन सौहृदेन मया सह वर्तितव्यं भवता'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– प्रत्युज्जीवितोऽस्मि = प्रति + उत् + जीवितः + अस्मि। **व्यपगतः** = वि + अपगतः। **विगतशापः** = विगतः शापः यस्य सः (बहुव्रीहि)। **कपिञ्जलकरावलम्बी** = कपिञ्जलस्य करावलम्बी (षष्ठी तत्पुरुष)। **वर्तितव्यम्** = वृत् + तव्यत् प्रत्यय। **अवतरन्** = अव + तृ + शतृ प्रत्यय।

शब्दार्थः– व्यपगतः = दूर हो गया। **प्रत्युज्जीवितोऽस्मि** = पुनर्जीवित हुआ हूँ। **अमृतसंभवात्** = अमृत से उत्पन्न होने से। **विगतशापः** = विमुक्त शाप वाला। **अभिदधत्येव** = कहते ही। **एकावलीम्** = माला को। **धारयन्** = धारण करता हुआ। **अवतरन्** = उतरता हुआ। **प्राग्जन्मसम्बन्धात्** = पूर्व जन्म के सम्बन्ध से। **जामातासि** = जामाता हो। **सौहृदेन** = मित्रता से। **वर्तितव्यम्** = व्यवहार करना चाहिए।

हिन्दी अनुवाद – तुम्हारे इस गले लगाने से मैं जीवित हो गया। तुम अमृत से उत्पन्न अप्सराओं के कुल से उत्पन्न हो। आज मेरा शाप दूर हो गया। मैंने शूद्रक का शरीर छोड़ दिया। तुम्हारी प्रिय सखी महाश्वेता का प्रियतम भी मेरे ही साथ शाप से मुक्त हो गया है। चन्द्रापीड के शरीर में छिपे हुए चन्द्रमा के इस प्रकार कहते ही शुक का शरीर त्याग देने वाले, कपिंजल का हाथ पकड़े, गले में एकावली धारण किए पुण्डरीक आकाश से उतरता हुआ दिखाई दिया। चन्द्रापीड ने उसे गले लगाकर कहा– "मित्र पुण्डरीक! पूर्वजन्म के सम्बन्ध से तुम मेरे दामाद हो और दूसरे जन्म में होने वाली मित्रता के कारण अब मित्र बनकर रहो।"

प्रश्नाः

1. कस्याः कण्ठग्रहेण चन्द्रापीडः पुनर्जीवितः अभवत् ?
2. कः शूद्रकस्य तनुः परित्यक्तवान् ?
3. कौ विगतशापौ अभवताम् ?
4. पुण्डरीकः कस्य शरीरस्य परित्यागम् अकरोत् ?
5. कः प्राग्जन्मसंबन्धात् जामाता आसीत् ?

83. अथ मदलेखा धावमाना निर्गत्य मृत्युञ्जयजपव्यग्रस्य तारापीडस्य विलासवत्याश्च पादयोः पतित्वा "देव! दिष्ट्या वर्धसे – प्रत्युज्जीवितः युवराजः समं वैशम्पायनेन" इत्युच्चैर्जगाद। राजा तु तत् श्रुत्वा हर्षपरवशः विलासवत्या शुकनासेन च सह तत्रैव आगच्छत्। चन्द्रापीडस्तु पितरम् आलोक्य चरणयोः अपतत्। स तु सत्वरोपसृतः तथा प्रणतम् उन्नमय्य तं तारापीडोऽभ्यधात् – "पुत्र यद्यपि पिता अहं तव शापदोषात् सञ्जातः, तथापि जगद्वन्दनीयः लोकपालः त्वम्। मय्यपि नमस्योंऽशः सोऽपि मया त्वय्येव संक्रामितः। तत् उभयथापि त्वमेव नमस्कार्यः" इत्युक्त्वा प्रतीपमस्य पादयोः अपतत्। विलासवती तु तं पुनः शिरसि पुनर्ललाटे पुनश्च कपोलयोः चुम्बित्वा गाढतरम् आलिलिङ्ग। उन्मुक्तश्च मात्रा उपसृत्य पुनः पुनः कृतनमस्कारः शुकनासं प्रणनाम। आशीस्सहस्राभिर्वर्धितश्च तेन आत्मनोपसृत्य यथानुक्रमं पित्रोः शुकनासस्य मनोरमायाश्च 'एष वो वैशम्पायनः' इति पुण्डरीकम् अदर्शयत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– प्रत्युज्जीवितः = प्रति + उत् + जीवितः। **इत्युक्त्वा** = इति + उक्त्वा। **पुनर्ललाटे** = पुनः + ललाटे। **मृत्युञ्जयजपव्यग्रस्य** = मृत्युञ्जस्य जपः तेन व्यग्रः तस्य (षष्ठी तत्पुरुष)। **कृतनमस्कारः** = कृतः नमस्कारः येन सः (बहुव्रीहिः)। **जगाद** = गद् + लिट् प्रथम

पुरुष एकवचन। **अपतत्** = पत् + लङ् प्रथम पुरुष एकवचन। **अदर्शयत्** = दृश् + णिच् + लङ् प्रथम पुरुष एकवचन। **अब्रवीत्** = ब्रूञ् + लुङ् प्रथम पुरुष एकवचन। **निवारणीया** = नि + वृ + णिच् + अनीयर् + टाप्।

शब्दार्थः– निर्गत्य = निकल कर। **दिष्ट्या** = भाग्य से। **सत्वरोपसृतः** = शीघ्र ही समीप आकर। **चुम्बित्वा** = चूमकर। **आलिलिङ्ग** = आलिंगन किया। **उन्नमय्य** = ऊपर उठाकर। **प्रतीपम्** = उल्टे। **उपसृत्य** = समीप जाकर। **आशीस्सहस्राभिवर्धितश्च** = हजारों आशीर्वाद से वृद्धि को प्राप्त होने वाले। **मृत्युञ्जयजपव्याग्रस्य** = मृत्युञ्जय जप में व्यग्र। **आलोक्य** = देखकर।

हिन्दी अनुवाद– इसके पश्चात् मदलेखा दौड़ती हुई वहाँ से निकलकर मृत्युञ्जय मंत्र जपने में लगे हुए तारापीड और विलासवती के पैरों पर गिर कर जोर से बोली– ''स्वामी, भाग्य से युवराज चन्द्रापीड वैशम्पायन के साथ ही फिर जीवित हो उठे हैं।'' यह सुनकर राजा हर्ष से व्यग्र हो उठे और विलासवती तथा शुकनास के साथ वहाँ आये। चन्द्रापीड पिता को देखकर उनके पैरों पर गिर पड़ा, किन्तु तारापीड शीघ्रता से हट कर झुकते हुए चन्द्रापीड को उठाकर बोले– ''पुत्र! यद्यपि शापदोष से मैं तुम्हारा पिता बना हूँ, किन्तु तुम जगद्वन्दनीय लोकपाल हो, मुझमें जो वन्दनीय अंश था उसे भी तुम्हीं में आरोपित कर दिया है। इस प्रकार से दोनों तरह से तुम्हीं प्रणाम के योग्य हो।'' ऐसा कहकर उलटे उसके ही पैरों पर गिर पड़े। विलासवती ने बार-बार सिर, ललाट और कपोल का चुम्बन करके चन्द्रापीड को अत्यन्त प्रेम के साथ भुजाओं में बाँध लिया। माता से छूटकर शुकनास के पास जाकर उसने उन्हें बार-बार प्रणाम किया। हजारों आशीर्वादों से वृद्धि को प्राप्त होने वाले चन्द्रापीड ने स्वयं माता-पिता, शुकनास और मनोरमा के पास जाकर 'यही तुम लोगों का वैशम्पायन है'– ऐसा कहकर पुण्डरीक को दिखाया।

प्रश्नाः

1. का तारापीडस्य पादयोः पतित्वा अवदत् ?
2. मृत्युञ्जयजपव्यग्रः कः ?
3. मदलेखा तारापीडं किं सूचितवती ?
4. 'पुत्र यद्यपि पिता अहं तव शापदोषात् संजातः तथापि जगद्वन्दनीयः लोकपालः त्वम्'–इति कः कं उक्तवान्?
5. का चन्द्रापीडं गाढतरम् आलिलिङ्ग ?

84. तस्मिन्नेव च प्रस्तावे समुपसृत्य कपिञ्जलः शुकनासम् अब्रवीत्–एवं संदिष्टम् आर्यस्य भगवता श्वेतकेतुना ''अयं खलु पुण्डरीकः संवर्धित एव केवलं मया, आत्मजः पुनस्तव। अस्यापि भवत्स्वेव लग्नः स्नेहः। तत् वैशम्पायन एवायम् इत्यवगत्य अविनयेभ्यः निवारणीयः। परोऽयम् इति कृत्वा नोपेक्षणीयः'' इति। शुकनासश्च तथेति प्रत्यग्रहीत्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– तस्मिन्नेव = तस्मिन् + एव। **परोऽयम्** = परः + अयम्। **नोपेक्षणीयः** = न + उपेक्षणीयः। **अब्रवीत्** = ब्रूञ् + लुङ् प्रथम पुरुष, एकवचन। **समुपसृत्य** = सम् + उप + सृ + ल्यप् प्रत्यय। **इत्यवगत्य** = इति + अव + गम् + ल्यप्।

शब्दार्थः– तस्मिन्नेव प्रस्तावे = उस बातचीत के समय ही। **संदिष्टम्** = सन्देश दिया है। **संवर्धितः** = बड़ा किया है। **परोऽयम्** = यह दूसरा है। **प्रत्यग्रहीत्** = स्वीकार किया। **समुपसृत्य** = पास जाकर। **भवत्स्वेव** = आप लोगों में ही। **अविनयेभ्यः** = उद्दण्डतापूर्ण कार्यों से। **निवारणीयः** = रोकना चाहिये। **नोपेक्षणीयः** = उपेक्षा नहीं करनी चाहिये।

हिन्दी अनुवाद– उसी वार्तालाप के समय कपिञ्जल ने शुकनास के पास आकर कहा कि भगवान् श्वेतकेतु ने आपको सन्देश दिया है कि पुण्डरीक को तो मैंने केवल पाल-पोस कर बड़ा किया है, पुत्र तो यह आपका ही है। इसका भी आप लोगों के प्रति ही स्नेह है। अतः वैशम्पायन ही है, ऐसा जानकर इसे उद्दण्डतापूर्ण कार्यों से सर्वथा रोकियेगा। यह दूसरा है–ऐसा जानकर इसकी उपेक्षा न कीजियेगा। शुकनास ने 'ऐसा ही होगा' कहकर स्वीकार किया।

प्रश्नाः

1. कः शुकनासम् अब्रवीत् ?
2. केन संदिष्टः आर्यशुकनासः ?
3. किं संदिष्टम् श्वेतकेतुना ?
4. 'परोऽयम् इति कृत्वा नोपेक्षणीयः' इस रेखांकित अंश का हिन्दी अनुवाद कीजिए।
5. पुण्डरीकः कस्य पुत्रः आसीत् ?

85. अथ केयूरकेण विदितवृत्तान्तौ चित्ररथहंसौ मदिरागौरीभ्यां समं तत्रैवाजग्मतुः। आगतयोश्च तयोः तारापीडशुकनासाभ्यां सम्बन्धकोचितकथया सहस्रगुण इव महोत्सवः प्रावर्तत। अथ ते सर्वेऽपि हेमकूटं गत्वा दम्पत्योः उभयोरपि विवाहक्रियाः यथाविधि निरवर्तयन्। चित्ररथः कादम्बर्या सह समग्रमेव स्वं राज्यं चन्द्रापीडाय न्यवेदयत्। पुण्डरीकायापि समं महाश्वेतया निजपदं हंसः। कादम्बरी तु हृदयवल्लभलाभेऽपि विषण्णमुखी चन्द्रापीडम् अप्राक्षीत्–''आर्यपुत्र! सर्वे खलु वयं मृताः प्रत्युज्जीविताः पुनः संघटिताश्च। सा पुनः वराकी पत्रलेखा अस्माकं मध्ये न दृश्यते। न विद्मः किम् तस्याः वृत्तम् ?'' इति। स तु प्रत्यवादीत्– ''सा हि रोहिणी शप्तं माम् उपश्रुत्य 'कथं त्वम् एकाकी मर्त्यलोकनिवासदुःखम् अनुभवसि ?' इत्यभिधाय निवार्यमाणापि मया मत्परिचर्यायै मर्त्यलोके जन्माग्रहीत्। इतश्च जन्मान्तरं गच्छता मया पुनः आत्मलोकं विसर्जिता इति। तत्र पुनः तां द्रक्ष्यसि'' इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– चित्ररथहंसौ = चित्ररथः च हंसः च, द्वन्द्व समास। **तत्रैवाजग्मतुः** = तत्र + एव + आजग्मतुः। **आजग्मतुः** = आ + गम् + लिट् प्रथमपुरुष, द्विवचन। **न्यवदेयत्** = नि + विद् + णिचि लुङ् प्रथमपुरुष एकवचन। **उपश्रुत्य** = उप + श्रु + ल्यप् प्रत्यय। **विसर्जिता** = वि + सृज् + णिच् + क्त + टाप्। **द्रक्ष्यसि** = दृश + लृट्, मध्यमपुरुष एकवचन।

शब्दार्थः – आगतयोश्च तयोः = उन दोनों के आने पर। **प्रावर्तत** = हुआ। **निरवर्तयन्** = सम्पन्न किया। **विषण्णमुखी** = उदास मुख वाली। **अप्राक्षीत्** = पूछा। **वराकी** = बेचारी। **विदितवृत्तन्तौ** = समाचार जानने वाले। **जग्मतुः** = गये। **प्रावर्तत** = प्रारम्भ हो गया। **हृदयवल्लभलाभेऽपि** = प्राणप्रिय के प्राप्त होने पर भी। **प्रत्युज्जीविता** = पुनर्जीवित। **प्रत्यवादीत्** = उत्तर दिया। **उपश्रुत्य** = सुनकर। **निवार्यमाणापि** = मना करने पर भी। **मत्परिचर्यायै** = मेरी सेवा के लिए।

हिन्दी अनुवाद– इसके पश्चात् केयूरक द्वारा समाचार पाकर चित्ररथ और हंस, मदिरा तथा गौरी के साथ वहीं आये। उन दोनों के आने पर तारापीड और शुकनास के साथ विवाह सम्बन्ध की बातचीत से हजार गुना महोत्सव हुआ। उन सभी ने हेमकूट पर जाकर दोनों दम्पतियों का विधिपूर्वक विवाह सम्पन्न कराया। चित्ररथ ने कादम्बरी के साथ अपना सारा राज्य चन्द्रापीड को दे दिया। हंस ने भी महाश्वेता के साथ पुण्डरीक को अपना देश दे दिया। कादम्बरी अपने प्राणप्रिय को पाकर भी उदास मुख होकर चन्द्रापीड से बोली– ''आर्यपुत्र! हम सभी लोग मरे, फिर जीवित हुए और मिले भी, किन्तु वह बेचारी पत्रलेखा हम लोगों के बीच नहीं दिखाई देती, उसका क्या हाल है ? नहीं जानती हूँ।'' उसने कहा– ''वह रोहिणी थी। मुझे शाप में पड़ा सुनकर 'तुम कैसे अकेले मृत्युलोक के दुःखों को भोगोगे'– ऐसा कहकर मेरे मना करने पर भी मेरी सेवा के लिए मृत्युलोक में उसने जन्म लिया था। इस दूसरे जन्म में आने पर मैंने फिर उसे अपने लोक को भेज दिया है। वहाँ तुम उसे देखोगी।''

प्रश्नाः

1. चित्ररथः कः आसीत् ?
2. चित्ररथस्य भार्या का आसीत् ?
3. हंसः कः आसीत् ?
4. केन विदितवृत्तान्तौ चित्ररथहंसौ मदिरागौरीभ्यां समम् आजग्मतुः ?
5. पत्रलेखा का आसीत् ?

86. एवं च चन्द्रापीडः तत्र दशरात्रं स्थित्वा परितुष्टहृदयाभ्यां श्वसुराभ्यां विसर्जितः पितुः पादमूलम् आजगाम। आगत्य च पुण्डरीके समारोपितराज्यभारः, कदाचित् उज्जयिन्याम्, कदाचित् हेमकूटे, कदाचित् चन्द्रलोके, कदाचित् अपरेष्वपि रम्यतरेषु स्थानेषु निवसन् सुखम् अनुबभूव। एवं चन्द्रापीडः, कादम्बरी, पुण्डरीकः, महाश्वेता, इत्येते सर्वेऽपि परस्परावियोगेन परां कोटिम् आनन्दस्य अध्यगच्छन्।

व्याकरणात्मक टिप्पणी– दशरात्रम् = दशानां रात्रीणां समाहारः (द्विगु समास)। **समारोपितराज्यभारः** = समारोपितः राज्यस्य भारः येन सः। **आजगाम** = आ + गम् + लिट् प्रथमपुरुष, एकवचन। **आगत्य** = आ + गम् + ल्यप् प्रत्यय। **अध्यगच्छन्** = अधि + गम् + लङ् प्रथमपुरुष बहुवचन।

शब्दार्थः– दशरात्रम् = दस रात तक। **परितुष्टहृदयाभ्याम्** = सन्तुष्ट हृदय वाले। **विसर्जितः** = विदा होकर। **अध्यगच्छन्** = पहुँच गये। **श्वसुराभ्यां** = श्वसुरों के द्वारा। **समारोपितराज्यभारः** = राज्य–दायित्व अर्पित करके। **कदाचित्** = कभी। **परस्पराविियोगेन** = आपस में एक-दूसरे के मिलने से।

हिन्दी अनुवाद– इस प्रकार चन्द्रापीड वहाँ दस रात रहकर सन्तुष्ट हृदय वाले सास-ससुर से विदा होकर पिता के पास आ गया। आकर (वह) पुण्डरीक के ऊपर राज्यभार सौंपकर कभी उज्जयिनी, कभी हेमकूट, कभी चन्द्रलोक, कभी दूसरे रमणीय स्थानों में निवास करता हुआ सुख भोगने लगा। इस प्रकार चन्द्रापीड और कादम्बरी तथा पुण्डरीक और महाश्वेता ये सभी वियोग रहित होकर आनन्द की चरम सीमा पर पहुँच गये।

प्रश्नाः

1. चन्द्रापीडः कति रात्रीः अतिष्ठत् ?
2. चन्द्रापीडः श्वसुराभ्यां विसर्जितः कुत्र गतः ?
3. चन्द्रापीडः कस्मिन् समारोपितराज्यभारः सुखम् अनुबभूव ?
4. 'अपरेष्वपि' इत्यस्य सन्धिविच्छेदं कुरुत ?
5. के परस्पराविियोगेन परां कोटिम् आनन्दस्य अध्यगच्छन् ?

अनन्ताचार्यनामासौ नल्लानभिजनः सुधीः।
जग्रन्थ बाणभट्टस्य वाक्यैरेव कथामिमाम्।।

इति चन्द्रापीडकथा सम्पूर्णा।

अभ्यासकार्यम्

बहुविकल्पीय प्रश्न

नोट– सही विकल्प का चयन कीजिए।

1. कादम्बरी समुत्थाय कां स्नेहनिर्भरं कण्ठे जग्राह ?
   (क) तरलिकाम् (ख) महाश्वेताम् (ग) पत्रलेखाम् (घ) मदिराम्
2. चन्द्रापीडस्य जनकः कः आसीत् ?
   (क) तारापीडः (ख) वैशम्पायनः (ग) केयूरकः (घ) शुकनासः
3. कादम्बर्याः सखी मदलेखा कस्य चरणौ प्रक्षालितवती ?
   (क) तारापीडस्य (ख) पुण्डरीकस्य (ग) कपिञ्जलस्य (घ) चन्द्रापीडस्य।
4. महाश्वेतायै ताम्बूलं का प्रयच्छत् ?
   (क) कादम्बरी (ख) तरलिका (ग) पत्रलेखा (घ) प्रतीहारी

5. का कादम्बरीम् अनामयं प्रपच्छ ?
(क) महाश्वेता (ख) तरलिका (ग) गौरी (घ) पत्रलेखा

6. महाश्वेता काम् अभाषत्–'अयम् अभिनवागतः चन्द्रापीडः आराधनीयः' ?
(क) मदलेखाम् (ख) पत्रलेखाम् (ग) कादम्बरीम् (घ) तरलिकाम्

7. गन्धर्वराजपुत्री का आसीत् ?
(क) गौरी (ख) कादम्बरी (ग) पत्रलेखा (घ) मदलेखा

8. चन्द्रापीडः केन उपदिश्यमानमार्गः मणिमन्दिरम् अगात् ?
(क) तारापीडेन (ख) पुण्डरीकेण (ग) केयूरकेण (घ) मेघनादेन

9. 'परित्यक्तः कुलकन्यकानां क्रमः' कस्याः उक्तिः ?
(क) महाश्वेतायाः (ख) कादम्बर्याः (ग) पत्रलेखायाः (घ) मदलेखायाः

10. चन्द्रापीडः कुत्र अहःकर्म चक्रे ?
(क) क्रीडापर्वतके (ख) प्रासादे (ग) मार्गे (घ) क्रीडावने

11. कादम्बर्या दत्तस्य हारस्य नाम किम् आसीत् ?
(क) शेष (ख) अशेष (ग) माला (घ) मणिमाला

12. 'कथं राजा तारापीडः' इति का उक्तवती ?
(क) महाश्वेता (ख) कादम्बरी (ग) विलासवती (घ) मदलेखा

13. 'क्षणादिव क्षणदां क्षपितवान्' इत्यत्र क्षणदां कः क्षपितवान् ?
(क) चन्द्रापीडः (ख) वैशम्पायनः (ग) केयूरकः (घ) न कोऽपि

14. चन्द्रापीडस्य अश्वस्य नाम किम् ?
(क) चक्रायुधः (ख) इन्द्रायुधः (ग) वज्रायुध्रः (घ) शक्त्यायुधः

15. 'अहो मानुषीषु पक्षपातः प्रजापतेः'– इति का चिन्तायांबभूव ?
(क) पत्रलेखा (ख) कादम्बरी (ग) मदलेखा (घ) महाश्वेता

16. ''मृणालिन्याः किसलयमपि हुताशनायते'' इति कस्याः उक्तिः ?
(क) मदलेखा (ख) पत्रलेखा (ग) तरलिका (घ) महाश्वेता

17. 'बहुभाषिणः न श्रद्दधाति लोकः' इति कस्योक्तिः ?
(क) चन्द्रापीडस्य (ख) केयूरकस्य (ग) कपिंजलस्य (घ) शुकनासस्य।

18. गन्धर्वकुमारान् का आदिदेश ?
(क) महाश्वेता (ख) कादम्बरी (ग) मदलेखा (घ) पत्रलेखा

19. 'जिगमिषति' पद अर्थ बताइए।
(क) जाना चाहता है। (ख) खाना चाहता है। (ग) आना चाहता है। (घ) नहीं जाना चाहता है।

20. चन्द्रापीडः कैः अनुगम्यमानः ?
(क) गन्धर्वकुमारैः (ख) दासैः (ग) राजकुमारैः (घ) मंत्रिपुत्रैः

21. 'स्कन्धावारः' इति पदस्य कः अर्थ ?
(क) सैनिकशिविरम् (ख) सैनिकः (ग) सैनिकस्य अश्वः (घ) स्कन्धः

22. चन्द्रापीडः महाश्वेतां कुत्र प्राप्तवान् ?
(क) अच्छोदसरस्तीरे (ख) स्कन्धावारे (ग) हेमकूटपर्वते (घ) प्रमदवने

23. केन स्वभुजात् अवरोप्य चन्द्रापीडे राज्यभारः समारोपितः ?
(क) तारापीडेन (ख) केयूरकेण (ग) गन्धर्वराजेन (घ) मेघनादेन

24. मेघनादः कः आसीत् ?
(क) प्रतीहारी (ख) मित्रम् (ग) परिजनः (घ) महाबलाधिकृतः

25. प्रशस्तदेवतोद्देशदर्शनकुतूहलेन परिभ्रमन् चन्द्रापीडः कम् अपश्यत् ?
(क) केयूरकम् (ख) पुण्डरीकम् (ग) द्रविडधार्मिकम् (घ) वैशम्पायनम्

26. 'सर्वो हि प्रत्याशया धार्यते'– इति कस्योक्तिः।
(क) शुकनासस्य (ख) चन्द्रापीडस्य (ग) केयूरकस्य (घ) वैशम्पायनस्य

27. चन्द्रापीडाय का ताम्बूलं ददौ ?
(क) मदलेखा (ख) कादम्बरी (ग) पत्रलेखा (घ) महाश्वेता

28. 'बलवान् जननीस्नेहः' इति कस्योक्तिः ?
(क) तारापीडस्य (ख) केयूरकस्य (ग) चन्द्रापीडस्य (घ) वैशम्पायनस्य

29. चन्द्रापीडस्य माता का आसीत् ?
(क) महाश्वेता (ख) मदलेखा (ग) पत्रलेखा (घ) विलासवती

30. वैशम्पायनः कुत्र स्नात्वा भवानीपतिं द्रष्टुं इच्छति स्म ?
(क) पम्पासरोवरे (ख) अच्छोदसरोवरे (ग) पद्मसरोवरे (घ) कमलसरोवरे

31. कः सरस्तीरेषु किमपि नष्टमिव अन्विषयन् बभ्राम ?
(क) चन्द्रापीडः (ख) पुण्डरीकः (ग) वैशम्पायनः (घ) कपिञ्जलः

32. वैशम्पायनः पूर्वजन्मसंस्कारेण कां प्रति अनुरक्तः ?
(क) कादम्बरीम् (ख) महाश्वेताम् (ग) पत्रलेखाम् (घ) विलासवतीम्

33. काम् आहूय महाश्वेता वैशम्पायनं निवारयितुम् उक्तवती ?
(क) तरलिकाम् (ख) मदलेखाम् (ग) पत्रलेखाम् (घ) विलासवतीम्

34. महाश्वेता वैशम्पायनाय कं शापं दत्तवती ?
(क) शुकजातौ पततु (ख) मृगजातौ पततु (ग) अश्वजातौ पततु (घ) सिंह जातौ पततु।

35. वैशम्पायनविषये श्रुत्वा कस्य स्वभावसरसं हृदयम् अस्फुटत् ?
(क) चन्द्रापीडस्य (ख) शुकनासस्य (ग) शूद्रकस्य (घ) कपिञ्जलस्य

36. का चन्द्रापीडमृतशरीरं गृहीत्वा अग्निप्रवेशम् ऐच्छत् ?
(क) कादम्बरी (ख) महाश्वेता (ग) पत्रलेखा (घ) मदलेखा

37. कस्याः करस्पर्शेण चन्द्रापीडदेहात् चन्द्रधवलं ज्योतिः उज्जगाम ?
(क) महाश्वेतायाः (ख) कादम्बर्याः (ग) पत्रलेखायाः (घ) मदलेखायाः

38. पत्रलेखा कम् आच्छिद्य अच्छोदसरसि अक्षिपत् ?
(क) इन्द्रायुधम् (ख) केयूरकम् (ग) चन्द्रापीडम् (घ) कपिञ्जलम्

39. अच्छोदसरस्सलिलात् शिरसि जटाकलापम् उद्वहन् कः उदतिष्ठत्–
(क) कपिञ्जलः (ख) श्वेतकेतुः (ग) केयूरकः (घ) हारीतः

40. पुण्डरीकस्य शरीरं कुत्र गतः ?
(क) चन्द्रलोके (ख) सूर्यलोके (ग) स्वर्गलोके (घ) ब्रह्मलोके

41. कः चन्द्रलोकं गत्वा पुण्डरीकविषये सर्ववृत्तान्तं ज्ञातवान् ?
(क) शूद्रकः (ख) चन्द्रापीडः (ग) कपिञ्जलः (घ) हारीतः

42. कपिञ्जलः वैमानिकस्य शापेन कस्यां जातौ उत्पन्नः ?
(क) अश्वजातौ (ख) हस्तिजातौ (ग) शुकजातौ (घ) मृगजातौ

43. इन्द्रायुधः कस्य पुनर्जन्म आसीत् ?
(क) कपिञ्जलस्य (ख) शूद्रकस्य (ग) शुकस्य (घ) चन्द्रापीडस्य

44. मन्त्रिपुत्रः वैशम्पायनः कस्य पुनर्जन्म आसीत् ?
(क) कपिञ्जलस्य (ख) शूद्रकस्य (ग) पुण्डरीकस्य (घ) चन्द्रापीडस्य

45. चन्द्रदेवः कपिञ्जलं कस्य सविधे प्रेषितवान् ?
(क) श्वेतकेतोः सविधे (ख) शूद्रकस्य सविधे (ग) तारापीडस्य सविधे (घ) शुकनासस्य सविधे

■

रघुवंशम्

(द्वितीयः सर्गः)

महाकविकालिदासप्रणीतम्

रघुवंशम्

(द्वितीयः सर्गः)

कालिदासस्य जीवनपरिचयः

कविकुलगुरुः कालिदासः संस्कृतसाहित्यस्य श्रेष्ठः कविरिति सर्वैः विद्वद्भिरेकस्वरेण स्वीक्रियते। महाकविः कालिदासः न केवलं भारतीयः कविः, अपितु विश्वस्य उत्कृष्टकविषु तस्य गणना क्रियते प्राच्यपाश्चात्यविद्वद्भिः। कालिदासस्य देशकालजन्मवृत्तविषये नास्ति सुनिश्चितं ज्ञानं, तथापि विपश्चिद्भिरन्तर्बहिःसाक्ष्यमनुसृत्य यत्किञ्चित् तज्जीवनवृत्तविषये समवधार्यते।

स्थितिकालः— कालिदासस्य स्थितिकालः नितरामस्पष्टः। यत्किञ्चिद् ज्ञायते तत्तु अनुमानमात्रम्। केचन विद्वांसः महाकवेः स्थितिं क्रिस्तपूर्वं द्वितीये शतके, केचन च क्रिस्तपूर्वं प्रथमे शतके मन्यन्ते। परन्तु इतरे विपश्चितः क्रिस्तात् परं गुप्तकालिके चतुर्थे शतके, अपरे पञ्चमे शतके, अन्ये च षष्ठे शतके कथयन्ति। कालिदासस्य नाटकैः ज्ञायते यत् सः विक्रमादित्यस्य राज्ञः सभाकविः आसीत्। परं तस्य स्थितिकालोऽपि न निर्णेतुं शक्यते यतो हि भारतीये इतिहासे बहवः विक्रमादित्योपाधिधारिणः राजानः अभवन्। एतत्तु निश्चितम् यत् कालिदासेन शुङ्गवंशीयस्य राज्ञः अग्निमित्रस्य प्रणयकथामाश्रित्य मालविकाग्निमित्रस्य रचना कृता, अतः तस्य स्थितिकालस्य पूर्वसीमा क्रिस्तपूर्वं द्वितीयशतकं यावदस्ति। यतः बाणभट्टः हर्षचरिते सश्रद्धं कालिदासस्य नाम स्मरति— **''निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिषु।''** अथ च प्रयागात् प्राप्ते ऐहोलशिलालेखेऽपि कालिदासस्योल्लेखः अस्ति— **''स विजयतां रविकीर्तिः कविताश्रित—कालिदासभारविकीर्तिः।''** अतः कालिदासस्य अपरसीमा क्रिस्तस्य षष्ठशतकं यावदस्ति।

जन्मस्थानम्— कालिदासस्य जन्मस्थानविषयेऽपि बहवो मताः प्रचारिताः सन्ति। महाकवेः एतवान् महिमा अस्ति यत् सर्वे तं स्वस्वदेशस्य साधयितुं समुद्यताः सन्ति। कुमारसम्भवे हिमालयवर्णनेन कश्मीरवासिविपश्चितः कालिदासं कश्मीरदेशीयम् उत्तराखण्डवासिविद्वांसश्च उत्तराखण्डनिवासिनं मन्यन्ते। बङ्गवासिनः तं बङ्गदेशीयम् अथ च केरलवासिविद्वांसः तं केरलदेशीयं मन्यन्ते। मागधाः तं मगधदेशस्य साधयितुं तत्पराः सन्ति। परं विदुषां समवायस्य सम्मतिरस्ति यत् कालिदासः उज्जयिन्याः कविरासीत्, यतो हि महाकविः मध्यप्रदेशस्थाम् उज्जयिनीं नगरीं प्रति सातिशयमनुरागं प्रदर्शयति—

''वक्रः पन्थाः यदपि भवतः प्रस्थितस्योत्तराशां,
सौधोत्सङ्गप्रणयविमुखो मा स्म भूरुज्जयिन्याः।'' (मेघदूतम्)

''दिवः कान्तिमत् खण्डमेकम्।'' (मेघदूतम्)

जीवनवृत्तम्—कालिदासस्य जीवनवृत्तविषये नैकाः जनश्रुतयः प्रसृताः सन्ति। किंवदन्तीरस्ति यत् कालिदासः पूर्वं महामूर्खः आसीत्। शारदानन्दस्य दुहिता विद्योत्तमा विदुषी आसीद्, अतः राज्ञा प्रतिज्ञा कृता यत् शास्त्रार्थे यः तस्य पुत्रीं पराजेष्यते तेनैव सह तस्याः विवाहः भविष्यति। देश-देशान्तरेभ्यः बहवो विद्वांसः समागताः परं न केनापि सा पराजिता। तेष्वेव केचित् काश्याः विद्वांसः शास्त्रार्थे पराजिताः अपमानम् असहमानाः काशीं प्रतिगच्छन्तः वने स्वाधिष्ठितां शाखाम् एव कुठारेण कर्तयन्तं कञ्चित् महामूर्खम् अपश्यन्। तमेव पण्डितरूपेण आनीय छलेन विद्योत्तमां पराजितां समुद्घोष्य तेनैव महामूर्खेण कालिदासेन सह तस्याः विवाहम् अकारयन्। अनन्तरे कक्षाभ्यान्तरं प्रविष्टः कालिदासोऽसौ बहिस्ताद् कस्यचिद् उष्ट्रस्य रवं श्रुत्वा 'ऊँट्र- ऊँट्र' इति समुच्चारयन् विद्योत्तमया दृष्टः। महामूर्खोऽयमिति ज्ञात्वा सः गृहान्निसारितः। कालीम् उपास्य किंवा काश्यां द्वादशवर्षाणि यावद् अधीत्य पुनरागतः ''अनावृतकपाटं द्वारं देहि'' इत्यकथयत्। अन्तस्तिष्ठन्ती एव विद्योत्तमा ''अस्ति कश्चिद् वाग्विशेषः'' इत्युक्त्वा द्वारमुद्घाट्य कालिदासं दृष्टवती, परिचीय च स्वागतीकृत्य अन्तः नीतवती इति। पश्चात् कालिदासेन 'अस्त्युत्तरस्यां दिशि' इत्यनेन कुमारसभवस्य, 'कश्चित्' इत्यनेन मेघदूतस्य, अथ च 'वागर्थाविव' इत्यनेन रघुवंशस्य रचना कृता।

कालिदासः न केवलं महाकविः, अपि तु विदुषां शिरोमणिरस्ति। अतएव तस्य विद्याध्ययनं योग्याचार्याणां सन्निधौ सञ्जातमिति। तस्य वेदेषु, बाह्मणग्रन्थेषु, उपनिषत्सु, स्मृतिषु, दर्शनेषु, पुराणेषु, व्याकरणे, कामशास्त्रे, राजनीतिशास्त्रे, इतिहासे, सामुद्रिके, ज्योतिषःशास्त्रे, चित्रकलायां, सङ्गीतेषु, नृत्यकलायां युद्धशास्त्रे, भौगोलिके ज्ञाने, साहित्यादिषु च समानाधिकारः आसीत्, तथापि अभिमानरहितः सः रघुवंशे विनयं प्रदर्शयन् कथयति—

क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पविषया मतिः।
तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम्।।

असौ कालिदासः सरलहृदयः, विनोदशीलः, न्यायप्रियः, यथार्थवक्ता च आसीत्। परमशैवः सन्नपि अन्यदेवतासु तस्य समाना भक्तिः। रघुवंशे रामं प्रति औदार्येण स्वभक्तिं प्रकटयति। कालिदासः वर्णाश्रमव्यवस्थायाः समर्थकः, स्त्रीणामधिकारस्य च वक्ता भारतीयसंस्कृतेः वैतालिकः, अनुरागस्य सौन्दर्यस्य च सूक्ष्मनिरीक्षकः प्रकृतिप्रेमी च आसीत्।

कालिदास का जीवन-परिचय

कविकुलगुरु कालिदास संस्कृत-साहित्य के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं— यह सभी विद्वान् एक स्वर से स्वीकार करते हैं। महाकवि कालिदास न केवल भारतीय कवि, अपितु विश्व के उत्कृष्ट कवियों में से एक हैं— ऐसा सभी पूर्वी एवं पश्चिमी विद्वान् स्वीकार करते हैं। कालिदास के जन्म स्थान, समय और जीवन के विषय में कुछ भी स्पष्ट ज्ञान नहीं है, फिर भी विद्वज्जन अन्तःसाक्ष्य और बहिःसाक्ष्य के आधार पर कुछ बातें निर्धारित करते हैं।

स्थितिकाल—कालिदास का स्थितिकाल अत्यन्त अस्पष्ट है। जो कुछ ज्ञात किया जाता है, वह अनुमान मात्र है। कुछ विद्वान् महाकवि का स्थितिकाल ईसा पूर्व द्वितीय शतक और कुछ ई0 पू0 प्रथम शतक में मानते हैं; किन्तु कुछ दूसरे विद्वान् ईसवी सन् के बाद गुप्तकालीन चतुर्थ शताब्दी में, तो कुछ छठी शताब्दी ई0 में कहते हैं।

कालिदास के नाटकों से यह ज्ञात होता है कि वे राजा विक्रमादित्य के सभाकवि थे, किन्तु उन विक्रमादित्य का भी स्थितिकाल निर्णीत नहीं किया जा सकता, क्योंकि भारतीय इतिहास में बहुत से राजाओं ने विक्रमादित्य उपाधि धारण की। यह तो निश्चित है कि कालिदास ने शुङ्गवंशीय राजा अग्निमित्र की प्रेमकथा का आश्रय लेकर 'मालविकाग्निमित्रम्' नामक नाटक की रचना की। अतः कालिदास के स्थितिकाल की पूर्वसीमा ई0 पू0 द्वितीय शतक तक है, क्योंकि बाणभट्ट ने हर्षचरितम् के आरम्भ में श्रद्धा के साथ कालिदास का स्मरण किया है— **''निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिषु''** एवं प्रयाग से प्राप्त ऐहोल शिलालेख में भी कालिदास का उल्लेख है— **''स विजयतां रविकीर्तिः कविताश्रितकालिदासभारविकीर्तिः।''** अतः उपर्युक्त दोनों प्रमाणों से कालिदास के स्थितिकाल की अपरसीमा छठी शताब्दी ई0 तक है।

जन्मस्थान—कालिदास के जन्मस्थान के विषय में बहुत-से मत प्रचलित हैं। महाकवि की इतनी महिमा है कि सभी उन्हें अपने-अपने क्षेत्र का सिद्ध करने के लिए उद्यत हैं। 'कुमारसम्भवम्' महाकाव्य में हिमालय के स्वाभाविक वर्णन को देखकर कश्मीरनिवासी विद्वान् उन्हें कश्मीरी कवि कहते हैं। उत्तराखण्ड के रहनेवाले विद्वान् उन्हें उत्तराखण्ड का निवासी बताते हैं। बंगाल के निवासी 'रघुवंशम्' में धान की खेती का स्वाभाविक वर्णन होने के कारण कालिदास को बंगाल का कवि, तो प्राकृतिक सौन्दर्य वर्णन के आधार पर केरलवासी विद्वान् उन्हें केरल का कवि कहते हैं। बिहार के निवासी उन्हें मगध का कवि बताते हैं। किन्तु अधिकतर विद्वानों की सम्मति यह है कि कालिदास मध्य प्रदेश में स्थित उज्जयिनी नगरी के निवासी हैं। उज्जयिनी के प्रति कालिदास का अत्यधिक अनुराग इस मत को पुष्ट करता है—

''वक्रः पन्थाः यदपि भवतः प्रस्थितस्योत्तराशां
सौधोत्सङ्गप्रणयविमुखो मा स्म भूरुज्जयिन्याः।''

(मेघदूतम्)

''दिवः कान्तिमत् खण्डमेकम्।'' *(मेघदूतम्)*

जीवनवृत्त—कालिदास के जीवनवृत्त के विषय में अनेक जनश्रुतियाँ प्रचलित हैं। किंवदन्ती है कि पहले कालिदास महामूर्ख थे। राजा शारदानन्द की पुत्री विद्योत्तमा अत्यन्त विदुषी थी, अतः राजा ने प्रतिज्ञा की कि जो उनकी पुत्री को शास्त्रार्थ में पराजित करेगा, उसी के साथ वे अपनी कन्या का विवाह करेंगे। अनेक देशों से बहुत-से विद्वान् आये; किन्तु विद्योत्तमा को पराजित नहीं कर सके। उन्हीं में से कुछ काशी के विद्वान् लौट रहे थे। पराजय के अपमान को वे नहीं सह पा रहे थे, अतः उन्होंने

विद्योत्तमा का विवाह किसी महामूर्ख से कराने का विचार किया। रास्ते में वन में उन्होंने, जिस पर बैठा था, उसी डाल को काटते हुए किसी महामूर्ख को देखा। उसी को पण्डित के वेश में लाकर छल से विद्योत्तमा को पराजित घोषित कर उसका विवाह राजकुमारी से करा दिया। विवाह के पश्चात् कक्ष के भीतर प्रविष्ट उस महामूर्ख कालिदास ने किसी ऊँट की बाहर से आती हुई आवाज सुनी और 'उँट्र-उँट्र' ऐसा कहने लगे। विद्योत्तमा ने यह देखकर जान लिया कि उसके साथ पण्डितों ने छलकर उसका विवाह महामूर्ख से करा दिया है। उसने कालिदास को घर से निकाल दिया। कहते हैं कि काली मन्दिर में गिर जाने के कारण जिह्वा कट गयी और रक्त बह निकला। देवी काली साक्षात् प्रकट हो गयी और विद्वत्ता का वरदान दे दिया अथवा काशी में रहकर 12 वर्षों तक संस्कृत का अध्ययन करने के कारण कालिदास विद्वान् हो गये। पुनः आकर उन्होंने दरवाजे को खटखटाकर कहा– **'अनावृतकपाटं द्वारं देहि'।** इसे सुनकर विद्योत्तमा ने अन्दर से ही कहा– **'अस्ति कश्चिद् वाग्विशेषः'** अर्थात् कोई विशिष्टवाणी वाला विद्वान् है। फिर स्वर से कालिदास को पहचान कर वह उनका सम्मान करते हुए उन्हें भीतर ले गयी बाद में कालिदास ने 'अस्ति' से कुमारसम्भवम् **(अस्त्युत्तरस्यां0)** महाकाव्य, 'कश्चिद्' से मेघदूतम् **(कश्चित्कान्ताविरहगुरुणा0)** नामक खण्डकाव्य और 'वागर्थः' से 'रघुवंशम्' **(वागर्थाविव0)** महाकाव्य की रचना की।

कालिदास न केवल महाकवि; अपितु विद्वज्जनशिरोमणि हैं। अवश्य ही उनका अध्ययन सुयोग्य आचार्यों की सन्निधि में हुआ होगा। उनका वेदों, ब्राह्मण ग्रन्थों, उपनिषदों, स्मृतियों, दर्शन, पुराण, इतिहास, राजनीतिशास्त्र, कामशास्त्र, सामुद्रिकशास्त्र, व्याकरण, छन्द, ज्योतिष, चित्रकला, सङ्गीत, नाट्य, नृत्यकला, युद्धशास्त्र, भूगोल और साहित्य आदि में समान अधिकार था। इतना सब होते हुए भी वे अभिमानरहित थे और रघुवंशम् में अपनी विनम्रता प्रदर्शित करते हुए कहते हैं कि–

क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पविषया मतिः।
तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम्।।

कालिदास सरलहृदय, विनोदशील, न्यायप्रिय और यथार्थवक्ता थे। शिव के परम भक्त होते हुए भी अन्य देवताओं के प्रति उनकी समान भक्ति है। रघुवंशम् में राम के प्रति वे अपनी भक्ति को उदारभाव से प्रकट करते हैं। वे वर्णाश्रमव्यवस्था के समर्थक, स्त्रियों के अधिकरों के वक्ता, भारतीय संस्कृति के गायक, प्रेम व सौन्दर्य के सूक्ष्म निरीक्षक और प्रकृतिप्रेमी थे।

कालिदासस्य कर्तृत्वम्

महाकविः कालिदासः राज्ञः विक्रमादित्यस्य राज्याश्रितः कविः आसीत्, अतः काव्यरचनायाः प्रभूतः अवकाशः आसीत्। सः न केवलं काव्यानि नाटकानि च व्यरचयत्, अपितु साहित्ये साहित्यशास्त्रे च प्रतिमानानि अस्थापयत्। महाकवेः नाम्ना बह्व्यः कृतयः समुपलभ्यन्ते; किन्तु प्रामाणिकरूपेण एताः सप्त रचनाः एव कालिदासप्रणीताः मन्यन्ते–

1. ऋतुसंहारम्—'ऋतुसंहारम्' कालिदासस्य आद्या कृतिः इति कथ्यते। एतत् खण्डकाव्यम् अस्ति। अस्मिन् षट्सर्गाः सन्ति। अत्र षण्णां (ग्रीष्मः, वर्षा, शरद्, हेमन्तः, शिशिरः, वसन्तः) ऋतूनां वैभवेन सौन्दर्यपूर्णं वर्णनमस्ति।

2. मेघदूतम्—इदमपि खण्डकाव्यम् अस्ति। पूर्वमेघः उत्तरमेघश्चेति भागद्वये शताधिकाः श्लोकाः रचिताः इदं विप्रलम्भशृङ्गारस्य प्रौढं गीतिकाव्यमस्ति। अत्र यक्षिण्या विरहितस्य यक्षस्य व्यथायाः मर्मस्पृग् वर्णनम् अस्ति।

3. कुमारसम्भवम्—शिवपार्वत्योः विवाहस्य अनन्तरं कुमारस्य (कार्तिकेयस्य) जन्म आधृत्य रचितमिदं शृङ्गारप्रधानं महाकाव्यम् अस्ति। अस्मिन् अष्टादशसर्गाः सन्ति।

4. रघुवंशम्—संस्कृतसाहित्यस्य सर्वश्रेष्ठं महाकाव्यमिदम् ऊनविंशतिसर्गात्कम् अस्ति। वीररसप्रधाने महाकाव्येऽस्मिन् एकत्रिंशद्—रघुवंशिनां राज्ञां महच्चरितं वर्णितमस्ति।

5. मालविकाग्निमित्रम्—पञ्चाङ्कात्मकेऽस्मिन् ग्रन्थे मालवराजकुमार्याः, शुङ्गवंशीयस्य राज्ञः अग्निमित्रस्य च प्रणयकथा वर्णिता। शृङ्गारप्रधाना इयं रचना काव्यशास्त्रदृष्ट्या नाटिका अस्ति।

6. विक्रमोर्वशीयम्—पञ्चाङ्कात्मकेऽस्मिन्नपि त्रोटके चन्द्रवंशीयनृपतेः पुरूरवसः अप्सरसः उर्वश्याश्च प्रेमकथा वर्णिता अस्ति। इदमपि शृङ्गाररसप्रधानम् अस्ति।

7. अभिज्ञानशाकुन्तलम्—सप्ताङ्कात्मकेऽस्मिन्नाटके पुरुवंशीयस्य राज्ञः दुष्यन्तस्य शकुन्तलायाश्च प्रेमकथा वर्णिता अस्ति। शृङ्गाररसप्रधानमिदं नाटकं विश्वस्य उत्कृष्टनाटकेषु गण्यते। संस्कृतसाहित्यजगति शाकुन्तलविषये उक्तिरेषा प्रसिद्धा—

काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला।

हिमालयाद् आरभ्य हिन्दमहासागरं यावद् प्रसृताः भारतस्य गौरवगाथाः पुराविदा कालिदासेन स्वरचनासु निबद्धाः। कुमारसम्भवे, रघुवंशे मेघदूते च भारतवर्षस्य नगराणां पर्वतनदीवनानां च अत्यन्तं स्वाभाविकं मनोहारि च वर्णनं समुपलभ्यते। अनेनं ज्ञायते यद् देशानुरक्तः सः राष्ट्रकविः अस्ति। कथावस्तुवर्णनेन, प्रकृति-चित्रणेन, रसविधानेन, अलङ्कारविन्यासेन, छन्दसां प्रयोगेण, विशेषतः उपमायोजनायां च न केवलं भारते, अपितु विश्वस्मिन् विश्वे उत्कृष्टकविरिति मन्यते। संस्कृतकविशिरोमणिः संस्कृतस्य अद्वितीयः कविरिति सर्वैः विद्वद्भिः एकस्वरेण उररीक्रियते—

पुरा कवीनां गणनाप्रसङ्गे कनिष्ठिकाधिष्ठितकालिदासः।
अद्यापि तत्तुल्यकवेरभावादनामिका सार्थवती बभूव।।

कालिदास का कर्तृत्व

महाकवि कालिदास राजा विक्रमादित्य के राज्याश्रित कवि थे, अतः काव्यरचना के लिए उनके पास पर्याप्त समय था। उन्होंने काव्यों और नाटकों की रचना ही नहीं की, बल्कि साहित्य और साहित्यशास्त्र में रचनाओं के प्रतिमान स्थापित किये। महाकवि कालिदास के नाम से बहुत-सी रचनायें प्राप्त होती हैं; किन्तु प्रामाणिक रूप से ये सात रचनायें ही कालिदास द्वारा रचित मानी जाती हैं—

1. ऋतुसंहारम्—'ऋतुसंहारम्' कालिदास की पहली कृति मानी जाती है। यह खण्डकाव्य है। इसमें छह सर्गों में छह ऋतुओं – ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमन्त, शिशिर और वसन्त का अत्यन्त वैभवपूर्ण सौन्दर्य वर्णन है।

2. मेघदूतम्—यह भी खण्डकाव्य है। पूर्वमेघ और उत्तरमेघ– इन दो भागों को मिलाकर सौ से अधिक श्लोको में रचा गया यह वियोग शृङ्गार का प्रौढ़ गीतिकाव्य है। इसमें यक्षिणी से विरहित यक्ष की विरहव्यथा का मर्मस्पर्शी वर्णन है।

3. कुमारसम्भवम्—शिव और पार्वती के विवाह के पश्चात् कुमार (कार्तिकेय) के जन्म का आश्रय लेकर रचित यह शृङ्गाररसप्रधान महाकाव्य है। इसमें 18 सर्ग हैं।

4. रघुवंशम्—यह संस्कृत का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य है और इसमें उन्नीस सर्ग हैं। वीररसप्रधान इस महाकाव्य में 31 रघुवंशी राजाओं का महान् चरित वर्णित है।

5. मालविकाग्निमित्रम्—पाँच अङ्कों वाले इस ग्रन्थ में मालवराजकुमारी और शुङ्गवंशीय राजा अग्निमित्र की प्रेमकथा वर्णित है। यह शृङ्गार प्रधान रचना नाट्यशास्त्र की दृष्टि से 'नाटिका' मानी जाती है।

6. विक्रमोर्वशीयम्– इसमें भी पाँच अङ्क हैं और चन्द्रवंशीय राजा पुरूरवा तथा उर्वशी की प्रेमकथा वर्णित है। यह शृङ्गारप्रधानरचना नाट्यशास्त्र की दृष्टि से 'त्रोटक' मानी जाती है।

7. अभिज्ञानशाकुन्तलम्—सात अङ्कों वाले इस नाटक में पुरुवंशीय राजा दुष्यन्त और शकुन्तला की प्रेमकथा वर्णित है। शृङ्गाररसप्रधान यह नाटक विश्व के उत्कृष्ट नाटकों में गिना जाता है। संस्कृतसाहित्य-जगत् में यह उक्ति प्रसिद्ध है–

काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला।

हिमालय से लेकर हिन्द महासागर तक फैली भारत की गौरवगाथाओं को कालिदास ने अपनी रचनाओं में वर्णित किया है। कुमारसम्भवम्, रघुवंशम् और मेघदूतम् में भारतवर्ष के नगरों, पर्वत, नदी, वन आदि प्रदेशों का स्वाभाविक और मनोहर वर्णन प्राप्त होता है। इससे यह पता चलता है कि कालिदास देशभक्त और राष्ट्रकवि हैं। कालिदास कथावस्तुवर्णन, प्रकृति-चित्रण, रसाभिव्यक्ति, अलङ्कारों का विन्यास, छन्दों के प्रयोग और विशेष रूप से उपमा-योजना में न केवल भारतवर्ष के, अपितु सम्पूर्ण विश्व के उत्कृष्ट कवि हैं। संस्कृतकविशिरोमणि कालिदास संस्कृत-साहित्य के अद्वितीय कवि हैं– ऐसा सभी विद्वान् एकमत से स्वीकार करते हैं–

''पुरा कवीनां गणनाप्रसङ्गे कनिष्ठिकाधिष्ठितकालिदासः।
अद्यापि तत्तुल्यकवेरभावाद् अनामिका सार्थवती बभूव।।''

कालिदासस्य काव्यशैली

महाकवेः कालिदासस्य काव्यप्रतिभायाः सर्वोत्कृष्टं निदर्शनं रघुवंशम् अस्ति। काव्यसमालोचकाः संस्कृत–साहित्यस्य सर्वश्रेष्ठं महाकाव्यं रघुवंशं मन्यन्ते, अतः कालिदासस्य कृते 'रघुकार' इति अभिधानं प्रयुञ्जति। रघुवंशस्य काव्यसौष्ठवं दर्शं दर्शं साहित्यरसिकाः समुद्घोषयन्ति यत्– **"क इह रघुकारे न रमते।"** रघुवंशे कालिदासस्य शैली प्रकर्षेण राजते।

कथावस्तु–यद्यपि रघुवंशस्य मूलस्रोतः वाल्मीकीयं रामायणमस्ति; तथापि अस्य महाकाव्यस्य वस्तुनि कालिदासस्य नवनवोन्मेषशालिन्याः प्रतिभायाः दर्शनं भवति। रामायणस्य कथा रामचरिते एव केन्द्रीभूता, परं रघुवंशे एकत्रिंशद्रघुवंशिनां राज्ञां कथा कालिदासेन वर्णिता। अस्य महाकाव्यस्य कथा इतिहासाश्रिता अस्ति।

पात्रयोजना–एकत्रिंशद् रघुवंशिनः राजानः अस्य महाकाव्यस्य नायकाः सन्ति। ते राजानः त्यागशीलाः, सत्यप्रियाः, प्रजावत्सलाः, वर्णाश्रमधर्मसंरक्षकाः आसन्; किन्तु रघुवंशे वर्णितः अन्तिमः नृपः अग्निवर्णः अन्तःपुरस्त्रीषु आसक्तः स्वकर्त्तव्यविमुखः अस्ति। रघुवंशे वर्णितानां राज्ञां व्यक्तित्वं वैविध्येन सहृदयानां हृदयम् आवर्जयति। तत्र दिलीपस्य त्यागः, रघोः दानवीरता, अजस्य दाम्पत्यप्रेम, अन्येषां राज्ञां प्रतापः, रामस्य औदार्यम् इत्यादीनि दर्शनीयानि सन्ति।

वर्णनकौशलम्– रघुवंशे कालिदासस्य वर्णनकौशलम् अद्वितीयमस्ति। दिलीपस्य गोसेवा, रघोः दिग्विजययात्रा दानशीलता च, इन्दुमतेः स्वयंवरः, अजस्य विलापः, सीतारामयोः लङ्कातः अयोध्यां प्रति पुष्पकविमानयात्राप्रसङ्गे भारतीयभौगोलिकस्थलानां विहङ्गमचित्राणि, निर्वासितायाः सीतायाः रामाय सन्देशादीनि वर्णनानि स्वाभाविकानि मनोहराणि च। यथा अजसेनायाः अरीणां च सेनायाः युद्धवर्णनम्–

पत्तिः पदातिं रथिनं रथेशस्तुरङ्गसादी तुरगाधिरूढम्।
यन्ता गजस्याभ्यपतद् गजस्थं तुल्यप्रतिद्वन्द्वि बभूव युद्धम्।।

प्रकृतिवर्णनम्–रघुवंशे कालिदास्य प्रकृतिचित्रणं स्वाभाविकं मनोहरं चास्ति। कालिदासस्य कृतिषु प्रकृतिः मानवस्य सहचरी इव व्यवहरति। वनमागतस्य दिलीपस्य स्वागतं वनवृक्षाः वयसां विरावैः जयशब्दमुच्चार्य कुर्वन्ति। एवमेव मरुत्प्रयुक्ताः बाललताः राज्ञः दिलीपस्य उपरि पुष्पवृष्टिं कुर्वन्ति। पल्लवरागताम्रा नन्दिनी पतङ्गस्य च प्रभा उभेऽपि सममेव दिगन्तराणि सञ्चारपूतानि कृत्वा दिनान्ते स्ववासस्थानं गन्तुमारेभे। सायंकाले श्यामायमानस्य वनस्य शोभावर्णनं स्वाभाविकं मनोहरञ्च–

स पल्वलोत्तीर्णवराहयूथान्यावासवृक्षोन्मुखबर्हिणानि।
ययौ मृगाध्यासितशाद्वलानि श्यामायमानानि वनानि पश्यन्।।

रसाभिव्यक्तिः–कविताकामिनीविलासः कालिदासः प्रेम्णः सौन्दर्यस्य च कविरस्ति। कविरसौ शृङ्गारस्य विप्रलम्भसंयोगयो उभयोः पक्षयोः वर्णने निपुणः। कुमारसम्भवे शिवपार्वत्योः अनुरागवर्णने शृङ्गाराभिव्यक्तिः उत्कृष्टा। करुणरसस्य अभिव्यञ्जनायामपि सः सिद्धहस्तः। परित्यक्तायाः सीतायाः शोकाभिव्यक्तिः हृदयं स्पृशति। तथैव अजविलापप्रसङ्गोऽपि भावपूर्णः मर्मस्पर्शी चास्ति–

स्रगियं यदि जीवितापहा हृदये किं निहिता न हन्ति माम्।

विषमप्यमृतं क्वचिद् भवेद्मृतं वा विषमीश्वरेच्छया।।

भाषा—कविकुलगुरुः कालिदासः वैदर्भीरीतेः कविः। तस्य शैल्यां प्रसादमाधुर्यादयः गुणाः प्राप्यन्ते। प्रसादगुणानुरूपं तस्य भाषा सर्वत्र समासरहिता क्वचिदल्पसमासा, अत एव सरला, मधुरा, साभिप्रायशब्दानां प्रयोगेण प्रभावपूर्णा च। कालिदासस्य भाषायाः मुख्यं वैशिष्ट्यं व्यञ्जनाप्राधान्यम् अस्ति। सीतायाः शोके मयूराः नृत्यं, भ्रमराः पुष्परसास्वादं, हरिण्यश्च कुशचर्वणं तत्यजुः—

नृत्यं मयूराः कुसुमानि भृङ्गा दर्भानुपात्तान् विजहुर्हरिण्यः।
तस्याः प्रपन्ने समदुःखभावमत्यन्तमासीद् रुदितं वनेऽपि।।

वैदर्भीरीतेः सः सर्वश्रेष्ठः कविः।

अलङ्कारः— महाकवेः भाषायाम् असाधारणः अधिकारः। तस्य भाषायाम् अनुप्रासयमकादयः अनायासेन आयान्ति। अर्थालङ्कारेषु उपमारूपकोत्प्रेक्षार्थान्तरान्यासादीनां प्रयोगः स्वाभाविकः। उपमायाः विन्यासे तु कालिदासः अद्वितीयः, अतः एव संस्कृतसाहित्ये **'उपमा कालिदासस्य'** इति भणितिः प्रचलितास्ति। उपमा प्रयोगवैशिष्ट्येन महाकविः **'दीपशिखा'** इत्युपाधिनापि विभूषितोऽस्ति। तस्य उपमाप्रयोगस्य उदाहरणेषु एतानि मुख्यानि सन्ति— **'वागर्थाविव सम्पृक्तौ ..... पार्वतीपरमेश्वरौ।'** (रघु0 1/1), **'श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्'** (रघु0 2/2), **'जुगोप गोरूपधरामिवोर्वीम्'** (रघु0 2/3), **'दिनक्षपामध्यगतेव सन्ध्या'** (रघु0 2/20), **'श्रद्धेव साक्षाद्विधिनोपपन्ना'** (रघु0 2/16), **'शृङ्गान्तरं द्वारमिवार्थसिद्धेः'** (रघु0 2/21), **'बभूव रामः सहसा सवाष्पस्तुषारवर्षीव सहस्यचन्द्रः'** (रघु0 14/84)।

छन्दोयोजना— कालिदासस्य कृतिषु छन्दःप्रयोगेण ज्ञायते यत् अनुष्टुबुपजातिसदृशलघूनि छन्दांसि प्रियाणि तस्य। सर्गान्ते बृहच्छन्दसां प्रयोगः अस्ति। तस्य अन्येषु प्रयुक्तछन्दःसु वंशस्थः, रथोद्धता, मालिनी, मन्दाक्रान्ता, वसन्ततिलका, हरिणी, पुष्पिताग्रा, द्रुतविलम्बितम्, शार्दूलविक्रीडितम् इत्यादीनि छन्दांसि विशेषेणोल्लेखनीयानि।

कालिदास की काव्यशैली

महाकवि कालिदास की काव्य-प्रतिभा का सर्वोत्कृष्ट निदर्शन रघुवंशम् है। काव्यसमालोचक संस्कृतसाहित्य का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य रघुवंशम् को मानते हैं, अतः कालिदास के लिए 'रघुकार' नाम का प्रयोग करते हैं। रघुवंशम् का काव्य-सौष्ठव देखकर साहित्यरसिक घोषणा करते हैं कि कालिदास के रघुवंशम् में कौन आनन्दित नहीं होता **(क इह रघुकारे न रमते)**। रघुवंशम् में कालिदास की शैली अपने उत्कृष्ट रूप में विद्यमान है।

कथावस्तु—यद्यपि रघुवंश का मूल स्रोत वाल्मीकीय रामायण है; फिर भी इसमें कालिदास की नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा का दर्शन होता है। रामायण की कथा रामचरित पर ही केन्द्रित है; किन्तु रघुवंशम् में 31 रघुवंशी राजाओं का चरित वर्णित है। इस महाकाव्य की कथा इतिहासाश्रित है।

पात्रयोजना—31 रघुवंशी राजा इस महाकाव्य के नायक हैं। वे राजा त्यागशील, सत्यप्रिय, प्रजावत्सल, वर्णाश्रमधर्मसंरक्षक थे; किन्तु रघुवंश में वर्णित अन्तिम राजा अग्निवर्ण अन्तःपुर की स्त्रियों

में आसक्त रहनेवाला एवं स्वकर्तव्यविमुख हैं। रघुवंश में वर्णित राजाओं का अलग-अलग व्यक्तित्व कथाओं के माध्यम से सहृदयों के हृदय को आह्लादित करता है। दिलीप का त्याग, रघु की दानवीरता, अज का पत्नी के प्रति प्रेम, दूसरे राजाओं का प्रताप और राम की उदारता आदि देखने योग्य हैं।

वर्णनकौशल—रघुवंशम् में कालिदास का वर्णन-कौशल अद्वितीय है। दिलीप की गोसेवा, रघु की दिग्विजय— यात्रा और दानशीलता, इन्दुमती का स्वयंवर, अज का विलाप, सीता और राम की लङ्का से अयोध्या तक पुष्पकविमान द्वारा यात्रा के प्रसङ्ग में भारतीय भौगोलिक स्थलों के विहङ्गम चित्र, निर्वासित सीता का राम के प्रति सन्देश, आदि वर्णन स्वाभाविक और मनोहर हैं, जैसे कि अज की सेना और शत्रुसेना के युद्ध का वर्णन है—

पत्तिः पदातिं रथिनं रथेशस्तुरङ्गसादी तुरगाधिरूढम्।
यन्ता गजस्याभ्यपतद् गजस्थं तुल्यप्रतिद्वन्द्वि बभूव युद्धम्।।

प्रकृतिवर्णन— रघुवंशम् में कालिदास का प्रकृति-चित्रण स्वाभाविक और मनोहारी है। कालिदास की कृतियों में प्रकृति मानव की सहचरी के समान व्यवहार करती है। वन में आये हुए दिलीप के स्वागत में वन के वृक्ष, पक्षियों के कलरव द्वारा 'जय' शब्द का उच्चारण करते हैं। इसी प्रकार वायु द्वारा प्रेरित नई लतायें राजा दिलीप के ऊपर फूलों की वर्षा करती हैं। किसलय के समान लाल रंग की गाय और सूर्य की किरण-दोनों ने अपने सञ्चरण से दिशाओं के अन्तरालों को पवित्र कर सायंकाल अपने-अपने वासस्थान की ओर लौटना आरम्भ कर दिया। सायंकाल होते हुए वनों की शोभा का वर्णन स्वाभाविक और मनोहर है—

स पल्वलोत्तीर्णवराहयूथान्यावासवृक्षोन्मुखबर्हिणानि।
ययौ मृगाध्यासितशाद्वलानि श्यामायमानानि वनानि पश्यन्।।

रसाभिव्यक्ति— कविताकामिनीविलास कविकुलगुरु कालिदास प्रेम और सौन्दर्य के कवि हैं। वे शृङ्गार के वियोग और संयोग-दोनों पक्षों के वर्णन में निपुण हैं। 'कुमारसम्भवम्' में शिव-पार्वती के प्रेमवर्णन में शृङ्गार की अभिव्यक्ति उत्कृष्ट है। कालिदास करुण रस की अभिव्यञ्जना में भी सिद्धहस्त हैं। परित्यक्ता सीता की शोकाभिव्यक्ति अत्यन्त मर्मस्पर्शी है। उसी प्रकार राजा अज का विलाप-प्रसङ्ग भी भावपूर्ण और मार्मिक है—

स्रगियं यदि जीवितापहा हृदये किं निहिता न हन्ति माम्।
विषमप्यमृतं क्वचिद् भवेदमृतं वा विषमीश्वरेच्छया।।

भाषा—कविकुलगुरु कालिदास वैदर्भीरीति के कवि हैं। उनकी शैली में प्रसाद और माधुर्यादिगुण प्राप्त होते हैं। प्रसाद गुण के अनुरूप उनकी भाषा प्रायः सर्वत्र समासरहित या कहीं अल्पसमासा, अतएव सरल और मधुर है। साभिप्राय शब्दों के प्रयोग के कारण प्रभावपूर्ण है। कालिदास की भाषा का मुख्य वैशिष्ट्य व्यञ्जनाप्रधानता है। सीता के शोक में मयूरों ने नृत्य, भ्रमरों ने फूलों के रस का आस्वाद और हरिणियों ने कुशचर्वण छोड़ दिया—

नृत्यं मयूरा कुसुमानि भृङ्गा दर्भानुपात्तान् विजहुर्हरिण्यः।
तस्याः प्रपन्ने समदुःखभावमत्यन्तमासीद् रुदितं वनेऽपि।।

अलङ्कार—महाकवि कालिदास का भाषा पर असाधारण अधिकार है। उनकी भाषा में अनुप्रास और यमक आदि अनायास ही आते रहते हैं। अर्थालङ्कारों में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा और अर्थान्तरन्यास आदि का प्रयोग स्वाभाविक है। उपमा के विन्यास में तो कालिदास अद्वितीय हैं, अतएव संस्कृत-साहित्य-जगत् में 'उपमा कालिदासस्य' उक्ति प्रसिद्ध है। कालिदास की उपमा से रीझकर समालोचकों ने उन्हें **'दीपशिखा'** उपाधि से विभूषित कर दिया। उनकी उपमा के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं– **'वागर्थाविव सम्पृक्तौ ..... पार्वतीपरमेश्वरौ'** (रघु0 1/1), **'श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्'** (रघु0 2/2), **'जुगोप गोरूपधरामिवोर्वीम्'** (रघु0 2/3), **'दिनक्षपामध्यगतेव सन्ध्या'** (रघु0 2/20), **'श्रद्धेव साक्षद्विधिनोपपन्ना'** (रघु0 2/16), **'शृङ्गान्तरं द्वारमिवार्थसिद्धेः'** (रघु0 2/21), **'बभूव रामः सहसा सवाष्पस्तुषारवर्षीव सहस्यचन्द्रः'** (रघु0 14/84)।

छन्दोयोजना—कालिदास की कृतियों में छन्द प्रयोग देखकर यह ज्ञात होता है कि, उन्हें अनुष्टुप् और उपजाति जैसे छोटे छन्द प्रिय हैं। सर्ग के अन्त में बड़े छन्दों का प्रयोग है। उनके द्वारा प्रयुक्त अन्य छन्दों में वंशस्थ, रथोद्धता, मालिनी, मन्द्राक्रान्ता, वसन्ततिलका, हरिणी, पुष्पिताग्रा, द्रुतविलम्बित और शार्दूलविक्रीडित विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

उपमा कालिदासस्य

कविकुलगुरुः कालिदासः संस्कृतसाहित्यस्य सर्वश्रेष्ठः कविरस्ति। सः काव्यस्य प्रमुखप्रकारेषु ग्रन्थान् विरच्य स्वकाव्यकौशलम् प्राकटयत्। काव्येषु नाट्येषु चोभयत्र तस्य कला समानरूपेण उत्कृष्टा दृश्यते। तथैव काव्याङ्गभूतेषु कथावस्तुविन्यासेषु, पात्रयोजनासु, रसाभिव्यक्तिषु छन्दसां प्रयोगेषु, भाषाप्रयोगेषु अलङ्काराणां विन्यासेषु च सर्वत्र तस्य नवनवोन्मेषशालिन्याः प्रतिभायाः प्रकाशः विद्योतते। उपमायोजनायां तु कालिदासः अद्वितीयः मन्यते, अतः संस्कृतसाहित्याकाशे भणितिरियं प्रकर्षेण गुञ्जायमानास्ति यद्–

उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्।
दण्डिनः पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः।।

वस्तुतस्तु उपमा न केवलं प्रधानभूतोऽलङ्कारः, अपितु तेषु तेषु उत्प्रेक्षारूपकादिषु चालङ्कारेषु उपमा बीजरूपेण विद्यमाना भवति येषु उपमानोपमेययोः साम्यत्वं परिकल्प्यते। यथा अप्पयदीक्षितेन उक्तम् –

उपमैका शैलूषी सम्प्राप्ता चित्रभूमिकाभेदान्।
रञ्जयति काव्यरङ्गे नृत्यन्ती तद्विदां चेतः।

इत्थं न केवलम् उपमालङ्कारे, अपितु उपमाबीजभूतेषु अन्येषु अलङ्कारेषु चापि उपमाविन्यासे अद्वितीयः महाकविः कालिदासः इति भणितेरर्थः।

उपमा महाकवेः कालिदासस्यातिप्रियोऽलङ्कारः। महाकवेः उपमा सर्वदा सर्वथा च नूतनकल्पनासमन्विता भवति अर्थे चोत्कर्षमावहति। यथा स्वयंवरप्रसङ्गे इन्दुमत्याः उपमा दीपशिखया कृता–

सञ्चारिणी दीपशिखेव रात्रौ यं यं व्यतीयाय पतिंवरा सा।
नरेन्द्रमार्गाट्ट इव प्रपेदे विवर्णभावं स स भूमिपालः।।

अत्र उपमालङ्कारेण न केवलं काव्यशोभा विवर्धते, अपितु यं यं राजानमतिक्रम्य इन्दुमती अग्रे गता तेषां राज्ञां म्लानमुखत्वं हृदयस्य च हताशा सञ्चारिण्या दीपशिखया अभिव्यक्ता भवति। अतएव विपश्चिद्भिः समालोचकैः कालिदासः **'दीपशिखा'** इत्युपाधिना विभूषितः।

कालिदासस्य उपमायां लिङ्गसाम्यस्य, भावसाम्यस्य चारुतायाश्च अद्वितीयसमावेशो भवति। यथा–

पुरस्कृता वर्त्मनि पार्थिवेन प्रत्युद्गता पार्थिवधर्मपत्न्या।
तदन्तरे सा विरराजधेनुः दिनक्षपामध्यगतेव सन्ध्या।।

श्लोकेऽस्मिन् पल्लवरागताम्रा नन्दिनी गौः अरुणसन्ध्या इव, तेजस्वी राजा दिवसः इव, चन्द्रमुखी सुदक्षिणा रजनी इव कथिताः। केचन एतदपि वदन्ति यत् नृपः दिलीपः सूर्यवंशीयः अतएव दिवसेन उपमितः मगधराजकुमारी सुदक्षिणा चन्द्रवंशीया अतः रजन्या तुलिता।

कालिदासस्य शास्त्रीयासु उपमासु तस्य पाण्डित्यं प्रस्फुटीभवति। एतादृशी उपमा अर्थे चारुता चमत्कारं च जनयति। यथा–

तस्याः खुरन्यासपवित्रपांसुमपांसुलानां धुरिकीर्तनीया।
मार्गं मनुष्येश्वरधर्मपत्नी श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्।।

एवमेव कालिदासः जगत्पित्रोः पार्वतीपरमेश्वरयोः अभेद्यसम्बन्धं ख्यापयितुं उपमानरूपेण नित्यसम्बद्धौ वागर्थौ गृह्णाति–

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ।।

एतादृगुपमाभिः कालिदासस्य ग्रन्थाः परिपूर्णाः सन्ति। तस्य ग्रन्थेषु पदे-पदे उपमायाः चमत्कृतिः चकास्ति। यथा– **'आसीन्महीक्षितामाद्यः प्रणवः छन्दसामिव', 'प्रांशुलभ्ये फले लोभादुद्बाहुरिव वामनः', 'जुगोप गोरूपधरामिवोर्वीम्', 'छायेव तां भूपतिरन्वगच्छत्', 'श्रद्धेव साक्षाद्विधिनोपपन्ना', 'शृङ्गान्तरं द्वारमिवार्थसिद्धेः', 'अन्तर्मदावस्थ इव द्विपेन्द्रः' 'आचारलाजैरिव पौरकन्याः', 'भोगीव मन्त्रौषधिरुद्धवीर्यः', 'बभूव रामः सहसा सवाष्पस्तुषारवर्षीव सहस्यचन्द्रः'**।

कालिदासस्य नाट्यग्रन्थेष्वपि उपमा सहृदयानां हृदयमावर्जयति। यथा अभिज्ञानशाकुन्तले–

अधरः किसलयरागः कोमलविटपानुकारिणौ बाहू।
कुसुम इव लोभनीयं यौवनमङ्गेषु सन्नद्धम्।।

शकुन्तलायाः सौन्दर्यवर्णने कालिदासस्य उपमाविन्यासकौशलं दृग्गोचरं भवति–

सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यं
मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्म लक्ष्मीं तनोति।
इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी
किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्।।

उपमा कालिदासस्य

कविकुलगुरु कालिदास संस्कृत-साहित्य के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। उन्होंने काव्य के प्रमुख प्रकारों में रचनायें करके अपना काव्यकौशल प्रकट किया है। काव्यों और नाटकों में उनकी कला समान रूप से उत्कृष्ट है। उसी प्रकार काव्याङ्गभूत कथावस्तुविन्यास, पात्रयोजना, रसाभिव्यक्ति, छन्द प्रयोग, भाषा के प्रयोग और अलङ्कारों के विन्यास में सर्वत्र उनकी नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा का प्रकाश स्पष्ट है। उपमा की योजना में तो कालिदास अद्वितीय माने जाते हैं। अतः संस्कृत-साहित्याकाश में यह उक्ति गुञ्जायमान है कि–

उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्।
दण्डिनः पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः।।

वस्तुतः उपमा केवल प्रधान अलङ्कार ही नहीं, अपितु उत्प्रेक्षा, रूपक आदि उन अलङ्कारों में बीजरूप में विद्यमान रहती है, जिनमें उपमान और उपमेय की समानता का भाव कल्पित होता है। जैसा कि अप्पयदीक्षित ने कहा है–

उपमैका शैलूषी सम्प्राप्ता चित्रभूमिकाभेदान्।
रञ्जयति काव्यरङ्गे नृत्यन्ती तद्विदां चेतः।।

इस प्रकार न केवल उपमा अलङ्कार में, अपितु उपमाबीजभूत दूसरे अलङ्कारों में भी उपमा विन्यास में कालिदास अद्वितीय हैं– यह **'उपमा कालिदासस्य'** सूक्ति का अर्थ है।

उपमा महाकवि कालिदास को अत्यन्त प्रिय है। महाकवि की उपमा सर्वदा और सर्वथा नयी कल्पना से युक्त होती है और अर्थ में उत्कर्ष का आधान करती है। यथा– स्वयंवर प्रसङ्ग में इन्दुमती की उपमा 'दीपशिखा' से की गयी है–

सञ्चारिणी दीपशिखेव रात्रौ यं यं व्यतीयाय पतिंवरा सा।
नरेन्द्रमार्गाट्ट इव प्रपेदे विवर्णभावं स स भूमिपालः।।

यहाँ उपमा अलङ्कार न केवल काव्य की शोभा को बढ़ाता है, अपितु जिन राजाओं को छोड़कर इन्दुमती आगे चली गयी, उन राजाओं के मुरझाये मुख और उनके हृदय की हताशा सञ्चारिणी दीपशिखा के द्वारा ठीक ढंग से अभिव्यक्त होती है।

कालिदास की उपमा में लिङ्गसाम्य, भावसाम्य और चारुता का सुन्दर समावेश है। यथा–

पुरस्कृता वर्त्मनि पार्थिवेन प्रत्युद्गता पार्थिवधर्मपत्न्या।
तदन्तरे सा विरराज धेनुर्दिनक्षपामध्यगतेव सन्ध्या।।

इस श्लोक में पल्लवरागताम्रा नन्दिनी गाय अरुण सन्ध्या के समान, तेजस्वी राजा दिन के समान और चन्द्रमुखी रानी सुदक्षिणा रात्रि के समान कही गयी हैं। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि राजा दिलीप सूर्यवंशी हैं, अतः दिन से तुलना की गयी और रानी सुदक्षिणा चन्द्रवंशी हैं, अतः उनकी उपमा रात्रि से की गयी।

कालिदास की शास्त्रीय उपमाओं में उनका पाण्डित्य प्रकट हुआ है। ऐसी उपमा अर्थ में सुन्दरता और चमत्कार उत्पन्न करती है। यथा–

तस्याः खुरन्यासपवित्रपांसुमपांसुलानां धुरि कीर्तनीया।
मार्गं मनुष्येश्वरधर्मपत्नी श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्।।

इसी प्रकार कालिदास जगत् के माता-पिता पार्वती और परमेश्वर शिव के अटूट सम्बन्ध को बताने के लिए उपमा के रूप में नित्यसम्बन्ध से युक्त शब्द और अर्थ को ग्रहण करते हैं–

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ।।

उपुर्यक्त प्रकार की उपमाओं से कालिदास के ग्रन्थ भरे पड़े हैं। उनके ग्रन्थों में पग-पग पर उपमा काव्य शोभा की विवृद्धि करती हुई सहृदयों के हृदय को आह्लादित करती है। यथा– **'आसीन्महीक्षितामाद्यः प्रणवश्छन्दसामिव'**, **'प्रांशुलभ्ये फले लोभादुद्बाहुरिव वामनः'**, **'जुगोप गोरूपधरामिवोर्वीम्'**, **'छायेव तां भूपतिरन्वगच्छत्'**, **'श्रद्धेव साक्षाद्विधिनोपपन्ना'**, **'शृङ्गान्तरं द्वारमिवार्थसिद्धेः'**, **'अन्तर्मदावस्थ इव द्विपेन्द्रः'**, **'आचारलाजैरिव पौरकन्याः'**, **'भोगीव मन्त्रौषधिरुद्धवीर्यः'**, **'बभूव रामः सहसा सवाष्पतुषारवर्षीव सहस्यचन्द्रः'**।

नाट्यरचनाओं में भी कालिदास की उपमा सहृदयों के हृदय को आह्लादित करती है। यथा अभिज्ञानशाकुन्तल में–

अधरः किसलयरागः कोमलविटपानुकारिणौ बाहू।
कुसुम इव लोभनीयं यौवनमङ्गेषु सन्नद्धम्।।

शकुन्तला के सौन्दर्यवर्णन में कालिदास की उपमा के विन्यास का कौशल दृष्टिगोचर होता है–

सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यं
मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्म लक्ष्मीं तनोति।
इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी
किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्।।

रघुवंश–महाकाव्य : संक्षिप्त परिचय

कविकुलगुरु कालिदास की कविता विश्व के समस्त सहृदय-हृदय को आनन्दित करने का सामर्थ्य रखती है। इनके काव्यों को जिस दृष्टि से देखा जाय उसी से काव्यकला की कमनीयता प्रकट होती है। कालिदास संस्कृत-साहित्य के अद्वितीय महाकवि माने जाते हैं। इनकी कविता की मधुरिमा के सामने अन्य कवियों की कवितायें मानव हृदय के सूक्ष्म भावों, संवेदनाओं को प्रकट करने में सम्भवतः उतनी सफल नहीं हैं। प्रत्येक कवि में किसी-न-किसी विषय की विशिष्टता रहती है; परन्तु महाकवि कालिदास में सभी गुणों का सन्निवेश है कहा भी गया है–

उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्।
दण्डिनः पदलालित्यं त्रयोऽप्येकैकताऽधिकाः।।

उन्होंने एक से बढ़कर एक उपमाओं का उद्भव किया है। रघुवंश महाकाव्य महाकवि कालिदास की प्रौढ़ प्रतिभा का निदर्शक सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य है। इस महाकाव्य में सौन्दर्य एवं शील का मञ्जुल समन्वय है। 'लघुत्रयी' जैसी संज्ञाओं से इसे विभूषित किया गया है। प्रस्तुत महाकाव्य में 19 सर्गों में सूर्यवंशी 31 राजाओं का चरित्र वर्णित है। वस्तुतः रघुवंशी राजाओं का चरित्र इतना प्रभावशाली है कि, कालिदास जैसा महाकवि कहने को विवश हो जाता है कि–

क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पविषया मतिः।
तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम्।।

रघुवंश में वर्णाश्रम धर्म का व्यवस्थित वर्णन किया गया है। भारतीय संस्कृति अध्यात्म प्रधान है, जहाँ आश्रम धर्म ही सभी धर्मों का आधार स्तम्भ है। रघुवंशी राजा आश्रमधर्म के अनुरूप ही जीवन-निर्वाह किया करते थे, वे शैशव (ब्रह्मचर्य आश्रम) में वेद आदि विभिन्न शास्त्रों का अध्ययन, युवावस्था (गृहस्थाश्रम) में विषय भोग, वृद्धावस्था (वानप्रस्थ आश्रम) में मुनियों की तरह आचरण तथा अन्तिम अवस्था (संन्यास आश्रम) में योग के माध्यम से शरीर त्याग करने वाले थे।

शैशवेऽभ्यस्तविद्यानां, यौवने विषयैषिणाम्।
वार्धके मुनिवृत्तीनां, योगेनान्ते तनुत्यजाम्।।

(रघुवंशम्–1/8)

इन राजाओं में गुरुभक्ति, अतिथि-सत्कार, प्रजावत्सलता, प्राणियों के प्रति उदारता, त्याग की भावना, विश्वविजय की सामर्थ्य आदि उदात्त गुण स्वभावतः सिद्ध थे। जब ऋषि कौत्स अपने गुरु वरतन्तु को गुरुदक्षिणा देने के लिये 14 करोड़ स्वर्णमुद्राओं की याचना महाराज रघु से करते हैं, उस समय रघु विचलित नहीं होते प्रत्युत धनप्राप्ति के उपाय सोचते हैं। प्रभु की अनुकम्पा से उनके यत्न की रक्षा होती है। रघु जैसे निष्ठावान्, आतिथेय, दानशील नृपति की दिग्विजय भी प्रजा के कल्याणार्थ है, न कि यशलाभार्थ।

यशस्वी रघु के कारण ही उनका वंश रघुवंश नाम से विख्यात हुआ। रघुवंशम् महाकाव्य वास्तव में कालिदास के कवित्व परिपाक का चरमोत्कर्ष है। रघुवंश में महाकाव्य के सभी लक्षण घटित होते हैं। इसके 19 सर्गों में कवि कालिदास ने इक्ष्वाकुवंशीय महाप्रतापी राजा दिलीप से लेकर अग्निवर्ण तक 31 राजाओं का आदर्शमय वर्णन किया है। भारतीय विद्वानों ने रघुवंश को कालिदास का सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ माना है, इसीलिये कालिदास के लिये ही **'रघुकार'** (रघुवंश का रचयिता) उपाधि का प्रयोग किया गया है। ग्रन्थ की लोकप्रियता तथा व्यापकता का परिचय विभिन्न काल में निर्मित 40 टीकाओं के अस्तित्व से भली-भाँति मिलता है। रघु के जन्म की पूर्वपीठिका से ही इस काव्य का आरम्भ होता है। दिलीप के गोचारण से रघु का जन्म होता है।

रघुवंश में मनु से लेकर सूर्यवंशी 31 राजाओं का जीवनवृत्त वर्णित है। इसमें दिलीप, रघु, अज, दशरथ और राम के जीवन का विशद वर्णन है। सर्गानुसार संक्षिप्त कथा इस प्रकार है–

सर्ग 1–राजा दिलीप की सन्तानहीनता और सन्तान-प्राप्त्यर्थ कुलगुरु वसिष्ठ के आदेशानुसार कामधेनु की पुत्री नन्दिनी की सेवा का व्रत लेना।

सर्ग 2–नन्दिनी की सेवा, राजा की परीक्षा, प्रसन्न नन्दिनी द्वारा सन्तान-प्राप्ति का वरदान।

सर्ग 3–रघु का जन्म, विद्याध्ययन, इन्द्र से युद्ध में विजय-प्राप्ति तथा रघु का राज्याभिषेक।

सर्ग 4– रघु के दिग्विजय का वर्णन।

सर्ग 5– ब्रह्मचारी कौत्स का गुरुदक्षिणार्थ 14 करोड़ रूपये की याचना, तदर्थ रघु का कुबेर पर आक्रमण, धन-वृष्टि, प्रसन्न कौत्स द्वारा रघु को पुत्र-लाभ का आशीर्वाद फलस्वरूप पुत्र अज का जन्म, इन्दुमती-स्वयंवर के लिये अज का प्रस्थान।

सर्ग 6– इन्दुमती स्वयंवर का वर्णन।

सर्ग 7– अज-इन्दुमती परिणय, प्रतिस्पर्धी राजाओं से युद्ध और अज की विजय।

सर्ग 8– अज का राज्याभिषेक, दशरथ-जन्म, इन्दुमती-वियोग और अज का विलाप।

सर्ग 9– दशरथ का मृगया-वर्णन, श्रवण कुमार की हत्या और दशरथ को शाप-प्राप्ति।

सर्ग 10– पुत्रेष्टि यज्ञ, राम आदि चार पुत्रों का जन्म।

सर्ग 11– सीता-स्वयंवर और राम आदि का विवाह।

सर्ग 12– राम-वनवास, सीताहरण, युद्ध, रावणवध।

सर्ग 13– राम का पुष्पक विमान से अयोध्या प्रत्यागमन तथा मार्गस्थ स्थलों का विशद वर्णन।

सर्ग 14– रामराज्याभिषेक, सीतापरित्याग।

सर्ग 15– कुश-लव-जन्म, राम का स्वर्गारोहण।

सर्ग 16– कुश का राज्याभिषेक, कुश का कुमुद्वती से विवाह।

सर्ग 17– कुश का स्वर्गवास, कुश-पुत्र अतिथि का राज्याभिषेक।

सर्ग 18– अतिथि तथा उसके वंशज 21 राजाओं का संक्षिप्त वर्णन।

सर्ग 19– अग्निवर्ण का राज्याभिषेक, उनकी अत्यधिक विषयासक्ति, राजयक्ष्मा से पीड़ित होकर स्वर्गवास, उनकी रानी का राज्याभिषेक, गर्भस्थ बालक के उत्तराधिकारी होने का अमात्यों द्वारा निर्णय।

रघुवंश-महाकाव्य के द्वितीय सर्ग का सारांश

महाराज मनु के वंश में राजा दिलीप हुए। उनके पास कोई सन्तान नहीं थी, अतः वे कुलगुरु वसिष्ठ की शरण में जाते हैं। गुरु वसिष्ठ राजा दिलीप को कामधेनु की पुत्री नन्दिनी नामक गाय की सेवा करने का आदेश देते हैं। राजा दिलीप नन्दिनी की सेवा करने में प्रवृत्त हो जाते हैं।

रात में पर्णशाला के अन्दर विश्राम कर लेने के पश्चात् प्रातःकाल प्रजापालक राजा दिलीप ने गुरु वसिष्ठ की नवप्रसूता उस नन्दिनी गाय को वन में चरने के लिए बन्धन से खोल दिया, जिसकी पूजा रानी सुदक्षिणा ने गन्ध एवं माला से कर दी थी और दूध पी चुकने के पश्चात् जिसका बछड़ा बाँध दिया गया था। कुछ दूर तक उनकी पत्नी सुदक्षिणा तथा सेवक साथ–साथ जाते हैं, परन्तु बाद में राजा उन सभी को वापस भेज देते हैं। राजचिह्न से रहित राजा दिलीप वन में नन्दिनी गाय की सेवा में लग गये। वह वन में उसको स्वादिष्ट घास खिलाकर, उसके शरीर को खुजलाकर तथा जंगली मच्छर एवं मक्खियों को उड़ाकर, जब वह खड़ी होती तो राजा भी खड़े हो जाते तथा जब वह चलती थी तो वे भी उसके पीछे–पीछे चलते थे, जब पानी पीती तो पानी पीते थे। इस प्रकार छाया की तरह राजा दिलीप उस नन्दिनी की सेवा में लगे रहते थे। दिन की समाप्ति पर जब राजा नन्दिनी को लेकर आश्रम आते थे तो महारानी सुदक्षिणा उनकी अगवानी करती थीं।

रात्रि के समय राजा दिलीप उस नन्दिनी के पास दीपक तथा भोजन सामग्री रख देते थे और जब वह सो जाती थी तो राजा भी सो जाते थे। प्रातःकाल उठकर फिर वह नन्दिनी की सेवा में प्रवृत्त हो जाते थे। इस प्रकार राजा को गाय की सेवा करते–करते इक्कीस दिन बीत गये। बाइसवें दिन नन्दिनी ने राजा की परीक्षा लेने के लिए जङ्गल में चरते–चरते हिमालय की एक गुफा में प्रवेश किया और एक शेर ने उस पर आक्रमण कर दिया। उसका करुण क्रन्दन सुनकर अन्दर जाने पर राजा ने देखा कि उसके ऊपर शेर बैठा है और नन्दिनी कातर होकर उनकी ओर देख रही है। यह देखते ही राजा ने शेर को मारने के लिए तरकस से बाण निकालकर उस पर प्रहार करना ही चाहा कि उनका हाथ रुक गया और वे चित्रलिखित से निःस्तब्ध हो गये। बाण चलाने में लज्जित हुए राजा को देखकर शेर मनुष्य की वाणी में कहता है – हे राजन्! मुझे मारने के लिए तेरा प्रयास व्यर्थ है, मैं कुम्भोदर नाम का भगवान् शङ्कर का सेवक हूँ। उनके पैर रखने से मेरी पीठ पवित्र हो गयी है। सामने जो देवदारु का वृक्ष देख रहे हो, इसको माँ पार्वती ने अपने हाथों से सींचा है और जब यहाँ से जाने लगी थी तो शिवजी ने मुझको इसकी रक्षा का कार्य सौंप दिया और कहा कि इस परिधि में जो भी जीव आयेगा वही तुम्हारा भोजन (भक्ष्य) होगा। अतः बहुत दिनों के बाद यह गाय आयी है, यही मेरे व्रत की पारणा है। राजा ने सिंह से कहा आप मेरे शरीर से व्रत की पारणा करें और इसको छोड़ दें। सिंह ने कहा – राजा तुम अत्यन्त मूर्ख मालूम

होते हो, क्योंकि यह सुन्दर शरीर, नयी अवस्था एवं सम्पूर्ण पृथ्वी का एकच्छत्र राज्य इन सबको इस तुच्छ गाय के लिए छोड़ना उचित नहीं है। जो वस्तु शस्त्र से रक्षित हो, परन्तु शस्त्र से उसकी रक्षा न की जा सके तो शस्त्र रखने वाले यशस्वियों का यश क्षीण नहीं होता। अतः आप वापस लौट जायें।

दिलीप ने सिंह से कहा – तुम मेरे मित्र हो। अतः आप मेरी प्रार्थना स्वीकार करें और मेरे शरीर से अपने व्रत की पारणा करें। सिंह राजा को खाने के लिए तैयार हो गया। राजा दिलीप का बाण से चिपका हुआ हाथ छूट गया। शस्त्र को रखकर नीचे मुँह करके अपने शरीर को उसके सामने समर्पित कर दिया। उसी समय उनके ऊपर आकाश से पुष्पों की वर्षा होने लगी और राजा के कानों में आवाज आती है कि हे वत्स! उठो। वह उठकर देखते हैं कि सिंह गायब हो गया है तथा सिर्फ गाय खड़ी है। अब गाय राजा से कहती है– माया का आश्रय लेकर मैंने तुम्हारी परीक्षा ली थी। मैं तुम्हारी सेवा से प्रसन्न हूँ, मनचाहा वर माँगो। दिलीप ने वंशकर्त्ता पुत्र सुदक्षिणा के गर्भ से उत्पन्न हो – यह वर माँगा। नन्दिनी ने कहा – तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी। अनन्तर गाय ने कहा – तुम मेरा दूध पियो। राजा ने कहा – बछड़े के पीने एवं गुरु वसिष्ठ के यज्ञक्रियादि से बचे दूध को गुरुजी की आज्ञा से पीऊँगा। इससे गाय और अधिक प्रसन्न हुई। इसके पश्चात् शाम को वह नन्दिनी के पीछे–पीछे आश्रम को आते हैं और गुरुजी से सम्पूर्ण समाचार निवेदित करते हैं। प्रातःकाल गुरुजी की आज्ञा से गोसेवा व्रत की पारणा करते हैं तथा गुरु, गुरुपत्नी एवं बछड़े सहित गाय की परिक्रमा करके राजा दिलीप अपनी राजधानी को प्रस्थान करते हैं। राजधानी पहुँचने पर पुरवासियों के द्वारा उनका आदर सत्कार होता है और पुनः राज्यभार को धारण करते हैं। गोसेवा के फलस्वरूप रानी सुदक्षिण ने गर्भ धारण किया।

विशेष– 'रघुवंशम्' महाकाव्य के द्वितीय सर्ग में कुल 75 श्लोक हैं। इस सर्ग में प्रायः उपजाति छन्द है तथा अन्तिम 75वाँ श्लोक मालिनी छन्द में है।

महाकविकालिदासप्रणीतम्

रघुवंशम्

(द्वितीयः सर्गः)

इति प्रगल्भं पुरुषाधिराजो
मृगाधिराजस्य वचो निशम्य।
प्रत्याहतास्त्रो गिरिशप्रभावा–
दात्मन्यवज्ञां शिथिलीचकार।।41।।

सन्दर्भः– प्रस्तुत श्लोक संस्कृत-साहित्य के विश्वप्रसिद्ध महाकाव्य एवं संस्कृत-साहित्य की 'लघुत्रयी' में परिगणित 'रघुवंशम्' के द्वितीय सर्ग से उद्धृत है। इसके रचयिता दीपशिखा उपाधि से समलङ्कृत कविकुलगुरु कालिदास हैं।



प्रसङ्गः – महाराज दिलीप ने अपने प्रति अपमान के भाव को कुछ कम कर दिया।

अन्वयः – पुरुषाधिराजः मृगाधिराजस्य इति प्रगल्भम् वचः निशम्य गिरिशप्रभावात् प्रत्याहतास्त्रः आत्मनि अवज्ञां शिथिलीचकार।

अर्थः – नरपति (राजा दिलीप) सिंह के इस (पूर्वोक्त) प्रकार के धृष्टतायुक्त वचन को सुनकर, भगवान् शंकर के प्रभाव से रुके हुये अस्त्र वाले, अपने अपमान के भाव को शिथिल कर दिया।

हिन्दी व्याख्या – कुम्भोदर नामक सिंह ने राजा दिलीप से कहा कि मैं भगवान् शिव का विशेष कृपापात्र हूँ और यदि तुम मुझ पर अस्त्र चला दो, तब भी मेरा कुछ बिगड़ने वाला नहीं है, अतः इस नन्दिनी गाय को मेरी पारणा (व्रतान्त भोजन) के लिए छोड़ दो और लज्जा त्याग कर लौट जाओ। सिंह की ऐसी ढीठ बातें (अथवा प्रौढ़ वचन) सुनकर राजा ने जान लिया कि भगवान् शिव के प्रभाव से ही मेरा अस्त्र विफल हुआ है और नृप ने अपने प्रति अपमान के भाव (आत्मग्लानि) को कुछ कम कर दिया।

शब्दार्थः – पुरुषाधिराजः = पुरुषों के महाराज। **मृगाधिराजस्य** = पशुओं के राजा की। **इति** = इस (पूर्वोक्त) प्रकार के। **प्रगल्भम्** = धृष्टतायुक्त, अर्थपूर्ण। **वचः** = वचन को। **निशम्य** = सुनकर। **गिरिशप्रभावात्** = शिवजी के प्रताप से। **प्रत्याहतास्त्रः** = विफल हो गया अस्त्र जिसका। **आत्मनि** = निजविषयक। **अवज्ञाम्** = अपमान को। **शिथिलीचकार** = कम कर दिया अथवा त्याग दिया।

विशेषः – रघुवंशमहाकाव्य के द्वितीय सर्ग में प्रथम श्लोक से 74वें श्लोक तक प्रायः उपजाति छन्द है। इसकी परिभाषा है–

अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ, पादौ यदीयावुपजातयस्ताः।।

इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा छन्दों के मिश्रण को उपजाति छन्द कहा जाता है।

सन्दर्भः – श्लोकोऽयं रघुवंशमहाकाव्यस्य द्वितीयसर्गात् समुद्धृतो वर्तते। अस्य प्रणेता कविताकामिनी-विलासः कविकुलगुरुः कालिदासोऽस्ति।

संस्कृत व्याख्याः – महाराजः दिलीपः अस्त्रस्य विफलतायाः कारणं ज्ञात्वा स्वस्मिन् अपमान भावं न्यूनीकृतवान्, पुरुषाधिराजः = पुरुषाणामधिराजो, नृपः = दिलीपः, मृगाधिराजस्य = मृगेन्द्रस्य केशरिणः, इति = इत्थम्, प्रगल्भम् = विस्पष्टम्, वचः = वाक्यम्, निशम्य = श्रुत्वा, गिरिशप्रभावात् = महेश्वरमहिम्नः, प्रत्याहतास्त्रः = कुण्ठितशस्त्रः, आत्मनि = निजविषये, अवज्ञाम् = गर्हणाम्, शिथिलीचकार = तत्याज, उपजातिछन्दः।

प्रत्यब्रवीच्चैनमिषुप्रयोगे,
तत्पूर्वभङ्गे वितथप्रयत्नः
जडीकृतस्त्र्यम्बकवीक्षणेन,
वज्रं मुमुक्षन्निव वज्रपाणिः।। 42।।

प्रसङ्गः – राजा दिलीप सिंह को उत्तर देने के लिए प्रस्तुत हुए।

अन्वयः – तत्पूर्वभङ्गे इषुप्रयोगे वितथप्रयत्नः वज्रं मुमुक्षन् त्र्यम्बकवीक्षणेन जडीकृतः वज्रपाणिः इव एनं प्रत्यब्रवीत् च।

अर्थः – यह पहला ही अवसर था कि महाराज दिलीप बाण प्रहार करने में विफल हुए थे। इसी प्रकार इन्द्र भी वज्र छोड़ने की इच्छा करने पर शिव जी के अवलोकन से जड़ीभूत हो गये थे। अस्तु, राजा सिंह का उत्तर देने लगे।

हिन्दी व्याख्या – किसी समय इन्द्र ने शिवजी पर वज्र चला दिया था। शिवजी ने केवल उनकी ओर देख भर दिया कि इन्द्र जड़वत् हो गये। ठीक वही दशा दिलीप महाराज की भी हो गयी। बाण चलाने में जीवन में पहली बार विफल होने वाले, हाथ बँधे राजा दिलीप ने सिंह से कहा।

शब्दार्थः – प्रत्यब्रवीत् = उत्तर दिया। **इषुप्रयोगे** = बाण चलाने में। **तत्पूर्वभङ्गे** = वही प्रथम विफलता थी, जिसकी। **वितथप्रयत्नः** = जिसका प्रयत्न विफल हो गया था। **जडीकृत** = कुण्ठित। **त्र्यम्बक** = शिव। **वीक्षणेन** = निरीक्षण से। **मुमुक्षन्** = छोड़ने की इच्छा करता हुआ। **वज्रपाणिः** = वज्र हो हाथ में जिसके, इन्द्र।

अलङ्कार – उपमा।

समासः – इषोः प्रयोगः इषु प्रयोगः, तस्मिन् इषुप्रयोगे, स एव पूर्वः भङ्गः यस्यासौ तत्पूर्वभङ्गः, तस्मिन् तत्पूर्वभङ्गे वितथः प्रयत्नो यस्यासौ वितथप्रयत्नः। न जडः अजडः अजडः जडः सम्पद्यमानोऽकारीति जडीकृतः। वज्रं पाणौ यस्यासौ वज्रपाणिः।

छन्दः – उपजाति।

संस्कृतव्याख्याः – नृपः दिलीपः सिंहं प्रति निवेदयितुं प्रस्तुतोऽभवत्– तत्पूर्वभङ्गे = सः पूर्वोक्तः एव पूर्वः प्रथमः भङ्गः प्रतिबन्धः यस्य तस्मिन्, इषुप्रयोगे = बाणप्रक्षेपे, वितथप्रयत्नः = विफलप्रयासः, अतएव वज्रम् = कुलिशम्, मुमुक्षन् = मोक्तुम् इच्छन्, त्र्यम्बकवीक्षणेन = शिवदृष्ट्या, जडीकृतः = निष्पन्दीकृतः, वज्रपाणिः = इन्द्रः, इव = यथा, एनम् = सिंहम् इत्यर्थः, प्रत्यब्रवीत् = प्रत्युवाच, च = समुच्चये।

त्रिपुरदाहावसरे पार्वतीक्रोडस्थिते बालस्वरूपिणि शिवे वज्रं मोक्तुमिच्छन्निन्द्रस्तद्विलोकनात् कुण्ठितबाहुर्बभूवेति महाभारतीया कथाऽत्रानुसन्धेया–"बाहुं सवज्रशक्रस्य क्रुद्धस्यास्तम्भयत् प्रभुः" इति। श्लोकेऽस्मिन् उपमालङ्कारः। उपजातिवृत्तम्।

संरुद्धचेष्टस्य मृगेन्द्र! कामं हास्यं वचस्तद् यदहं विवक्षुः।
अन्तर्गतं प्राणभृतां हि वेद सर्वं भवान् भावमतोऽभिधास्ये।। 43।।

प्रसङ्गः – महाराज दिलीप सिंह से आगे कही जाने वाली अपनी बात का औचित्य बताते हैं।

अन्वयः – मृगेन्द्र! संरुद्धचेष्टस्य तद् वचः कामं हास्यम् यत् अहं विवक्षुः हि भवान् प्राणभृताम् अन्तर्गतम् सर्वं भावं वेद, अतः अभिधास्ये।

अर्थः – हे मृगेन्द्र! मेरी चेष्टा व्यर्थ हो गयी है, अतः जो वचन मैं कहना चाहता हूँ, वह अवश्य ही हास्यास्पद है। पर आप जीवों के हृदय के सारे भावों को जानते हैं। इसलिए मैं (अपनी बात) कहूँगा।

हिन्दी व्याख्याः – राजा दिलीप सिंह के कथन के प्रत्युत्तर में कही जाने वाली अपनी बात के औचित्य को प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि वह (राजा) जो कुछ कहेगा, लोग उसकी खिल्ली ही उड़ायेंगे। तब तो राजा को वह बात कहनी ही नहीं चाहिए; किन्तु राजा कहने के लिए प्रस्तुत है, क्योंकि वह जानता है कि शिव का सेवक सिंह, प्राणधारियों के सभी मनोगत भावों को जानने में समर्थ है, अतः वह कहेगा तो सिंह उसकी बातों की हँसी नहीं उड़ायेगा। अब प्रश्न है कि जब सिंह मनोगत सभी भावों को जानने में समर्थ है, तो राजा दिलीप के हृदय की बात को भी जानता ही है, तो फिर राजा क्यों कह रहा है ? व्याख्याकारों का कहना है कि राजा आत्मसन्तुष्टि के लिए अपने हृद्गत भावों को सिंह से कहना चाह रहा है।

शब्दार्थः – संरुद्धचेष्टस्य = रुक गयी है क्रिया जिसकी, ऐसे मुझ दिलीप की। **कामम्** = अवश्य। **हास्यम्** = हँसने योग्य। **विवक्षुः** = कहने का इच्छुक। **अन्तर्गतम्** = अन्दर स्थित अर्थात् हृदय के भीतर रहनेवाला। **प्राणभृताम्** = प्राणियों के। **वेद** = जानता है। **अभिधास्ये** = कहूँगा।

अलङ्कारः – काव्यलिङ्ग।

संस्कृत व्याख्याः – राजा दिलीपः वक्ष्यमाणस्य औचित्यं व्यनक्ति– हे मृगेन्द्र! = हे पशूनामधीश्वर सिंह! संरुद्धचेष्टस्य = अवरुद्धव्यापारस्य मम दिलीपस्य इत्यर्थः, तत् = अग्रे वक्ष्यमाणस्य, वचः = वचनम्, कामम् = यथास्वम्, हास्यम् = उपहासयोग्यम्, यत् = वचः, अहम् = दिलीपः इत्यर्थः, विवक्षुः = वक्तुम् इच्छुः अस्मि, हि = यतः, भवान् = सिंहः इत्यर्थः, प्राणभृताम् = प्राणधारिणाम्, अन्तर्गतम् = मनोगतम्, सर्वम् = सकलम्, भावम् = अभिप्रायम्, वेद = जानाति, अतः = अस्मात् कारणात्, अभिधास्ये = कथयिष्यामि, अर्थान्तरन्यासालङ्कारः। उपजातिछन्दः।

मान्यः स मे स्थावरजङ्गमानां सर्गस्थितिप्रत्यवहारहेतुः।
गुरोरपीदं धनमाहिताग्नेर्नश्यत्पुरस्तादनुपेक्षणीयम्।।44।।

प्रसङ्गः – प्रस्तुत श्लोक में महाराज दिलीप की गुरुभक्ति का वर्णन है।

अन्वयः – स्थावरजङ्गमानां सर्गस्थितिप्रत्यवहारहेतुः स मे मान्यः। पुरस्तात् नश्यत् इदम् आहिताग्नेः गुरोः धनम् अपि अनुपेक्षणीयम्।

अर्थः – स्थावर और जंगम के रचने वाले, पालन करने वाले तथा संहार करने वाले (शिव जी) मेरे पूज्य हैं, तथापि अग्नि की परिचर्या करने वाले गुरु के धन (गाय) को मैं अपने सामने नष्ट नहीं होने दूँगा।

हिन्दी व्याख्याः – कुम्भोदर सिंह ने राजा दिलीप को बताया कि वह भगवान् शिव का विशेष कृपापात्र सेवक है और उन्हीं के आदेश से गुफा में रहकर देवदारु वृक्ष की रक्षा कर रहा है तथा भगवान् शिव ने ही उसका भोजन निश्चित किया हुआ है। तदनुसार वह नन्दिनी गाय को खाकर अपनी पारणा करेगा। इसके प्रत्युत्तर में राजा दिलीप सिंह से कहते हैं कि जड़-चेतन रूप प्राणियों की सृष्टि, उनका पालन एवं संहार करने वाले भगवान् शिव मेरे भी पूज्य हैं; किन्तु यह गाय मेरे गुरु महर्षि वसिष्ठ की है, वे अग्निहोत्री हैं और प्रतिदिन अग्निहोत्र (यज्ञ) कर्म के लिए उन्हें घृत इत्यादि की आवश्यकता पड़ती है जो इस गाय से ही प्राप्तव्य है अतः यह गुरू का धन है, इसलिए अपनी आँखों के सामने गुरु के इस धन (गाय) को नष्ट होते नहीं देख सकता।

शब्दार्थः – मे मान्यः = मेरे पूज्य हैं। **स्थावरजङ्गमानाम्** = अचर तथा चर के। **सर्ग** = उत्पादन। **स्थिति** = पालन। **प्रत्यवहार** = नाश। **गुरोरपि** = गुरु के भी। **आहिताग्नेः** = जो सर्वदा अग्नि को स्थापित किये रहते हैं। **पुरस्तात्** = सामने। **नश्यत्** = नष्ट होता हुआ। **अनुपेक्षणीयम्** = उपेक्षा करने योग्य नहीं है।

संस्कृतव्याख्याः – स्थावरजङ्गमानाम् = चराचराणाम्, सर्गस्थितिप्रत्यवहारहेतुः = सृष्टिपालनविनाशकारणम्, सः = भगवान् शिवः, मे = मम, मान्यः = पूज्यः एव, अत्रापि पुरस्तात् = अग्रे, नश्यत् = विनश्यत्, आहिताग्नेः = अग्निहोत्रिणः, गुरोरपि = वसिष्ठस्यापि, धनम् = गोरूपमिदं वित्तम्, अनुपेक्षणीयम् = मया नोपेक्षितव्यम्। उपजातिछन्दः।

स त्वं मदीयेन शरीरवृत्तिं देहेन निर्वर्तयितुं प्रसीद।
दिनावसानोत्सुकबालवत्सा विसृज्यतां धेनुरियं महर्षेः।।45।।

प्रसङ्गः – प्रस्तुत पद्य में महाराज दिलीप द्वारा सिंह की क्षुधा-शान्ति तथा गोरक्षा का उपाय बताने का वर्णन है।

अन्वयः – स त्वम् मदीयेन देहेन शरीरवृत्तिं निर्वर्तयितुम् प्रसीद, दिनावसानोत्सुकबालवत्सा इयम् महर्षेः धेनोः विसृज्यताम्।

अर्थः – आप मेरे शरीर से अपनी क्षुधा-निवृत्ति करके प्रसन्न हो जाइये तथा मुनि की इस गाय को छोड़ दें, क्योंकि अब दिन बीत गया है और इसका बछड़ा (अपनी माँ के लिए) उत्सुक हो रहा होगा।

हिन्दी व्याख्याः – एक ओर भगवान् शिव के सेवक सिंह की क्षुधा निवृत्ति आवश्यक है, तो दूसरी ओर अग्निहोत्री गुरु महर्षि वसिष्ठ के गोरूप धन नन्दिनी की रक्षा भी आवश्यक है। इसका समाधान करते हुए राजा दिलीप सिंह को उसकी भूख शान्त करने का उपाय बताते हुए कहते हैं कि आप इस गाय के बदले मेरे शरीर को खाकर अपनी भूख मिटा लीजिए और इस गुरु की गाय नन्दिनी को छोड़ दीजिए क्योंकि इसका एक छोटा बछड़ा भी है, जो दिनभर अपनी माँ से दूर रहने के कारण, मिलने के लिए व्याकुल होगा। इस प्रकार आप की भूख भी शान्त हो जायेगी, गुरु का गोरूप धन भी बच जायेगा और छोटे बछड़े की माँ भी सुरक्षित रहेगी।

शब्दार्थः – मदीयम् = मेरी। **शरीरवृत्तिम्** = शरीर के व्यापार को अर्थात् जीविका को। **निर्वर्तयितुम्** = निर्वाह करने के लिये। **प्रसीद** = कृपा करो। **वत्स** = बछड़ा। **विसृज्यताम्** = छोड़ दो।

संस्कृतव्याख्याः – सः = अङ्कागतसत्त्ववृत्तिः, त्वम् = भवान्, मदीयेन = मम, देहेन = शरीरेण, शरीरवृत्तिम् = प्राणधारणम्, उदरपूरणं वा निर्वर्तयितुम् = सम्पादयितुम्, प्रसीद = कृपां कुरु, दिनावसानोत्सुकबालवत्सा = सायमुत्कण्ठितबालशिशुः, महर्षेः = वसिष्ठस्य, इयं धेनुः = नन्दिनी, विसृज्यताम् = मुच्यताम्। उपजाति छन्दः।

अथान्धकारं गिरिगह्वराणां दंष्ट्रामयूखैः शकलानि कुर्वन्।
भूयः स भूतेश्वरपार्श्ववर्ती किञ्चिद्विहस्यार्थपतिं बभाषे।।46।।

प्रसङ्गः – प्रस्तुत पद्य में भगवान् शिव के समीप रहने वाले सिंह के द्वारा राजा दिलीप को उत्तर देने का वर्णन है।

अन्वयः – अथ भूतेश्वर पार्श्ववर्ती सः गिरिगह्वराणां अन्धकारम् दंष्ट्रामयूखैः शकलानि कुर्वन् किञ्चिद् विहस्य अर्थपतिम् भूयः बभाषे।

अर्थः– इसके बाद शिव जी के पास रहनेवाला वह सिंह दाँतों की कान्ति से पर्वत की गुफाओं के अन्धकार को दूर करता हुआ कुछ हँसकर राजा से पुनः बोला।

हिन्दी व्याख्याः – राजा दिलीप ने कुम्भोदर सिंह को नन्दिनी गाय के बदले अपना शरीर खाकर क्षुधा शान्त करने का प्रस्ताव दिया। इस पर भगवान् शिव के विशेष कृपापात्र सेवक सिंह ने अपनी दाढ़ों (दन्त-पंक्तियों) की किरणों से गुफा के अन्धकार को खण्ड-खण्ड (नष्ट) करते हुए कुछ हँसकर राजा से पुनः कहा। सिंह ने एक बार अपना परिचय देकर अपनी बात कह दी थी। किन्तु राजा की मूर्खता पर उसे हँसी आ गयी। अतः उसने कुछ हँसकर राजा से दुबारा कहा।

शब्दार्थः – गिरि = पर्वत। **गह्वराणाम्** = गुफाओं का। **दंष्ट्रा** = दाँत। **मयूखैः** = किरण। **शकलानि** = टुकड़े-टुकड़े। **भूयः** = पुनः। **भूतेश्वरपार्श्ववर्ती** = पास में रहनेवाला शिवानुचर। **अर्थपतिम्** = धनपति, राजा दिलीप। **बभाषे** = बोला।

अलङ्कार – इस श्लोक में उत्प्रेक्षा अलङ्कार का सुन्दर प्रयोग है।

संस्कृतव्याख्याः – अथ = दिलीपप्रार्थनान्तरम्, गिरिगह्वराणां = पर्वतकन्दराणाम्, अन्धकारम् = ध्वान्तम्, दंष्ट्रामयूखैः = स्वदन्तकिरणैः, शकलानि = खण्डानि, कुर्वन् = विदधन्, भूतेश्वरपार्श्ववर्ती = शिवानुचरः, सः = कुम्भोदरनामा सिंहः, किञ्चिद् विहस्य = ईषत्स्मितं कृत्वा, भूयः = पुनरपि, अर्थपतिम् = तं राजानं दिलीपम्, बभाषे = जगाद। उपजातिछन्दः।

एकातपत्रं जगतः प्रभुत्वं नवं वयः कान्तमिदं वपुश्च।
अल्पस्य हेतोर्बहु हातुमिच्छन्विचारमूढः प्रतिभासि मे त्वम्।।47।।

प्रसङ्गः – इस पद्य में सिंह द्वारा राजा दिलीप को कार्याकार्यविवेक में अज्ञानी कहने का वर्णन है।

अन्वयः – एकातपत्रं जगतः प्रभुत्वम्, नवं वयः, इदम् कान्तम् वपुश्च, अल्पस्य हेतोः बहु हातुम् इच्छन् त्वम् मे विचारमूढः प्रतिभासि।

अर्थः – आप (राजा दिलीप) थोड़ी-सी बात के लिये संसार का एकच्छत्र राज्य, नया यौवन तथा यह सुन्दर शरीर छोड़ना चाहते हैं। अतः आप मुझे विचारशून्य मालूम पड़ते हैं।

हिन्दी व्याख्याः – राजा दिलीप ने सिंह को नन्दिनी गाय के बदले अपना शरीर अर्पित करने का प्रस्ताव किया। सिंह को राजा की इस मूर्खता पर हँसी आ गयी और उसने राजा से कुछ हँसकर कहा कि तुम एक गाय के बदले अपना शरीर देकर संसार के एकच्छत्र साम्राज्य, अपनी नयी युवावस्था और इस सुन्दर शरीर को त्यागने की इच्छा कर रहे हो। अतः तुम मुझे विचार करने में मूर्ख प्रतीत हो रहे हो, जो कि थोड़े-से (एक तुच्छ गाय) के लिए अपना बहुत (संसार का एकच्छत्र साम्राज्य, दुर्लभ नवयौवन और सुन्दर शरीर) गँवाने की इच्छा कर रहे हो। थोड़े से के लिए बहुत गँवाना मूर्खों का ही काम है।

शब्दार्थः – एकातपत्रम् = एकच्छत्र। **प्रभुत्वम्** = अधिकार। **नवं वयः** = नयी अवस्था को। **कान्तम्** = सुन्दर। **वपुः** = शरीर। **अल्पस्य** = छोटी। **हातुम्** = त्यागने के लिये। **इच्छन्** = इच्छा करता हुआ। **प्रतिभासि** = मालूम पड़ते हो।

संस्कृतव्याख्याः – एकातपत्रम् = एकच्छत्रम्, जगतः = भूमण्डलस्य, प्रभुत्वम् = ऐश्वर्यम्, नवम् = नवीनम्, वयः = अवस्थाम्, इदम् = पुरतो विभाव्यमानम्, कान्तम् = मनोहरम्, वपुः = शरीरम् च, बहु = विपुलम्, अल्पस्य हेतोः = अत्यल्पेन कारणेन, हातुम् = त्यक्तुम्, इच्छन् = अभिलषन्, त्वम् = भवान्, मे = मम, विचारमूढः = विमर्शविकलः, प्रतिभासि = प्रतीयसे। उपजातिछन्दः।

भूतानुकम्पा तव चेदियं गौरेका भवेत्स्वस्तिमती त्वदन्ते।
जीवन्पुनः शश्वदुपप्लवेभ्यः प्रजाः प्रजानाथ! पितेव पासि।।48।।

प्रसङ्गः – प्रस्तुत श्लोक में सिंह द्वारा राजा दिलीप को नाना प्रकार से समझाने का वर्णन है।

अन्वयः – तव भूतानुकम्पा चेत्, इयम् एका गौः त्वदन्ते स्वस्तिमती भवेत्। हे प्रजानाथ! जीवन् पुनः पिता इव प्रजाः उपप्लवेभ्यः शश्वत् पासि।

अर्थः – हे राजन् ! यदि आप में जीवों के ऊपर दया है, तो केवल यही गाय आपके मरने पर कुशल से रहेगी और यदि आप जीते रहेंगे, तो पिता की तरह निरन्तर ही विघ्नों से प्रजाओं की रक्षा करेंगे।

हिन्दी व्याख्याः – सिंह प्रजा के कल्याण के लिए नन्दिनी गाय की अपेक्षा, राजा दिलीप की प्राणरक्षा को अधिक महत्त्वपूर्ण समझते हुए राजा से कहता है कि यदि प्राणियों पर दया करना आपका स्वभाव है और इस कारण से नन्दिनी की रक्षा करना चाहते हो, तो अपना जीवन बचाकर समस्त प्रजा के ऊपर दया करो। यदि तुम्हें गाय के बदले खा लूँगा तो तुम्हारा नाश हो जाने पर मात्र इस एक गाय की रक्षा हो सकेगी जबकि, हे प्रजानाथ ! तुम प्रजाओं के स्वामी हो, समस्त प्रजा की रक्षा करना

तुम्हारा कर्त्तव्य है। अतः यदि तुम जीवित रहोगे तभी तो प्रजा की हमेशा विपत्तियों से रक्षा करते रहोगे। अतः अपने प्राण गँवाकर इस एक गाय की रक्षा करना ठीक नहीं है। इस गाय को मेरे भोजन के लिए छोड़ दो और अपना जीवन बचा कर हमेशा प्रजा की विपत्तियों से रक्षा करते रहो।

शब्दार्थः – भूतानुकम्पा = प्राणियों के ऊपर दया। **त्वदन्ते** = तुम्हारे मरने पर। **शश्वत्** = सदैव। **उपप्लवेभ्यः** = उपद्रवों से। **पासि** = रक्षा करोगे।

अलङ्कार – प्रस्तुत पद्य में काव्यलिङ्ग अलङ्कार है।

संस्कृतव्याख्याः – तव = भवतः, भूतानुकम्पा = जीवदया, चेत = यदि, त्वदन्ते = त्वद्विनाशे सति, इयम् = एका पुरतो दृश्यमाना एकैव, गौः = नन्दिनी, स्वस्तिमती = कुशलिनी, भवेत् = सम्पद्येत, पुनः = किन्तु, हे प्रजानाथ = हे प्रजेश्वर! जीवन् = जीवितं धारयन्, शश्वत् = सदा, उपप्लवेभ्यः = उपद्रवेभ्यः, पिता इव = जनक इव, प्रजाः = सकलं लोकम् सन्ततिं च, पासि = रक्षसि। उपजातिछन्दः।

अथैकधेनोरपराधचण्डाद् गुरोः कृशानुप्रतिमाद्विभेषि।
शक्योऽस्य मन्युर्भवता विनेतुं गाः कोटिशः स्पर्शयता घटोध्नीः।।49।।

प्रसङ्गः – सिंह राजा दिलीप को क्रोध-निवारण का उपाय बताता है।

अन्वयः – अथ एकधेनोः अपराधचण्डात् कृशानुप्रतिमाद् गुरोः बिभेषि, अस्य मन्युः घटोध्नीः कोटिशः गाः स्पर्शयता भवता विनेतुम् शक्यः।

अर्थः – आपके गुरु के पास केवल एक ही गाय है अपराध होने पर उन्हें बड़ा क्रोध आता है, और वह अग्नि के समान जलने लगते हैं, इसलिए यदि आप अपने गुरु से डरते हैं तो आप घड़े के समान स्तनवाली अत्यन्त दुधारू करोड़ों गायें देकर उनका क्रोध-निवारण कर सकते हैं।

हिन्दी व्याख्याः – सिंह गाय को गँवा देने रूप अपराध के कारण राजा दिलीप के ऊपर गुरु वसिष्ठ के क्रोध की आशङ्का करते हुए गुरु के क्रोध को शान्त करने का उपाय बताता है। वह राजा से कहता है कि तुम्हारे गुरु के पास केवल यही एक नन्दिनी गाय है और इसे मैं खा लूँगा तो इसका नाश कराने वाले तुम पर गुरु अत्यन्त क्रुद्ध हो जायेंगे। वे अग्नि के समान तेजस्वी हैं और शापाग्नि में तुम्हें जला सकते हैं। अतः ऐसे गुरु से भय के कारण तुम गाय की रक्षा करना चाहते हो तो, तुम्हें भयभीत होने की आवश्यकता नहीं। तुम इस गाय के बदले घड़े के समान स्तनवाली करोड़ों दुधारू गायें देकर गुरु के क्रोध को शान्त कर सकते हो।

शब्दार्थः– एकधेनोः = एक ही गाय है जिसके (ऐसे गुरु वसिष्ठ से)। **अपराधचण्डात्** = अपराध होने पर अत्यन्त क्रोधित होने वाले (वसिष्ठ) से। **कृशानुप्रतिमात्** = अग्नि के सदृश। **बिभेषि** = डरते हो। **शक्यः** = योग्य। **मन्युः** = क्रोध। **विनेतुम** = दूर करने के लिये। **कोटिशः** = असंख्य। **स्पर्शयता** = देकर। **घटोध्नीः** = घड़े के समान बड़े स्तन हों जिनके ऐसी गायों को।

अलङ्कार– उपमा।

समासः– एका धेनुर्यस्य स एकधेनुः, तस्माद् एकधेनो।

संस्कृतव्याख्याः– सिंहः नृपं दिलीपं गुरोः क्रोधोपशमनं ज्ञापयति– अथ = यदि पक्षान्तरे, एकधेनोः = नन्दिनीमात्रधनस्य, अपराधचण्डाद् = गोविनाशे सति अत्यन्तकोपात्, कृशानुप्रतिमाद् = अग्नितुल्यात्, गुरोः = वसिष्ठाद् इत्यर्थः, बिभेषि = भीतोऽसि, तर्हि अस्य = गुरोः, मन्युः = क्रोधः, कोटिशः = असंख्याः, घटोध्नीः = कुम्भस्तनीः, गाः = धेनूः, स्पर्शयता = ददता, भवता = त्वया, विनेतुम् = अपनेतुम्, शक्यः = सम्भवः, श्लोकेऽस्मिन् 'कृशानुप्रतिमाद्' अथ च 'घटोध्नीः' इत्युभयत्र उपमालङ्कारः। उपजातिः छन्दः।

तद्रक्ष कल्याणपरम्पराणां भोक्तारमूर्जस्वलमात्मदेहम्।
महीतलस्पर्शनमात्रभिन्नमृद्धं हि राज्यं पदमैन्द्रमाहुः।।50।।

प्रसङ्गः– इस पद्य में सिंह द्वारा अन्ततः राजा दिलीप को स्व-शरीर की रक्षा करने का उपदेश देने का वर्णन है।

अन्वयः– तत् कल्याणपरम्पराणां भोक्तारम् ऊर्जस्वलम् आत्मदेहम् रक्ष, हि ऋद्धं राज्यम् महीतलस्पर्शनमात्रभिन्नम् ऐन्द्रं पदम् आहुः।

अर्थः– इसलिए अनेक कल्याणों को भोगनेवाले, अपने बलवान् शरीर को सुरक्षित रखिए। सम्पूर्ण समृद्धियों से भरे हुए राज्य को विद्वान् लोग इन्द्र का पद कहते हैं, उसमें अन्तर केवल यही है कि वह पृथ्वी पर स्थित है।

हिन्दी व्याख्याः– अनेक तर्कों द्वारा राजा दिलीप को समझाने के बाद अन्त में कुम्भोदर सिंह अपनी बातों का उपसंहार करते हुए राजा से कहता है कि हे राजन् ! गाय को मेरे भोजन के लिए छोड़कर अपने भोगों को भोगने वाले अपने शरीर की रक्षा करो। तुम्हारा शरीर बलवान् होने के कारण भोगों को भोगने में समर्थ है। यहाँ यह प्रश्न उठता है कि गाय की रक्षारूप स्वधर्म का पालन न कर सुखों के भोग में लग जाने के पाप के कारण राजा को स्वर्ग की प्राप्ति नहीं हो सकेगी, तो सिंह इस शङ्का का भी समाधान करते हुए कहता है कि विद्वज्जन समृद्ध राज्य को इन्द्र का पद कहते हैं अर्थात् धरती पर समृद्ध राज्य स्वर्ग के समान है। इन दोनों समृद्ध राज्य और स्वर्ग में मात्र एक ही अन्तर है कि समृद्ध राज्य में भूतल का स्पर्श है, और स्वर्ग में नहीं।

शब्दार्थः– कल्याणपरम्पराणाम् = अनेक कल्याणों को भोगनेवाले (शरीर) को। **ऊर्जस्वलम्** = बल से पूर्ण को। **आत्मदेहम्** = अपने शरीर को। **मही** = पृथ्वी। **महीतलस्पर्शनमात्रभिन्नम्** = भूतल के सम्बन्ध मात्र ही से अलग हुआ। **ऋद्धम्** = समृद्ध। **पदम्** = स्थान। **ऐन्द्रम्** = इन्द्र का। **आहुः** = कहते हैं।

अलङ्कार– इस श्लोक में अर्थान्तरन्यास अलङ्कार है।

संस्कृतव्याख्या– तत् = तस्मात्, कल्याणपरम्पराणाम् = सुखसन्ततीनाम्, भोक्तारम् = अनुभवितारम्, ऊर्जस्वलम् = बलवन्तं सर्वसाधनम् वा, आत्मदेहम् = स्व-शरीरम्, रक्ष = परिपालय, मा त्याक्षीः, हि = यतः,

ऋद्धम् = समृद्धम्, राज्यम् = भूमण्डलाधिपत्यम्, महीतलस्पर्शनमात्रभिन्नम् = केवलं भूतलस्पर्शमात्रेण भिन्नम्, ऐन्द्रम् = महेन्द्रस्य, पदम् = स्वर्गस्थानम्, आहुः = कथयन्ति। उपजातिछन्दः।

एतावदुक्त्वा विरते मृगेन्द्रे प्रतिस्वनेनास्य गुहागतेन।
शिलोच्चयोऽपि क्षितिपालमुच्चैः प्रीत्या तमेवार्थमभाषतेव।।51।।

प्रसङ्गः– इस पद्य में प्रतिध्वनि के रूप में जड़ पर्वत द्वारा भी सिंह के कथनों का मानों समर्थन किया गया।

अन्वयः– मृगेन्द्रे एतावद् उक्त्वा विरते शिलोच्चयः अपि अस्य गुहागतेन प्रतिस्वनेन उच्चैः क्षितिपालम् प्रीत्या तम् एव अर्थम् अभाषत इव।

अर्थः– इतना कहकर सिंह चुप हो गया। उसके शब्दों की प्रतिध्वनि गुफाओं में व्याप्त हो गयी और ऐसा मालूम पड़ने लगा, मानो पर्वत भी प्रेमपूर्वक राजा से वही बात जोर से कह रहा है।

हिन्दी व्याख्याः– जब सिंह राजा दिलीप से अपने शरीर की रक्षा करने और नन्दिनी गाय को स्वभोजनार्थ छोड़ देने के लिए कहकर चुप हो गया तो सिंह की आवाज के टकराने के कारण हिमालय की उस गुफा में प्रतिध्वनि हुई। इस पर कविकुलगुरु कालिदास की उत्प्रेक्षा है कि अपनी गुफा में उठी हुई प्रतिध्वनि के द्वारा पर्वत ने भी राजा दिलीप के प्रति प्रेम के कारण सिंह की बातों का समर्थन करते हुए जोर से कहा। भाव यह है कि मानों पर्वत ने भी सिंह की बातों को जोर देकर दुहराने (प्रतिध्वनि) के द्वारा उसे मान लेने का आग्रह किया अर्थात् गाय को सिंह के लिए छोड़कर राजा से अपने शरीर की रक्षा करने का आग्रह किया।

शब्दार्थः– एतावत् = इतना। **उक्त्वा** = कहकर के। **प्रतिस्वनेन** = गूँज से। **गुहागतेन** = गुफा में टकराकर आये हुए से। **शिलोच्चयः** = पर्वत। **क्षितिपालम्** = राजा दिलीप से। **उच्चैः** = जोर से। **प्रीत्या** = प्रेम से। **अर्थम्** = प्रयोजन। **अभाषत इव** = कहता हुआ-सा मालूम पड़ा।

अलङ्कार–– इस श्लोक में उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

संस्कृतव्याख्याः– मृगेन्द्रे = मृगराजे, एतावत् = ईयन्मात्रम्, उक्त्वा = कथयित्वा, विरते = निवृत्ते, गुहागतेन = कन्दरोत्थितेन, अस्य = मृगेन्द्रस्य, प्रतिस्वनेन = प्रतिध्वनिना, शिलोच्चयः = पर्वतः, अपि = पुनः, प्रीत्या = प्रेम्णा, तमेवार्थं = सिंहोक्तमेव प्रयोजनम्, क्षितिपालम् = पृथ्वीपालम् राजानम् दिलीपम्, उच्चैः = वेगेन, अभाषतेव = उवाचेव वा अवदत् इव, श्लोकेऽस्मिन् उत्प्रेक्षालङ्कारः। उपजातिछन्दः।

निशम्य देवानुचरस्य वाचं मनुष्यदेवः पुनरप्युवाच।
धेन्वा तदध्यासितकातराक्ष्या निरीक्ष्यमाणः सुतरां दयालुः।।52।।

प्रसङ्गः– प्रस्तुत श्लोक में महाराज दिलीप की गो के प्रति दया का वर्णन है।

अन्वयः– देवानुचरस्य वाचम् निशम्य तदध्यासितकातराक्ष्या धेन्वा निरीक्ष्यमाणः मनुष्यदेवः सुतरां दयालुः (सन्) पुनः अपि उवाच।

अर्थः– शिव जी के अनुचर की वाणी को सुनकर उस (सिंह) से आक्रान्त तथा कातरपूर्ण नेत्रों से नन्दिनी के देखे जाने पर अत्यन्त दयालु राजा दिलीप ने सिंह से पुनः कहा।

हिन्दी व्याख्याः– कुम्भोदर सिंह राजा दिलीप को समझाते हुए कहता है कि अपने शरीर की रक्षा करो और नन्दिनी गाय को मेरे भोजन के लिए छोड़ दो, क्योंकि सिंह, देव अर्थात् भगवान् शिव का सेवक था, अतः राजा को उसकी बात मान लेनी चाहिए थी; किन्तु सिंह से आक्रान्त वह गाय भयभीत नेत्रों से राजा को आशा भरी दृष्टि से देख रही थी कि यह राजा मेरे प्राणों की रक्षा के लिए कुछ न कुछ अवश्य करेंगे और मनुष्यों के स्वामी अर्थात् राजा दिलीप स्वभाव से अत्यन्त दयालु भी थे, अतएव एक बार अपनी बात कह लेने के बाद सिंह द्वारा समझाने के बावजूद राजा ने गाय की रक्षा के लिए फिर कहा।

शब्दार्थः– निशम्य = सुनकर। **देवानुचरस्य** = शिव जी के अनुचर। **वाचम्** = वाणी को। **अध्यासित** = आक्रान्त। **कातर** = भयचकित। **अक्ष्या** = आँखें। **निरीक्ष्यमाणः** = देखा जाता हुआ। **मनुष्यदेवः** = मनुष्य में देव अर्थात् राजा ने। **सुतराम्** = अत्यन्त। **उवाच** = कहा।

अलङ्कार– इस श्लोक में परिकर अलङ्कार है।

संस्कृतव्याख्याः– देवानुचरस्य = शिवकिङ्करस्य सिंहस्य, वाचम् = वाणीम्, निशम्य = श्रुत्वा, तदध्यासितकातराक्ष्या = सिंहाक्रमणभयतरललोचनया, धेन्वा = गवा नन्दिन्या, निरीक्ष्यमाणः = नितरां विलोक्यमानः, सुतराम् = अत्यन्तम्, दयालुः = कारुणिकः, मनुष्यदेवः = नराधिपः, पुनः = भूयोऽपि, उवाच = आबभाषे। उपजातिछन्दः।

क्षतात्किल त्रायत इत्युदग्रः क्षत्त्रस्य शब्दो भुवनेषु रूढः।
राज्येन किं तद्विपरीतवृत्तेः प्राणैरुपक्रोशमलीमसैर्वा।।53।।

प्रसङ्गः– प्रस्तुत श्लोक में महाराज दिलीप द्वारा क्षत्रिय धर्म का अर्थ स्पष्ट किया गया है।

अन्वयः– उदग्रः क्षत्त्रस्य शब्दः 'क्षतात् त्रायते' इति व्युत्पत्त्या किल भुवनेषु रूढः। तद्विपरीवृत्तेः राज्येन किम्, उपक्रोशमलीमसैः प्राणैः वा किम्?

अर्थः– उन्नत क्षत्रिय का वाचक 'क्षत्त्र' शब्द 'क्षतात् त्रायते' (नाश से बचाने वाला) इस व्युत्पत्ति से भुवनों में प्रसिद्ध है। इसके विपरीत आचरण वाले (मुझ दिलीप) को राज्य से क्या ? अथवा निन्दा से मलिन प्राणों से क्या (लाभ) ?

हिन्दीव्याख्याः– सिंह ने राजा दिलीप को समझाया था कि संसार के एकच्छत्र राज्य, नयी युवावस्था और सुन्दर शरीर को एक तुच्छ गाय के लिए त्याग देने की मूर्खता न करें। इसी बात का उत्तर देते हुए राजा सिंह से कहता है कि क्षत्रिय वर्ण के वाचक 'क्षत्त्र' शब्द का अर्थ है – 'नाश से बचाने वाला' और इसी अर्थ में यह लोक में प्रसिद्ध है। मैं क्षत्रिय होकर भी यदि इस गाय की रक्षा न कर सका तो स्वधर्म का पालन न करने के कारण क्षत्रियत्व से च्युत हो जाने पर राज्य लेकर क्या करूँगा। अर्थात् उस स्थिति में संसार के एकच्छत्र राज्य का स्वामी होना व्यर्थ है और गाय की बलि

देकर अपने प्राण बचा लेने पर मेरी सर्वत्र निन्दा होगी। अतः निन्दा (अपयश) से मलिन (कलंकित) प्राणों वाले इस शरीर को धारण करना भी व्यर्थ है। इससे अच्छा तो यही है कि मैं अपना शरीर आपको भोजन के लिए सौंप कर इस नन्दिनी गाय की रक्षा करूँ।

शब्दार्थः– **क्षतात्** = नाश से। **त्रायते** = रक्षा करता है। **इति** = ऐसा। **उदग्रः** = उन्नत। **क्षत्त्र** = क्षत्रियवर्ण का। **भुवनेषु** = संसार में। **रूढः** = प्रसिद्ध। **तद्विपरीतवृत्तेः** = जिस मनुष्य के कर्म उसके विपरीत हों उसके। **उपक्रोश** = निन्दा। **मलीमस** = मलिन।

अलङ्कार– यहाँ काव्यलिङ्ग अलङ्कार का प्रयोग है।

संस्कृतव्याख्याः– उदग्रः = उन्नतः, क्षत्त्रस्य = क्षत्त्रियस्य, शब्दः = वाचकः, क्षतात् = नाशात्, त्रायते = रक्षति, इति हेतोः, भुवनेषु = लोकेषु, रूढः = प्रसिद्धः, किल = खलु, तद्विपरीतवृत्तेः = तादृशक्षत्त्रशब्दार्थ विरुद्धव्यापारस्य, राज्येन = राजभावेन, किम् ? = न किमपि फलम्, उपक्रोशमलीमसैः = निन्दामलिनैः, प्राणैः = असुभिः वा किम्? न कोऽपि लाभः? उपजातिछन्दः।

कथं नु शक्योऽनुनयो महर्षेर्विश्राणनाच्चन्यपयस्विनीनाम्।
इमामनूनां सुरभेरवेहि रुद्रौजसा तु प्रहृतं त्वयास्याम्।।54।।

प्रसङ्गः–इस श्लोक में राजा दिलीप, सिंह से कहते हैं कि करोड़ों गायें देकर महर्षि वसिष्ठ का क्रोध शान्त करना सम्भव नहीं है।

अन्वयः– अन्यपयस्विनीनाम् विश्राणनात् महर्षेः अनुनयः कथम् नु शक्यः, इमाम् सुरभेः अनूनाम् अवेहि अस्याम् त्वया तु रुद्रौजसा प्रहृतम्।

अर्थः– दूसरी गायों को देने से मुनि के क्रोध की शान्ति कैसे हो सकती है? इसे (नन्दिनी को) कामधेनु से कम न समझो। यह भगवान् शिव का प्रभाव है कि तुम उसके ऊपर आक्रमण कर सके हो।

हिन्दी व्याख्याः– सिंह ने राजा दिलीप से कहा था कि घड़े के समान स्तनों वाली करोड़ों गायें देकर गुरु वसिष्ठ के क्रोध को शान्त कर सकते हो। इसके प्रत्युत्तर में राजा सिंह से कहता है कि दूसरी उत्तम दूध वाली गायें देकर भी गुरु के क्रोध को दूर करना सम्भव नहीं है, क्योंकि दूसरी गायें इस नन्दिनी की बराबरी नहीं कर सकती। यह देवताओं की गाय कामधेनु की पुत्री नन्दिनी किसी भी प्रकार से कामधेनु से कम नहीं है। अर्थात् कामधेनु के समान यह भी कामनाओं को पूर्ण करने वाली दिव्य गाय है। इस पर हिंसक जन्तुओं द्वारा आक्रमण करना सम्भव नहीं। कुम्भोदर सिंह ने जो इस पर आक्रमण किया है, वह भगवान् शिव के प्रताप से ही सम्भव हुआ है, अन्यथा वह नन्दिनी का कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता था। इस प्रकार सिंह ने जो गाय के लिए 'अल्प' शब्द का प्रयोग किया था, उसका भी उत्तर राजा ने दे दिया।

शब्दार्थः– शक्यः = सकता है। **अनुनयः** = क्रोध को शान्त करना। **विश्राणनात्** = देने से। **पयस्विनीनाम्** = दुधारू गायों के। **अनूनाम्** = कम नहीं। **सुरभेः** = कामधेनु से। **अवेहि** = समझो। **रुद्रौजसा** = शिव के तेज से। **प्रहृतम्** = प्रहार किया है।

अलङ्कार– यहाँ काव्यलिङ्ग अलङ्कार है।

संस्कृतव्याख्याः– महर्षेः = वसिष्ठस्य, अनुनयः = कोपप्रसादनम्, च = वा, अन्यपयस्विनीनाम् = अपरासां भूरिक्षीराणां कोटिघटोध्नीनाम्, विश्राणनात् = दानात्, कथं नु शक्यः = कथङ्कारशक्यः, यत् इमाम् = नन्दिनीम्, सुरभेः = कामधेनोः, नूनाम् = अहीनम्, अवेहि = जानीहि, त्वया = सिंहेन, अस्याम् = नन्दिन्याम्, रुद्रौजसा = शिवमहिम्ना, प्रहृतम् = प्रहारः कृतः। उपजातिछन्दः।

सेयं स्वदेहार्पणनिष्क्रयेण न्याय्या मया मोचयितुं भवत्तः।
न पारणा स्याद्विहता तवैवं भवेदलुप्तश्च मुनेः क्रियार्थः।।55।।

प्रसङ्गः– प्रस्तुत श्लोक में राजा ने सिंह को अपना शरीर देकर गाय को छुड़ाने की सिंह से इच्छा व्यक्त की।

अन्वयः– मया स्वदेहार्पणनिष्क्रयेण सा इयम् भवत्तः मोचयितुम् न्याय्या। एवम् तव पारणा विहता न स्यात्, मुनेः क्रियार्थः च अलुप्तः भवेत्।

अर्थः– इसलिए मुझे उचित है कि इसके बदले मैं अपनी देह देकर इसे तुमसे मुक्त कराऊँ। ऐसा करने से तुम्हारी पारणा भी भङ्ग नहीं होगी और मुनि की क्रिया का साधन भी नष्ट नहीं होगा।

हिन्दी व्याख्याः– सिंह ने राजा दिलीप से जो यह कहा था कि एक तुच्छ गाय के लिए अपना सर्वस्व एवं शरीर त्याग देने की इच्छा वाले तुम मुझे विचारमूढ़ प्रतीत होते हो – इसके प्रत्युत्तर में राजा गाय के बदले अपने शरीर के अर्पण को न्यायसंगत ठहराते हुए कहता है कि इस दिव्य गाय नन्दिनी के बदले अपने शरीर के अर्पण रूपी मूल्य द्वारा इसे बचा लेना न्यायोचित है और ऐसा होने पर अर्थात् यदि सिंह राजा को खा लेता है और गाय को छोड़ देता है तो सिंह की पारणा (व्रतान्त भोजन) भी सम्पन्न हो जायेगी और मुनि वसिष्ठ की होमादि क्रियाओं की साधनभूत गाय के बच जाने से उनकी हवनादिक क्रियायें भी यथावत् चलती रहेगी।

शब्दार्थः– अर्पण = दान। **निष्क्रयेण** = बदले से। **न्याय्या** = योग्य। **मोचयितुम्** = मुक्त करना। **भवत्तः** = आपसे। **पारणा** = व्रतान्त भोजन। **स्यात्** = होगा। **विहता** = नष्ट। **अलुप्तः** = नष्ट नहीं होगी। **क्रियाऽर्थः** = क्रिया रूपी प्रयोजन (यज्ञरूपी प्रयोजन), यज्ञ होमादि क्रिया ही मुनि के प्रयोजन थे।

संस्कृतव्याख्याः– सा इयम् = कामधेनुसदृशी नन्दिनी गौः, स्वदेहार्पणनिष्क्रयेण = निजकायत्यागतुल्यमूल्यप्रदानेन, भवत्तः = त्वत्तः, मोचयितुम् = त्याजयितुम्, न्याय्या = योग्या, एवम् = अनया, तव = भवतः, पारणा = व्रतान्तभोजनम्, विहता = नष्टा, न स्यात् = न हि भवेत् किञ्च, मुनेः = ऋषेः वसिष्ठस्य, क्रियार्थश्च = यज्ञादिरूपोऽर्थश्च, अलुप्तः = अनवरुद्धः। भवेत् = सम्पद्येत।

भवानपीदं परवानवैति महान्हि यत्नस्तव देवदारौ।
स्थातुं नियोक्तुर्नहि शक्यमग्रे विनाश्य रक्ष्यं स्वयमक्षतेन।।56।।

प्रसङ्गः– प्रस्तुत पद्य में राजा दिलीन ने स्वामी-सेवक के सम्बन्ध का वर्णन किया है।

अन्वयः– परवान् भवान् अपि इदम् अवैति, हि तव देवदारौ महान् यत्नः। रक्ष्यम् विनाश्य स्वयम् अक्षतेन नियोक्तुः अग्रे स्थातुम् न हि शक्यम्।

अर्थः– पराधीन होते हुए आप भी यह जानते हैं, क्योंकि आप इस देवदारु की बड़ी प्रयत्न से रक्षा करते हैं। रक्षा करनेयोग्य वस्तु को नष्ट करके स्वयं बिना घायल हुए शरीर से, मालिक के समक्ष नौकर नहीं ठहर सकता।

हिन्दी व्याख्याः– राजा दिलीप गाय के बदले अपने शरीरार्पण के प्रस्ताव को उचित ठहराने के लिए सिंह को ही प्रमाण रूप में प्रस्तुत करते हुए सिंह से कहता है कि आप भी दूसरे के अधीन हैं और मैं भी दूसरे के अधीन हूँ। आप भगवान् शिव के अधीन हैं और मैं गुरु वसिष्ठ के अधीन हूँ। अतः आप इस बात को भलीभाँति जानते हैं कि रक्षणीय वस्तु का नाश कराकर स्वयं बिना घायल हुए स्वामी के सामने खड़ा होना सम्भव नहीं है। यदि देवदारु वृक्ष को कोई हानि पहुँची तो आप (सिंह) अपने स्वामी भगवान् शिव को क्या मुँह दिखायेंगे ? तभी तो आप इस देवदारु की रक्षा महान् यत्न से कर रहे हैं। इसी प्रकार इस गाय का नाश कराकर मैं अपने स्वामी गुरु वसिष्ठ के सामने क्या मुँह लेकर जाऊँगा ? क्योंकि आप पराधीन व्यक्ति की विवशता को जानते हैं, अतः मुझ पराधीन की भी विवशता को जानकर मुझे खा लीजिए और इस नन्दिनी गाय को छोड़ दीजिए।

शब्दार्थः– भवान् = श्रीमान्, आप। **परवान्** = पराधीन। **अवैति** = जानते हैं। **तव** = आपका। **देवदारौ** = देवदारु के विषय में। **स्थातुम्** = खड़ा होना। **शक्यम्** = उचित सम्भव। **विनाश्य** = नष्ट करवाकर। **रक्ष्यम्** = रक्षा करने हेतु सौंपी हुई वस्तु। **अक्षतेन** = कुशलपूर्वक, बिना घायल हुए।

अलङ्कार– यहाँ अर्थान्तरन्यास अलङ्कार है।

संस्कृतव्याख्याः– परवान् = पराधीनः, भवानपि = त्वं सिंह इत्यर्थः, इदम् = कर्त्तव्यगुरुत्वम्, अवैति = जानाति, हि = यतः, तव = भवतः, देवदारौ = देवदारुतरुरक्षणे, महान् = भूयान्, यत्नः = पर्यवेक्षणप्रयासो विभाव्यते, रक्ष्यम् = रक्षणीयम्, विनाश्य = नाशयित्वा, स्वयम् = आत्मना, अक्षतेन = अव्रणेन कुशलेन वा, नियोक्तुः = नियोजकस्य, स्वामिनः, अग्रे = पुरतः, स्थातुम् = सन्निधातुम्, शक्यं न हि = साध्यम् नैव। उपजातिछन्दः।

किमप्यहिंस्यस्तव चेन्मतोऽहं यशःशरीरे भव मे दयालुः।
एकान्तविध्वंसिषु मद्विधानां पिण्डेष्वनास्था खलु भौतिकेषु।।57।।

प्रसङ्गः– प्रस्तुत श्लोक में राजा दिलीप के पाञ्चभौतिक शरीर में अनासक्ति का वर्णन है।

अन्वयः– किमपि अहं तव अहिंस्यः मतः चेत् मे यशःशरीरे दयालुः भव। मद्विधानाम् एकान्तविध्वंसिषु भौतिकेषु पिण्डेषु खलु अनास्था (भवति)।

अर्थः– यदि आप किसी प्रकार यह समझते हैं कि मैं मारे जाने योग्य नहीं हूँ, तो मेरे यश रूपी शरीर पर दया कीजिए। मेरे समान लोगों का, इस शरीर में कोई प्रेम नहीं है, क्योंकि यह पञ्च तत्त्वों से निर्मित है और (एक दिन) अवश्य नष्ट हो जायेगा।

हिन्दी व्याख्याः– सिंह ने राजा दिलीप को बार-बार समझाया कि गाय को मेरे भोजन के लिए छोड़ दो और अपने शरीर की रक्षा करो। इसके प्रत्युत्तर में राजा दिलीप सिंह से कहता है यदि आप मुझे अवध्य समझकर मुझे नहीं खाना चाहते हैं तो आप मेरे यशः शरीर पर दया कीजिए अर्थात् मेरे यशःशरीर की रक्षा कीजिए। इस नन्दिनी गाय को छोड़ दीजिए और मुझे खा लीजिए– ऐसा करने से ही मेरे यशः शरीर की रक्षा हो सकेगी, क्योंकि मुझ जैसे सत्य और असत्य का विवेक करने में समर्थ लोग अवश्य विनाशशील, पृथ्वी आदि पञ्चभूतों से निर्मित शरीरों में आस्था नहीं रखते। इस शरीर का एकमात्र अन्त है नाश। अतः गाय के बदले इस नाशवान् शरीर को आपके भोजन के लिए सौंपकर यश की रक्षा करना ही उचित है।

शब्दार्थः– किमपि = अथवा। **अहिंस्यः** = न मारे जाने योग्य। **मतः** = विचार किया हुआ, माना गया। **एकान्तविध्वंसिषु** = अवश्य नष्ट होनेवाले। **मद्विधानाम्** = मुझ सदृश लोगों की। **पिण्डेषु** = पिण्डों में। **अनास्था** = अनपेक्षा। **भौतिकेषु** = पञ्चमहाभूतों के बने हुए।

अलङ्कार– यहाँ अर्थान्तरन्यास अलङ्कार है।

संस्कृतव्याख्याः– किमपि = अथवा, अहम् = दिलीपः, तव = भवतः सिंहस्य इत्यर्थः, अहिंस्यः = अवध्यः, मतश्चेत् = सम्मतो यदि तर्हि, मे = मम दिलीपस्य, यशःशरीरे = कीर्तिकलेवरे, दयालुः = कृपालुः, भव = स्याः, मद्विधानाम् = मादृशानाम्, एकान्तविध्वंसिषु = अवश्यविनाशिषु, भौतिकेषु = पञ्चभूतनिर्मितेषु, पिण्डेषु = शरीरेषु, अनास्था = अनादरः, खलु = किल। उपजातिछन्दः।

सम्बन्धमाभाषणापूर्वमाहुर्वृत्तः स नौ सङ्गतयोर्वनान्ते।
तद्भूतनाथानुग! नार्हसि त्वं सम्बन्धिनो मे प्रणयं विहन्तुम्।।58।।

प्रसङ्गः– प्रस्तुत श्लोक में राजा दिलीप की व्यवहारकुशलता का वर्णन है।

अन्वयः– सम्बन्धम् आभाषणपूर्वम् आहुः। सः वनान्ते सङ्गतयोः नौ वृत्तः। तत् हे भूतनाथानुग! त्वम् सम्बन्धिनः मे प्रणयम् विहन्तुम् न अर्हसि।

अर्थः–बातों से ही सम्बन्ध होता है। हम दोनों के परस्पर वन में मिलने से सम्बन्ध स्थापित हो गया है, अतः हे शिव के अनुचर! तुम मुझ सम्बन्धी की प्रार्थना को अस्वीकार करने योग्य नहीं हो।

हिन्दी व्याख्याः– सिंह की बातों का उत्तर दे देने के पश्चात् अन्त में राजा दिलीप मित्रता का वास्ता देते हुए उससे अपनी बात मान लेने का आग्रह करता है। राजा सिंह से कहता है कि सम्बन्ध वार्तालाप से ही बनता है अर्थात् सम्बन्ध या मित्रता का कारण वार्तालाप (आपस में बातचीत) ही है। पहले वार्तालाप होता है और इसके बाद सम्बन्ध बन जाता है। इस वनप्रान्त में मिले हुए हम

दोनों (राजा और सिंह) के बीच वार्तालाप होने के कारण वह सम्बन्ध (मित्रता) हो चुका है। अतः हे भगवान् शिव के सेवक सिंह। आप मुझ सम्बन्धी (मित्र) की प्रार्थना को ठुकराने के योग्य नहीं है अर्थात् आप मित्रता के नाते मेरी प्रार्थना स्वीकार कर लीजिए। मेरे इस नाशवान् शरीर को खा लीजिए और गुरु वसिष्ठ की गाय नन्दिनी को छोड़ दीजिए।

शब्दार्थः– आभाषणपूर्वम् = आपस में बातचीत ही जिसका कारण है। **आहुः** = कहते हैं। **वृत्तः** = हो गया। **नौ** = हम दोनों का। **सङ्गतयोः** = मिले हुए। **वनान्ते** = वन में। **हे भूतनाथानुग!** = भूतनाथ शिव के अनुचर। **नार्हसि** = योग्य नहीं हो। **प्रणयम्** = प्रार्थना को। **विहन्तुम्** = अस्वीकार करने हेतु अथवा विफल करने के लिए।

अलङ्कार—यहाँ काव्यलिङ्ग अलङ्कार है।

संस्कृतव्याख्याः– सम्बन्धम् = सख्यम्, आभाषणपूर्वम् = आलापमात्रहेतुकम्, आहुः = वदन्ति, बुधाः इति शेषः, सः = सम्बन्धः, वनान्ते = काननप्रान्ते, इह वने, सङ्गतयोः = मिलितयोः, नौ = आवयोः, वृत्तः = सञ्जात एव, तत् = तस्मात् कारणात्, हे भूतनाथानुग! = हे शिवानुचर! त्वम् = भवान्, सम्बन्धिनः = सख्युः, मे = मम, प्रणयम् = प्रार्थनाम्, विहन्तुम् = विफलीकर्त्तुम्, नार्हसि = न योग्योऽसि। उपजातिछन्दः।

तथेति गामुक्तवते दिलीपः सद्यः प्रतिष्टम्भविमुक्तबाहुः।
स न्यस्तशस्त्रो हरये स्वदेहमुपानयत्पिण्डमिवामिषस्य।।59।।

प्रसङ्गः– प्रस्तुत श्लोक में महाराज दिलीप के द्वारा सिंह को अपना शरीर समर्पित करने का वर्णन है।

अन्वयः– सः दिलीपः 'तथा इति' गाम् उक्तवते हरये सद्यः प्रतिष्टम्भ विमुक्तबाहुः सः न्यस्तशस्त्रः स्वदेहम् आमिषस्य पिण्डम् इव उपानयत्।

अर्थः–जैसे ही सिंह ने कहा–''ऐसा ही हो'', तत्क्षण दिलीप की भुजा बन्धन से मुक्त हो गयी। उन्होंने अपना शस्त्र रखकर मांस के पिण्ड के समान अपने शरीर को समर्पित कर दिया।

हिन्दी व्याख्याः– राजा दिलीप ने अनेक तर्क प्रस्तुत करते हुए कुम्भोदर सिंह के सामने अपनी बात रखी कि गुरु की गाय नन्दिनी को छोड़ दीजिए और इसके बदले मुझे खा लीजिए। सिंह ने राजा की बात से सहमत होते हुए कहा कि ठीक है, वैसा ही हो (तथास्तु) अर्थात् मैं गाय के बदले आपको ही खा लेता हूँ। सिंह के ऐसा कहते ही राजा की जो भुजा जड़वत् हो गयी थी, बन्धनमुक्त हो गयी और उसके पश्चात् राजा ने अपना शस्त्र (धनुष-बाण) रखकर अपने शरीर को मांस के पिण्ड के समान सिंह को अर्पित कर दिया।

शब्दार्थः– तथेति = ऐसा ही हो। **गाम्** = वाणी को। **उक्तवते** = कह चुके हुए सिंह के लिये। **सद्यः** = तत्काल। **प्रतिष्टम्भ** = प्रतिबन्ध। **विमुक्त** = छूटी हुई। **न्यस्तशस्त्रः** = त्याग दिया शस्त्र जिसने। **हरये** = सिंह को। **उपानयत्** = समर्पण कर दी। **पिण्डम्** = पिण्ड । **आमिषस्य** = मांस का।

अलङ्कार— उपमा।

संस्कृतव्याख्याः– राजा दिलीपः स्वदेहं सिंहाय समर्पयत् – तथा इति = 'तथास्तु' एवंविधाम्, गाम् = वाणीम्, उक्तवते = कथितवते, हरये = सिंहाय, सद्यः = तत्क्षणम्, प्रतिष्टम्भविमुक्तबाहुः = प्रतिबन्धात् मुक्तभुजः, सः = असौ दिलीपः इत्यर्थः, न्यस्तशास्त्रः = त्यक्तायुधः सन्, स्वदेहम् = आत्मनः शरीरम्, आमिषस्य = मांसस्य, पिण्डम् = कवलम्, इव = यथा, उपानयत् = समर्पयत्, श्लोकेऽस्मिन् 'आमिषस्य पिण्डमिव' इत्यत्र उमपा। उपजातिवृत्तम्।

तस्मिन्क्षणे पालयितुः प्रजानामुत्पश्यतः सिंहनिपातमुग्रम्।
अवाङ्मुखस्योपरि पुष्पवृष्टिः पपात विद्याधरहस्तमुक्ता।।60।।

प्रसङ्गः– प्रस्तुत श्लोक में देवताओं द्वारा महाराज दिलीप का सम्मान करने का वर्णन है।

अन्वयः–तस्मिन् क्षणे उग्रम् सिंहनिपातम् उत्पश्यतः अवाङ्मुखस्य प्रजानाम् पालयितुः उपरि विद्याधरहस्तमुक्ता पुष्पवृष्टिः पपात।

अर्थः– उसी समय प्रजाजन के पालक महाराज दिलीप नीचे मुख करके यह प्रतीक्षा कर रहे थे कि उग्र सिंह मेरे ऊपर कूदे, इतने में ही विद्याधर उनके ऊपर खुले हाथों से पुष्पवर्षा करने लगे।

हिन्दी व्याख्याः– सिंह द्वारा राजा दिलीप की प्रार्थना स्वीकार कर लेने के पश्चात् राजा ने शस्त्र रखकर अपने शरीर को सिंह के सामने मांस-पिण्ड के समान अर्पित कर दिया और नीचे मुख किये हुए सिंह के आक्रमण की प्रतीक्षा करने लगे। उसी समय आकाश से विद्याधर अपने हाथों से राजा के ऊपर फूलों की वर्षा करने लगे। वे विद्याधर प्रजा का पालन करने वाले राजा दिलीप के स्वधर्मपालन पर अत्यन्त प्रसन्न थे। राजा ने अपने कर्त्तव्य (गाय की रक्षा) के लिए प्राणों की बाजी लगा दी थी।

शब्दार्थः– तस्मिन् क्षणे = उसी समय। **पालयितुः** = प्रजाओं के पालक के। **उत्पश्यतः** = अपेक्षा करते हुए। **निपातम्** = उछाल की। **उग्रम्** = घोर। **अवाङ्मुखस्य** = नीचे की ओर मुख है जिसका, ऐसे (दिलीप का), **हस्तमुक्ता** = खुले हाथों से।

संस्कृत व्याख्याः– तस्मिन् क्षणे = स्वशरीरदानावसरे, उग्रम् = भीषणम्, सिंहनिपातम् = मृगेन्द्रनिपतनम्, उत्पश्यतः = उत्प्रेक्षमाणस्य, अवाङ्मुखस्य = अधोमुखस्य, प्रजानाम् = लोकानाम्, पालयितुः = रक्षितुः, उपरि = उपरिष्टात्, विद्याधरहस्तमुक्ता = विद्याधरकरविकीर्णा, पुष्पवृष्टिः = कुसुमवर्षा, पपात = न्यपतत्।

उत्तिष्ठ वत्सेत्यमृतायमानं, वचो निशम्योत्थितमुत्थितः सन्।
ददर्श राजा जननीमिव स्वां, गामग्रतः प्रस्रविणीं न सिंहम्।।61।।

प्रसङ्गः– नन्दिनी के रक्षणार्थ, सिंह के सम्मुख स्वयं को उपस्थित कर देने पर राजा दिलीप से, नन्दिनी ने उठने को कहा।

अन्वयः– राजा अमृतायमानम् उत्थितं, 'हे वत्स! उत्तिष्ठ' इति वचः निशम्य उत्थितः सन्, अग्रतः प्रस्रविणीं गां स्वां जननीम् इव ददर्श, सिंहं न (ददर्श)।

अर्थः– राजा (दिलीप), अमृत के तुल्य, (नन्दिनी के मुख से) निकले 'हे पुत्र! उठो,' इस वचन को सुनकर ज्यों ही उठे तो सामने दूध बहाती हुई माता के समान गाय (नन्दिनी) को देखा, सिंह को नहीं।

हिन्दी व्याख्याः– नन्दिनी के रक्षणार्थ अपने प्राणोत्सर्ग को उद्यत राजा दिलीप से प्रसन्न, नन्दिनी ने, अमृत के समान मनोहारिणी वाणी में राजा से उठने को कहा। उठने पर राजा दिलीप देखते हैं कि सामने स्नेह की अधिकता के कारण, स्तनों से दूध बहाती हुई माता के समान नन्दिनी खड़ी है; किन्तु सिंह कहीं दिखाई नहीं दिया। वस्तुतः वह सिंह माया से उत्पन्न था, जिसे राजा की परीक्षा के लिये ही निर्मित किया गया था।

शब्दार्थः– अमृतायमानम् = अमृत के समान। **उत्थितम्** = उत्पन्न हुआ। **निशम्य** = सुनकर। **प्रस्रविणीम्** = दूध बहानेवाली। **ददर्श** = देखा।

अलङ्कार– उपमा।

संस्कृत व्याख्याः– राजा = दिलीपः, अमृतायमानम् = अमृतं पीयूषम् इव, उत्थितम् = उत्पन्नम्, हे वत्स! = हे पुत्र! उत्तिष्ठ = उत्थितो भव, इति = ईदृशम्, वचः = वचनम्, निशम्य = श्रुत्वा, उत्थितः सन् = भूमेः उत्थितः भवान्, अग्रतः = अग्रे, प्रस्रविणीम् = क्षीरस्रावः प्रस्रवः, प्रस्रवः अस्ति अस्याः इति प्रस्रविणी तां प्रस्रविणीम्, पयः स्रवन्तीम् इत्यर्थः, गाम् = नन्दिनीम्, स्वां जननीम् इव = आत्मीयां मातरम् इव, ददर्श = अपश्यत्, सिंहम् = केसरिणम्, न = नैव (ददर्श)। उपजातिवृत्तम्।

तं विस्मितं धेनुरुवाच साधो, मायां मयोद्भाव्य परीक्षितोऽसि।
ऋषिप्रभावान्मयि नान्तकोऽपि प्रभुः प्रहर्तुं किमुतान्यहिंस्राः।।62।।

प्रसङ्गः– सिंह के अदृश्य हो जाने पर नन्दिनी ने आश्चर्यचकित राजा दिलीप को वस्तुस्थिति का ज्ञान कराया।

अन्वयः– विस्मितं तं धेनुः उवाच। साधो! मया मायाम् उद्भाव्य परीक्षितः असि। ऋषिप्रभावात् मयि अन्तकः अपि प्रहर्तुं न प्रभुः। अन्यहिंस्राः किमुत।

अर्थः– आश्चर्यचकित उस (राजा दिलीप) से गाय (नन्दिनी) ने कहा – हे सज्जन! मैंने माया रचकर तुम्हारी परीक्षा ली है। ऋषि (वसिष्ठ) के प्रभाव से मुझपर यमराज भी प्रहार करने में समर्थ नहीं है, अन्य हिंसकों की बात ही क्या है ?

हिन्दी व्याख्याः– सिंह के अचानक अदृश्य हो जाने पर राजा दिलीप आश्चर्यचकित हुए। उनकी शङ्का के शमन हेतु नन्दिनी ने राजा को बताया कि हे सज्जन! मैंने माया से सिंह की रचना करके तुम्हारी परीक्षा ली है। उस परीक्षा में तुम सफल हुए। पुनः सिंह अदृश्य हो गया।

नन्दिनी ने राजा को विश्वास दिलाते हुए बताया कि ऋषि वसिष्ठ के प्रभाव से यमराज भी उसको हानि पहुँचाने में सक्षम नहीं हैं। फिर अन्य हिंसक जन्तुओं की बात ही क्या है?

शब्दार्थः– विस्मितम् = आश्चर्यचकित। **उद्भाव्य** = उत्पन्न करके अथवा रचकर। **परीक्षितः** = जिसकी परीक्षा ली गयी हो। **अन्तकः** = अन्त या विनाश करनेवाला अर्थात् यमराज। **प्रहर्तुम्** = प्रहार करने में। **प्रभुः** = समर्थ। **हिंस्राः** = हिंसक (बहुवचन)। **किमुत** = क्या बात।

संस्कृत व्याख्याः– विस्मितम् = आश्चर्यचकितम्, तम् = राजानं दिलीपम्, धेनुः = नन्दिनी, उवाच = अवदत्, साधो! = हे सज्जन राजन्! मया = नन्दिन्या, मायाम् = प्रतीतिमात्राम् सृष्टिम्, उद्भाव्य =

रचयित्वा, परीक्षितः = कृतपरीक्षः, असि, ऋषिप्रभावात् = वसिष्ठस्य सामर्थ्यात्, मयि = नन्दिन्याम्, अन्तकः = यमराजः, अपि, प्रहर्तुम् = प्रहारं कर्तुम्, न प्रभुः = न समर्थः, अन्यहिंस्राः = इतरे क्षुद्रघातकाः सिंहादयः, किमुत = तेषां का वार्ता, ते न प्रभवः इत्यर्थः। उपजातिवृत्तम्।

भक्त्या गुरौ मय्यनुकम्पया च, प्रीताऽस्मि ते पुत्र! वरं वृणीष्व।
न केवलानां पयसां प्रसूतिमवेहि मां कामदुधां प्रसन्नाम्।।63।।

प्रसङ्गः – राजा द्वारा नन्दिनी की रक्षा किये जाने से गाय नृप से वर माँगने को कहती है।

अन्वयः– पुत्र! गुरौ भक्त्या, मयि अनुकम्पया च ते प्रीता अस्मि। वरं वृणीष्व। मां केवलानां पयसां प्रसूतिं न अवेहि (अपितु) प्रसन्नां कामदुधाम् (अवेहि)।

अर्थः– हे पुत्र! गुरु में भक्ति रखने से तथा मेरे ऊपर दया करने से मैं तुम पर प्रसन्न हूँ। वर माँगो। मुझे केवल दूध देने वाली गाय न समझो, बल्कि प्रसन्न कामधेनु (सभी इच्छाओं की पूर्ति करने वाली) समझो।

हिन्दी व्याख्याः– नन्दिनी ने राजा दिलीप से प्रसन्नतापूर्वक कहा कि पुत्र तुम्हारी गुरु में अनन्य भक्ति है तथा तुमने मुझ पर दया करके सिंह के सम्मुख स्वयं को समर्पित कर दिया। तुम्हारे इन गुणों के कारण मैं तुम पर प्रसन्न हूँ। जो भी इच्छा तुम्हारे मन में हो, उसकी पूर्ति के लिये वर माँग लो। नन्दिनी पुनः राजा से कहती है कि मैं तुम्हारी हर इच्छा पूरी करने में समर्थ हूँ। मैं केवल दूध देने वाली गाय नहीं हूँ, अपितु प्रसन्न हुई कामधेनु के समान सब कुछ प्रदान कर सकती हूँ।

शब्दार्थः– अनुकम्पया = दया करने से। **प्रीता** = प्रसन्न। **वृणीष्व** = माँगो। **पयसां प्रसूतिम्** = दूध देने वाली। **अवेहि** = जानो। **कामदुधाम्** = कामधेनु या इच्छाओं की पूर्ति करने वाली।

संस्कृतव्याख्या– पुत्र! = हे राजन् (स्नेहवशात् राजानं पुत्रमिति अवदत्), गुरौ = वसिष्ठे, भक्त्या = श्रद्धया, मयि = नन्दिन्याम्, अनुकम्पया = दयया च, ते = तवोपरि, प्रीता = प्रसन्ना अस्मि, वरम् = इष्टम् वस्तु, वृणीष्व = याचस्व, माम् = नन्दिनीम्, केवलानाम् = एकमात्राणाम्, पयसाम् = दुग्धानाम्, प्रसूतिम् = दात्रीम्, न अवेहि = जानीहि, प्रसन्नाम् = प्रीताम्, कामदुधाम् = मनोरथपूरयित्रीम् कामधेनुम् अवेहि।

ततः समानीय स मानितार्थो हस्तौ स्वहस्तार्जितवीरशब्दः।
वंशस्य कर्तारमनन्तकीर्तिं सुदक्षिणायां तनयं ययाचे।।64।।

प्रसङ्गः– इस श्लोक में राजा नन्दिनी से पुत्रप्राप्ति का वर माँगते हैं।

अन्वयः– ततः स्वहस्तार्जितवीरशब्दः, मानितार्थो सः हस्तौ समानीय वंशस्य कर्तारम् अनन्तकीर्तिं तनयं सुदक्षिणायां ययाचे।

अर्थः– तब अपने पराक्रम से वीर पदवी को धारण करनेवाले, याचकों को सन्तुष्ट करनेवाले चक्रवर्ती उस (राजा दिलीप) ने हाथ जोड़कर वंश चलानेवाले, अनन्तयशस्वी पुत्र को सुदक्षिणा (के गर्भ) में माँगा।

हिन्दी व्याख्या– नन्दिनी के मुँह से वर माँगने की बात सुनकर राजा दिलीप ने अपनी चिरकालीन इच्छा को व्यक्त किया। जिन राजा दिलीप ने अपने बाहु-पौरुष से 'वीर' उपाधि को धारण किया था, तथा जो आये हुए याचक को इष्ट वस्तु प्रदान करके सन्तुष्ट और सम्मानित करते आये थे, उन्हीं राजा दिलीप ने हाथ जोड़कर वंश को चलाने के लिये यशस्वी पुत्र की कामना नन्दिनी से व्यक्त की। राजा ने अपनी धर्मपत्नी सुदक्षिणा से यशस्वी पुत्र उत्पन्न हो– ऐसा वर रूप में माँगा।

शब्दार्थः– स्वहस्तार्जितवीरशब्दः = अपने बाहुबल से वीर पदवी धारण करनेवाला। **मानितार्थी** = अर्थी (माँगनेवाले) की इच्छा को पूर्ण करनेवाला। **समानीय** = पास लाकर या जोड़कर। **तनयम्** = पुत्र को। **ययाचे** = माँगा।

संस्कृतव्याख्या– ततः = तदनन्तरम्, स्वहस्तार्जितवीरशब्दः = स्वहस्ताभ्याम् अर्जितः वीरशब्दः येन सः स्वभुजबलार्जितवीरशब्दः इत्यर्थः, मानितार्थी = मानिताः पूजिताः अर्थिनः याचकाः येन सः पूजितयाचकवर्गः इत्यर्थः, सः = दिलीपः, हस्तौ समानीय = अञ्जलिं विधाय, वंशस्य कर्तारम् = कुलस्य प्रवर्तयितारं, अनन्तकीर्तिम् = स्थिरयशस्कम्, तनयम् = पुत्रम्, ययाचे = अयाचत्। उपजातिवृत्तम्।

सन्तानकामाय तथेति कामं राज्ञे प्रतिश्रुत्य पयस्विनी सा।
दुग्ध्वा पयः पत्रपुटे मदीयं, पुत्रोपभुङ्क्ष्वेति तमादिदेश।।65।।

प्रसङ्गः– पुत्रप्राप्ति का वरदान देकर नन्दिनी राजा को अपना दूध पीने को कहती है।

अन्वयः– सा पयस्विनी सन्तानकामाय राज्ञे तथा इति कामं प्रतिश्रुत्य ''पुत्र! मदीयं पयः पत्रपुटे दुग्ध्वा उपभुङ्क्ष्व'' इति तम् आदिदेश।

अर्थः– उत्तमदूधवाली उस (नन्दिनी) ने, पुत्र चाहनेवाले राजा को 'ऐसा ही हो' (ऐसा कहकर) वर देने की प्रतिज्ञा करके ''पुत्र! मेरे दूध को पत्ते के दोने में दुह कर पी लो''–उसे यह आदेश दिया।

हिन्दी व्याख्याः– राजा दिलीप के पुत्र प्राप्ति का वर माँगने पर उत्तम दूधवाली नन्दिनी ने राजा को तथास्तु कहा। नन्दिनी ने अपने मन में राजा की इच्छापूर्ति की प्रतिज्ञा करके आदेशित किया कि राजा पत्ते के एक दोने में उसका दूध दुहकर पी ले। यह कर्म करने से राजा को अवश्य ही यशस्वी और वंशचलाने वाले पुत्र की प्राप्ति होगी।

शब्दार्थः– पयस्विनी = दूधारू। **तथा इति** = ऐसा ही हो। **प्रतिश्रुत्य** = प्रतिज्ञा करके। **मदीयम्** = मेरा। **पत्रपुटे** = दोने में। **दुग्ध्वा** = दुहकर। **उपभुङ्क्ष्व** = पी लो।

संस्कृतव्याख्या– सा = नन्दिनी, पयस्विनी = प्रशस्तदुग्धवती, सन्तानकामाय = पुत्रार्थिने, राज्ञे = दिलीपाय, तथेति = तथास्तु, कामं = वरं/इच्छां, प्रतिश्रुत्य = प्रतिज्ञाय, पुत्र! = वत्स! मदीयम् = मम, पयः = दुग्धम्, पत्रपुटे = पर्णनिर्मितपात्रे, दुग्ध्वा = दोहनं कृत्वा, उपभुङ्क्ष्व = पिब, इति, तम् = राजानं दिलीपम्, आदिदेश = आज्ञापयामास। उपजातिवृत्तम्।

छन्द–उपजाति।

वत्सस्य होमार्थविधेश्च शेषमृषेरनुज्ञामधिगम्य मातः।
औधस्यमिच्छामि तवोपभोक्तुं षष्ठांशमुर्व्या इव रक्षितायाः।।66।।

प्रसङ्गः– नन्दिनी द्वारा दूध पीने की आज्ञा पाकर राजा दिलीप सहमति प्रदान करते हैं।

अन्वयः– मातः! वत्सस्य होमार्थविधेश्च शेषं तव औधस्यं रक्षितायाः उर्व्याः षष्ठांशम् इव ऋषेः अनुज्ञाम् अधिगम्य उपभोक्तुम् इच्छामि।

अर्थः– हे माता जी! बछड़े और होम आदि क्रिया से बचे हुए तुम्हारे दूध को, (स्वयं द्वारा) रक्षित पृथ्वी के छठे अंश की भाँति, ऋषि की आज्ञा पाकर पीना चाहता हूँ।

हिन्दी व्याख्याः– नन्दिनी द्वारा दूध पीने की आज्ञा देने पर राजा दिलीप कहते हैं– हे जननी! दूध पर सर्वप्रथम अधिकार माँ के बच्चे का है, तदनन्तर देवताओं का। अतः इन दोनों से बचे हुए दूध का सेवन ही उचित है। मैं राजा हूँ, अतः अपने द्वारा रक्षित भूमण्डल की आय का 1/6 हिस्सा कर के रूप में ग्रहण करता हूँ। अतः यदि ऋषि वसिष्ठ की आज्ञा प्राप्त कर लूँ तो मैं बछड़े और होमादि क्रिया से बचे हुए दूध का उसी प्रकार सेवन करना चाहता हूँ, जिस प्रकार स्वरक्षित पृथ्वी के छठे अंश का सेवन करता हूँ।

शब्दार्थः– वत्सस्य = बछड़े का। **होमार्थविधेश्च** = हवन के लिये की गयी विधि से। **औधस्यम्** = दूध। **उर्व्याः** = पृथ्वी का। **अनुज्ञाम्** = आज्ञा को। **अधिगम्य** = प्राप्त करके।

अलङ्कार– उपमा।

संस्कृत व्याख्याः– मातः! = जननि! वत्सस्य = वत्सपीतस्य, होमार्थविधेश्च = होमः हवनम् एव अर्थः प्रयोजनं तस्य विधिः अनुष्ठानम् तस्य, अग्निहोत्रादिकर्मानुष्ठानस्य इत्यर्थः, शेषम् = अवशिष्टम्, तव = ते, औधस्यम् = दुग्धम्, रक्षितायाः = पालितायाः, उर्व्याः = भूमेः, षष्ठांशम् इव = करः इव, ऋषेः = वसिष्ठस्य, अनुज्ञाम् = आज्ञाम्, अधिगम्य = प्राप्य, उपभोक्तुम् = पातुम्, इच्छामि = कामये। उपजातिवृत्तम्।

छन्द = उपजाति।

इत्थं क्षितीशेन वसिष्ठधेनुः विज्ञापिता प्रीततरा बभूव।
तदन्विता हैमवताच्च कुक्षेः प्रत्याययावाश्रममश्रमेण।।67।।

प्रसङ्गः– प्रस्तुत श्लोक में राजा पर प्रसन्न नन्दिनी का आश्रम में लौटने का वर्णन है।

अन्वयः– इत्थं क्षितीशेन विज्ञापिता वसिष्ठधेनुः प्रीततरा बभूव च तदन्विता हैमवतात् कुक्षेः अश्रमेण आश्रमम् प्रत्याययौ च।

अर्थः– इस प्रकार राजा (दिलीप) द्वारा प्रार्थित वसिष्ठ की गाय (नन्दिनी) और अधिक प्रसन्न हुई तथा उसके (राजा के) साथ हिमालय की गुफा से थकावट के बिना आश्रम लौटी।

हिन्दी व्याख्या– राजा ने जब बछड़े और देवक्रियाओं से बचे हुए दूध को पीने की इच्छा प्रकट की तो नन्दिनी राजा के सन्तोष एवं न्यायप्रियता पर और प्रसन्न हुई। जिस हिमालय की गुफा में नन्दिनी और दिलीप थे उस गुफा से प्रसन्नचित्त और थकावट से रहित वे दोनों पुनः आश्रम लौट गये।

शब्दार्थः– इत्थम् = इस प्रकार (अव्यय)। **क्षितीशेन** = राजा द्वारा। **विज्ञापिता** = प्रार्थना की गयी। **प्रीततरा** = अधिक प्रसन्न। **हैमवतात्** = हिमालय की। **कुक्षेः** = गुफा से। **अश्रमेण** = बिना परिश्रम के। **प्रत्याययौ** = लौट आयी।

संस्कृतव्याख्या– इत्थम् = अनेन प्रकारेण, क्षितीशेन = राज्ञा दिलीपेन, विज्ञापिता = प्रार्थिता, वसिष्ठधेनुः = नन्दिनी, प्रीततरा = प्रसन्नतरा, बभूव = अभवत्, तदन्विता = राज्ञा सहिता, हैमवतात् = हिमालयसम्बन्धिनः, कुक्षेः = गुहायाः, अश्रमेण = अनायासेन, आश्रमम् = वसिष्ठाश्रमम्, प्रत्याययौ = प्रत्याजगाम च। उपजातिवृत्तम्।

छन्द– उपजाति।

तस्याः प्रसन्नेन्दुमुखः प्रसादं गुरुर्नृपाणां गुरवे निवेद्य।
प्रहर्षचिह्नानुमितं प्रियायै शशंस वाचा पुनरुक्तयेव।।68।।

प्रसङ्गः– राजा ने गुरु तथा रानी सुदक्षिणा से नन्दिनी के अनुग्रह को बताया।

अन्वयः– प्रसन्नेन्दुमुखः नृपाणां गुरुः प्रहर्षचिह्नानुमितं तस्याः प्रसादं पुनरुक्तया इव वाचा गुरवे निवेद्य प्रियायै शशंस।

अर्थः– निर्मल चन्द्रमा के समान मुखवाले, राजाओं में श्रेष्ठ (राजा दिलीप) ने, हर्ष आदि चिह्नों से अनुमित, उस (नन्दिनी) के अनुग्रह को, फिर से कही गयी वाणी के समान, गुरु (वसिष्ठ) से कहकर अपनी पत्नी (सुदक्षिणा) से कहा।

अलङ्कार– उपमा।

हिन्दी व्याख्या– पुत्रप्राप्ति के वरदान से प्रसन्न राजा दिलीप का मुख निर्मल चन्द्रमा की भाँति सुशोभित हो रहा था। नन्दिनी का अनुग्रह राजा के मुख में देदीप्यमान हर्ष आदि चिह्नों द्वारा अनुमीयमान था। राजाओं में श्रेष्ठ उस राजा दिलीप ने नन्दिनी के प्रसादरूप वर को गुरु वसिष्ठ, तदनन्तर रानी सुदक्षिणा को, उन्हीं शब्दों में जिन शब्दों में नन्दिनी ने वर दिया था, बताया।

शब्दार्थः– प्रसन्नेन्दुमुखः = निर्मल चन्द्रमा के समान मुखवाला। **प्रहर्षचिह्नानुमितम्** = प्रसन्नता आदि चिह्नों से अनुमान किये जाने योग्य। **प्रसादम्** = अनुग्रह को। **पुनरुक्तया इव वाचा** = मानो दुहराकर कहा गया हो। **निवेद्य** = निवेदन करके। **शशंस** = बताया।

संस्कृतव्याख्या– प्रसन्नेन्दुमुखः = प्रसन्नः च असौ इन्दुः प्रसन्नेन्दुः, प्रसन्नेन्दुः इव मुखं यस्य सः प्रसन्नेन्दुमुखः निर्मलचन्द्राननः इत्यर्थः, नृपाणाम् = राज्ञाम्, गुरुः = श्रेष्ठः, प्रहर्षचिह्नानुमितम् = प्रहर्षस्य आनन्दस्य, चिह्नानि लक्षणानि तैः अनुमितम्, तस्याः = नन्दिन्याः, प्रसादम् = अनुग्रहम्, पुनरुक्तया = पुनः कथितया, इव = यथा, वाचा = वचनेन, गुरवे = वसिष्ठाय, निवेद्य = कथयित्वा, प्रियायै सुदक्षिणायै, शशंस = कथयामास। उपजातिवृत्तम्।

छन्द–उपजाति

स नन्दिनीस्तन्यमनिन्दितात्मा सद्वत्सलो वत्सहुतावशेषम्।
पपौ वसिष्ठेन कृताभ्यनुज्ञः शुभ्रं यशो मूर्त्तमिवातितृष्णः।।69।।

प्रसङ्गः– प्रस्तुत श्लोक में वसिष्ठ की आज्ञा के द्वारा नन्दिनी के दुग्ध का पान किये जाने का वर्णन है।

अन्वयः– अनिन्दितात्मा सद्वत्सलः स वसिष्ठेन कृताभ्यनुज्ञः अतितृष्णः इव वत्सहुतावशेषं नन्दिनीस्तन्यं मूर्त्तं शुभ्रं यशः इव पपौ।

अर्थः– प्रशंसित अन्तःकरण वाले, सज्जनों के प्रति प्रेम रखनेवाले उस (राजा दिलीप) ने, वसिष्ठ से आज्ञा लेकर, अत्यन्त प्यासे के समान, बछड़े एवं हवनादि क्रियाओं से बचे हुए नन्दिनी के दूध को, उज्ज्वल मूर्तिमान् यश की तरह पिया।

हिन्दी व्याख्याः– राजा दिलीप का अन्तःकरण अनिन्दित (प्रशंसित) था एवं सज्जनों के प्रति उनका वात्सल्यभाव था। उस राजा दिलीप ने नन्दिनी के दूध को बछड़े को पिलाकर हवन आदि देवक्रियाओं में उपयोग किया। बचे हुए दूध को राजा ने इस प्रकार पिया मानों मूर्तिमती उज्ज्वल कीर्ति का पान कर रहे हों।

शब्दार्थः– अनिन्दितात्मा = प्रशंसित अन्तःकरण वाले। **सद्वत्सलः** = सज्जनों के प्रति प्रेम रखनेवाले, **कृताभ्यनुज्ञः** = जिसने आज्ञा प्राप्त कर ली है। **अतितृष्णः** = अत्यन्त प्यासा। **वत्सहुतावशेषम्** = बछड़े एवं हवन से बचा हुआ। **स्तन्यम्** = दूध। **पपौ** = पिया।

अलङ्कार– उत्प्रेक्षा।

संस्कृतव्याख्या–अनिन्दितात्मा = अनिन्दितः आत्मा यस्य सः अनिन्दितात्मा प्रशंसितस्वभावः इत्यर्थः, सद्वत्सलः = सत्सु सज्जनेषु वत्सलः प्रेमवान्, सः = दिलीपः, वसिष्ठेन = गुरुणा, कृताभ्यनुज्ञः = आज्ञप्तः, अतितृष्णः = अतिशयपिपासितः इव, वत्सहुतावशेषम् = वत्सपानयज्ञाहुत्यवशिष्टम्, नन्दिनीस्तन्यम् = नन्दिन्याः दुग्धम्, मूर्तं = सशरीरम्, शुभ्रम् = निर्मलम्, यशः = कीर्तिम्, इव = यथा, पपौ = अपिबत्। उपजातिवृत्तम्।

छन्द–उपजाति।

प्रातर्यथोक्तव्रतपारणान्ते प्रास्थानिकं स्वस्त्ययनं प्रयुज्य।
तौ दम्पती स्वां प्रति राजधानीं प्रस्थापयामास वशी वसिष्ठः।।70।।

प्रसङ्गः– राजा और रानी का गोसेवा–व्रत पूर्ण होने पर ऋषि वसिष्ठ ने दोनों को विदा किया।

अन्वयः– वशी वसिष्ठः प्रातः यथोक्तव्रतपारणान्ते प्रास्थानिकं स्वस्त्ययनं प्रयुज्य तौ दम्पती स्वां राजधानीं प्रति प्रस्थापयामास।

अर्थः– जितेन्द्रिय वसिष्ठ ने प्रातःकाल, गोसेवारूप व्रत की पारणा के बाद, गमनकालीन स्वस्तिवचन (शुभाशीर्वाद) का प्रयोग करके (आशीर्वाद देकर), उस पति–पत्नी (राजा-रानी) को उनकी राजधानी भेजा।

हिन्दी व्याख्या– ऋषि वसिष्ठ ने अपनी सभी इन्द्रियों को वश में कर लिया था, इसलिए उन्हें वशी कहा गया है। राजा दिलीप ने पुत्र-प्राप्ति की कामना से जिस गोसेवा रूप व्रत का सङ्कल्प लिया था, नन्दिनी के आशीर्वाद से वह पूर्ण हो गया। व्रत की पूर्ति में पारणा का विधान है। अतः ऋषि ने पारणा के बाद उन राजा–रानी को उनकी राजधानी भेज दिया। उनके जाते समय वसिष्ठ ने स्वस्ति का वाचन किया अथवा अनेक शुभाशीष प्रदान किये।

शब्दार्थः– वशी = जितेन्द्रिय। **यथोक्तव्रतपारणान्ते** = जो बताया गया है उस व्रत (गोसेवा) की पारणा के बाद। **प्रास्थानिकम्** = प्रस्थानकालिक या कहीं जाते समय बोले जानेवाले। **स्वस्त्ययनम्** = कल्याणकारी आशीर्वाद। **दम्पती** = पति-पत्नी। **प्रस्थापयामास** = भेजा।

संस्कृतव्याख्याः– वशी = जितेन्द्रियः, वसिष्ठः = वसिष्ठनामकः गुरुः, प्रातः = प्रातःकाले, यथोक्तव्रतपारणान्ते = गोसेवाव्रतपारणानन्तरम्, प्रास्थानिकम् = गमनकालोचितम्, स्वस्त्ययनम् = शुभमाशीर्वादम् अथवा स्वस्तिवचनम्, प्रयुज्य = प्रयोगं कृत्वा, तौ दम्पती = दिलीपं सुदक्षिणाञ्च, स्वां राजधानीम् = अयोध्यां प्रति, प्रेषयामास = प्रैषयत्। उपजातिवृत्तम्।

छन्द– उपजाति।

प्रदक्षिणीकृत्य हुतं हुताशमनन्तरं भर्तुररुन्धतीं च।
धेनुं सवत्सां च नृपः प्रतस्थे सन्मङ्गलोदग्रतरप्रभावः।। 71।।

प्रसङ्गः– राजा ने पूज्यों को पूजकर प्रस्थान किया।

अन्वयः– नृपः हुतं हुताशं, भर्तुः अनन्तरम् अरुन्धतीम् च, सवत्सां धेनुं प्रदक्षिणीकृत्य मङ्गलोदग्रतरप्रभावः सन् प्रतस्थे।

अर्थः– राजा ने, हवन की गयी अग्नि की, स्वामी (वसिष्ठ) के बाद अरुन्धती की तथा बछड़े सहित गाय की परिक्रमा करके मंगल कार्यों एवं आशीर्वादों से बढ़े हुए प्रभाव (तेज) वाला होकर प्रस्थान किया।

हिन्दी व्याख्या– राजा दिलीप ने राजधानी जाने के पूर्व सभी पूज्यों की परिक्रमा कर उनका अभिवादन किया। राजा ने उस अग्नि की परिक्रमा की जिसमें देवताओं के निमित्त हवन किया गया था। उन्होंने वसिष्ठ की, तदनन्तर अरुन्धती की परिक्रमा की। इसके बाद राजा ने बछड़े सहित गाय की परिक्रमा की। गोसेवा रूप मङ्गल कार्य एवं ऋषि द्वारा प्राप्त शुभाशीर्वाद द्वारा बढ़े तेजवाले होकर राजा दिलीप ने अपनी राजधानी की ओर प्रस्थान किया।

शब्दार्थः– हुतम् हुताशम् = हवन की गयी अग्नि। **भर्तुः** = स्वामी के। **सवत्साम्** = बछड़े सहित। **प्रदक्षिणीकृत्य** = परिक्रमा करके। **मङ्गलोदग्रतरप्रभावः** = शुभ के कारण बढ़े हुए प्रभाव (तेज) वाला। **प्रतस्थे** = प्रस्थान किया।

संस्कृतव्याख्या– नृपः = राजा दिलीपः, हुतम् = तर्पितम्, हुताशम् = अग्निम्, भर्तुः = स्वामिनः वसिष्ठस्य, अनन्तरम् = पश्चात्, अरुन्धतीम् = वसिष्ठस्य पत्नीम् च, सवत्साम् = वत्सेन सहिताम्, धेनुम् = नन्दिनीम्, प्रदक्षिणीकृत्य = परिक्रम्य, मङ्गलोदग्रतरप्रभावः = मङ्गलैः मङ्गलकार्यैः उग्रतरः उच्चतरः प्रभावः प्रतापः सामर्थ्यं वा, यस्य सः तादृशः, सन् = भूत्वा, प्रतस्थे = प्रस्थानम् अकरोत्। उपजातिवृत्तम्।

छन्द–उपजाति

श्रोत्राभिरामध्वनिना रथेन स धर्मपत्नीसहितः सहिष्णुः।
ययावनुद्घातसुखेन मार्गं स्वेनेव पूर्णेन मनोरथेन।। 72।।

प्रसङ्गः– इस श्लोक में यह वर्णित है कि राजा किस प्रकार रथ से राजधानी जा रहे हैं।

अन्वयः– धर्मपत्नीसहितः सहिष्णुः सः श्रोत्राभिरामध्वनिना अनुद्घातसुखेन स्वेन पूर्णेन मनोरथेन इव रथेन मार्गं ययौ।

अर्थः– धर्मपत्नी (सुदक्षिणा) के साथ, सहनशील उस (राजा दिलीप) ने, कर्णप्रिय ध्वनिवाले (मार्ग के पत्थरों आदि से उत्पन्न) उद्घात (उछाल) से रहित होने से सुखदायी, अपने पूर्ण हुए मनोरथ के समान रथ से मार्ग में गमन किया।

हिन्दी व्याख्या– राजा दिलीप अपनी पत्नी सुदक्षिणा के साथ रथ पर सवार होकर राजधानी के मार्ग पर चले। राजा व्रत आदि से उत्पन्न कष्टों को सह सकने के कारण सहिष्णु हैं। जिस रथ पर वे दोनों सवार हैं, उसके चलने की ध्वनि कानों को अत्यधिक मधुर प्रतीत होनेवाली है। वह रथ ऊबड़खाबड़ रास्ते या रास्ते के पत्थरों से उत्पन्न उछाल से रहित है, अतः यात्रा के समय आरामदायक है। कवि ने यहाँ उपर्युक्त रथ को पूर्ण हुए मनोरथ के समान कहा है।

अलङ्कार– यहाँ रथ-रथ की आवृत्ति है तथा दोनों के अर्थ समान नहीं हैं, अतः यमक अलङ्कार है। सम्भावना के कारण उत्प्रेक्षा भी है।

शब्दार्थः– सहिष्णुः = सहनशील। **श्रोत्राभिराम** = कानों को प्रिय लगनेवाली। **उद्घात** = उछाल। **ययौ** = गये।

संस्कृतव्याख्या– धर्मपत्नीसहितः = सुदक्षिणासहितः, सहिष्णुः = सहनशीलः, सः = राजा दिलीपः, श्रोत्राभिरामध्वनिना = कर्णप्रियध्वनिना, अनुद्घातसुखेन = अस्खलितगतिसुखेन, स्वेन = निजेन, पूर्णेन = सफलेन, मनोरथेन = अभिलाषया इव, रथेन = स्यन्दनेन, मार्गम् = अध्वानम्, ययौ = अगच्छत्, अत्र रथेन मनोरथेन इत्यत्र यमकालङ्कारः, मनोरथे रथस्य सम्भावनायाः कारणात् उत्प्रेक्षालङ्कारः। उपजातिवृत्तम्।

छन्द–उपजाति

तमाहितौत्सुक्यमदर्शनेन प्रजाः प्रजार्थव्रतकर्शिताङ्गम्।
नेत्रैः पपुस्तृप्तिमनाप्नुवद्भिः नवोदयं नाथमिवौषधीनाम्।।73।।

प्रसङ्गः– राजा दिलीप के राजधानी लौटने पर प्रजा ने बड़ी उत्कण्ठा से उनका दर्शन किया।

अन्वयः–अदर्शनेन आहितौत्सुक्यं प्रजार्थव्रतकर्शिताङ्गम् तम् प्रजाः तृप्तिम् अनाप्नुवद्भिः नैत्रैः नवोदयम् ओषधीनाम् नाथम् इव पपुः।

अर्थः– (वसिष्ठ के आश्रम चले जाने के कारण) न दिखने से उत्कण्ठा को जगाने वाले, सन्तान की इच्छा से किये गये व्रत के कारण दुर्बल अंगों वाले, उस (राजा दिलीप) को, प्रजाओं ने अतृप्त आँखों से, नवीन निकले हुए (द्वितीया के) चन्द्रमा की तरह पिया।

हिन्दी व्याख्या– राजा दिलीप गोसेवा व्रत के पालनार्थ वसिष्ठ के आश्रम चले गये थे। प्रजा ने बहुत दिनों से उनके दर्शन नहीं पाये थे, अतः लोगों में राजा को देखने की बड़ी उत्सुकता थी। सन्तान

की इच्छा से किये गये कठिन व्रत के पालन से राजा के अङ्ग दुर्बल दिख रहे थे। लोगों ने अपनी अतृप्त आँखों से राजा का उसी प्रकार भावपूर्ण दर्शन किया, जिस प्रकार लोग द्वितीया के चन्द्रमा को देखते हैं। राजा भी दुर्बल दिख रहे हैं, किन्तु नेत्रों को प्रिय हैं, द्वितीया का चन्द्रमा भी दुर्बल होता है किन्तु पूज्य एवं सुन्दर होता है।

शब्दार्थः– आहितौत्सुक्यम् = उत्सुकता पैदा करनेवाले। **कर्शित** = दुर्बल। **अनाप्नुवद्भिः** = न प्राप्त करने वाले। **नवोदयम्** = नवीन उदित। **ओषधीनाम् नाथम्** = चन्द्रमा (चन्द्रमा को ओषधियों का स्वामी माना गया है)। **पपुः** = पिया।

अलङ्कार– उपमा।

संस्कृतव्याख्या– अदर्शनेन = प्रवासनिमित्तेन अनवलोकनेन, प्रजार्थव्रतकर्शिताङ्गम् = प्रजार्थं सन्तानार्थं यत् व्रतं गोसेवारूपम् तेन कर्शितं कृशीकृतम् अङ्गं शरीरं यस्य सः, तम् = राजानं दिलीपम्, प्रजाः = जनाः, तृप्तिम् अनाप्नुवद्भिः = अतृप्तैः पिपासितैः वा, नेत्रैः = चक्षुभिः, नवोदयम् = नवीनाविर्भावम्, ओषधीनां नाथम् = सोममिव, पपुः = अपिबन् ददृशुः इत्यर्थः। उपजातिवृत्तम्।

छन्द–उपजाति।

पुरन्दरश्रीः पुरमुत्पताकं प्रविश्य पौरैरभिनन्द्यमानः।
भुजे भुजङ्गेन्द्रसमानसारे भूयः स भूमेर्धुरमाससञ्ज।। 74।।

प्रसङ्गः– राजधानी लौटकर राजा दिलीप ने पुनः राज्यभार सँभाल लिया।

अन्वयः– पुरन्दरश्रीः सः पौरैः अभिनन्द्यमानः उत्पताकं पुरं प्रविश्य, भुजङ्गेन्द्रसमानसारे भुजे भूयः भूमेः धुरम् आससञ्ज।

अर्थः– इन्द्र के समान कान्तिवाले, उस (राजा दिलीप) ने, नागरिकों द्वारा अभिनन्दन किये जाते हुए, ऊँची पताकाओं वाले नगर (अयोध्या) में प्रवेश करके, नागराज (वासुकि) के समान बलवाली भुजा में फिर से पृथ्वी के भार को धारण कर लिया।

हिन्दी व्याख्या– राजा दिलीप का तेज देवराज इन्द्र के समान है। उनकी राजधानी अयोध्या में ऊँची-ऊँची पताकायें फहराती रहती हैं। जैसे ही राजा ने नगर में प्रवेश किया, नागरिकों ने उनका अभिनन्दन किया। आते ही राजा ने सम्पूर्ण राज्यभार सँभाल लिया। यहाँ कवि ने कल्पना की है कि राजा दिलीप की भुजा, नागराज वासुकि के समान बलशाली है। उसी भुजबल पर पुनः सम्पूर्ण पृथ्वी आश्रित हो गयी।

शब्दार्थः– पुरन्दरश्रीः = इन्द्र के समान कान्तिवाले। **पौरैः** = पुरवासियों या नागरिकों द्वारा। **अभिनन्द्यमानः** = अभिनन्दन किया जाता हुआ। **उत्पताकम्** = ऊँची पताकाओं वाले। **भुजङ्गेन्द्र** = सर्पराज वासुकि। **सार** = बल। **भूयः** = पुनः। **धुरम्** = भार को। **आससञ्ज** = धारण किया।

अलङ्कार– उपमा।

संस्कृतव्याख्या– पुरन्दरश्रीः = पुरन्दरः इन्द्रः इव श्रीः वैभवः यस्य सः इन्द्रवैभवः इत्यर्थः, सः = दिलीपः, पौरः = नागरिकैः, अभिनन्द्यमानः = प्रशस्यमानः, उत्पताकम् = उच्छ्रितध्वजम्, पुरम् = अयोध्याम्, प्रविश्य = प्रवेशं कृत्वा, भुजङ्गेन्द्रसमानसारे = भुजङ्गः सर्पः तेषाम् इन्द्रः राजा वासुकिरित्यर्थः तेन सदृशः सारः बलं यस्य सः भुजङ्गेन्द्रसमानसारः तस्मिन्, भुजे = बाहौ, भूयः = पुनः, भूमेः = पृथिव्याः, धुरम् = भारम्, आससञ्ज = धारयामास। उपमालङ्कारः। उपजातिवृत्तम्।

छन्द—उपजाति।

अथ नयनसमुत्थं ज्योतिरत्रेरिव द्यौः,
सुरसरिदिव तेजो वह्निनिष्ठ्यूतमैशम्।
नरपतिकुलभूत्यै गर्भमाधत्तराज्ञी,
गुरुभिरभिनिविष्टं लोकपालानुभावैः।।75।।

प्रसङ्गः– प्रस्तुत श्लोक में रानी सुदक्षिणा के गर्भधारण का वर्णन है।

अन्वयः– अथ अत्रेः नयनसमुत्थं ज्योतिः द्यौः इव, वह्निनिष्ठ्यूतम् ऐशम् तेजः सुरसरित् इव नरपतिकुलभूत्यै राज्ञी गुरुभिः लोकपालानुभावैः अभिनिविष्टं गर्भम् आधत्त।

अर्थः– इसके बाद, अत्रिमुनि द्वारा नेत्रों से उत्पन्न तेज (चन्द्रमा) को आकाश के समान, अग्नि द्वारा त्यागे गये शिव के तेज को गङ्गा के समान, राजा दिलीप के वंश के कल्याण के लिये महान् लोकपालों (देवताओं) के तेज से युक्त गर्भ को रानी ने धारण किया।

हिन्दी व्याख्या– जिस प्रकार अत्रिमुनि के नेत्रों से उत्पन्न तेज (चन्द्रमा) को आकाश ने धारण किया, जिस प्रकार अग्नि द्वारा न सँभाल पाने के कारण त्यागे गये शिव के तेज को गङ्गा ने धारण किया, उसी प्रकार रानी सुदक्षिणा ने इन्द्रादि लोकपालों के तेज से उत्पन्न गर्भ को धारण किया। यह गर्भ राजा दिलीप का वंश चालक होगा, अतः रानी का गर्भ राजा दिलीप के कुल के कल्याण के लिए है।

शब्दार्थः– समुत्थम् = उठी हुई या निकली। **द्यौः** = आकाश। **निष्ठ्यूतम्** = निचोड़े गये या त्यागे गये। **ऐशम्** = शिव के। **सुरसरित्** = गङ्गा। **भूत्यै** = कल्याण के लिये। **अभिनिविष्टम्** = युक्त। **आधत्त** = धारण किया।

अलङ्कार– उपमा।

संस्कृतव्याख्या– अथ = एतदनन्तरम्, अत्रेः = अत्रिमुनेः, नयनसमुत्थम् = नेत्राभ्याम् उत्थितम्, ज्योतिः = तेजः, द्यौः = आकाशः इव, वह्निनिष्ठ्यूतम् = अग्निना त्यक्तम्, ऐशम् = शैवम्, तेजः = वीर्यम् (कार्तिकेयम्), सुरसरित् = गङ्गा इव, नरपतिकुलभूत्यै = राज्ञः दिलीपस्य वंशस्य कल्याणार्थम्, राज्ञी = सुदक्षिणा, गुरुभिः = महद्भिः, लोकपालानुभावैः = लोकपालानाम् इन्द्रादिदेवानाम् अनुभावाः तेजांसि तैः, अभिनिविष्टम् = व्याप्तम्, गर्भम् = भ्रूणम्, आधत्त = धृतवती। मालिनीवृत्तम्।

छन्द—मालिनी।

बहुविकल्पीयाः प्रश्नाः

1. रघुवंशमहाकाव्यस्य रचयिता कः ?
   (क) वाल्मीकिः (ख) माघः (ग) कालिदासः (घ) वेदव्यासः
2. रघुवंशमहाकाव्यं कीदृशं काव्यमस्ति ?
   (क) पद्यकाव्यम् (ख) गद्यकाव्यम् (ग) चम्पूकाव्यम् (घ) दृश्यकाव्यम्
3. रघुवंशमहाकाव्ये कति सर्गाः ?
   (क) पञ्चदश (ख) सप्तदश (ग) नवदश (घ) षोडश
4. राजा दिलीपस्य कस्मिन् वंशे सम्भवो न जातः ?
   (क) रघुवंशे (ख) इक्ष्वाकुवंशे (ग) नन्दवंशे (घ) वैवस्वतमनुवंशे
5. रघुवंशस्य द्वितीयसर्गे कति श्लोकाः ?
   (क) पञ्चसप्ततिः (ख) अशीतिः (ग) नवतिः (घ) शतम्
6. रघुवंशमहाकाव्यं केषु विभक्तम् ?
   (क) परिच्छेदेषु (ख) सर्गेषु (ग) उद्योतेषु (घ) निःश्वासेषु
7. महाकविः कालिदासः कस्यालङ्कारस्य आचार्यः मन्यते ?
   (क) यमकालङ्कारस्य (ख) उपमालङ्कारस्य (ग) श्लेषालङ्कारस्य (घ) रूपकालङ्कारस्य
8. महाराजदिलीपस्य भार्या का ?
   (क) सुदक्षिणा (ख) भानुमती (ग) इन्दुमती (घ) सविता
9. पुत्रकामनया दिलीपदम्पती कुत्र जग्मतुः ?
   (क) वाल्मीकेराश्रमम् (ख) विश्वामित्राश्रमम् (ग) वशिष्ठाश्रमम् (घ) अन्यत्र
10. दिलीपस्य सभार्यः नन्दिन्याः सेवामकुर्वन् कति दिनानि व्यतीतानि ?
    (क) सप्तदिनानि (ख) एकविंशतिदिनानि (ग) दिनत्रयम् (घ) एकादशदिनानि
11. वसिष्ठाश्रमे सभार्यः दिलीपः कस्य सेवामकरोत् ?
    (क) गुरोः (ख) गुरुभार्यायाः (ग) नन्दिन्याः (घ) अन्यस्य
12. द्वाविंशे दिवसे नन्दिनी राज्ञः परीक्षणं कर्तुं कुत्रागच्छत् ?
    (क) हिमालयगुहायाम् (ख) हिमालयोपरि (ग) वने (घ) अन्यत्र
13. सिंहः कस्य सुहृदोऽस्ति ?
    (क) वृषभस्य (ख) निकुम्भस्य (ग) धेनोः (घ) अन्यस्य
14. कस्य रक्षार्थं शिवः नियुक्तवान् सिंहम् ?
    (क) देवदारोः (ख) वृषभस्य (ग) धेनोः (घ) अन्यस्य

15. देवदारोः रक्षार्थं शिवः कम् नियुक्तवान् ?
(क) व्याघ्रम् (ख) सिंहम् (ग) वृषभम् (घ) अन्यम्

16. त्वं मम दृष्ट्या महामूर्खोऽसि इति कोऽब्रवीत् ?
(क) राजा (ख) सुदक्षिणा (ग) सिंहः (घ) गुरुः

17. कोऽकथयत् यत् स्वशरीरं न त्याज्यम्। पार्थिवस्वर्गस्योपभोगं कुर्यात् ?
(क) सिंहः (ख) नन्दिनी (ग) गुरुः (घ) अन्यः

18. सिंहस्य नाम किम् आसीत् ?
(क) वृकोदरः (ख) कुम्भोदरः (ग) दामोदरः (घ) लम्बोदरः

19. नन्दिनी कस्याः पुत्री आसीत् ?
(क) पार्वत्याः (ख) सरस्वत्याः (ग) दुर्गायाः (घ) कामधेनोः

20. सिंहः कस्य अनुचरः आसीत् ?
(क) शिवस्य (ख) इन्द्रस्य (ग) विष्णोः (घ) ब्रह्मणः

21. नन्दिनी का आसीत् ?
(क) अजा (ख) महिषी (ग) अश्वा (घ) धेनुः

22. नन्दिनी कस्य धेनुः आसीत् ?
(क) वसिष्ठस्य (ख) वाल्मीकेः (ग) व्यासस्य (घ) काश्यपस्य

23. सिंहः मायया केन/कया रचितः आसीत् ?
(क) नन्दिन्या (ख) वसिष्ठेन (ग) दिलीपेन (घ) सुदक्षिणया

24. दिलीपः नन्दिनीं कं वरं ययाचे ?
(क) राज्यम् (ख) पत्नीम् (ग) तनयम् (घ) वसिष्ठम्

25. वत्सहुतावशेषं किम् ?
(क) यशः (ख) पयः (ग) सद्वत्सलः (घ) तेजः

26. 'प्रसन्नेन्दुमुखः' इत्यत्र कः सन्धिः ?
(क) यण् सन्धिः (ख) दीर्घसन्धिः (ग) गुणसन्धिः (घ) वृद्धिसन्धिः

27. कस्य प्रभावात् नन्दिन्याम् अन्तकः अपि प्रहर्त्तुम् न प्रभुः ?
(क) दिलीपस्य (ख) ऋषेः (ग) विष्णोः (घ) इन्द्रस्य

अभिज्ञानशाकुन्तलम्

(चतुर्थोऽङ्कः)

कालिदासस्य नाट्यकला

संस्कृतसाहित्यस्य सर्वश्रेष्ठो नाटककारः कविकुलगुरुः कालिदासो मन्यते। नाटकस्य सर्वाणि प्रमुख-तत्त्वानि कवेरस्य नाटकेषु राजन्ते। नाटकेषु कालिदासस्य अद्भुता प्रतिभा दृश्यते। पाश्चात्त्य-भारतीय-नाट्य-सिद्धान्तयोः निकषे नाटकमिदं पूर्णरूपेण समुचितम्। अतएव उक्तम्–

काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला,
तत्रापि चतुर्थोऽङ्कः तत्र श्लोकचतुष्टयम्।।

कवेरस्य नाट्यकलायाः अधोलिखिताः विशेषताः दरीदृश्यन्ते। कविरयं नाटकेषु विषयवस्तूनां गुम्फने दक्षः प्रतिभाति। अत्र विषयवस्तुनः चित्राणि दर्शकस्य नेत्रयोः समक्षं तत्क्षणमेव स्पष्टरूपेण आयाति। अत्र मानवहृदयस्य कोमलभावाः जिज्ञासाः विह्वलताः भावावेशाश्च नाटककारेण नाट्यकलया पौनःपुन्येन उपस्थापिताः। कवेः प्रकृतिवर्णनं न केवलं मनोरंजनस्य साधनम्, अपितु शिक्षाप्रदम्। कालिदासेन चरित्रचित्रणं वस्तूनां सजीववर्णनं कुशलतया उपस्थापितम्। महाभारतस्य नीरसकथानकं स्वीकृत्य कालिदासेन अद्भुतरचनाकौशलेन अभिज्ञानशाकुन्तलनामकं एकं सरसं सुविख्यातं नाटकं रचितम्।

अभिज्ञानशाकुन्तले घटनानां संयोजनं पूर्णरूपेण स्वाभाविकम् अवलोक्यते एवं तत्र असाधारणसौष्ठवं विद्यमानम्। सर्वाः घटनाः सार्थकाः अत्र ताः कथानकस्य विकासे पूर्णरूपेण सहायिकाः अतः नाटकस्य गतिः स्वाभाविका अविच्छिन्ना च। यथा राज्ञा सह शकुन्तलायाः गन्धर्वविवाहः, ऋषेः दुर्वाससः शापः, दुष्यन्तेन स्वनामाङ्किताङ्गुलीयकप्रदानम्, अङ्गुलीयकस्य प्रदर्शनेन शापविमोचनम् इत्यादयः घटनाः परस्परम् अन्विताः। अभिज्ञानशाकुन्तलस्य सर्वाः घटनाः सार्थकाः सन्ति एवं ताः विशेषोद्देश्येन प्रस्तुताः।

कालिदासः चरित्रचित्रणे सिद्धहस्तः। अभिज्ञानशाकुन्तलस्य पात्राणि समाजस्य विभिन्नवर्गाणां प्रतिनिधित्वं कुर्वन्ति। तस्य प्रत्येकपात्रस्य स्वकीयविशिष्टव्यक्तित्वमस्ति। यथा दुर्वासाः अतीव क्रोधी, शकुन्तला लज्जाशीला, अनसूया शान्तप्रकृतिः प्रियंवदा हास्यप्रिया च।

कवेः सर्वाणि पात्राणि स्वकीयस्थित्याः अनुसारेण भाषायाः प्रयोगं कुर्वन्ति। प्रियंवदा अनसूया च सखीजनोचितहासपरिहासं कुरुतः। कण्वः पितुः सदृशः शकुन्तलायाः अभिनन्दनं करोति। यथा– **''सुशिष्य-परिदत्ताविद्येवाशोचनीयासि संवृत्ता।''**

अभिज्ञानशाकुन्तलं शृङ्गाररसप्रधानं नाटकमस्ति। अत्र सम्भोगशृङ्गारः अङ्गीरसः एवं विप्रलम्भशृङ्गारः अवलोक्यते। करुण-वीर-अद्भुत-हास्य-भयानक-शान्तादिरसाः भावानुकूलाः अत्र उपस्थाप्यन्ते। शाकुन्तले मुख्यरूपेण विप्रलम्भशृङ्गारस्य विस्तारः दृश्यते परन्तु नाटकमिदं सुखान्तम्। अन्ते शकुन्तलादुष्यन्तयोः मेलनं भवति। अतः नाटकमिदं शृङ्गाररसप्रधानम्।

भावानां दृष्ट्या अत्यन्तमार्मिकप्रसङ्गा अत्र उपस्थापिताः। अत्र कवेः कल्पनाशक्त्याः नाट्यकला कुशलतायाः च परिचयो भवति यथा चतुर्थेऽङ्के शकुन्तलायाः पतिगृहगमनस्य उपस्थापनम्।

कालिदासेन स्वकीयनाटकेषु प्रकृत्याः अत्यन्तसजीववर्णनम् उपस्थापितम्। तद् वर्णनं मानवीयस्वभावेन समन्वितम् अनुभूयते। शकुन्तलया आश्रमस्य वृक्षाः भ्रातृसदृशाः लताः स्वसृ-सदृशाः स्वीकृताः। सा प्रकृतिप्रेम्णा अभिभूता तान् पतिगृहं गन्तुं अनुज्ञां याचते। वृक्षादयः अपि शकुन्तलायै पतिगृहगमनसमये आभूषणानि प्रददति।

कालिदासस्य लोकप्रियतायाः कारणं तस्य सरला परिष्कृता प्रसादगुणयुक्ता भाषा मन्यते। कविरयं वैदर्भीशैल्याः विद्यते। कवेः नाटकानां भाषा सरसा सरला सुमनोहरा च अवलोक्यते। अस्य शब्द-कोषः अगाधः अतः भाषायां मनोरमता प्रवाहः च दरीदृश्यते। कवेः शैली ध्वनिसमन्विता सङ्क्षिप्ता। अनेन नाटकेषु भावना सुमधुरभाषया उपस्थापिता। कवेः कथोपकथनं पात्राणाम् अनुकूलं वर्तते।

कवेः नाटकेषु विषयानुकूलाः अलङ्काराः अवलोक्यन्ते। अत्र प्रमुखरूपेण उपमोत्प्रेक्षा-स्वभावोक्ति-तुल्ययोगिता-समासोक्ति-व्यतिरेकादयः दृश्यन्ते।

बीजबिन्दुपताकादयः अपि कविना स्वकीय-नाटकेषु समीचीनरीत्या उपस्थापिताः।

एवं कथयितुं शक्यते यत् कविकुलगुरुकालिदासस्य नाट्यकला उत्कृष्टाऽस्ति।

कालिदास की नाट्यकला

महाकवि कालिदास संस्कृत साहित्य के सर्वश्रेष्ठ नाटककार माने जाते हैं। उनके तीन नाटकों में से शाकुन्तल ही उनकी नाटकीय प्रतिभा का सर्वोत्तम परिचायक है। कालिदास के नाटकों में जो विशेषताएँ सर्वप्रथम लक्षित होती है वे इस प्रकार हैं–

घटना-संयोजन में सौष्ठव – महाकवि कालिदास ने शाकुन्तल के घटना-संयोजन में असाधारण कुशलता प्रदर्शित की है। घटनाओं का संयोजन इस प्रकार किया गया है कि उनमें पूर्णरूप से स्वाभाविकता ज्ञात होती है। जैसे– प्रथम अङ्क में मृग का पीछा करते हुए राजा के सम्मुख तपस्वी स्वाभाविक ढंग से आते हैं–

न खलु न खलु बाणः सन्निपात्योऽयमस्मिन्। (अभि0 1/10)

घटनाओं और वर्णनों की सार्थकता – प्रत्येक घटना सार्थक है और किसी विशेष उद्देश्य से रखी गयी हैं। जैसे– प्रथम अंक में तपस्वियों के आगमन से राजा को चक्रवर्ती पुत्र का आशीर्वाद प्राप्त होता है।

जन्म यस्य पुरोर्वंशे युक्तरूपमिदं तव।
पुत्रमेवं गुणोपेतं चक्रवर्तिनमाप्नुहि।।

(अभि0 01/12)

वर्णनों में स्वाभाविकता – कविकुलगुरु कालिदास की मुख्य विशेषता है कि उनका प्रत्येक वर्णन स्वाभाविक होता है। जैसे– चतुर्थ अङ्क में शकुन्तला की विदाई का दृश्य–

उद्गलितदर्भकवला मृग्यः परित्यक्तनर्तना मयूराः।
अपसृतपाण्डुपत्रा मुञ्चन्त्यश्रूणीव लताः।। अभि0 4/12

रचना–कौशल – कालिदास कथानक के संचयन और उसके निर्माण में असाधारण कुशल हैं। उन्होंने महाभारत के एक साधारण और नीरस कथानक को अपनी रचना कुशलता के बल पर अनुपम और अति सरस बना दिया है।

चरित्र–चित्रण में वैयक्तिकता – कवि कालिदास चरित्र–चित्रण में बहुत कुशल है। उनके प्रत्येक पात्र में अपना विशिष्ट व्यक्तित्व है। प्रत्येक पात्र की कुछ प्रमुख विशेषताएँ हैं, उनका विकास बहुत व्यवस्थित रूप में हुआ है। जैसे– कण्व अत्यन्त सज्जन महर्षि हैं, वहीं दुर्वासा अत्यन्त क्रोधी ऋषि हैं। इसी प्रकार शकुन्तला बहुत सुशील, विनीत, मितभाषी और विचारशील है, जबकि प्रियंवदा हास्यप्रिय, वाक्चतुर और अधिक बोलने वाली है।

पात्रों के अनुकूल भाषा का प्रयोग – कालिदास ने पात्रों के अनुकूल ही भाषा का प्रयोग किया है। जो पात्र जिस कोटि का जिस स्थिति का है वे उसी के अनुसार भाषा का प्रयोग करते हैं। जैसे– प्रियंवदा को राजा की सचरित्रता पर विश्वास है। वह कहती है–

न तादृशा आकृतिविशेषा गुणविरोधिनो भवन्ति। अभि0 4

इसी प्रकार अनसूया कहती है कि दुर्वासा ही ऐसा शाप दे सकते हैं।

कोऽन्यो हुतवहाद् दग्धुं प्रभवति।

रस, छन्द एवम् अलङ्कार का प्रयोग – शाकुन्तल शृङ्गाररसप्रधान नाटक है। इसमें संयोग शृङ्गार अंगी है और विप्रलम्भ (वियोग) शृङ्गार, करुण, वीर, अद्भुत, हास्य, भयानक और शान्त–ये अंग (गौण) रस हैं। संयोग शृङ्गार का एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

अधरः किसलयरागः कोमलविटपानुकारिणौ बाहू।
कुसुममिव लोभनीयं यौवनमङ्गेषु सन्नद्धम्।। अभि0 1/21

अलङ्कारों में महाकवि ने उपमा, अर्थान्तरन्यास आदि अलङ्कारों का प्रयोग किया है। इसी प्रकार छन्दःप्रयोग में भी महाकवि दक्ष हैं। उन्होंने जहाँ एक तरफ आर्या, अनुष्टप् आदि छोटे–बड़े छन्दों का प्रयोग किया है, वहीं दूसरी तरफ शिखरिणी, मालिनी, इन्द्रवज्रा आदि बड़े छन्दों का भी प्रयोग किया है एवंविध महाकवि ने वैदर्भी रीति का समुचित प्रयोग अपने ग्रन्थों में किया है। अतएव कहा गया है–

वैदभीरीतिसन्दर्भे कालिदासो विशिष्यते।

इसी प्रकार महाकवि कालिदास ने अपने नाटकों में नाटकीय कुशलता के साथ कवित्व का समन्वय करके नाटकों को चिरस्थायी बना दिया है। शाकुन्तल में महाकवि ने पाँच अर्थप्रकृतियों (बीज, बिन्दु, पताका, प्रकरी, कार्य), पाँच कार्यावस्थाएँ (आरम्भ, यत्न, प्राप्त्याशा, नियताप्ति, फलागम) एवं पाँच सन्धियों (मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श/अवमर्श, उपसंहृति (निर्वहण) का समुचित प्रयोग किया है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि दीपशिखा' उपाधि से विभूषित महाकवि कालिदास की अद्भुत प्रतिभा का दिग्दर्शन इनके नाटकों में होता है। पाश्चात्य और भारतीय नाट्यसिद्धान्त की कसौटी पर इनके नाटक पूर्णतः सफल हैं। इनके नाटकों में नाटक के सभी तत्त्व पाये जाते हैं। अतएव कहा गया है–

काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला।
तत्रापि चतुर्थोऽङ्कः तत्र श्लोकचतुष्टयम्।।

चतुर्थ अङ्क का सारांश

पुष्प चुनती हुई प्रियंवदा और अनसूया के आपसी वार्तालाप से चतुर्थ अङ्क का प्रारम्भ होता है जिससे ज्ञात होता है कि दुष्यन्त और शकुन्तला के बीच गान्धर्व विवाह हो चुका है। राजा शकुन्तला को ले जाने का आश्वासन देकर प्रस्थान कर चुका है। शकुन्तला राजा के ध्यान में मग्न होकर कुटी में बैठी है। दुर्वासा ऋषि का अतिथि के रूप में आगमन होता है। अतिथि–सत्कार प्राप्त न होने पर क्रुद्ध दुर्वासा शकुन्तला को शाप देते हैं कि जिसका स्मरण करती हुई तू मुझ आए हुए अतिथि की ओर ध्यान नहीं दे रही है, वह याद दिलाने पर भी तुझे नहीं पहचानेगा।

प्रियंवदा ऋषि को मनाती है और दुर्वासा आश्वासन देते हैं कि पहचान का कोई आभूषण दिखाने पर शाप का प्रभाव समाप्त हो जायेगा। प्रियंवदा और अनसूया दुर्वासा के शाप की बात न शकुन्तला को बताती है और न अन्य किसी को। वे समझती हैं कि राजा की अँगूठी शकुन्तला के पास है इसलिए राजा शकुन्तला को पहचान लेंगे और शाप का कोई प्रभाव नहीं हो सकेगा। यहाँ पर विष्कम्भक समाप्त होता है।

सोमतीर्थ से लौटने पर ऋषि कण्व को आकाशवाणी द्वारा ज्ञात होता है कि, शकुन्तला का गान्धर्व विवाह दुष्यन्त से हुआ है और वह गर्भिणी है। ऋषि इस विवाह का समर्थन करते हैं। दुर्वासा–शाप के प्रभाव के कारण राजा शकुन्तला को सर्वथा भूल जाता है और उसे लाने के लिए किसी व्यक्ति को नहीं भेजता है। शकुन्तला के गर्भ-चिह्न प्रकट हैं, अतः ऋषि द्वारा उसे राजा के पास भेजने का प्रबन्ध किया जाता है। शकुन्तला की विदाई की तैयारी होती है। वनवृक्षों द्वारा आभूषण और रेशमी वस्त्रादि प्राप्त होते हैं। शकुन्तला अपनी सखियों, वन-मृगों आदि से विदाई लेती है। यहाँ वियोग शृङ्गार का प्रभावोत्पादक वर्णन हुआ है। ऋषि कण्व द्वारा शकुन्तला को कर्तव्य-शिक्षा और राजा के लिए सन्देश दिया जाता है। तदनन्तर शकुन्तला का ऋषि से करुणापूर्ण मिलन और विदाई का वर्णन है। शकुन्तला के पतिगृहगमन के अवसर पर उसके साथ गौतमी और दो तपस्वियों का प्रस्थान तथा शकुन्तला को पति के पास भेजकर ऋषि को हार्दिक प्रसन्नता की प्राप्ति का वर्णन है। इसी के साथ चतुर्थ अङ्क की समाप्ति होती है।

अर्थो हि कन्या परकीय एव तामद्य संप्रेष्य परिग्रहीतुः।
जातो ममायं विशदः प्रकामं प्रत्यर्पितन्यास इवान्तरात्मा।।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् के प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण

(1) दुष्यन्त

राजा दुष्यन्त इस नाटक के नायक हैं। कालिदास के समग्र नायकों में उनके चरित्र की अवधारणा अत्यन्त उत्कृष्ट है। वे इस अप्रतिम नाटक के प्रधान पुरुष पात्र हैं। वे स्वस्थचित्त, प्रजावत्सल, उदात्त चरित्र, धीरोदात्त नायक हैं। दशरूपक के अनुसार धीरोदात्त नायक-महाबली, अतिगम्भीर, क्षमाशील, आत्मप्रशंसा से रहित, स्थिर प्रकृति, निरहंकारी तथा दृढ़व्रत होता है। दुष्यन्त में ये सभी गुण हैं। इन्होंने स्वजन्म से विख्यात कुरुदेश तथा क्षत्रियों में सर्वश्रेष्ठ कुरुवंश को अलङ्कृत किया है। इसका प्रमाण वह भौंरे के द्वारा सतायी जाती हुई शकुन्तला की डरी हुई वाणी के प्रत्युत्तर में देते हैं– **"कः पौरवे वसुमतीं शासति शासितरि दुर्विनीतानाम्।"**

राजा दुष्यन्त की अवस्था लगभग 30-35 वर्ष के मध्य अनुमानित होती है। वे सुन्दर, हृष्ट–पुष्ट, आकर्षक और युवा हैं। उनकी आकृति मनोहर एवं गम्भीर है तथा वाणी मधुर और प्रभावशाली है– **चतुरगम्भीराकृतिः मधुरं प्रियमालापनं प्रभाववानिव लक्ष्यते।** कालिदास ने कलात्मक उद्देश्य को लेकर ऐसे धनी व्यक्तित्वसम्पन्न पुरुष में पुरुषोचित गुणों का समावेश किया है। राजा के बल की तुलना एक पहाड़ी हाथी के साथ की गयी है– **गिरिचर इव नागः प्राणसारं बिभर्ति।** जो प्रत्यञ्चा की टङ्कार मात्र से ही राक्षस रूपी विघ्नों को समाप्त कर देते हैं। **"हुङ्कारेणैव धनुषः स हि विघ्नानपोहति।"** ऐसे पराक्रम एवं शौर्य से सम्पन्न राजा दुष्यन्त के प्रत्यञ्चा चढ़े धनुष पर इन्द्र विश्वास दिखाते हुए देवासुर सङ्ग्राम में उनकी सहायता माँगते हैं। राजा का शस्त्र दुष्टों के नाश तथा दुःखी जनों की रक्षा के लिये ही उठता है, निरपराधों पर अनावश्यक प्रहार के लिये नहीं– **"आर्तत्राणाय वः शस्त्रं न प्रहर्तुमनागसि"।** राजा अपने बाहुबल के पराक्रम पर ही समुद्रपर्यन्त पृथिवी के शासक हैं, साथ ही नगर की अर्गला के समान राज्य के रक्षक भी हैं। मृगयाप्रेमी राजा धनुर्विद्या में अत्यधिक निष्णात भी हैं, उनके लिए चलायमान लक्ष्य का भेदन करना भी सरल कार्य है; किन्तु तपस्वियों के द्वारा रोके जाने पर वे धनुष से बाण उतार कर वर्णाश्रम–धर्म–प्रधान भारत की संस्कृति के प्रति सम्मान भी प्रदर्शित करते हैं– **"मृगया शीलस्य राज्ञः.....।"** अपने रक्ष्य की रक्षा हेतु वे सद्यः बाण चढ़ाते हैं– **यो हनिष्यति वध्यं त्वां रक्ष्यं रक्षिष्यति द्विजम्।**

पराक्रमी होने के साथ ही वे विनम्र भी हैं। कण्व ऋषि के आश्रम को निकटवर्ती जानकर राजा उनके दर्शन के लिये उत्सुक हो जाते हैं– **"पुण्याश्रमदर्शनेन तावदात्मानं पुनीमहे।"** आश्रमदर्शन के समय राजा ने सम्पूर्ण राजोचित वेश तथा आभूषण इत्यादि उतार दिये थे और विनीत वेश में ही आश्रम में प्रवेश किया। ऋषियों के आदेशों का पालन करने को ही अपना सौभाग्य और समृद्ध भविष्य का मन्त्र समझते हैं। धर्मरक्षा की भावना से अनुप्राणित वे आश्रम की रक्षा में लगे हुए होने के कारण अपनी माँ के राजधानी वापस लौट आने के आग्रह को टाल देते हैं। दुष्यन्त प्रजा से प्राप्त कर के रूप में धन-धान्य को अधिक महत्त्व नहीं देते हैं, बल्कि तपस्वियों के द्वारा दिया गया तप का छठाँ हिस्सा उनके लिये महत्त्वपूर्ण है– **तपः षड्भागमक्षय्यं ददत्यारण्यका हि नः।**

दुष्यन्त शकुन्तला में पूर्ण रुचि रखते हैं, किन्तु अपने विश्वास को सुरक्षित रखकर। उनका विचार है कि पुरुवंशियों का मन असत् वस्तुओं की ओर कभी भी प्रवर्तित नहीं होता है– **"सखे, न परिहार्ये वस्तूनि पौरवाणां मनः प्रवर्तते।"** मन का यही प्रवर्तन ही सज्जनों के अन्तःकरण की विशुद्धि का प्रमाण होता है– **सतां हि सन्देहपदेषु वस्तुषु प्रमाणमन्तःकरणप्रवृत्तयः।**

दुर्वासा के शाप के प्रभाव से दुष्यन्त की स्मृति भी मलिन हो गयी। अङ्गूठी की पुनःप्राप्ति ने उन्हें पश्चात्ताप की अग्नि में जला दिया। अपने कर्त्तव्य से च्युत होने का सारा दोष, राजा ने शकुन्तला और भरत से मिलने के पश्चात् स्वयं को दिया। उत्सव, मनोरंजन आदि से अपने को दूर रखकर मानों पश्चात्ताप की अग्नि में स्वयं को पवित्र करते रहे।

राजा दुष्यन्त ललितकला के अनन्य उपासक हैं। काव्य, सङ्गीत तथा चित्रकला में अत्यन्त प्रवीण हैं। प्रिया शकुन्तला के प्रेमपत्र में लिखे गये श्लोक का उत्तर वे तुरन्त ही रचे गये श्लोक से देते हैं। शकुन्तला का चित्र भी स्वयं उन्होंने ही बनाया था, जिस पर सानुमती का कथन है– **"अहो, एषा राजर्षेः निपुणता। जाने सख्याग्रतो मे वर्तते।"**

राजा दुष्यन्त सम्पूर्ण नाटक में अपनी कुल की प्रतिष्ठा के प्रति अत्यन्त सावधान दिखायी पड़ते हैं। वे ऐसा कोई कार्य नहीं करना चाहते हैं जिससे कुल की मर्यादा धूमिल हो। पतिगृह को आयी हुई शकुन्तला को भी (दुर्वासा ऋषि के शाप के प्रभाव से विस्मृत कर देने वाले) दुष्यन्त ने– **'अनिर्वर्णनीयं परकलत्रम्'** कहा।

(2) शकुन्तला

महाकवि कालिदास ने शकुन्तला को एक आदर्श नारी के रूप में प्रस्तुत किया है। इस नाटक की नायिका शकुन्तला के पिता विश्वामित्र हैं तथा माता मेनका हैं। अप्सरा मेनका को इन्द्र ने विश्वामित्र की तपस्या को भंग करने के लिये भेजा था। शकुन्तला का उसके माता–पिता दोनों ने ही परित्याग कर दिया था। उसे शकुन्तों (पक्षियों) ने पोषित किया, अतः उसका नाम शकुन्तला पड़ा। कण्व ऋषि ने अपने आश्रम में रखकर उसका पालन–पोषण किया। इस कारण वह उनकी (धर्म) पुत्री कहलायी। आश्रम में प्रकृति की गोद में पली–बढ़ी होने के कारण उसका सौन्दर्य अत्यन्त नैसर्गिक शोभा वाला था। वह स्वाभाविक रूप से कोमल, मधुर, प्रकृति–प्रेमी और प्राकृतिक सौन्दर्य से युक्त है– **इदं किलाव्याजमनोहरं वपुः।** उसका बाल्यावस्था से लेकर युवावस्था तक का समय माधवी लताओं, सहकारादि तरुओं की छाया, लताओं के झुरमुट, पशुओं के साथ क्रीड़ा और सखियों के साथ हास–परिहास में व्यतीत हुआ। वह ब्रह्मा की ऐसी रचना है जो रूप और सौन्दर्य के समस्त उपादानों को लेकर, विना छुए केवल मन की कल्पना से बनी है, अथवा विधाता के द्वारा केवल चित्र बनाकर उसमें प्राणों का संचार कर दिया गया है–

चित्रे निवेश्य परिकल्पितसत्त्वयोगा,
रूपोच्चयेन मनसा विधिना कृता नु।

शकुन्तला के वल्कल वस्त्र भी उसके अलङ्करण बन गये हैं, तथा उसके रूप की पवित्रता में धरती के सभी उपमान तुच्छ दिखाये गये हैं, चाहे वह अनाघ्रात पुष्प हो, अक्षत किसलय हो, अनाविद्ध रत्न हो, अनास्वादित मधु हो अथवा पुण्यों का अखण्ड फल हो–

अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलूनं कररुहै–
रनाविद्धं रत्नं मधु नवमनास्वादितरसम्।
अखण्डं पुण्यानां फलमिव च तद्रूपमनघं
न जाने भोक्तारं कमिह समुपस्थास्यति विधिः।।

स्नेह प्रकट करने वाली सद्भावना तथा सरलता की प्रतिमूर्ति, लज्जा, प्रेम एवं शान्ति की प्रतीक शकुन्तला का लगाव मानवों के प्रति तो था ही, आश्रम के प्राकृतिक वातावरण में पली होने के कारण तपोवन के वन्य पशुओं तथा वृक्षों तक से भी जुड़ाव था। तपोवन से अलग हटकर वह अपना अस्तित्व नहीं समझती थी। पेड़ों का सिञ्चन करने में केवल पिता का नियोग ही कारण नहीं था, वरन् वह स्वयं भी उनसे सहोदर स्नेह रखती थी– सोदरस्नेहोऽप्येतेषु। आभूषण प्रिय होने पर भी वह पेड़ों से पत्ते और पुष्पों को नहीं तोड़ती थी। वृक्षों को जल देकर ही स्वयं जल पीती थी–

पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या।
नादत्ते प्रियमण्डनाऽपि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्।।

दुष्यन्त का साथ पाने पर शकुन्तला में नैसर्गिक प्रेम उद्भूत होता है, शील और संकोच में लिपटी नारी का प्रथम और पवित्र प्रेम था तभी वह राजा के सामने ढंग से न देखकर सकुचाती थी, आँखें चुराती थी और मन्द-मन्द मुस्कुराती थी। वह अपने प्रेम को न तो प्रकट करती थी और न छिपाने में समर्थ होती थी–

अभिमुखे मयि संहृतमीक्षितं हसितमन्यनिमित्तकृतोदयम्।
विनयवारितवृत्तिरतस्तया न विवृतो मदनो न च संवृतः।।

शकुन्तला अपने प्रेम का निवेदन प्रेमपत्र के माध्यम से करना चाहती है; किन्तु एक नारी का पुरुष से प्रणयनिवेदन करना मर्यादा के प्रतिकूल और अशोभनीय है फिर भी प्रेम-विह्वल होकर पत्र-लेखन करती है।

प्रत्याख्यान के अवसर पर भी जब परिचायक अँगूठी उसकी अँगुली में नहीं मिली, तब वह अपने भोले स्वभाव के कारण राजा को आश्रम में घटित (विवाह की) घटना को बताकर अपनी सत्यता को प्रमाणित करना चाहती है, किन्तु वह उसमें (दुर्वासा के शाप के कारण) सफल नहीं हुई। उसने निष्कपट भाव से अपना तन और मन दोनों ही जिसको समर्पित कर दिया था, उसी ने समस्त स्त्री जाति पर अशिक्षितपटुत्व का आरोप लगाया। उस समय प्रत्याख्यान की असह्य पीड़ा को आँसुओं में न बहाकर राजसभा के अधिपति को ही धिक्कारती हुई कहती है– **अनार्य! आत्मनो हृदयानुमानेन पश्यसि। क इदानीमन्यो... तवानुकृतिं प्रतिपत्स्यते।**

शकुन्तला के चरित्र का यह उत्कर्ष, अदिति और मरीचि ऋषि के आध्यात्मिक सत्सङ्ग के कारण भी है और पुत्र-पालन के गुरुतर दायित्व के कारण भी। अन्तिम रूप में शकुन्तला विजयिनी है, पति उसके चरणों पर गिरकर क्षमा याचना करते हैं, किन्तु वह उलाहने का एक शब्द भी नहीं कहती। केवल यही कहती है कि उठिये आर्यपुत्र ! मेरे पूर्वकृत कर्मों का परिणाम होगा कि इतने दयालु आप भी मेरे प्रति कठोर हो गये। आज उसका जीवन सफल और सम्पूर्ण हुआ, पुत्र के साथ पति की समीपता भी मिली।

कवि के अनुसार शकुन्तला के चरित्र में दो अन्य गुणों– सखीस्नेह और पितृवत्सलता की भी प्रधानता है। आश्रम में सखियों के साहचर्य में उसने लेखन, वाचन, काव्य-संगीत इत्यादि ललित-कलाओं की शिक्षा प्राप्त की है। पुत्री के रूप में शकुन्तला को पिता कण्व का स्नेह प्राप्त है। यद्यपि ऋषि उसके जन्म देने वाले पिता नहीं हैं; परन्तु उन्हीं की देख-रेख ने शकुन्तला के व्यक्तित्व को अप्रतिम बना दिया। पिता द्वारा बताये गये सभी कार्यों– आलवाल (थाल्हा) निर्माण, वृक्षों को सींचना तथा अतिथि-सत्कार आदि को बड़े ही मनोयोग से सम्पन्न करती है। पतिगृहगमन के समय उस पितृवत्सला शकुन्तला की सारी चिन्ता अपने पिता के लिए है– **तपश्चरणपीडितं तातशरीरम्। तन्माऽतिमात्रं मम कृत उत्कण्ठस्व।**

कवि की लेखनी ने शकुन्तला के चरित्र में अचानक ही परिवर्तन दिखाया है। आश्रम की बाला अकस्मात् ही आयु और मानसिक आघात से परिपक्व हो गयी, संसार के प्रति उसकी दृष्टि बदल गयी। शकुन्तला अनुपम और असाधारण है। मानवीय होते हुए भी देवी है, देवी होते हुए भी नारी है।

3. महर्षि काश्यप (कण्व)

उत्तराखण्ड में बहने वाली मालिनी नदी के तट पर स्थित आश्रम के कुलपति महर्षि कण्व हैं। 10 हजार की संख्या वाले आश्रम के छात्रों का भरण-पोषण एवम् अध्यापन करने वाले ऋषि को ही कुलपति का पद प्रदान किया जाता था–

मुनीनां दशसाहस्रं योऽन्नदानादिपोषणात्।
अध्यापयति विप्रर्षिरसौ कुलपतिः स्मृतः।।

कण्व मरीचिपुत्र (कश्यप के पुत्र) होने के कारण काश्यप के नाम से भी जाने जाते हैं। वे नैष्ठिक ब्रह्मचारी हैं। आश्रम में बनी हुई यज्ञशाला में अग्निहोत्र आदि करते हैं। भूत, वर्तमान तथा भविष्य को अपने तप के प्रभाव से जान लेते हैं। तप के प्रभाव से उनकी उपस्थिति में राक्षस विघ्न नहीं डाल पाते हैं। भविष्यद्रष्टा होने के कारण उन्हें आभास हो जाता है कि शकुन्तला पर विपत्ति आने वाली है जिसके शमनार्थ वे सोमतीर्थ पहले ही चले जाते हैं। ऋषि ने अपनी तीव्र अन्तर्दृष्टि से यह जान लिया कि शकुन्तला और दुष्यन्त ने गान्धर्व विवाह कर लिया है साथ ही शकुन्तला गर्भवती भी है। भावी घटनाएँ भी उन्हें सहज रूप से प्रत्यक्ष थीं कि शकुन्तला का गर्भ तेजस्वी और संसार के लिये कल्याणकारी है–

दुष्यन्तेनाहितं तेजो दधानां भूतये भुवः।
अवेहि तनयां ब्रह्मन्नग्निगर्भां शमीमिव।।

शकुन्तला कण्व की पालिता पुत्री है। माता-पिता के द्वारा छोड़ी जाने पर ऋषि ने शकुन्तला को अत्यधिक स्नेह से पाला तथा उसके अनिष्ट के निवारण की चिन्ता उन्हें निरन्तर बनी रहती है जिसको वे अनेक अनुष्ठानों एवं क्रिया विधियों से समाप्त करने का प्रयास करते हैं।

अमी वेदिं परितः क्लृप्तधिष्ण्याः
समिद्वन्तः प्रान्तसंस्तीर्णदर्भाः।
अपघ्नन्तो दुरितं हव्यगन्धै–
र्वैतानास्त्वां वह्नयः पावयन्तु।।

चतुर्थ अङ्क में शकुन्तला की विदाई के समय ऋषि एक सांसारिक गृहस्थ की तरह अपने शोक के आवेग को दबा नहीं पाते हैं और पुत्री को सान्त्वना देते हैं– **"वत्से! किमेवं कातरासि। वत्से! अलं रुदितेन।"**

पुत्री के शुभ सम्पादन की उनकी इच्छा पतिगृह जाने के समय उनकी वाणी से मुखरित होती है– **सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्।**

ऋषि की यही इच्छा है कि उनका आशीर्वाद शकुन्तला के साथ सदैव बना रहे वह अपना जीवन सुखपूर्वक व्यतीत करे। पतिगृह–गमन के समय शकुन्तला अपने पिता को धीरज बँधाती है कि आप मेरे लिये दुःखी न हों, किन्तु ऋषि शकुन्तला से विहीन आश्रम की कल्पना मात्र से ही दुःखी होकर कहते हैं कि पुत्री! तुमने कुटी के द्वार पर जो नीवार धान्य के कण बोये हैं, वे मुझे तुम्हारी याद दिलाते रहेंगे। इस प्रकार वह अपने हार्दिक प्रेम को प्रकट करते हैं–

शममेष्यति मम शोकः कथं नु वत्से त्वया रचितपूर्वम्।
उटजद्वारविरूढं नीवारबलिं विलोकयतः।।

ऋषि होते हुए भी उनको लौकिक-व्यवहार अच्छी तरह से पता है– **वनौकसोऽपि सन्तो लौकिकज्ञा वयम्।** ऋषि के द्वारा शकुन्तला को दिये गये उपदेश अत्यन्त प्रभावशाली हैं जो पतिगृह को जाती हुई कन्या को मातृपक्ष (माता या पिता) के द्वारा दिये जाते हैं– **शुश्रूषस्व गुरून् कुरु प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने, भर्तुर्विप्रकृताऽपि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गमः।** कण्व ऋषि द्वारा राजा को दिये गये उपदेश में उनके लोकव्यवहारज्ञता का परिचय मिलता है। शकुन्तला के साथ विदाई के समय ऋषि, अनसूया तथा प्रियंवदा को नहीं भेजते हैं, क्योंकि उन दोनों का विवाह अभी नहीं हुआ है। अविवाहिता कन्याओं को बहन या सखी की ससुराल भेजना उनको अनुचित लगा। इसलिए वह दोनों सखियों को शकुन्तला के साथ नहीं भेजते हैं।

मानवस्वभाव से भी ऋषि पूर्णतया परिचित हैं, जैसे– अन्य कार्यों में व्यस्त हो जाने से व्यक्ति अपने दुःख को भूल जाता है। इसी से वे शकुन्तला से कहते हैं कि पतिगृह पहुँच कर तुम वहाँ के कार्यों में व्यस्त हो जाओगी तथा इस दुःख को भूल जाओगी–

अभिजनवतो भर्तुः श्लाघ्ये स्थिता गृहिणीपदे.....
मम विरहजां न त्वं वत्से शुचं गणयिष्यसि।।

कण्व ऋषि कन्या को धरोहर (दूसरे की सम्पत्ति) समझते हैं। उसका सावधानी से पालन-पोषण करके पतिगृह को भेज (सौंप) कर सुख का अनुभव करते हैं–

अर्थो हि कन्या परकीय एव तामद्य सम्प्रेष्य परिग्रहीतुः।
जातो ममायं विशदः प्रकामं प्रत्यर्पितन्यास इवान्तरात्मा।।

ऋषि को इस बात की पूरी जानकारी थी कि राजमहल का वातावरण आश्रम के वातावरण से अत्यन्त भिन्न होगा और उनकी पुत्री को वहाँ सामञ्जस्य बिठाने में कष्ट हो सकता है, इसलिए उन्होंने उसे राजमहल के वातावरण में रहने के लिये जरूरी उपदेश दिये–

यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः।

महर्षि कण्व अत्यन्त सहनशील हैं, इसका पता तब चलता है जब शकुन्तला के आश्रम-विरोधी आचरण पर भी वह कुछ नहीं कहते हैं। इस बात का डर प्रियंवदा को था, जिस पर वह कहती है– **तात इदानीमिमं वृत्तान्तं श्रुत्वा न जाने किं प्रतिपत्स्यत इति।** किन्तु ऋषि इस विवाह का समर्थन करते हुए शकुन्तला को उसके पतिगृह भेज भी देते हैं और कहते है– **शिवास्ते पन्थानः सन्तु।**

4. अनसूया

कालिदास ने शकुन्तला के चरित्र में लज्जा, प्रगल्भता और रुक्षता आदि गुणों के निराकरण की दृष्टि से दो सुन्दर सखियों का चरित्र भी रखा है। ये दोनों समान अवस्था और रूप के कारण अत्यधिक अन्तरङ्गता से हास-परिहास करती हैं तथा सुखदुःखादि भावों का आपस में आदान-प्रदान भी इनके आपसी सम्बन्धों को अत्यन्त प्रगाढ़ बना दिया है। अनसूया इन तीनों सखियों में से कुछ बड़ी अतएव दूरदर्शिनी, गम्भीर तथा व्यवहारकुशल है। प्रियंवदा अपेक्षाकृत कनिष्ठ, चञ्चल तथा नाम के अनुरूप प्रिय-वादिनी भी है। शकुन्तला की सारी वाचालता प्रियंवदा ने तथा चिन्ताएँ और जिज्ञासाएँ अनसूया ने ले लिया है।

राजा दुष्यन्त के आश्रम में प्रवेश करने पर अनसूया ही उनका स्वागत करती है। राजा ने जब शकुन्तला के प्रति आकृष्ट होकर पूछा कि– **अपि तपो वर्धते?** तो अनसूया ही उसका उत्तर देती हुई कहती है कि– "आप जैसे अतिथि-विशेष के आने से ही तप की सफलता है।" शकुन्तला से स्वागत- सामग्री लाने के लिये कहती है और राजा को शकुन्तला का जन्मविषयक वृत्तान्त सुनाती है। राजा से बड़े ही आदर और सम्मान से उनका परिचय पूछकर अपनी वाग्विदग्धता का परिचय देती है– **"आर्यस्य मधुरालापजनितो विस्रम्भो मां मन्त्रयते-कतम आर्येण राजर्षिवंशोऽलङ्क्रियते। कतमो वा विरहपर्युत्सुकजनः कृतो देशः। किं निमितं वा .....पदमुपनीतः।"**

अनसूया प्रेमरोग से सन्तप्त शकुन्तला की चिन्ता करती है तथा नलिनीपत्र में पत्र लिखवाकर और खस के लेपन से अपनी प्रिय सखी शकुन्तला का उपचार भी करती है। यद्यपि प्रेम रोग का अनुभव उसे नहीं है, किन्तु इतिहास, कथाओं के आधार पर वह अनुमान लगा लेती है और उसके अनुरूप ही शकुन्तला की चिकित्सा करती है। जब वह देखती है कि शकुन्तला राजा के प्रति समर्पित होना चाहती हैं तो वह परोक्ष रूप से शकुन्तला के भविष्य के प्रति पहले आश्वस्त होना चाहती हैं– **वयस्य! बहुवल्लभा राजानः श्रूयन्ते। यथा नौ प्रियसखी बन्धुजनशोचनीया न भवेत् तथा क्रियताम्।**

प्रियंवदा की इस आशङ्का पर कि दुष्यन्त और शकुन्तला के विषय में जानकर ऋषि की क्या प्रतिक्रिया होगी, अनसूया अपनी व्यावहारिक बातों से उत्तर देती है कि उत्तम वर की प्राप्ति होने पर परिवार के लोगों को आपत्ति नहीं होनी चाहिए– **गुणवते कन्यका प्रतिपादनीयेत्ययं तावत् प्रथमः संकल्पः। तं यदि दैवमेव संपादयति नन्वप्रयासेन कृतार्थो गुरुजनः।।**

राजा ने हस्तिनापुर जाकर भी जब शकुन्तला की सुध नहीं ली तो अनसूया को चिन्ता हुई और उसने प्रिय सखी के सौभाग्य देवता की अर्चना करने की योजना बनायी। ऋषि विदाई की वेला में रोती हुई शकुन्तला को शान्त करने को कहते हैं– **"अनसूये! अलं रुदितेन। ननु भवतीभ्याम् स्थिरीकर्त्तव्या शकुन्तला।**

5. प्रियंवदा

प्रियवादिनी प्रियंवदा अत्यन्त चञ्चलस्वभाव वाली और सरल हास-परिहास करने वाली है। अपने वस्त्र के कसे हुए होने की बात जब शकुन्तला उससे कहती है तो प्रियंवदा कहती है कि– **"अत्र पयोधरविस्तारयितृ आत्मनः यौवनमुपालभस्व मां किमुपालभसे।"** जब शकुन्तला आम्रवृक्ष पर वनज्योत्स्ना को चढ़ी हुई देखती है तो प्रियंवदा उससे कहती है कि आम्रवृक्ष की तरह तुम भी अपने अनुरूप प्रेमी खोज रही हो। इस पर शकुन्तला कहती है कि–यह निश्चित ही तेरी अपनी इच्छा है। **(एष नूनं तवात्मगतो मनोरथः)।**

राजा जब शकुन्तला से विवाह सम्बन्धी इच्छा पूछने को उत्सुक होता है, तो वह कहती है– आप कुछ भी विचार न करें तपस्विजनों से निःसंकोच प्रश्न पूछा जा सकता है **(अलं विचारेण। अनियन्त्रणानुयोगः तपस्विजनो नाम)।** राजा की जिज्ञासा का समाधान भी प्रियंवदा ही करती है कि विवाह के विषय में यह (शकुन्तला) पराधीन है, इसके पिता ही इसका विवाह करेंगे **(धर्माचरणेऽपि परवशोऽयं जनः)।**

प्रियंवदा पिता कण्व के आगमन को निकट जानकर उनकी प्रतिक्रिया से भयभीत है– **तात इमं वृत्तान्तं श्रुत्वा न जाने किं प्रतिपत्स्यत इति।** दुर्वासा के क्रोध को शान्त करने वही जाती है, और उनके शाप को कदाचित् शान्त भी कर लेती है– **सखि, प्रकृतिवक्रः स कस्यानुनयं प्रति गृह्णाति। किमपि पुनः सानुक्रोशः कृतः।** शकुन्तला को मदनलेख लिखने का और दुष्यन्त को भेजने का प्रस्ताव भी प्रियंवदा का ही था।

कवि ने नायिका शकुन्तला के चरित्र के उत्कर्ष हेतु इन दोनों ही स्त्री पात्रों का सर्जन किया है। अनसूया शकुन्तला के संकटकाल में उपयोगी है तथा प्रियंवदा प्रेम-प्रसङ्ग में। एक शिष्ट है तो दूसरी विनोदी प्रकृति की। दोनों ही अपनी प्रिय सखी से प्रगाढ प्रेम करती हैं और हर समय उसकी सहायता के लिये तत्पर रहती हैं चाहे जलसिञ्चन हो, अतिथि-सत्कार हो, दुर्वासा ऋषि का शाप हो, अलङ्करण का प्रसङ्ग हो या फिर विदाई की वेला हो। दोनों ने ही अपनी-अपनी चारित्रिक विशेषताओं से अपनी सखी के चरित्र के आकर्षण को अधिकाधिक मादकता, सम्मोहन तथा सुगन्धि प्रदान की है।

अभिज्ञानशाकुन्तलम्

(चतुर्थोङ्कः)

(आकाशे)

रम्यान्तरः कमलिनीहरितैः सरोभि–
श्छायाद्रुमैर्नियमितार्कमयूखतापः।
भूयात् कुशेशयरजोमृदुरेणुरस्याः
शान्तानुकूलपवनश्च शिवश्च पन्थाः।।11।।

सन्दर्भः– प्रस्तुत श्लोक उपमासम्राट्, 'दीपशिखा' उपाधि से विभूषित महाकवि कालिदास द्वारा प्रणीत 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' नाटक के चतुर्थ अङ्क से उद्धृत है।

प्रसङ्गः– प्रकृत श्लोक में शकुन्तला की विदाई के अवसर पर आकाशवाणी से दिये जाने वाले माङ्गलिक आशीर्वचन का वर्णन है।

अन्वयः– अस्याः पन्थाः कमलिनीहरितैः सरोभिः रम्यान्तरः छायाद्रुमैः नियमितार्कमयूखतापः, कुशेशयरजोमृदुरेणुः, शान्तानुकूलपवनः च शिवः च भूयात्।

हिन्दी अर्थः– इस (शकुन्तला) का मार्ग, कमलिनियों से हरे–भरे तालाबों के द्वारा रमणीय (मनोहर) मध्यभाग वाला हो। छाया वाले वृक्षों से सूर्य का ताप नियमित (नियन्त्रित) हो। कमलों के पराग से कोमल धूलियुक्त, शान्त और अनुकूल वायु वाला एवं कल्याणकारी हो।

शब्दार्थः– आकाशे = आकाश में, आकाशवाणी। **अस्याः** = इस (शकुन्तला) का। **पन्थाः** = मार्ग, रास्ता। **कमलिनीहरितैः** = कमलिनियों से हरे–भरे। **सरोभिः** = तालाबों से। **रम्यान्तरः** = रमणीय है मध्यभाग (अन्तर) जिसका ऐसा, रमणीय मध्य भाग वाला। **छायाद्रुमैः** = छाया (वाले) वृक्षों से। **नियमितार्कमयूखतापः** = रोक दिया गया है सूर्य की किरणों का ताप जिसमें ऐसा, सूर्य की किरणों के नियन्त्रित (कम) ताप वाला। **कुशेशय** = कमल। **रजः** = पराग। **रेणुः** = धूल। **शान्तानुकूलपवनः** = शान्त और अनुकूल वायु वाला। **च** = और। **शिवः** = कल्याणकारी। **भूयात्** = हो।

हिन्दी व्याख्या–प्रस्तुत पद्य में वनदेवता, कण्व आश्रम से विदा होती हुई शकुन्तला की पतिगृह की यात्रा शुभ तथा निष्कण्टक हो–ऐसा आशीर्वाद आकाशवाणी के माध्यम से देते हैं। वे कहते हैं कि शकुन्तला के पूरे यात्रा मार्ग में सुन्दर कमलिनियों के आधिक्य के कारण हरे–भरे दिखायी पड़ने वाले सरोवर बीच–बीच में पड़ते रहें, जिनकी रमणीयता शकुन्तला को आकृष्ट करती रहे। रास्ते के दोनों ओर, पंक्तिबद्ध रूप में लगे सघन वृक्ष की छाया इस प्रकार पड़े कि सूर्य की किरणों की गर्मी तथा धूप उसके कोमल शरीर को कष्ट न पहुँचा सके। रास्ते में पड़े धूल तथा मिट्टी उन्ही सरोवरों में खिले कमलपुष्पों के मृदु परागकणों से इस प्रकार ढक जाये कि धूल, मिट्टी उसके पैर को स्पर्श न कर सके।

सरोवर के जल से नम हुई सुखदायी हवा, मन्द–मन्द चलती रहे ताकि उसको थकान न लगे। इस प्रकार शकुन्तला के पतिगृहगमन की पूरी यात्रा हर तरह से कल्याणकारी हो।। 11।।

छन्द–वसन्ततिलका।

अलङ्कार–तुल्ययोगिता, परिकर, काव्यलिङ्ग।

(सर्वे सविस्मयमाकर्णयन्ति)

गौतमी– जाते, ज्ञातिजनस्निग्धाभिरनुज्ञातगमनाऽसि तपोवनदेवताभिः। प्रणम भगवतीः।

शकुन्तला– (सप्रणामं परिक्रम्य। जनान्तिकम्) हला प्रियंवदे, आर्यपुत्रदर्शनोत्सुकाया अप्याश्रमपदं परित्यजन्त्या दुःखेन मे चरणौ पुरतः प्रवर्तेते।

प्रियंवदा– न केवलं तपोवनविरहकातरा सख्येव। त्वयोपस्थितवियोगस्य तपोवनस्यापि तावत् समवस्था दृश्यते।

उद्गलितदर्भकवला मृग्यः परित्यक्तनर्तना मयूराः।
अपसृतपाण्डुपत्रा मुञ्चन्त्यश्रूणीव लताः।।12।।

(सभी आश्चर्यचकित होकर सुनते हैं।)



गौतमी– पुत्री! बान्धवजनों के सदृश स्नेह करने वाली तपोवन के देवताओं ने तुम्हें (पतिगृह)जाने की अनुमति दे दी है। अतः देवताओं को प्रणाम करो।

शकुन्तला– (प्रणाम करती हुई घूमकर हथेली की ओट से कहती है)

सखि प्रियंवदा! आर्यपुत्र को देखने की उत्कण्ठा होने पर भी आश्रम-स्थल को छोड़ते हुए मेरे पैर बड़ी कठिनाई से आगे बढ़ रहे हैं।

प्रियंवदा– हे सखी! तपोवन से दूर जाने के वियोग से तुम ही दुःखी नहीं हो, बल्कि तुम्हारी उपस्थिति के अभाव में आश्रम की स्थिति भी ठीक वैसी ही दिखलायी पड़ती है।

अन्वयः– मृग्यः उद्गलितदर्भकवलाः, मयूराः परित्यक्तनर्तनाः, लताः अपसृतपाण्डुपत्राः अश्रूणि मुञ्चन्ति इव।

शब्दार्थ– **मृग्यः** = हरिणियाँ। **उद्गलित** = उगल रही हैं। **दर्भकवलाः** = कुश नामक घास के कौर। **मयूराः** = मयूर (मोर)। **परित्यक्त नर्तनाः** = छोड़ दिया है नाचना जिन्होंने। **लताः** = लताएँ। **अपसृत** = छोड़कर। **पाण्डुपत्राः** = पीले पत्ते।

हिन्दी अर्थ– (दुःख के कारण) हरिणियों ने कुश (घास) के कौर उगल दिये हैं, मोरों ने नाचना छोड़ दिया है, लताएँ पीले पत्तों को गिराकर (मानो) आँसू बहा रही हैं।

हिन्दी व्याख्या– प्रस्तुत श्लोक में शकुन्तला की विदाई की घड़ी पर तपोवन में उसके स्नेह के भाजन रहे मृग-मयूर तथा पर्णलता इत्यादि का दुःख दर्शाया गया है। हरिणियाँ किसी तरह घास चबा तो ले रही हैं; लेकिन अत्यधिक दुःख के कारण उसे निगल नहीं पा रही हैं और उगल दे रही हैं। मोरों ने भी अब प्रसन्नता के अभाव में नाचना छोड़ दिया है। लताओं से भी पीले-पीले पत्ते इस प्रकार झड़ रहे हैं, मानों पत्तों के रूप में वे अपने आँसू बहा रही हैं।। 12।।

छन्द–आर्या।

अलङ्कार–उत्प्रेक्षा, समासोक्ति।

शकुन्तला– (स्मृत्वा) तात, लताभगिनीं वनज्योत्स्नां तावदामन्त्रयिष्ये।

काश्यपः– अवैमि ते तस्यां सोदर्यास्नेहम्। इयं तावद् दक्षिणेन।

शकुन्तला– (उपेत्य लतामालिङ्ग्य) वनज्योत्स्ने, चूतसङ्गताऽपि मां प्रत्यालिङ्गेतोगताभिः शाखाबाहुभिः। अद्यप्रभृति दूरपरिवर्तिनी ते खलु भविष्यामि।

काश्यपः–

सङ्कल्पितं प्रथममेव मया तवार्थे
भर्तारमात्मसदृशं सुकृतैर्गता त्वम्।
चूतेन संश्रितवती नवमालिकेय–
मस्यामहं त्वयि च सम्प्रति वीतचिन्तः।।13।।

इतः पन्थानं प्रतिपद्यस्व।

शकुन्तला–(स्मरण करके) हे तात, मैं अपनी लता–बहन वनज्योत्स्ना से विदाई ले लूँ।

काश्यपः – (मैं) जानता हूँ कि तुम्हारा उस वनज्योत्स्ना के प्रति सगी बहन के समान स्नेह है। यह दाहिनी ओर (स्थित) है।

शकुन्तला–(निकट जाकर, लता से लिपट कर) हे वनज्योत्स्ना! आम के वृक्ष से लिपटी होने पर भी इधर आयी हुई शाखारूपी बाहों से मुझसे गले मिलो। आज के बाद से मैं तुमसे दूर चली जाऊँगी।

अन्वय– मया तवार्थे प्रथमम् एव सङ्कल्पितं त्वं सुकृतैः आत्मसदृशं भर्तारं गता। इयं नवमालिका चूतेन संश्रितवती। सम्प्रति अहम् अस्यां त्वयि च वीतचिन्तः।

शब्दार्थ–मया = मेरे द्वारा। **अर्थे** = उद्देश्य से। **सङ्कल्पितम्** = मन से सोचकर निश्चित कर लेना। **सुकृतैः** = शुभ कर्मों से। **आत्मसदृशम्** = अपने योग्य। **भर्तारम्** = पति को। **चूतेन** = आम से। **संश्रितवती** = मिल गयी है। **वीतचिन्तः** = चिन्तारहित।

हिन्दी अर्थ– मैंने तुम्हारे लिये पहले ही (जैसा) सङ्कल्प लिया था, तुम अपने पुण्यों से अपने अनुरूप वर को प्राप्त हुई हो। यह नवमालिका (की लता) आम (के वृक्ष) से मिल गयी है, अब मैं इसकी और तुम्हारी ओर से चिन्तामुक्त हो गया हूँ।

इधर से मार्ग पर चलो।

हिन्दी व्याख्या–प्रस्तुत श्लोक में कण्व ऋषि वनज्योत्स्ना लता से लिपटकर दुःखी हो रही शकुन्तला को ढाढस बँधाते हुए कहते हैं कि मैंने तुम्हारे अनुरूप पति से तुम्हारा विवाह कराने का संकल्प लिया था, तुमने अपने पुण्यकर्मों से वैसा ही श्रेष्ठ पति प्राप्त कर लिया है और इस नवमालिका वनज्योत्स्ना को भी आम के वृक्ष का ठीक वैसा ही सहारा मिल गया है। इस प्रकार दोनों को उपयुक्त सहारा मिल जाने से मैं तुम दोनों के भविष्य के लिये चिन्तामुक्त हो गया हूँ।।13।।

छन्द–वसन्ततिलका।

अलङ्कार–समासोक्ति, काव्यलिङ्ग, तुल्योगिता।

शकुन्तला– (सख्यौ प्रति) हला, एषा द्वयोर्युवयोर्हस्ते निक्षेपः।

सख्यौ– अयं जनः कस्य हस्ते समर्पितः। (इति वाष्पं विहरतः।)

काश्यपः– अनसूये, अलं रुदित्वा। ननु भवतीभ्यामेव स्थरीकर्तव्या शकुन्तला। (सर्वे परिक्रामन्ति।)

शकुन्तला– तात, एषोटजपर्यन्तचारिणी गर्भमन्थरा मृगवधूर्यदाऽनघप्रसवा भवति, तदा मह्यं कमपि प्रियनिवेदयितृकं विसर्जयिष्यथ।

काश्यपः–नेदं विस्मरिष्यामः।

शकुन्तला–(गतिभङ्गं रूपयित्वा) को नु खल्वेष निवसने मे सज्जते। (इति परावर्तते।)

शकुन्तला–(दोनों सखियों से) सखियों! इस वनज्योत्स्ना को तुम दोनों के हाथों में धरोहर के रूप में सौंपती हूँ।

दोनों सखियाँ– हमें किसके हाथों में सौंपती हो? (ऐसा कहकर आँसू गिराती हैं)

काश्यपः–अनसूया! (तुम दोनों) रोना बन्द करो, तुम दोनों को तो शकुन्तला को धीरज देना चाहिए। (सभी लोग चारों ओर घूमते हैं।)

शकुन्तला– हे तात! कुटी के पास गर्भ के कारण मन्थर गति से चलने वाली शिथिल इस मृगी का जब सुखपूर्वक प्रसव हो जाय तब मेरे पास किसी को यह प्रिय समाचार सुनाने के लिये अवश्य भेज दीजियेगा।

काश्यप–(हम) इसे नहीं भूलेंगे।

शकुन्तला – (चलने में अवरोध का अभिनय करके) अरे! यह कौन मेरा वस्त्र खींच रहा है? (यह कहकर पीछे की ओर मुड़ती है।)

काश्यपः– वत्से,

यस्य त्वया व्रणविरोपणमिङ्गुदीनां
तैलं न्यषिच्यत मुखे कुशसूचिविद्धे।
श्यामाकमुष्टिपरिवर्धितको जहाति
सोऽयं न पुत्रकृतकः पदवीं मृगस्ते।।14।।

शकुन्तला– वत्स, किं सहवासपरित्यागिनीं मामनुसरसि। अचिरप्रसूतया जनन्या विना वर्धित एव। इदानीमपि मया विरहितं त्वां तातश्चिन्तयिष्यति। निवर्तस्व तावत्। **(इति रुदती प्रस्थिता।)**

अन्वय–यस्य कुशसूचिविद्धे मुखे त्वया व्रणविरोपणम् इङ्गुदीनां तैलं न्यषिच्यत, सः अयं श्यामाकमुष्टिपरिवर्धितकः पुत्रकृतकः मृगः ते पदवीं न जहाति।

शब्दार्थ– **कुशसूचिविद्धे मुखे** = कुश की नोकों से विंधकर, (घायल) हुए मुख में। **व्रणविरोपणम्** = घाव भर देने वाला। **इङ्गुदी** = हिंगोट। **श्यामाकमुष्टिपरिवर्धितकः** = साँवाँ (धान्य) की मुठ्ठियों से पाला गया। **पुत्रकृतकः** = पुत्रवत्। **पदवीम्** = मार्ग को। **जहाति** = छोड़ रहा है।

काश्यपः–पुत्री!

हिन्दी अर्थ–जिस (मृग) के, कुश की नोक (अग्रभाग) से घायल हुए मुख में, तेरे द्वारा घाव को पूरित करने वाला इंगुदी–तेल निचोड़ा गया था, वही यह साँवाँ की (कोमल) मुट्ठियाँ खिलाकर पुत्रवत् पाला गया प्रिय मृग तुम्हारा मार्ग नहीं छोड़ रहा है।

हिन्दी व्याख्या–प्रस्तुत श्लोक में कण्व ऋषि जाती हुई शकुन्तला को वस्त्र से पकड़कर रोक लेने का प्रयास कर रहे मृगशावक के विशेष स्नेह का कारण बताते हैं कि कुश की नोक से जिस मृगशावक के मुख में हो गये घाव को ठीक करने के लिये तुमने इङ्गुदी का तेल लगाया और जिसे अपने हाथों से मुठ्ठी भर साँवाँ–चावल खिलाकर अपने पुत्र की तरह पाला था, वही यह प्रिय मृग तुम्हारा रास्ता रोक रहा है।।14।।

छन्द–वसन्ततिलका।

अलङ्कार–स्वभावोक्ति।

शकुन्तला–पुत्र! तुम्हारा साथ छोड़कर चली जाने वाली मुझ शकुन्तला के पीछे क्यों चले आ रहे हो? जन्म देकर तत्काल मृत हुई माँ के बिना तो तुम पाले ही गये हो। इस समय भी मुझसे अलग रहने पर तुम्हें पिता जी ही पालेंगे। अतः तुम वापस लौट जाओ (ऐसा कहकर रोती हुई वहाँ से चली जाती है)।

काश्यपः–

उत्पक्ष्मणोर्नयनयोरुपरुद्धवृत्तिं
वाष्पं कुरु स्थिरतया विरतानुबन्धम्।
अस्मिन्नलक्षितनतोन्नतभूमिभागे
मार्गे पदानि खलु ते विषमीभवन्ति।।15।।

शाङ्गरवः– भगवन्, ओदकान्तं स्निग्धो जनोऽनुगन्तव्य इति श्रूयते। तदिदं सरस्तीरम्। अत्र संदिश्य प्रतिगन्तुमर्हति।

काश्यपः– तेन हीमां क्षीरवृक्षच्छायामाश्रयामः।

(सर्वे परिक्रम्य स्थिताः।)

काश्यपः– (आत्मगतम्) किं नु खलु तत्रभवतो दुष्यन्तस्य युक्तरूपमस्माभिः संदेष्टव्यम्।।

(इति चिन्तयति)

शकुन्तला– (जनान्तिकम्) हला, पश्य। नलिनीपत्रान्तरितमपि सहचरमपश्यन्त्यातुरा चक्रवाक्यारटति, दुष्करमहं करोमीति।

काश्यपः –

अन्वय–उत्पक्ष्मणोः नयनयोः उपरुद्धवृत्ति वाष्पं स्थिरतया विरतानुबन्धं कुरु। अलक्षितनतोन्नतभूमिभागे अस्मिन् मार्गे ते पदानि खलु विषमीभवन्ति ।

शब्दार्थ–उत्पक्ष्मणोः = ऊपर उठी हुई पलकों वाले। **उपरुद्धवृत्तिम्** = (नेत्रों के) दर्शन व्यापार को रोकने वाले। **वाष्पम्** = आँसुओं को। **स्थिरतया** = दृढ़ता से। **विरतानुबन्धम्** = बहने से रोक देना। **अलक्षितनतोन्नतभूमिभागे** = न दिखायी पड़ने के कारण ऊबड़खाबड़ भूमि पर। **मार्गे** = मार्ग में। **पदानि** = कदम। **विषमीभवन्ति** = ऊँचे–नीचे पड़ रहे हैं।

हिन्दी अर्थ–ऊपर उठी हुई पलकों से युक्त नेत्रों के दृष्टिकलापों को अवरुद्ध कर देने वाले आँसुओं को बहने से धैर्यपूर्वक रोक लो। (क्योंकि) ठीक से न दिखायी पड़ने के कारण ऊँची–नीची भूमि वाले इस मार्ग पर तुम्हारे पैर (कदम) वस्तुतः लड़खड़ा रहे हैं।

हिन्दी व्याख्या–प्रस्तुत श्लोक में काश्यप रोती हुई शकुन्तला से कहते हैं कि धैर्य धारण करो और अपने आँसुओं को रोक लो। इन आँसुओं के कारण तुम्हारी ऊपर उठी हुई पलकों से युक्त आँखें ठीक से देख नहीं पा रही हैं और ठीक से न देख पाने के कारण ऊँची–नीची भूमि वाले इस रास्ते पर तुम्हारे पैर लड़खड़ा रहे हैं।।15।।

छन्द–वसन्ततिलका।

अलङ्कार–काव्यलिङ्ग।

शाङ्गरवः–भगवन्। प्रिय लोगों को (विदा करते समय) जलाशय तक अनुसरण करना चाहिए, ऐसा सुना गया है। तो यह (निकट ही) सरोवर का तट (किनारा) है, यहाँ सन्देश देकर वापस लौट सकते हैं।

काश्यपः– तब (हम लोग) इस पीपल के वृक्ष की छाया में विश्राम कर लें।

(सभी घूमकर बैठते है)

काश्यप–(अपने मन में) माननीय राजा दुष्यन्त को हमारे द्वारा किस प्रकार का सन्देश भेजा जाना चाहिए। (विचार में मग्न होते हैं।)

शकुन्तला–(हाथ की ओट से) सखि, देखो कमलिनी के पत्ते की ओट में छिपकर बैठे हुए (अपने) सहचर (चकवा) को न देखती हुई, व्याकुल चकवी चिल्लाकर कहती है कि मैं बहुत ही दुष्कर कार्य कर रही हूँ।

अनसूया– सखि, मैवं मन्त्रयस्व।

एषापि प्रियेण विना गमयति रजनीं विषाददीर्घतराम्।
गुर्वपि विरहदुःखमाशाबन्धः साहयति।।16।।

काश्यपः– शाङ्गरव, इति त्वया मद्वचनात् स राजा शकुन्तलां पुरस्कृत्य वक्तव्यः।

शाङ्गरवः– आज्ञापयतु भवान्।

काश्यपः–

अस्मान् साधु विचिन्त्य संयमधनानुच्चैः कुलं चात्मन–
स्त्वय्यस्याः कथमप्यबान्धवकृतां स्नेहप्रवृत्तिं च ताम्।
सामान्यप्रतिपत्तिपूर्वकमियं दारेषु दृश्या त्वया
भाग्यायत्तमतः परं न खलु तद् वाच्यं वधूबन्धुभिः।।17।।

अनसूया–सखि! ऐसा मत कहो।

अन्वयः–एषा अपि प्रियेण विना विषाददीर्घतरां रजनीं गमयति। आशाबन्धः गुरु अपि विरहदुःखं साहयति।

शब्दार्थ–विषाददीर्घतराम् = दुःख के कारण अधिक लम्बी। **आशाबन्धः** = आशा का बन्धन **गुरु** = असह्य। **विरहदुःखम्** = वियोग का कष्ट। **साहयति** = सहन करा देती है।

हिन्दी अर्थ–यह (चकवी) भी (अपने) प्रिय के बिना वियोग के दुःख से अधिक लम्बी हुई रातों को बिताती है। प्रियमिलन की आशा का बन्धन बहुत अधिक वियोग पीड़ा को भी सहन करा देता है।

हिन्दी व्याख्या–प्रस्तुत श्लोक में अनसूया चकवी के विरह–विलाप को अपशकुन मानकर घबरायी हुई शकुन्तला को सान्त्वना देते हुए कहती है कि यह चकवी अपने चकवे से विरह के कारण और भी अधिक लम्बी प्रतीत होने वाली रातें भी अकेली ही काट लेती है, क्योंकि उसे यह आशा है कि कभी तो दिन होगा और अपने प्रिय से पुनर्मिलन होगा, यह सोचकर असह्य वियोग को सहन कर लेती है।।16।।

छन्द–आर्या।

अलङ्कार–अर्थान्तरन्यास।

काश्यप–शाङ्र्गरव तुम मेरी तरफ से शकुन्तला को सामने करके राजा से इस प्रकार कहना।

शाङ्र्गरव–आप आदेश करें।

अन्वय–संयमधनान् अस्मान् आत्मनः उच्चैः कुलं च, त्वयि अस्याः कथमपि अबान्धवकृतां तां स्नेहप्रवृत्तिं च साधु विचिन्त्य इयम्, दारेषु सामान्यप्रतिपत्तिपूर्वकं दृश्या। अतः परं भाग्यायत्तम्, तत् वधूबन्धुभिः न वाच्यम् खलु।

शब्दार्थ– संयमधनान् = संयमरूपी सम्पत्ति (तपस्या, निग्रह आदि) वाले। **आत्मनः** = अपने। **उच्चैः** = ऊँचे। **कुलम्** = कुल (पुरुवंश) को। **कथमपि** = किसी प्रकार भी। **अबान्धवकृताम्** = बन्धुओं के द्वारा न कराये गये। **स्नेहप्रवृत्तिम्** = स्वाभाविक प्रेम को। **साधु** = अच्छी तरह। **विचिन्त्य** = विचार करके। **दारेषु** = स्त्रियों में। **सामान्यप्रतिपत्तिपूर्वकम्** = सामान्य व्यवहारपूर्वक। **भाग्यायत्तम्** = भाग्य के अधीन। **वधूबन्धुभिः** = वधू के बन्धुओं को। **वाच्यम्** = कहना चाहिए।

काश्यप–

हिन्दी अर्थ– संयम रूपी सम्पत्ति वाले हम लोगों का और अपने ऊँचे कुल (पुरुवंश) का, तुम्हारे प्रति इस शकुन्तला की, किसी प्रकार की, बन्धुओं के द्वारा न करायी गयी, उस स्वाभाविक प्रेम की प्रवृत्ति को भली प्रकार से सोच करके इस शकुन्तला को अपनी रानियों में समान आदर के साथ देखना। इससे अधिक भाग्य के अधीन है वह कन्या के सम्बन्धियों को नहीं कहना चाहिए।

हिन्दी व्याख्या–प्रस्तुत श्लोक में कण्व ऋषि शाङ्र्गरव को राजा दुष्यन्त के लिये अपना सन्देश देते हुए कहते हैं कि हे राजन्! हम तपस्वी लोग संयमरूपी धनवाले हैं; अतः तुम्हें उपहारादि नहीं भेज सकते और तुम पुरुवंश जैसे उच्च कुल में उत्पन्न हो अतः तुमसे मर्यादित व्यवहार (बड़प्पन) की अपेक्षा की जाती है तथा शकुन्तला का तुम्हारे प्रति स्वाभाविक प्रेम है– इन सब बातों को ध्यान में रखकर आप इसे दूसरी अन्य रानियों के समान ही आदर से देखना। इससे अधिक की आकांक्षा कन्या के सम्बन्धियों को नहीं करनी चाहिए क्योंकि वह भाग्य के अधीन है।।17।।

छन्द–शार्दूलविक्रीडित।

अलङ्कार– अप्रस्तुतप्रशंसा।

शार्ङ्गरवः– गृहीतः सन्देशः।

काश्यपः— वत्से, त्वमिदानीमनुशासनीयाऽसि। वनौकसोऽपि सन्तो लौकिकज्ञा वयम्।

शार्ङ्गरवः— न खलु धीमतां कश्चिदविषयो नाम।

काश्यपः— सा त्वमितः पतिकुलं प्राप्य —

शुश्रूषस्व गुरून् कुरु प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने
भर्तुर्विप्रकृताऽपि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गमः।
भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भाग्येष्वनुत्सेकिनी
यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः।।18।।

कथं वा गौतमी मन्यते।

गौतमी— एतवान् वधूजनस्योपदेशः। जाते, एतत् खलु सर्वमवधारय।

शाङ्गरवः—आपका सन्देश मैंने ग्रहण कर लिया।

काश्यप—पुत्री! अब तुम्हें कुछ शिक्षा देनी है। वन में रहते हुई भी हम लोग सांसारिक व्यवहार को जानते हैं।

शाङ्गरवः—बुद्धिमान् पुरुषों के लिये कोई विषय अज्ञात नहीं होता है।

काश्यप—तुम यहाँ से पतिगृह पहुँचकर —

अन्वय—गुरुन् शुश्रूषस्व, सपत्नीजने प्रियसखीवृत्तिं कुरु, विप्रकृता अपि रोषणतया भर्तुः प्रतीपं मा स्म गमः। परिजने भूयिष्ठं दक्षिणा भव, भाग्येषु अनुत्सेकिनी (भव), एवं युवतयः गृहिणीपदं यान्ति, वामाः कुलस्य आधयः (भवन्ति)।

शब्दार्थ— गुरून् = सास—ससुर आदि वृद्धजनों की, मान्यताओं की। **सपत्नीजने** = सौतों पर। **प्रियसखीवृत्तिम्** = प्रिय सखियों के समान व्यवहार। **विप्रकृता** = तिरस्कृता होने पर। **रोषणतया** = क्रोध के कारण। **भर्तुः** = पति के। **प्रतीपम्** = प्रतिकूल। **मा स्म गमः** = मत चली जाना। **भूयिष्ठम्** = अत्यधिक। **दक्षिणा** = उदार। **भाग्येषु** = भाग्य पर। **अनुत्सेकिनी** = अभिमान रहित। **युवतयः** = गृहिणियाँ। **वामाः** = विपरीत। **कुलस्य** = वंश की। **आधयः** = मानसिक व्यथा।

हिन्दी अर्थ— सास—ससुर आदि सम्मानयोग्य जनों की सेवा करना, अपनी सौतों से प्रिय सखियों जैसा व्यवहार करना, (यदाकदा) अपमानित होने पर भी क्रोध में आकर पति के प्रतिकूल आचरण मत करना। (दास—दासी, बन्धुबान्धवों आदि) आश्रितों के प्रति अत्यधिक उदार व्यवहार करना, सौभाग्य पर गर्व न करना, इस प्रकार की (व्यवहार करने वाली) स्त्रियाँ गृहस्वामिनी पद को प्राप्त करती हैं, (तथा) विपरीत आचरण करने वाली वंश के लिये मानसिक व्यथा (का कारण) होती हैं।

क्यों गौतमी उपदेश उचित है न!

गौतमी— वधुओं के लिये इतना उपदेश पर्याप्त है। पुत्री ! इन (सभी उपदेशों) को भलीभाँति स्मरण कर लो।

हिन्दी व्याख्या– प्रस्तुत श्लोक में ऋषि कण्व शकुन्तला को ससुराल में कैसे रहना चाहिये, इस बात की शिक्षा देते हुए कहते हैं कि पतिकुल में सास–ससुर तथा अन्य ज्येष्ठ लोगों की सेवा करना। अपनी सौतन स्त्रियों के साथ प्रियसखी जैसा व्यवहार करना। पति यदि अनादर भी करे तो क्रोध में आकर झगड़ा मत करना। दास–दासियों जैसे आश्रित जनों के प्रति उदार बनना, अपने सौभाग्य पर गर्व न करना। इस प्रकार का व्यवहार करने वाली स्त्रियाँ ही गृहस्वामिनी कही जाती हैं। जो इसके विपरीत कार्य (आचरण) करती हैं वे स्त्रियाँ तो कुल का नाश करने वाली व्याधि के समान होती हैं।। 18।।

छन्द–शार्दूलविक्रीडित।

अलङ्कार–अर्थान्तरन्यास।

काश्यपः– वत्से, परिष्वजस्व मां सखीजनं च।

शकुन्तला– तात, इत एव किं प्रियंवदाऽनसूये सख्यौ निवर्तिष्येते।

काश्यपः– वत्से, इमे अपि प्रदेये। न युक्तमनयोस्तत्र गन्तुम्। त्वया सह गौतमी यास्यति।

शकुन्तला– (पितरमाश्लिष्य) कथमिदानीं तातस्याङ्कात् परिभ्रष्टा मलयतटोन्मूलिता चन्दनलतेव देशान्तरे जीवितं धारयिष्यामि।

काश्यपः– वत्से, किमेवं कातराऽसि।

अभिजनवतो भर्तुः श्लाघ्ये स्थिता गृहिणीपदे
विभवगुरुभिः कृत्यैस्तस्य प्रतिक्षणमाकुला।
तनयमचिरात् प्राचीवार्कं प्रसूय च पावनं
मम विरहजां न त्वं वत्से शुचं गणयिष्यसि।। 19।।

(शकुन्तला पितुः पादयोः पतति।)

काश्यप– पुत्री! मुझसे और अपनी सखियों से गले मिल लो।

शकुन्तला– पिता! क्या प्रियंवदा और अनुसूया यहीं से वापस लौट जायेंगी?

काश्यप– पुत्री ! इनका भी तो विवाह करना है इसलिये इनका वहाँ जाना उचित नहीं है। तुम्हारे साथ गौतमी जाएगी।

शकुन्तला– (पिता के गले से लगकर) पिता की गोद से अलग होकर, मलय पर्वत के किनारे से उखड़ी हुई चन्दन लता के सदृश मैं दूसरे देश में कैसे जीवित रहूँगी?

काश्यप– पुत्री। इतनी अधीर क्यों हो रही हो?

अन्वय– वत्से! त्वम् अभिजनवतः भर्तुः श्लाघ्ये गृहिणीपदे स्थिता, तस्य विभवगुरुभिः कृत्यैः प्रतिक्षणम् आकुला, अचिरात् प्राची इव अर्कं पावनं तनयं प्रसूय च मम विरहजां शुचं न गणयिष्यसि।

शब्दार्थ– **अभिजनवतः** = कुलीन। **श्लाघ्ये** = प्रशंसनीय। **गृहिणीपदे** = गृहस्वामिनी के पद पर। **विभवगुरुभिः** = ऐश्वर्य के कारण विशाल। **कृत्यैः** = कार्यों या उत्सवों से। **अचिरात्** = शीघ्र ही। **अर्कम्** = सूर्य। **पावनम्** = पवित्र। **तनयम्** = पुत्र को। **प्रसूय** = उत्पन्न करके। **शुचम्** = शोक को। **न गणयिष्यसि** = नहीं गिनोगी।

हिन्दी अर्थ–पुत्री! तुम उच्चकुल (में उत्पन्न) पति की, प्रशंसा के योग्य गृहस्वामिनी के पद पर प्रतिष्ठित होकर, उसके ऐश्वर्य के कारण विशाल उत्सवों में प्रतिक्षण (अपने को) व्यस्त रखकर, शीघ्र ही सूर्य को जन्म (प्रकट कर) देने वाली पूर्व दिशा के समान पवित्र (चक्रवर्ती) पुत्र को उत्पन्न करके मेरे वियोग से उत्पन्न दुःख को भूल जाओगी अर्थात नहीं गिनोगी।

(शकुन्तला, पिता (काश्यप ऋषि) के चरणों में गिर जाती है।)

हिन्दी व्याख्या–प्रस्तुत श्लोक में काश्यप (कण्व) शकुन्तला से कहते हैं कि तुम जब उच्च कुल में उत्पन्न पति की प्रशंसा के योग्य गृहस्वामिनी के पद पर प्रतिष्ठित होकर उसके ऐश्वर्य के कारण विशाल उत्सवों में प्रतिक्षण अपने को व्यस्त रखते हुए और जैसे पूर्व दिशा सूर्य को उत्पन्न करती है वैसे ही जब पवित्र पुत्र को पैदा करोगी तब तुम मुझसे बिछड़ने का सारा दुःख भूल जाओगी।।19।।

छन्द–हरिणी

अलङ्कार–उपमा, काव्यलिङ्ग।

काश्यपः– **यदिच्छामि ते तदस्तु।**

शकुन्तला– **(सख्यावुपेत्य) हला, द्वे अपि मां सममेव परिष्वजेथाम्।**

सख्यौ– **(तथा कृत्वा) सखि, यदि नाम स राजा प्रत्यभिज्ञानमन्थरो भवेत्, ततस्तस्मा इदमात्मनामधेयाङ्कितमङ्गुलीयकं दर्शय।**

शकुन्तला– **अनेन सन्देहेन वामाकम्पिताऽस्मि।**

सख्यौ– **मा भैषीः। अतिस्नेहः पापशङ्की।**

शाङ्गरवः– **युगान्तरमारूढः सविता। त्वरतामत्रभवती।**

शकुन्तला– **(आश्रमाभिमुखी स्थित्वा) तात, कदा नु भूयस्तपोवनं प्रेक्षिष्ये।**

काश्यपः– **श्रूयताम्–**

भूत्वा चिराय चतुरन्तमहीसपत्नी
दौष्यन्तिमप्रतिरथं तनयं निवेश्य।
भर्त्रा तदर्पितकुटुम्बभरेण सार्धं
शान्ते करिष्यसि पदं पुनराश्रमेऽस्मिन्।।20।।

काश्यप– (पुत्री!) तुम्हारे लिये जो मैं चाहता हूँ वह तुम्हें मिल जाये।

शकुन्तला– (सखियों के पास जाकर) सखियों! तुम दोनों एक साथ ही मुझसे गले मिलो।

दोनों सखियाँ– (गले मिलकर) सखि! यदि वह राजा (तुमको) पहचानने में शिथिलता दिखाये तो उसको, उसके नाम से अङ्कित अँगूठी दिखा देना।

शकुन्तला–तुम्हारे इस सन्देह से तो मैं भयकम्पित हो गयी हूँ।

दोनों सखियाँ– भयभीत मत होओ। अत्यधिक प्रेम अनिष्ट की आशंका करता है।

शाङ्र्गरव– सूर्य दूसरे प्रहर (मध्याह्न) में चढ़ गया है, इसलिये आप (शकुन्तला) शीघ्रता करें।

शकुन्तला– (आश्रम की तरफ मुख करके) पिता (इस) तपोवन को मैं फिर कब देख पाऊँगी?

काश्यप– सुनो।

अन्वय– चिराय चतुरन्तमहीसपत्नी भूत्वा, अप्रतिरथं तनयं दौष्यन्तिं निवेश्य, तदर्पितकुटुम्बभरेण भर्त्रा सार्धम् अस्मिन् शान्ते आश्रमे पुनः पदं करिष्यसि।

शब्दार्थ– **चिराय** = दीर्घकाल के लिये। **चतुरन्तमहीसपत्नी** = चारों ओर समुद्रों से घिरी हुई पृथ्वी की सपत्नी। **भूत्वा** = होकर। **अप्रतिरथम्** = अतुलनीय। **तनयम्** = पुत्र को। **दौष्यन्तिम्** = दुष्यन्त से उत्पन्न (पुत्र) को। **निवेश्य** –सिंहासन पर बैठाकर। **तदर्पितकुटुम्बभरेण** = परिवार का भार सौंप देने वाले। **शान्ते** = उपद्रव रहित। **पदं करिष्यसि** = वापस आओगी।

हिन्दी अर्थ–दीर्घ काल तक चार समुद्रों से घिरी हुई पृथ्वी की सपत्नी होकर, अद्वितीय दुष्यन्तपुत्र (भरत) को सिंहासन पर आरूढ़ करके, उसके ऊपर परिवार का भार डालकर (वानप्रस्थ आश्रम में) पति के साथ इस शान्त आश्रम में पुनः लौटकर आओगी।

हिन्दी व्याख्या–प्रस्तुत श्लोक में कण्व शकुन्तला के प्रश्न पर कि वह अब पुनः कब आश्रम को देख पायेगी, के उत्तर में कहते हैं कि तुम्हारा पति जब इस पूरी पृथ्वी को जीतकर उसका स्वामी बन जायेगा और तुम लम्बे समय तक (स्वामी समान होने से) इस पृथ्वी की सौतन बने रहने का सुख उठा लोगी, और फिर इस राज्य को चलाने का सारा भार अपने अद्वितीय वीर पुत्र को सौंप देने वाले अपने पति के साथ यहाँ आओगी तब इस आश्रम में सुखपूर्वक रहना।। 20।।

गौतमी– जाते, परिहीयते गमनवेला। निवर्तय पितरम्। अथवा चिरेणापि पुनः पुनरेषैवं मन्त्रयिष्यते। निवर्ततां भवान्।

काश्यपः– वत्से, उपरुध्यते तपोऽनुष्ठानम्।

शकुन्तला– (भूयः पितरमाश्लिष्य) तपश्चरणपीडितं तातशरीरम्! तन्माऽतिमात्रं मम कृत उत्कण्ठस्व।

काश्यपः– (सनिःश्वासम्)

शममेष्यति मम शोकः कथं नु वत्से त्वया रचितपूर्वम्।
उटजद्वारविरूढं नीवारबलिं विलोकयतः।।21।।

गौतमी– पुत्री! प्रस्थान का मुहूर्त बीता जा रहा है। (अपने) पिता को वापस लौटा दो। अथवा यह (शकुन्तला) तो बहुत समय तक उसी बात को कहती रहेगी। (इसलिए) आप लौट जाइये।

काश्यप– पुत्री, (मेरा) तपस्या का कार्य बाधित हो रहा है (अतः मुझे जाने दो।)

शकुन्तला– (पुनः पिता का आलिङ्गन करके) आपका शरीर तपस्या के कारण पहले से ही अत्यधिक कृश हो गया है, इसलिये मेरे लिये बहुत अधिक दुःखी न होइए।

काश्यप– (लम्बी साँस लेकर)

अन्वय– वत्से, त्वया रचितपूर्वम् उटजद्वारविरूढं नीवारबलिं विलोकयतः मम शोकः कथं नु शमम् एष्यति।

शब्दार्थ– **रचितपूर्वम्** = पहले बोये गये। **उटजद्वारविरूढम्** = झोपड़ी के द्वार पर अंकुरित। **नीवारबलिम्** = पूजा के धान के पौधे। **शमम्** = शान्ति को। **एष्यति** = प्राप्त होगा।

हिन्दी अर्थ– पुत्री! तुम्हारे द्वारा पहले पूजा के रूप में डाले गये और अब झोपड़ी के द्वार पर उगी हुई नीवार धान्य की बलि को देखते हुए मेरा मन कैसे शान्त होगा।

हिन्दी व्याख्या– प्रकृत श्लोक में कण्व शकुन्तला के वियोग से उत्पन्न अपने अशमनीय दुःख का वर्णन करते हैं कि पुत्री! तुमने पहले पूजा के लिये जो नीवार धान्य झोपड़ी के द्वार पर डाले थे वे तो उगकर पौधे के रूप में विकसित हो चुके हैं। जब-जब मैं उनको देखूँगा, तब-तब तुम्हारी याद आकर मुझे शोकाकुल करेगी, क्योंकि तुम्हारे स्नेह का बीज अब मेरे मन में पूर्णतः अङ्कुरित हो चुका है।। 21।।

छन्द– आर्या।

अलङ्कार– काव्यलिङ्ग।

गच्छ। शिवास्ते पन्थानः सन्तु।

(निष्क्रान्ता शकुन्तला सहयायिनश्च।)

सख्यौ– **(शकुन्तलां विलोक्य) हा धिक्, हा धिक्। अन्तर्हिता शकुन्तला वनराज्या।**

काश्यपः– **(सनिःश्वासम्) अनसूये, गतवती वां सहचारिणी, निगृह्य शोकमनुगच्छतं मां प्रस्थितम्।**

उभे– **तात, शकुन्तलाविरहितं शून्यमिव तपोवनं कथं प्रविशावः?**

काश्यपः– **स्नेहप्रवृत्तिरेवंदर्शिनी। (सविमर्शं परिक्रम्य) हन्त भोः, शकुन्तलां पतिकुलं विसृज्य लब्धमिदानीं स्वास्थ्यम्। कुतः–**

अर्थो हि कन्या परकीय एव
तामद्य संप्रेष्य परिग्रहीतुः।
जातो ममायं विशदः प्रकामं
प्रत्यर्पितन्यास इवान्तरात्मा।।22।।

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे।)

।।इति चतुर्थोऽङ्कः।।

जाओ। तुम्हारा मार्ग मङ्गलमय हो।

(शकुन्तला साथ जाने वालों के साथ निकल जाती है)।

दोनों सखियाँ– (शकुन्तला की ओर देखकर) हाय! हाय! शकुन्तला वृक्षों की पंक्तियों से ओझल हो गयी है।

काश्यप– (लम्बी साँस लेकर) अनसूया! तुम दोनों की सखी अब चली गयी है, अतः शोक के आवेग को रोककर मेरे पीछे आओ।

दोनों सखियाँ– पिता, शकुन्तला से रहित इस सूने तपोवन में हम कैसे प्रवेश करें?

काश्यप– प्रेम की अधिकता से ऐसा प्रतीत होता है। (विचारमग्न से घूमकर) ओह! शकुन्तला को उसके पति के घर भेजकर मुझे अब निश्चिन्तता हुई। क्योंकि–

अन्वय– कन्या हि परकीय एव अर्थः, अद्य ताम् परिग्रहीतुः सम्प्रेष्य मम अयम् अन्तरात्मा प्रत्यर्पितन्यासः इव प्रकामम् विशदः जातः।

शब्दार्थ– **परकीय** = दूसरे की परायी। **अर्थः** = सम्पत्ति। **परिग्रहीतः** = परिणेता पति के पास। **सम्प्रेष्य** = (समीप) भेजकर। **अन्तरात्मा** = हृदय। **प्रत्यर्पितन्यासः** = धरोहर लौटाने वाला। **प्रकामम्** = अत्यन्त। **विशदः** = प्रसन्न। **जातः** = हो गया है।

हिन्दी अर्थ– कन्या निश्चय ही पराई सम्पत्ति है। आज उसको पति के पास भेजकर मेरा यह मन, पराई धरोहर को लौटाने के समान, निश्चिन्त हो गया है।

(सभी चले जाते हैं।)

।।चतुर्थ अङ्क समाप्त।।

हिन्दी व्याख्या– प्रस्तुत श्लोक में काश्यप (कण्व) शकुन्तला को पतिकुल के लिये विदा करके कहते है कि कन्या वस्तुतः पराया धन ही होती है, जो धरोहर के रूप में पिता के पास रखी होती है। आज उसको उसके पति के घर भेजकर मेरा मन वैसे ही निश्चिन्त हो गया है, जैसे दूसरे की धरोहर रखने वाला उस धरोहर को उसके स्वामी को सुरक्षित सौंपकर निश्चिन्तता का अनुभव करता है।। 22।।

सूक्तियों की व्याख्या

(1) ओदकान्तं स्निग्धो जनोऽनुगन्तव्य इति श्रूयते।

यह शाङ्गरव का कथन है। शकुन्तला की विदाई के समय, ऋषि कण्व, गौतमी तथा सखियाँ, उसे विदा करने आई हैं। शाङ्गरव एक तालाब को देखकर, गुरु कण्व से कहता है कि ऐसा कहा जाता है कि प्रिय व्यक्ति को जलाशय पर्यन्त ही विदा करना चाहिए। यहाँ तालाब है, अतः आप यहीं पर सन्देश देकर इन्हें विदा करें एवं आश्रम लौट जाएँ।

ऐसा प्रतीत होता है कि तत्कालीन समाज में यह प्रचलित था कि किसी प्रिय व्यक्ति को, तालाब, कुँआ या नदी आदि जलाशय तक ही छोड़ने आना चाहिये। अतः शाङ्गरव गुरु से ऐसा निवेदन करता

है। कण्व भी शाङ्र्गरव की उक्त बात समर्थन करते हैं तथा तालाब के पास ही सन्देश देकर शकुन्तला को, गौतमी और शाङ्र्गरव के साथ विदा कर देते हैं।

(2) गुर्वपि विरहदुःखमाशाबन्धः साहयति।

यह अनसूया का कथन है। चकवा-चकवी के ब्याज से शकुन्तला को समझाते हुए कहती है कि यह चकवी भी अपने प्रिय के बिना पूरी रात बिताती है, फिर भी भावी मिलन की आशा में, विरह का महान् दुःख भी बीत जाता है। यह आशा का बन्धन ही है, जो विरहव्याकुल व्यक्ति के प्राण को बाँधे रखता है और कठोर दुःख भी सहन करा देता है।

यद्यपि अनसूया एवं प्रियंवदा ने दुर्वासा के शाप की घटना को गुप्त ही रखा है, फिर भी शापजन्य विस्मरण की भावी आशंका के वशीभूत होकर अनसूया, शकुन्तला को ऐसा उपदेश देती है। महाकवि कालिदास ने अपने ग्रन्थ मेघदूतम् में भी उपर्युक्त भावों को निम्न शब्दों में व्यक्त किया है –

आशाबन्धः कुसुमसदृशं प्रायशो ह्यङ्गनानां,
सद्यःपाति प्रणयि हृदयं विप्रयोगे रुणद्धि।।

(3) न खलु धीमतां कश्चिदविषयो नाम।

यह शाङ्र्गरव का कथन है। इसका तात्पर्य है कि विद्वानों के लिये वस्तुतः कोई चीज अज्ञात नहीं होती। उपर्युक्त सूक्ति का प्रसङ्ग इस प्रकार है कि काश्यप ऋषि, शकुन्तला को, पतिगृह में किस प्रकार रहना चाहिये, यह उपदेश देने के पूर्व कहते हैं कि यद्यपि हम वन में रहने वाले हैं, फिर भी लोकरीति को समझते हैं। शाङ्र्गरव काश्यप की बात का समर्थन उक्त सूक्ति वाक्य से करते हैं। शाङ्र्गरव का कथन है कि जो व्यक्ति विद्वान् होता है, उसे सभी विषयों की जानकारी होती है, क्योंकि बुद्धि ही समस्त ज्ञान का आधार है। अतः बुद्धिमान् व्यक्ति सभी विषयों में अधिकार रखते हैं।

(4) अतिस्नेहः पापशंकी।

यह प्रियंवदा और अनसूया दोनों सखियों का कथन है। इसका तात्पर्य है कि अत्यधिक प्रेम, पाप की आशंका करता है। शकुन्तला की विदाई के समय, दुर्वासा के शाप को छिपाते हुए भी, अनसूया एवं प्रियंवदा शाप-निवारण का उपाय बता देना उचित समझती हैं। वे दोनों शकुन्तला से कहती हैं कि यदि राजा दुष्यन्त तुम्हें पहचानने से मना करें तो उसके स्वयं के नाम से अंकित यह अँगूठी उन्हें दिखा देना। शकुन्तला ऐसा सुनकर घबड़ा जाती है, तो दोनों सखियाँ उसे सान्त्वना देते हुए कहती हैं कि दुष्यन्त के प्रति तुम्हारे अतिशय अनुराग के कारण तुम्हें अनिष्ट की आशंका हो रही है। जिसके प्रति अतिशय प्रेम होता है उसके अनिष्ट की आशंका भी उत्पन्न होती है, किन्तु इससे घबराना नहीं चाहिए।

(5) स्नेहप्रवृत्तिरेवंदर्शिनी।

यह काश्यप ऋषि का वचन है। शकुन्तला की विदाई के बाद आश्रम वापस लौटते समय दोनों सखियाँ ऋषि काश्यप से कहती हैं कि शकुन्तला के बिना इस सूने आश्रम में हम कैसे रह पायेंगी ? उन्हें ढाढस देते हुए मुनि कहते हैं कि प्रेम का संचार तुम्हें ऐसा महसूस करा रहा है। शकुन्तला के प्रति तुम्हारे

अतिशय स्नेह के कारण तुम्हें ऐसा प्रतीत हो रहा है कि उसके बिना आश्रम सूना है और रह पाना मुश्किल है। वस्तुतः समय, व्यक्ति को सभी परिस्थितियों में रहना सिखा देता है।

(6) अर्थो हि कन्या परकीय एव।

यह वचन काश्यप का है। शकुन्तला को पतिगृह भेजकर प्राप्त हुई मानसिक शान्ति को अभिव्यक्त करते हुए काश्यप ऋषि कहते हैं, कि वस्तुतः कन्या पराई सम्पत्ति है। उसे पतिगृह भेजकर वैसी ही शन्ति मिलती है, जैसी किसी धरोहर को वापस लौटा देने पर।

सामाजिक नियमों के अनुसार पिता के घर पालिता कन्या विवाहिता होकर पतिगृह जाती है तथा वहीं अपने दायित्वों का निर्वहण करती है। यही कारण है कि काश्यप ने कन्या को पराया (पति का) धन कहा है। जिस प्रकार दूसरे की धरोहर (धन आदि) लौटा देने पर व्यक्ति निश्चिन्त हो जाता है, उसी प्रकार कन्या को योग्य घर-वर प्राप्त करा देने पर पिता भी निश्चिन्त हो जाता है और मानसिक शान्ति का अनुभव करता है।

बहुविकल्पीयप्रश्नाः

1. दुष्यन्तः कः आसीत् ?
   (क) कुलपतिः (ख) मन्त्री (ग) तपस्वी (घ) राजा
2. अभिज्ञानशाकुन्तलं कस्य रचना अस्ति?
   (क) कालिदासस्य (ख) माघस्य (ग) बाणभट्टस्य (घ) भारवेः
3. दुष्यन्तः कस्य राज्यस्य राजा आसीत्
   (क) कोसलस्य (ख) विदर्भस्य (ग) हस्तिनापुरस्य (घ) महाराष्ट्रस्य
4. चतुर्थे अङ्के कः रसः अस्ति?
   (क) वीरः (ख) अद्भुतः (ग) वियोगशृंगारः (घ) वात्सल्यः
5. शकुन्तलायाः पितुः नाम किमासीत्?
   (क) माारीचः (ख) दुर्वासाः (ख) वशिष्ठः (ख) कण्वः
6. शकुन्तलायाः मातुः किं नाम आसीत्?
   (क) उर्वशी (ख) मेनका (ग) गौतमी (घ) रम्भा
7. कालिदासस्य प्रियः अलङ्कारः अस्तिः
   (क) उपमा (ख) रूपक (घ) उत्प्रेक्षा (घ) यमक
8. 'शिवास्ते पन्थाानः सन्तु' इति शुभकामनां प्रकटितवान्?
   (क) काश्यपः (ख) मारीचः (ग) गौतमी (घ) शिष्यः

9. कस्मिन् समये शकुन्तलायाः उत्सवः भवति
(क) वर्षाकाले (ख) वसन्तकाले (ग) ग्रीष्मकाले (ग) प्रथमपुष्पोद्भवकाले

10. प्रियम्वदायाः सखी का आसीत्?
(क) शकुन्तला (ख) गौतमी (ग) मैत्रेयी (घ) तापसी

11. काश्यपाय शकुन्तलायाः विवाहस्य सूचनां का अददत्?
(क) प्रियंवदा (ख) अनसूया (ग) शाङ्र्गरवः (घ) अशरीरी छन्दोवाणी

12. शकुन्तलया सह राजकुलं प्रति का महिला गतवती?
(क) प्रियंवदा (ख) अनसूया (ग) गौतमी (घ) रम्भा

13. काश्यपः कः आसीत्?
(क) राजा (ख) मन्त्री (ग) ऋषिः (घ) सेवकः

14. प्रियमण्डना का आसीत्?
(क) प्रियंवदा (ख) शकुन्तला (ग) अनसूया (घ) वनदेवी

15. नवमालिका कस्य वृक्षस्य आश्रयम् अग्रहीत्?
(क) चूतस्य (ख) अशोकस्य (घ) अश्वत्थस्य (घ) वटस्य

16 कालिदासकृतस्य प्रसिद्धनाटकस्य नाम किमस्ति?
(क) अभिज्ञानशाकुन्तलम् (ख) प्रतिमानाटकम् (ग) नागानन्दम् (घ) उत्तररामचरितम्

17 कन्या वस्तुतः कस्य धनमस्ति ?
(क) गुरोः (ख) पित्रोः (ग) भ्रातुः (घ) परकीयम्

18. कन्यायाः विवाहं केन पुरुषेण सह कुर्यात्?
(क) गुणवता (ख) वीरपुरुषेण (ग) मानिना (घ) अकिञ्चनेन

19. निम्नलिखितेषु का रचना कालिदासस्य नास्ति?
(क) मेघदूतम् (ख) रघुवंशम् (ग) विक्रमोर्वशीयम् (घ) प्रतिमानाटकम्

20. आश्रममृगः कस्याः पुत्रकृतकः आसीत्?
(क) शकुन्तलायाः (ख) प्रियंवदायाः (ग) अनसूयायाः (घ) गौतम्याः

■

संस्कृतव्याकरणम्

अलङ्कारः रचना च

संस्कृतनिबन्धः

1. सदाचारः

(i) सद् आचरणम् एव सदाचारः कथ्यते।

(ii) सतां सज्जनानाम् आचारः सदाचारः कथ्यते।

(iii) सत्पुरुषाः यथा आचरन्ति, तथैव आचरणं सदाचारः कथ्यते।

(iv) सदाचारवान् नरः सुखं, बुद्धिं, दीर्घायुष्यञ्च प्राप्नोति।

(v) सदाचारवान् पुरुषः एव गृहे, कार्यक्षेत्रे, समाजे च सफलः सम्मानितश्च भवति।

(vi) सदाचारेण राजा तु लोकप्रियः भवति एव, प्रजाः अपि दीप्ताः भवन्ति।

(vii) सदाचारेण मनुष्यस्य नैके दोषाः नश्यन्ति, गुणरूपेण अपि परिणमन्ति।

(viii) सदाचारे अनेके गुणाः वर्तन्ते, यथा–गुरूणाम् आज्ञा पालनम्, अहिंसा, सत्यभाषणम्, परोपकारः, विनम्रता, अस्तेयम्, प्राणिनः प्रति करुणायाः भावना पर्यावरणसंरक्षणञ्च।

(ix) देशसमाजयोः स्थिरतायै उन्नत्यै च सदाचारस्य महती आवश्यकता वर्तते।

(x) मानवीयसदाचार मर्यादायाः स्थापनार्थं जगन्नियन्ता ईश्वरः मर्यादापुरुषोत्तमरामरूपेण भारतदेशे अवतीर्णः बभूव।

(xi) अतः स्वकल्याणार्थं देशसमाजयोः उन्नत्यर्थञ्च अस्माभिः सदाचारस्य पालनम् अवश्यमेव कर्त्तव्यम्।

(xii) उक्तमपि–

सर्वलक्षणहीनोऽपि यः सदाचारवान् नरः।
श्रद्दधानोऽनसूयश्च शतं वर्षाणि जीवति।।

2. सत्सङ्गतिः

(i) सतां जनानां सङ्गतिः सत्सङ्गतिः इति कथ्यते।

(ii) नरः येन सह वसति, समयञ्च यापयति, तस्य गुणान् अवगुणान् च गृह्णाति अथवा तैः प्रभावितः भवति।

(iii) दुर्जनानां सङ्गतिः जनेषु दोषोत्पादनकारणं भवति, किन्तु सज्जनानां सङ्गतिः, गुणानाम् आधानम् करोति।

(iv) सत्सङ्गत्या जनस्य विद्यायाः वृद्धिः भवति, कीर्तिश्च वर्धते।

(v) बालकः तु दुर्जनैः सह सङ्गतिं कदापि न कुर्यात् यतो हि कोमलमनसि तस्याः महान् दुष्प्रभावः परिलक्ष्यते।

(vi) सत्सङ्गतिः धियः जाड्यं हरति।

(vii) सत्सङ्गतिः वाचि सत्यं सिञ्चति।

(viii) सत्सङ्गतिः नरस्य मानोन्नतिं दिशति।

(ix) सत्सङ्गतिः मानवस्य चेतः प्रसादयति।

(x) सत्सङ्गतिः दिक्षु कीर्तिं तनोति।

(xi) भक्तिमार्गे तु सत्सङ्गतेः ईदृशं महत्त्वं वर्तते यद् अनया नरः वैराग्यं प्राप्य भगवच्चरणारविन्दयोः प्रतिष्ठां प्राप्नोति।

(xii) अतः अस्माभिः सदैव सज्जनानां सङ्गतिः एव कार्या, न दुर्जनानाम्।

3. परोपकारः

(i) परेषाम् उपकारः परोपकारः इति कथ्यते।

(ii) परोपकारः पुण्यस्य साधनेषु उत्तमः अस्ति।

(iii) दधीचिशिविरन्तिदेवादिभिः परोपकारेण एव महापुरुषाभिधानम् प्राप्तम्।

(iv) ये जनाः स्वार्थनिष्पादने एव रताः भवन्ति, ते न तु लोके समाद्रियन्ते, न तु परलोके नापि शुभां गतिं प्राप्नुवन्ति।

(v) उक्तम् अपि–**अष्टादशपुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम्।**

परोपकारः पुण्याय पापाय परपीडनम्।।

(vi) यतो नद्यः जलं स्वयमेव न पिबन्ति, वृक्षाः स्वयमेव फलानि न खादन्ति, तथैव सज्जनानां सर्वाणि कार्याणि परोपकाराय एव भवन्ति।

(vii) परोपकारेण अन्तःकरणे कश्चिद् अवर्णनीयः सन्तोषः समुत्पद्यते।

(viii) परोपकारिजनानां भारतदेशे महती परम्परा वर्तते।

(x) यथा प्राचीनकाले महर्षिः दधीचिः वृत्रासुरस्य वधार्थं स्वास्थीनि अपि अददात् तथैव आधुनिककाले आजादराजगुरुसुखदेवबिस्मिलादिभिः स्वजीवनं देशस्य स्वातन्त्र्यार्थं प्रदत्तम्।

(xi) परोपकारस्य भावनया एव, अस्माकं देशस्य समाजस्य च कल्याणं भवितुं शक्नोति।

(xii) अतः वयं सर्वे परोपकारिणः स्याम।

4. विद्याधनं सर्वधनं प्रधानम्

(i) विद्यते सदसतोः विवेकः अनया सा विद्या कथ्यते।

(ii) विद्या विनयं ददाति।

(iii) विनयाद् जनः पात्रतां प्राप्नोति।

(iv) पात्रत्वाद् धनं प्राप्यते।

(v) अतः विद्यया धनस्य प्राप्तिर्भवति, किन्तु धनेन तु विद्याप्राप्तिः न सम्भवा।

(vi) विद्या तु गुरुसेवया परिश्रमेण च लभ्यते।

(vii) अतः विद्याधनं सर्वेषु धनेषु प्रधानं वर्तते।

(viii) चौरः अपि सुवर्णादिकं धनं चोरयितुं शक्नोति, न तु विद्याधनम्।

(ix) सुवर्णादिकं धनं भ्रातृषु विभज्यते, न तु विद्याधनम्।

(x) अन्यधनानि तु व्यये कृते क्षयं यान्ति किन्तु विद्याधनं तु वर्धते एव।

(xi) अतएव विद्याधनं सर्वधनप्रधानं भवति।

(xii) अस्माद् हेतोः अस्माभिः सर्वैः विद्याधनम् एव सेव्यम्।

5. संस्कृतभाषायाः महत्त्वम्

(i) संस्कृतभाषा विश्वस्य सर्वासु भाषासु प्राचीनतमा भाषा अस्ति।

(ii) इयमेव सर्वासां भारतीयभाषाणां जननी अस्ति।

(iii) संस्कृतभाषा द्विविधा वर्तते–लौकिकसंस्कृतं वैदिकसंस्कृतञ्च।

(iv) ऋग्वेदात् आरभ्य उपनिषत्पर्यन्तं समग्रं भारतीयसाहित्यं वैदिकसंस्कृते उपनिबद्धम् अस्ति।

(v) वाल्मीकिरामायणात् लौकिकसंस्कृतेः प्रारम्भः भवति।

(vi) विद्यमानेषु निखिलेषु अपि साहित्येषु अस्याः भाषायाः साहित्यं सुविपुलं सर्वश्रेष्ठं सुसम्पन्नञ्च अस्ति।

(vii) तुलनात्मकभाषाविज्ञानाध्ययनस्यापि आरम्भः संस्कृतभाषाध्ययनानन्तरम् एव अभवत्।

(viii) भारतदेशे संस्कृतभाषा देववाणी अपि कथ्यते।

(ix) हिन्दूनां विवाहादिसंस्काराः अपि संस्कृतोपनिबद्धैः मन्त्रैः एव सम्पद्यन्ते।

(x) संस्कृतवाङ्मयस्य अध्ययनेन नरः दर्शनस्य, साहित्यस्य, आयुर्वेदस्य, रेखागणितस्य, बीजगणितस्य, ज्योतिषशास्त्रस्य, सङ्गीतस्य, कर्मकाण्डस्य, विज्ञानस्य, शिल्पस्य जीवानां लक्षणादेश्च ज्ञानं प्राप्नोति।

(xi) संस्कृतभाषा एव सा भाषा, या समग्रभारतदेशम् एकसूत्रेण ग्रथितुं शक्नोति।

(vii) अतः वयं सर्वे संस्कृतभाषायाः संरक्षणम् अध्ययनं प्रचारं च कुर्याम।

6. पर्यावरण-सुरक्षा

(i) पर्यावरणम् इति शब्दः शब्दद्वयस्य सन्धिना निष्पद्यते– परि + आवरणम्।

(ii) 'परि' इत्यस्य अर्थः अस्ति परितः अथवा सर्वतः।

(iii) आवरणम् इत्यस्य अर्थः अस्ति तत्सर्वं येन वयम् आवृताः आच्छादिताः च स्मः।

(iv) अतः अस्मान् परितः ये मृद्वायुजलवृक्षाः सन्ति, यैः वयम् आवृताः स्मः, ते पर्यावरणाभिधानेन ज्ञायन्ते।

(v) पर्यावरणेन एव वयं जीवनोपयोगिवस्तूनि प्राप्नुमः यथा– जलं, वायुः खाद्यपदार्थाः इत्यादयः।

(vi) शुद्धं पर्यावरणं यथा अस्माकं कृते वरदानमिव अस्ति तथैव प्रदूषित-पर्यावरणेन विविधाः रोगाः जायन्ते।

(vii) अधुना प्रदूषितपर्यावरणस्य समस्या न केवलं भारतदेशस्य अपितु समस्तविश्वस्य समस्या वर्तते।

(viii) आधुनिककाले औद्योगिकक्रान्त्यनन्तरं महायन्त्रैः पर्यावरणं विशेषेण प्रदूषितम् अभवत्।

(ix) पर्यावरणप्रदूषणस्य प्रमुखानि कारणानि औद्योगिकापशिष्टपदार्थाः उच्चध्वनियानानि, धूमादयः वनानां ध्वंसः च सन्ति।

(x) पर्यावरणरक्षणाय पादपाः रोपणीयाः संरक्षणीयाश्च।

(xi) वयं नदीषु, तडागेषु च दूषितं जलं न पातयेम।

(xii) संयुक्तराष्ट्रसङ्घस्य घोषणया जूनमासस्य पञ्चमतारिकायां (5 जून) विश्वपर्यावरणदिवसः आयोज्यते।

7. महाकविकालिदासः

(i) महाकविकालिदासः संस्कृतसाहित्यस्य सर्वश्रेष्ठकविः मन्यते।

(ii) असौ न केवलं प्राच्यपरम्परायां सर्वसमादृतः अपितु पाश्चात्त्यविद्वद्भिः अपि प्रशंसितः अस्ति।

(iii) इदं मन्यते यद् आदौ कालिदासः महामूर्ख आसीत्।

(iv) तस्य विद्योत्तमाभिधा विदुषी भार्या आसीत्।

(v) भार्याकृतेन अनादरेण दुःखितः सन् कालीदेव्याः आराधनां कृत्वा वैदुष्यं प्राप्तवान् कालिदासः।

(vi) महाकविकालिदासरचितानि त्रीणि नाटकानि सन्ति – अभिज्ञानशाकुन्तलम्, विक्रमोर्वशीयम्, मालविकाग्निमित्रञ्च।

(vii) महाकविना द्वे महाकाव्ये रचिते स्तः – रघुवंशमहाकाव्यम्, कुमारसम्भवमहाकाव्यञ्च।

(viii) तेन महाभागेन ऋतुसंहारमेघदूते गीतिकाव्ये रचिते स्तः।

(ix) मन्यते इदं यत् कालिदासः शैव आसीत्।

(x) 'दीपशिखा' इत्यस्याः उपमायाः प्रयोगेण असौ 'दीपशिखा कालिदासः' इत्यपि कथ्यते।

(xi) सप्तमशताब्द्याः पुलकेशिद्वितीयस्य शिलालेखे कालिदासस्य नाम प्राप्तम्।

(xii) उद्भटवैदुष्ये सत्यपि कालिदासे ईदृशी विनम्रता आसीत् यत् तेन कुत्रापि स्वकाव्येषु स्वपरिचयः न दत्तः।

8. श्रम एव विजयते

(i) मानवजीवने श्रमस्य महत्त्वं निश्चितरूपेण असीमितम् अस्ति।

(ii) श्रमी नरः असम्भवम् अपि सम्भवं कर्तुं शक्नोति।

(iii) श्रमेण न केवलं लाभः प्राप्यते, अपितु कीर्तिश्चापि लभ्यते।

(iv) श्रमेण एव हि जनाः सुखं वैभवम् आनन्दञ्च प्राप्नुवन्ति।

(v) परिश्रमी नरः समाजराष्ट्रयोः प्रगतेः महान् आधारः भवति।

(vi) आलस्यं मनुष्याणां शरीरस्थः महान् रिपुः भवति, अतः सर्वे आलस्यं विहाय उद्योगं श्रमं वा कुर्युः।

(vii) श्रमेण भाग्यमपि परिवर्तयितुं शक्यते।

(viii) उद्योगशीला एव जनाः सर्वदुःखानि विहाय सुखानि समृद्धिं च अनुभवन्ति।

(ix) श्रमम् एव आश्रित्य मनुष्येण अनेकानि यन्त्राणि विरचय्य जीवनं सुविधासम्पन्नं कृतम्।

(x) जीवनं पुरुषार्थेभ्यः भवति, अतः नरः आलस्यं विहाय पुरुषार्थी परिश्रमी च भवेत्।

(xi) मईमासस्य प्रथमतारिकायां विश्वश्रमिकदिवसः मन्यते।

(xii) श्रमस्य महत्त्वं वर्णयता केनापि कथितमस्ति–

योजनानां सहस्रं तु शनैर्गच्छेत् पिपीलिका।
अगच्छन् वैनतेयोऽपि पदमेकं न गच्छति।।

9. अहिंसा परमो धर्मः

(i) स्थूलार्थेषु जीवानां वधः हिंसा कथ्यते।

(ii) व्यापकेषु अर्थेषु मनसा वाचा कर्मणा कस्यापि जीवस्य परिपीडनं हिंसा मन्यते।

(iii) अतः हिंसायाः त्रयः भेदाः सन्ति – मानसिकी हिंसा, वाचिकी हिंसा, कायिकी हिंसा च।

(iv) हिंसात्रयस्य त्याग एव अहिंसा इति कथ्यते।

(v) सर्वेषु धर्मेषु अहिंसायाः प्राधान्यं वर्णितम्।

(vi) मनुनाऽपि चातुर्वर्ण्यार्थम् अहिंसायाः महत्त्वं निरूपितम्–

अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
एतं सामासिकं धर्मं चातुर्वर्ण्येऽब्रवीन्मनुः।।

(vii) महात्मा बुद्धः अहिंसायाः श्रेष्ठः प्रचारक आसीत्।

(viii) कलिङ्गस्य युद्धे शोणितप्रवाहं वीक्ष्य अशोकस्य हृदयेऽहिंसायाः सञ्चारः अभवत्।

(ix) जैनधर्मेऽपि अहिंसा अवश्यपालनीयधर्मरूपेण वर्णिता।

(x) आधुनिककाले महात्मगान्धिमहोदयः सत्याहिंसयोः प्रयोगेण भारतं स्वतन्त्रम् अकारयत्, अहिंसायाः शक्तिञ्च प्रादर्शयत्।

(xi) अहिंसायाः पालनेन एव देशस्य समाजस्य च कल्याणं भवितुं शक्नोति।

(xii) अतः अस्माभिः सर्वैरपि अहिंसाधर्मः अवश्यमेव पालनीयः।

10. भारतदेशः

(i) अस्माकं देशस्य नाम भारतम् अस्ति।

(ii) पर्वतराजः हिमालयः अस्य देशस्य उत्तरे मुकुटमणिः इव शोभते।

(iii) दक्षिणदिशायां रत्नाकरः सदैव अस्य पादौ प्रक्षालयति।

(iv) भगवतः ऋषभदेवस्य ज्येष्ठः पुत्रः भरत आसीत्, तस्य राजर्षेः नाम्ना अस्माकं देशः 'भारतम्' इति व्यपदिश्यते।

(v) अस्माकं देशस्य प्राकृतिकी शोभा अनुपमा वर्तते।

(vi) भारतदेशे सर्वेऽपि षड् ऋतवः क्रमेणागत्य स्वसुषमाभिः देशमिमम् अलङ्कुर्वन्ति।

(vii) दिल्लीनगरम् अस्माकं भारतदेशस्य राजाधानीरूपेण प्रतिष्ठितम् अस्ति।

(viii) विश्वस्य बृहत्तमं लिखितं संविधानं भारतस्य एव अस्ति।

(ix) भारतदेशे नानाधर्मानुयायिनः नानाभाषाभाषिणः जनाः पारस्परिकस्नेहेन निवसन्ति।

(x) अतएव अनेकतायाम् एकता भारतस्य अलौकिकी विशेषता वर्तते।

(xi) प्राचीनकाले वैदेशिकानाम् आक्रमणात् पूर्वं, भारतदेशः ज्ञानसम्पदि जगद्गुरुः, अर्थसम्पदि स्वर्णचटका च मन्यते स्म।

(xii) वयं सर्वे अस्माकं भारतदेशस्य सेवार्थं, रक्षणार्थञ्च नित्यं कटिबद्धा भवेम।

11. जनसंख्या-समस्या

(i) सामान्यतः देशस्य जनसंख्या मानवसंसाधनरूपेण मन्यते किन्तु यदा अल्पकाले एव जनानाम् अनियमिता वृद्धिः भवति, तदा जनसंख्या समस्यारूपेण ज्ञायते, अयमेव जनसंख्याविस्फोटः उच्यते।

(ii) जनसंख्याविस्फोटस्य स्थितौ जनसंख्या उपलब्धप्राकृतिकसंसाधनानाम् अतिक्रमणं करोति।

(iii) चिकित्साविज्ञानस्य प्रगत्या मरणप्रमाणं न्यूनं जातम्।

(iv) अज्ञानेन अन्धश्रद्धया वासनया च अनेके जनाः सन्ताननियन्त्रणं न जानन्ति, जानन्तोऽपि नाङ्गीकुर्वन्ति।

(v) अस्मात् कारणाद् एव अस्माकं देशे जनसंख्याविस्फोटः समस्यारूपेण पुरः उपस्थितः सञ्जातः।

(vi) भारतदेशे विश्वस्य 2.4% क्षेत्रफले 17% जनसंख्या निवसति, अतः जनघनत्वम् अत्युच्चं वर्तते।

(vii) देशस्य प्रगत्यै निर्मिताः समस्तयोजनाः जनसंख्यायाः आधिक्येन विफलाः भवन्ति।

(viii) जनसंख्याविस्फोटेन अरण्यानां विनाशः कृषिभूमिनाशः परिसरप्रदूषणं च प्रवर्धन्ते।

(ix) जनसंख्यायाः आधिक्येन निरुद्योगः, निरक्षरता, कुपोषणं दारिद्र्यं च जनान् बाधन्ते।

(x) जनसंख्यासमस्यायाः एकमात्रं समाधानं परिवारनियोजनम् एव अस्ति।

(xi) सन्ततिनिरोधः तु स्वस्य, स्वकुलस्य, समाजस्य, राष्ट्रस्य, विश्वस्य च उन्नतये शान्तये च धर्मानुष्ठानम् इव अस्ति।

(xii) अतः अस्माभिः सर्वैः जनसंख्यासमस्यायाः समाधानार्थं परिवारनियोजनं पालनीयं प्रचारणीयञ्च अस्ति।

12. स्वास्थ्यशिक्षा

(i) अस्मिन् जगति स्वास्थ्यं सर्वोत्तमं सुखम् अस्ति।

(ii) अस्माकं शरीरं तदा एव किञ्चित्कर्तुं शक्नोति, यदा तत् स्वस्थं भवति।

(iii) धर्मार्थकामानां सिद्धिः स्वस्थशरीरं विना भवितुं न शक्नोति।

(iv) 'वपुराख्याति भोजनम्' इत्युक्त्या ज्ञायते यत् युक्ताहारविहारयोः स्वास्थ्यसंवर्धने महती उपयोगिता वर्तते।

(v) जनानां स्वास्थ्यसंवर्धनाय स्वास्थ्यशिक्षायाः अतिमहत्त्वपूर्णं स्थानं वर्तते।

(vi) स्वास्थ्यरक्षायाः उपायानां सम्यक् चिन्तनम् एव स्वास्थ्यशिक्षा कथ्यते।

(vii) स्वास्थ्यशिक्षया नरः जानाति यत् किं वस्तु स्वास्थ्यसंवर्धनाय भवति, किञ्च हानिप्रदम्।

(viii) चेचकक्षयविसूचिकाप्रभृतीनां टीकाकरणेन कथं मानवः सङ्क्रामकरोगेभ्यः सुरक्षितः भवितुं शक्नोति, इदमपि स्वास्थ्यशिक्षया एव ज्ञायते।

(ix) स्वच्छतायाः नियमानां परिपालनेन जनाः रोगमुक्ताः भवितुं शक्नुवन्ति, इदमपि स्वास्थ्यशिक्षया ज्ञायते।

(x) व्यायामः स्वास्थ्यरक्षायाः सर्वोत्तमः उपायः अस्ति।

(xi) व्यायामेन शरीरस्य बुद्धेश्च विकासः भवति।

(xii) स्वास्थ्यशिक्षा शिक्षास्वास्थ्यविभागयोः संयुक्तोत्तरदायित्वे प्रचलति।

13. यातायातसुरक्षा

(i) राजमार्गेषु सुरक्षार्थं यातायातस्य नियमानां निर्माणम् अभवत्।

(ii) भारतदेशे राजमार्गे सदैव वामहस्तदिशि चलेत्।

(iii) जनाः 'मोटरसाईकल' इति यानस्य प्रयोगे शिरस्त्राणस्य (हेल्मेट) अवश्यमेव प्रयोगं कुर्युः।

(iv) मार्गे यथास्थानं निर्धारितायाः गतिसीम्नः पालनमपि अवश्मेव कर्त्तव्यम्।

(v) मदिरां पीत्वा कदापि वाहनं न चालयेत्।

(vi) पदातयः जेब्राक्रासिंग इति स्थानतः एव राजमार्गस्य पारं गच्छेयुः।

(vii) चतुष्पथे रक्तहरितपीतानां प्रकाशसंकेतानां पालनं कुर्यात्।

(viii) चतुष्चक्रयाने 'सीटबेल्ट' इत्यस्य प्रयोगम् अवश्यमेव कुर्यात्।

(ix) अन्ययानानाम् अतिक्रमणसमये (overtaking) महत् अवधानम् अपेक्षितं भवति।

(x) चालकप्रमाणपत्रं विना गियरयुक्तवाहनं कदापि न चालयेत्।

(xi) मार्गे शीघ्रताम् अनवधानताञ्च परित्यज्य सावधानः भूत्वा चलेत्, वाहनं वा चालयेत्।

(xii) यातायातनियमानां पालनेन वयं स्वयं सुरक्षिताः भवामः, अन्यान् अपि सुरक्षितान् कुर्मः।

14. स्वच्छताभियानम्

(i) मानवजीवने स्वच्छतायाः महत्त्वपूर्णं स्थानं वर्तते।

(ii) यत्र स्वच्छता भवति, तत्र श्रीः वसति इति मन्यते।

(iii) स्वच्छतायाः महत्त्वं जानता भारतस्य प्रधानमन्त्रिणा श्रीनरेन्द्रमोदिना 2014 ईसवीयस्य अक्टूबरमासस्य द्वितीये दिनाङ्के (02-10-2014) स्वच्छभारताभियानस्य प्रारम्भः कृतः।

(iv) एतद् अभियानं भारतसर्वकारेण आरब्धं राष्ट्रियस्तरीयम् अभियानं वर्तते।

(v) अस्य लक्ष्यं मार्गाणां, निवासस्थानानां सार्वजनिकस्थलानाञ्च स्वच्छीकरणम् अस्ति।

(vi) अस्य अभियानस्य एकम् उद्देश्यं व्यक्तिगतसामुदायिकशौचालयानां निर्माणेन मलत्यागस्य समस्यायाः समाधानम् आसीत्।

(vii) स्वच्छताभियानस्य प्रचारार्थं सर्वकारेण एकादश जनाः स्वच्छताराजदूतरूपेण चिह्निताः आसन् यथा सचिनतेन्दुलकरः, योगगुरुः रामदेवः इत्यादयः।

(viii) स्वच्छभारतं महात्मागान्धिनः अपि स्वप्न आसीत्, अतः अस्य अभियानस्य आरम्भः तस्य जन्मतारिकायां (अक्टूबर-मासस्य द्वितीयतारिकायाम्) अभवत्।

(ix) सर्वकारेण प्रशासनेन च सह अशासकीय-संस्थाभिः अपि अस्मिन् अभियाने योगदानं कृतम्।

(x) अनेन अभियानेन जनानां दृष्टिकोणेऽपि अत्यधिकं परिवर्तनं जातम्।

(xi) अभियानात् प्रेरणां प्राप्य जनाः सार्वजनिकस्थलानां स्वच्छतायै महान्तं प्रयासम् अकुर्वन्।

(xii) अस्माभिः अपि स्वकल्याणार्थं देशसेवायै समाजसंरक्षणाय च अस्माकं पर्यावरणस्य स्वच्छतायाः प्रयत्नः करणीयः।

अलङ्कार

'अलङ्क्रियते अनेन इति अलङ्कारः'। यह अलङ्कार शब्द की व्युत्पत्ति है, अर्थात् विभूषित करने वाले साधन का नाम अलंकार है। जिस प्रकार कटक, कुण्डल आदि आभूषण शरीर को विभूषित करते हैं, इसलिए अलंकार कहलाते हैं, उसी प्रकार काव्य में अनुप्रास, उपमा आदि काव्य के शरीरभूत शब्द और अर्थ को अलङ्कृत करते हैं, इसलिए अलङ्कार कहलाते हैं। अलङ्कार तीन प्रकार के होते हैं–

1. शब्दालङ्कार, 2. अर्थालङ्कार 3. उभयालङ्कार।

अलङ्कारों का यह विभाजन शब्दपरिवर्तन को सहन कर सकने एवं न सहन कर सकने पर निर्भर है। तात्पर्य यह है कि अगर किसी पंक्ति में कोई शब्द बदल देने से अलङ्कार समाप्त हो जाता है, तो वह शब्द पर निर्भर होने से शब्दालङ्कार की कोटि में आयेगा। इसी प्रकार यदि शब्द को बदल कर उसका पर्यायवाची रख देने पर भी काव्य के सौन्दर्य में तनिक भी अन्तर नहीं आता तो वहाँ पर सौन्दर्य शब्द पर न आश्रित होकर अर्थ पर आश्रित है, अतः इसे अर्थालङ्कार कहा जायेगा। उदाहरण के लिये चन्द्रापीडकथा की यह पंक्ति द्रष्टव्य है–

चन्द्रापीडोऽपि तत्रैव शिलातले .....

..... क्षणादिव क्षणदां क्षपितवान्।

यहाँ 'क्ष' वर्ण की बार-बार आवृत्ति से वाक्य में एक लय उत्पन्न होता है। यदि 'क्षणदाम्' के स्थान पर उसका पर्यायवाची 'रात्रिम्' पद रख दिया जाय–'क्षणादिव रात्रिं क्षपितवान्'–तो वाक्य का सौन्दर्य समाप्त हो जाता है। अतः वाक्य का सौन्दर्य शब्द के अङ्गभूत वर्ण पर आश्रित होने से इसे शब्दालङ्कार कहेंगे।

इसी प्रकार 'सकलभूतलरत्नभूतः वैशम्पायनो नाम शुकोऽयम्' यहाँ 'सकलभूतलरत्नभूतः' के स्थान पर 'सकलमहीतलरत्नभूतः' कर देने पर भी वाक्य के सौन्दर्य में न्यूनता नहीं आती। अतः शब्द के परिवर्तन को सह जाने वाला यह अर्थालङ्कार कहलायेगा।

जहाँ अलङ्कार शब्द एवम् अर्थ दोनों पर आश्रित होकर चमत्कार उत्पन्न करता है उसे उभयालङ्कार कहते हैं। पुनरुक्तवदाभास उभयालङ्कार का उदाहरण है।

1. उपमा

लक्षण – 'साधर्म्यमुपमा भेदे' काव्यप्रकाशकार आचार्य मम्मट की इस परिभाषा का तात्पर्य है– भेद होने पर भी समान धर्म का वर्णन करना ही उपमा है। यहाँ प्रश्न उठता है कि किसका भेद होने पर? तो उत्तर है उपमान और उपमेय का भेद होने पर। वस्तुतः उपमा के चार अङ्ग हैं–

1. उपमेय–जिसकी तुलना की जाये।

2. उपमान–जिससे तुलना की जाये।

3. साधारण धर्म–वह गुणधर्म जो दोनों में समान हो।

4. वाचक शब्द–उपमा वाचक शब्द।

जहाँ उपमा के चारों अङ्ग होंगे उसे पूर्णोपमा एवं जहाँ एक-दो का लोप होगा उसे लुप्तोपमा कहा जाता है।

उदाहरण– विचिन्तयन्ती यमनन्यमानसा
तपोधनं वेत्सि न मामुपस्थितम्।
स्मरिष्यति त्वां न स बोधितोऽपि सन्
कथां प्रमत्तः प्रथमं कृतामिव।।

शकुन्तला को दिये गये ऋषि दुर्वासा के शाप में शकुन्तला उपमेय है, कथा उपमान है, साधारण धर्म भूल जाना है, और उपमा वाचक शब्द 'इव' है – अतः यहाँ उपमा के सभी अङ्ग होने से पूर्णोपमा का उदाहरण है।

इसी प्रकार रघुवंशम् के इस श्लोक में पार्वती और परमेश्वर की तुलना वाक् (शब्द) और अर्थ से की गई है।

1. वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ।। (रघुवंश 2/41)

प्रस्तुत श्लोक में उपमेय – पार्वतीपरमेश्वरौ, उपमान – वागर्थौ, साधारण धर्म – सम्पृक्तता और उपमावाचक शब्द – 'इव' है।

2. तस्याः खुरन्यासपवित्रपांसुमपांसुलानां धुरि कीर्तनीया।
मार्गं मनुष्येश्वरधर्मपत्नी श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्।। (रघुवंश 2/02)

रानी सुदक्षिणा ने नन्दिनी का अनुगमन उसी प्रकार किया जैसे स्मृतियाँ श्रुति के पीछे चली हैं।

2. रूपक

लक्षण–तद्रूपकमभेदो य उपमानोपमेययोः

जहाँ उपमान और उपमेय में अभेद कथन हो वहाँ रूपक अलंकार होता है।

उदाहरण– पर्याप्तपुष्पस्तवकस्तनाभ्यः स्फुरत्प्रवालोष्ठमनोहराभ्यः।
लतावधूभ्यस्तरवोऽप्यवापुः विनम्रशाखाभुजबन्धनानि।।

प्रस्तुत उदाहरण में लताओं, पुष्पस्तवकों और किसलयों में अत्यन्त भिन्न पदार्थ वधू, उरोज और ओष्ठ का अभेद आरोप किया गया है; अतः यहाँ रूपक अलंकार है।

अभ्यास प्रश्न

1. उपमा अलंकार का लक्षण देते हुए उदाहरण प्रस्तुत करिए।
2. "वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
   जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ।।
   प्रस्तुत उदाहरण में अलंकार का नाम-निर्देश करते हुए लक्षण एवं उदाहरण प्रस्तुत कीजिए।
3. रूपक अलंकार का लक्षण देते हुए उदाहरण प्रस्तुत कीजिए।
4. उपमेय और उपमान में भेद किस अलंकार में होता है ? अलंकार का नाम तथा लक्षण देते हुए उदाहरण प्रस्तुत कीजिए।
5. उपमेय और उपमान के बीच अभेद की स्थिति किस अलंकार में होती है ? अलंकार का नाम निर्देश करते हुए, लक्षण एवं उदाहरण लिखिए।

(i) 'साधर्म्यमुपमा भेदे' किस अलंकार का लक्षण है–
(क) रूपक (ख) उत्प्रेक्षा (ग) उपमा (घ) व्यतिरेक

(ii) 'तद्रूपकमभेदो य उपमानोपमेययोः' किस अलंकार का लक्षण है–
(क) उपमा (ख) अतिशयोक्ति (ग) रूपक (ग) उत्प्रेक्षा

(iii) उपमेय और उपमान के बीच भेद की स्थिति किस अलंकार में होती है ?
(क) रूपक (ख) उपमा (ग) अनन्वय (घ) विभावना

(iv) उपमेय और उपमान के मध्य अभेद किस अलंकार में होता है ?
(क) उपमा (ख) रूपक (ग) विभावना (घ) विशेषोक्ति

(v) "यस्य रणान्तःपुरे करे कुर्वतो मण्डलाग्रलताम् रससम्मुख्यपि सहसा पराङ्मुखी भवति रिपुसेना" इस उदाहरण में कौन-सा अलंकार है–
(क) यमक (ख) श्लेष (ग) उपमा (घ) रूपक

■

1

खण्ड–च : व्याकरण

अनुवाद

अनुवाद–एक भाषा में प्रकट किये गये विचारों को दूसरी भाषा में रूपान्तरित करने की प्रक्रिया को अनुवाद कहते हैं। भाषाओं में प्रायः वाक्य–विन्यास का क्रम निश्चित होता है लेकिन संस्कृत में वाक्यों में क्रम यथेच्छ रखा जा सकता है। जैसे– 'कृष्णः हरिद्वारं गच्छति' वाक्य सही है, उसी प्रकार से 'हरिद्वारं गच्छति कृष्णः' या 'गच्छति कृष्णः हरिद्वारम्' भी सही है। किन्तु छात्रों को सरलता से समझाने एवम् अर्थबोध करवाने हेतु क्रम को कर्ता, कर्म, क्रिया एवम् अन्य को समझते हुए रखना चाहिए।

'अपदं न प्रयुञ्जीत' इसके अनुसार विभक्तिरहित शब्द का प्रयोग नहीं किया जाता तथा संस्कृत के क्रियापदों में लिङ्गविचार नहीं होता है। सभी लिङ्गों में क्रिया के रूप समान ही चलते हैं। क्रियापद दो प्रकार के होते हैं। तिङन्त अर्थात् (साध्य), कृदन्त (सिद्ध), तिङन्त में लिङ्गविचार नहीं होता है।

अनुवाद के नियम

हिन्दी एवं अंग्रेजी में दो ही वचन होते हैं – एकवचन एवं बहुवचन, किन्तु संस्कृत में (तीन) एकवचन, द्विवचन, बहुवचन होते हैं। संस्कृत में छह कारक, सात विभक्तियाँ एवं तीन पुरुष होते हैं।

'कर्ता कर्म च करणं च सम्प्रदानं तथैव च।
अपादानमधिकरणं च इत्याहु कारकाणि षट्'।।

विभक्ति

विभक्तियाँ दो प्रकार से अर्थ का अभिधान करती हैं, वे अर्थ हैं–

(i) कारक
(ii) उपपद

(i) विभक्ति द्वारा कारक को अभिव्यक्त करने के उदाहरण हैं–

नमामि रामम्।
बालकः लेखन्या लिखति। इत्यादि।

(ii) पदों के योग में होने वाली विभक्ति का उदाहरण है–

नमः शिवाय।
कृष्णः दैत्येभ्यः अलम्। इत्यादि।

संख्याकारकबोधयित्री विभक्तिः–संख्या और कारक का बोध कराने वाली विभक्ति कही जाती है।

कारक	विभक्ति	चिह्न
कर्ता	प्रथमा	ने
कर्म	द्वितीया	को
करण	तृतीया	से (के द्वारा)
सम्प्रदान	चतुर्थी	के लिए
अपादान	पञ्चमी	से (अलगाव)
सम्बन्ध	षष्ठी	का, के, की, रा, रे, री, ना, ने, नी
अधिकरण	सप्तमी	हे, भो, अये, अरे

इन कारक चिह्नों के आधार पर अनुवाद बनाने में सरलता होती है। छात्र आसानी से चिह्नों का ध्यान रखते हुए अनुवाद बना सकते हैं।

अनुवाद बनाने के नियम

1. शेषे प्रथमः–युष्मद् एवम् अस्मद् शब्द के अतिरिक्त समस्त शब्द रूपों के साथ प्रथम पुरुष होता है।

2. युष्मद्युपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि मध्यमः– युष्मद् शब्द के साथ मध्यम पुरुष का प्रयोग किया जाता है।

3. 'अस्मद्युत्तमः' अस्मद् शब्द के साथ उत्तम पुरुष का प्रयोग किया जाता है।

इन्हें इस तरह से समझ सकते हैं।

सः गच्छति	तौ गच्छतः	ते गच्छन्ति
त्वं गच्छसि	युवां गच्छथः	यूयं गच्छथ
अहं गच्छामि	आवां गच्छावः	वयं गच्छामः

इस तरह से युष्मद् शब्द (त्वम्, युवाम्, यूयम्) कर्ता के रहने पर मध्यम पुरुष का ही प्रयोग होता है। अस्मद् शब्द (अहम्, आवाम्, वयम्) कर्ताओं के प्रयुक्त अथवा अप्रयुक्त के साथ उत्तम पुरुष का ही प्रयोग होता है, किसी भी दशा में प्रथम पुरुष का प्रयोग नहीं होगा। प्रथम पुरुष (अन्य पुरुष) की क्रियाओं के साथ 'युष्मद् एवम् अस्मद्' के अतिरिक्त समस्त शब्दरूपों का प्रयोग किया जाता है।

संस्कृत में क्रिया के कालों को व्यक्त करने के लिये लकारों का प्रयोग किया जाता है जो निम्नलिखित हैं–

लकार 10 होते हैं– लट्, लिट्, लुट्, लृट्, लेट्, लोट्, लङ्, लिङ्, लुङ्, लृङ् किन्तु यहाँ सामान्य छात्रों के लिये पाठ्यक्रम में 5 लकारों को ही, आनुवादिक प्रयोग को ध्यान में रखकर पढ़ाया जाता है।

वर्तमान काल में लट्लकार, भूतकाल में लङ्लकार, भविष्यत्काल में लृट्लकार, आज्ञार्थ में लोट्लकार, विधिलिङ् लकार का प्रयोग विधिसूचक निमन्त्रण, आमन्त्रण, विधि, सम्प्रश्न, प्रार्थना, अधीष्ट, (चाहिए) अर्थों के लिए किया जाता है।

अतः वर्तमान, भूत, भविष्यत् के अर्थों को व्यक्त करने के लिये प्रयुक्त लकारों के रूप इस प्रकार से होते हैं–

गम् धातु–लट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गच्छति	गच्छतः	गच्छन्ति
मध्यम पुरुष	गच्छसि	गच्छथः	गच्छथ
उत्तम पुरुष	गच्छामि	गच्छावः	गच्छामः

इसी प्रकार से रक्ष् – रक्षा करना, वद् – बोलना, हस् – हसना, खाद् – खाना, नम् – नमस्कार करना, चल् – चलना, पच् – पकाना, लिख् – लिखना, इत्यादि धातुओं के रूप चलते हैं।

पूर्व में बताये गये नियमों के अनुसार अर्थ सहित ऐसे प्रयोग करते हुए समझें–

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सः हसति	तौ हसतः	ते हसन्ति
	(वह हँसता है)	(वे दोनों हँसते हैं)	(वे सब हँसते हैं)
मध्यम पुरुष	त्वं हससि	युवां हसथः	यूयं हसथ
	(तुम हँसते हो)	(तुम दोनों हँसते हो)	(तुम सब हँसते हो)
उत्तम पुरुष	अहं हसामि	आवां हसावः	वयं हसामः
	(मैं हँसता हूँ)	(हम दोनों हँसते हैं)	(हम सब हँसते हैं)

ऊपर कहे गये कर्ताओं के अतिरिक्त समस्त कर्ताओं के साथ प्रथम पुरुष की क्रियाओं का ही प्रयोग होता है। जैसे–छात्रः लिखति, रमा हसति, सीता वदति, सिंहः गर्जति, रामः संहरति इत्यादि।

अनुवाद में सबसे पहले वाक्य के कर्ता को ढूँढ़े, क्रिया के पहले 'कौन' लगाने से उत्तर में प्राप्त कर्ता है, इसके बाद कर्ताओं की संख्या के अनुसार प्रथमा में एकवचन, द्विवचन, बहुवचन होते हैं। कर्ता के बाद 'पुरुष' का ध्यान दिया जाता है, कर्ता के अनुसार पुरुष एवं वचन तथा क्रिया के काल का निश्चय करते हैं, इसके बाद अन्य शब्दों (कारक आदि) को रखते हैं।

क्रियापदों के निर्माण में जिसकी प्रमुख भूमिका है वह है 'धातु'। इन्हीं धातुओं में 'तिङ्' प्रत्यय जोड़कर क्रियापद का निर्माण होता है।

यथा– गच्छति, पठति, हसति, अगच्छत्, गमिष्यति, गच्छेत्, आदि क्रियाओं में गम्, पठ्, हस्, धातुएँ हैं। इन धातुओं में तीन प्रकार के पद होते हैं– परस्मैपद, आत्मनेपद एवम् उभयपद। नियमानुसार इनके प्रयोग होने चाहिए।

आत्मनेपद के रूप इस प्रकार से चलते हैं–

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	स्पर्धते	स्पर्धेते	स्पर्धन्ते
मध्यम पुरुष	स्पर्धसे	स्पर्धेथे	स्पर्धध्वे
उत्तम पुरुष	स्पर्धे	स्पर्धावहे	स्पर्धामहे

इसमें भी सः अथवा कोई भी युष्मद्, अस्मद् शब्दातिरिक्त कर्ता रामादि के साथ सः स्पर्धते, तौ स्पर्धेते, ते स्पर्धन्ते, युष्मद् शब्द के साथ त्वं स्पर्धसे, युवां स्पर्धेथे, यूयं स्पर्धध्वे, अस्मद् शब्द के साथ अहं स्पर्धे, आवां स्पर्धावहे, वयं स्पर्धामहे।

लकारों के आधार पर अनुवाद के नियम

1. लट्लकार (वर्तमान काल)

नियम 1.–कर्तृवाच्य में कर्ता में प्रथमा विभक्ति होती है, उसी के अनुसार क्रिया होती है।

(1) राम घर जाता है। रामः गृहं गच्छति।

(2) छात्र विद्यालय जाते हैं। छात्राः विद्यालयं गच्छन्ति।

(3) तुम कब पढ़ते हो? त्वं कदा पठसि?

(4) हम दोनों खाना खाते हैं। आवां भोजनं खादावः।

(5) मैं हरिद्वार क्यों जाता हूँ? अहं हरिद्वारं किमर्थं गच्छामि?

नियम 2.– जब वाक्य में दो कर्ता हों तो द्विवचन की क्रिया होती है।

जैसे– राम और कृष्ण खेलते हैं।

रामकृष्णौ क्रीडतः/रामः कृष्णश्च क्रीडतः।

रमा और गीता खाना खाती हैं।

रमागीते भोजनं कुरुतः / रमा गीता च भोजनं कुरुतः।

नियम 3.– जब वाक्य में दो कर्ता हों एवं 'वा' से जुड़े हों तो एकवचन की क्रिया होती है–

राम अथवा मोहन घर जाता है। रामः मोहनः वा गृहं गच्छति।

नियम 4.– यदि मध्यम पुरुष के साथ 'कर्ता' प्रथम पुरुष का हो तो क्रिया मध्यम पुरुष द्विवचनान्त होती है, यदि एक से अधिक कर्ता हों तो क्रिया मध्यम पुरुष बहुवचन होती है। जैसे–

(1) तुम और सोहन जाते हो। त्वं सोहनश्च गच्छथः।

(2) राम और तुम दोनों जाते हो। रामः युवां च गच्छथ।

इसी रीति से उत्तम पुरुष के कर्ता के साथ प्रथम पुरुष एवं मध्यम पुरुष के कर्ता हों, तो क्रिया उत्तम पुरुष के वचनानुसार होगी। जैसे–

(1) मैं और कृष्ण पढ़ते हैं। अहं कृष्णश्च पठावः।

(2) रमेश, तुम और मैं जाते हैं। रमेशः त्वम् अहं च गच्छामः।

(3) मैं, तुम और वे सब लिखते हैं। अहं त्वं ते च लिखामः।

नोटः– अनुवाद में जहाँ युष्मदर्थ या अस्मदर्थ की प्रधानता होती है, वहाँ क्रियाएँ उन्हीं के अनुसार होती हैं।

नियम 5.– यदि कर्ता 'वा' अथवा 'या' से जुड़े होते हैं, तो क्रिया अपने सबसे निकट कर्ता के पुरुष तथा वचन के अनुसार होती है, यथा–

(1) मोहन अथवा तुम पढ़ते हो। मोहनः त्वं वा पठसि।

(2) तुम अथवा राम जाते हो। त्वं रामो वा गच्छति।

(3) मैं अथवा तुम जाते हो। अहं त्वं वा गच्छसि।

नियम 6.– संस्कृत में भवान् (आप) प्रथम पुरुष का कर्ता है। भवान् (आप) भवन्तौ (आप दोनों) भवन्तः (आप सब) पुंलिङ्ग के कर्ता हैं, भवती-आप, भवत्यौ (आप दोनों) भवत्यः (आप सब) स्त्रीलिङ्ग के कर्ता हैं, भवत् (आप), भवती (आप दोनों) भवन्ति (आप सब) नपुंसकलिङ्ग के कर्ता हैं, इन सभी के साथ प्रथम पुरुष का प्रयोग किया जाता है–

भवान् गच्छति, भवन्तौ गच्छतः, भवन्तः गच्छन्ति

भवती गच्छति, भवत्यौ गच्छतः, भवत्यः गच्छन्ति

समीचीन वाक्य

(1) त्वं पठसि। तुम पढ़ते हो।

(2) युवां गच्छथः। तुम दोनों जाते हो / जाती हो।

(3) यूयं गच्छथ। तुम सब जाते हो / तुम सब जाती हो।

(4) त्वं रामश्च गच्छथः। तुम और राम जाते हो।

(5) युवां कृष्णः हरिश्च पठथ। तुम कृष्ण एवं हरि पढ़ते हो।

(6) यूयं रामः सोहनश्च पठथ। तुम लोग, राम और सोहन पढते हो।

(7) लक्ष्मणः शिवश्च हसतः। लक्ष्मण एवं शिव हँसते हैं।

2. लङ्लकार (भूतकाल)

नियम 1. जो कार्य हो चुका है उस काल (समय) को भूतकाल कहते हैं। भूतकाल के लिये 'लङ्लकार' का प्रयोग होता है।

नियम 2. वर्तमान काल की क्रिया के पीछे (स्म) 'लट स्मे' सूत्र द्वारा लगाने से भूतकाल का अर्थ प्राप्त होता है। जैसे– लिखति स्म (लिखता था) हसति स्म (हँसता था)।

समीचीन वाक्य–

1. रामः अपठत् – राम पढ़ता था। – रामः पठति स्म। (पुंलिङ्ग)
2. गीता अहसत् – गीता हँसती थी। – गीता हसति स्म। (स्त्रीलिङ्ग)
3. जलम् अवर्षत् – जल बरसा। – जलं वर्षति स्म। (नपुंसकलिङ्ग)
4. कृष्णः अपश्यत् – कृष्ण देखता था। – कृष्णः पश्यति स्म। (पुंलिङ्ग)
5. यूयम् अहसत् – तुम सब हँसते थे। – यूयं हसथ स्म। (पुंलिङ्ग)
6. अहम् अचलम् – मैं चला गया। – अहं चलामि स्म। (पुंलिङ्ग)

3. लृट्लकार (भविष्यत् काल)

जब कोई कार्य आगामी समय में होने वाला होता है उसे भविष्यत् काल कहते हैं। लृट्लकार का प्रयोग भविष्यत् काल में होता है।

समीचीन वाक्य–

1. सः पठिष्यति। वह पढ़ेगा। (पुंलिङ्ग)
2. गीता पठिष्यति। गीता पढ़ेगी। (स्त्रीलिङ्ग)
3. जलं वर्षिष्यति। जल बरसेगा। (नपुंसकलिङ्ग)
4. शिवः हरिश्च पठिष्यतः। शिव और हरि पढ़ेंगे।
5. श्यामो रामो वा चलिष्यति। श्याम या राम चलेंगे।

4. लोट् लकार (आज्ञार्थक)

नियम 1. आज्ञा, इच्छा, प्रार्थना, अनुमति, आशीर्वाद आदि अर्थों में लोट् लकार होता है। (विध्यादि अर्थों में भी लोट् लकार होता है)

नियम 2. मध्यम पुरुष आज्ञा एवं आशीर्वाद अर्थ में होता है, कभी-कभी 'तुम' कर्ता छिपा रहता है, तो कर्ता का अध्याहार करके मध्यम पुरुष का प्रयोग करते हैं। अन्य पुरुषों एवं क्रियापदों में भी किसी एक के प्रयुक्त एवं अप्रयुक्त होने पर उचित अध्याहार करके क्रियापदों का प्रयोग किया जाता है।

समीचीन वाक्य–

(1) सः पठतु। वह पढ़े। (पुंलिङ्ग)
(2) सा हसतु। वह हँसे। (स्त्रीलिंग)
(3) भवान् लिखतु। आप लिखें। (आज्ञा)
(4) त्वं चल। तुम चलो। (आज्ञा)
(5) आयुष्मान् भव। आयुष्मान् होओ। (आशीर्वाद)

5. विधिलिङ् ('चाहिए' अर्थ में)

नियम– 'विधि-निमन्त्रणामन्त्रणाधीष्ट-सम्प्रश्न-प्रार्थनेषु लिङ्'– चाहिए अर्थ में विधिलिङ् लकार होता है।

नोट– इन अर्थों में लोट् लकार का भी प्रयोग होता है। 'चाहिए' इस अर्थ में सामान्य रूप से छात्र विधिलिङ् का प्रयोग करते हैं, धीरे-धीरे विशेष अर्थों का प्रयोग स्वतः होने लगता है। 'चाहिए' से युक्त वाक्य में 'को' का प्रयोग होता है, किन्तु वह कर्म का द्योतक नहीं होता है।

समीचीन वाक्य

(1) छात्रः हसेत्। छात्र को हँसना चाहिए।
(2) छात्रा गच्छेत्। छात्रा को जाना चाहिए।
(3) बालकाः चलेयुः। बालकों को चलना चाहिए।
(4) रामः अत्र लिखेत्। राम को यहाँ लिखना चाहिए।
(5) छात्रः कथं वदेत्? छात्र को कैसे बोलना चाहिए?

कारकों के आधार पर अनुवाद के नियम

1. कर्ता कारक (प्रथमा विभक्ति)

नियम 1. किसी क्रिया को करने में जो स्वतन्त्र (प्रधान) होता है, उसे कर्ता कहते हैं। कर्तृवाच्य के वाक्य में कर्ता में प्रथमा विभक्ति होती है।

जैसे–बलरामः गच्छति। यहाँ 'बलराम' कर्ता है, उसमें प्रथमा विभक्ति है।

नियम 2 'अपदं न प्रयुञ्जीत' पद विना बनाये शब्दों (प्रातिपदिकों) का प्रयोग नहीं होता, यह संस्कृत का सिद्धान्त है। अतः पद बनाने के लिए प्रथमादि विभक्तियाँ 'प्रातिपदिकादि अर्थों में' की जाती हैं।

रामः – राम, कृष्णः – कृष्ण, श्रीः – श्री, ज्ञानम् – ज्ञान, तटः, तटी, तटम्, द्रोणो व्रीहिः, एकः, द्वौ, बहवः, इत्यादि उदाहरण इसी प्रकार से समझें।

नियम 3. अव्ययों के साथ केवल नाम के कथन में प्रथमा विभक्ति होती है। जैसे–'गान्धी' इति प्रसिद्धः, चन्द्रशेखरः 'आजाद' इति प्रसिद्धः।

समीचीन वाक्य–

(1) रामः सीता च गच्छतः।	राम और सीता जाते हैं।
(2) भानुः सीता वा लिखति।	भानु या सीता लिखते हैं।
(3) काकः एकः पक्षी विद्यते।	कौवा एक पक्षी है।
(4) इयम् एका महानगरी अस्ति।	यह एक महानगरी है।

संस्कृत में अनुवाद कीजिए–

1. महात्मा गाँधी 'बापू' इस नाम से प्रसिद्ध थे। 2. बलराम कृष्ण के भाई थे। 3. सीता और गीता चली गयीं। 4. रमा या कविता नहीं आयेंगी। 5. यह एक सुन्दर महानगर है। 6. हम और तुम यहाँ कब आयेंगे। 7. सीता सती नारी है। 8. वे सभी वहाँ जायें। 9. तुम्हें पढ़ना चाहिए। 10. वह विशाल वृक्ष है।

2. कर्मकारक (द्वितीया विभक्ति)

नियम 1. कर्ता अपनी क्रिया के द्वारा जिसे सबसे अधिक चाहता है, उसे कर्म कहते हैं। कर्म में द्वितीया विभक्ति होती है।

जैसे– छात्र मोहन को मारता है। छात्रः मोहनं ताडयति।

यहाँ 'ताडयति' क्रिया द्वारा 'मोहन' अभीष्ट है, अतः 'मोहन' कर्म है, कर्म में द्वितीया विभक्ति होती है।

विमर्श – वाक्य में क्रिया के पहले 'किसको' या 'क्या' लगाने पर जो उत्तर आता है, उसे कर्म कहते हैं। इसका चिह्न 'को' होता है, जो छिपा रहता है। 'राम पुस्तक पढ़ता है' इस वाक्य में 'को' छिपा है, अतः क्रिया के पहले 'क्या' 'किसको' लगाने से 'पुस्तक' यह उत्तर प्राप्त होता है, वह 'कर्म' है। उसमें द्वितीया हो जाती है। यह कर्म भी एकवचन, द्विवचन एवं बहुवचन हो सकता है। जैसे– रामः फलं खादति। रामः फले खादति। रामः फलानि खादति।

समीचीन वाक्य

(1) छात्राः चलचित्रम् अपश्यन् ?	छात्रों ने चलचित्र देखा।
(2) गायकाः गीतं गायन्ति।	गायक गीत गाते हैं।
(3) रामः चन्द्रं पश्यति।	राम चन्द्रमा को देखता है।
(4) अहं छात्रं ताडयामि।	मैं छात्र को पीटता हूँ।
(5) त्वं धनं कुत्र अपश्यः?	तुमने धन कहाँ देखा?

संस्कृत में अनुवाद कीजिए–

1. कृष्ण ने कंस को मारा था। 2. बालक एक गीत लिख रहे हैं। 3. हमने पत्र लिखा। 4. हम गुरु को प्रणाम करते हैं। 5. मैं समाचार पढ़ूँगा। 6. हम दूध पियेंगे। 7. राम ग्रन्थ लाता है। 8. वे महाभारत सुनेंगे। 9. हमने गीता पढ़ी। 10. मैंने एक आश्चर्य देखा।

कर्मकारक (द्वितीया विभक्ति, विशेष नियम एवं उपपद)

नियम 1. अकथितं च – निम्नलिखित 16 धातुओं के योग में, अपादान आदि कारक, वक्ता की इच्छानुसार, कर्मकारक के रूप में भी प्रयुक्त होते हैं। इन्हें गौणकर्म या अकथित कर्म भी कहते हैं। 16 धातुएँ निम्न हैं–दुह्, याच्, पच्, दण्ड् , रुध् , प्रच्छ्, चि, ब्रू, शास्, जि, मथ्, मुष्, नी, ह्व, कृष् और वह्।

जैसे– रमेशः रामं प्रश्नं पृच्छति। रमेश राम से प्रश्न पूछता है। यहाँ 'राम से' अपादान कारक है, 'प्रच्छ्' धातु होने के कारण 'अकथितं च' से कर्म होकर द्वितीया विभक्ति में भी बनता है।

नियम 2. 'गमनार्थक' धातुओं से द्वितीया होती है, (जहाँ जाया जाता है उसमें) जैसे–रामः कर्णपुरं गच्छति। सीता देवप्रयागं गच्छति।

नियम 3. अधिशीङ्स्थासां कर्म – यदि अधिपूर्वक शीङ् (सोना), स्था (ठहरना) एवं आस् (बैठना) धातुएँ हों तो इनके आधार की कर्म संज्ञा होती है एवं कर्म में द्वितीया विभक्ति होती है।

जैसे– कृष्णः कालियम् अधिशेते। विष्णुः क्षीरसागरम् अधितिष्ठति। रामः अयोध्याम् अध्यास्ते।

नियम 4. 'अभितः-परितः-समया-निकषा-हा-प्रतियोगेऽपि द्वितीया'–

इन सभी अभितः, परितः, समया, निकषा, हा, एवं प्रति के योग में द्वितीया विभक्ति होती है। विशेष पदों के समीप होने के कारण इसे उपपद विभक्ति भी कहते हैं।

जैसे– अस्माकं विद्यालयं परितः, अभितः, समया, निकषा वा वृक्षाः सन्ति।

समीचीन वाक्य

(1) कपिः वृक्षम् आरोहति।	बन्दर पेड़ पर चढ़ता है।
(2) मोहनः आसन्दम् अधितिष्ठति।	मोहन कुर्सी पर बैठता है।
(3) विद्यालयं परितः मार्गोऽस्ति।	विद्यालय के चारों ओर मार्ग है।
(4) बालकः ग्रामं प्रति गच्छति।	बालक गाँव की ओर जाता है।

संस्कृत में अनुवाद कीजिए–

1. सड़क के चारों ओर वृक्ष हैं। 2. शेर के दोनों ओर पशु हैं। 3. मेरे प्रति ध्यान दो। 4. राम रथ पर बैठते हैं। 5. मैं नदियों में नहाता हूँ। 6. साधु आश्रम में रहते हैं। 7. नगर के पास नदी है। 8. मेरे चारों ओर पुस्तकें हैं। 9. गाय को बाड़े में रोकता है। 10. मोहन के दोनों ओर खिलाड़ी हैं।

3. करण कारक (तृतीया विभक्ति)

नियम 1. साधकतमं करणम्–जो किसी कार्य को करने में अत्यन्त सहायक हो। कर्ता जिसकी सहायता से अपने कार्य को पूर्ण करता है उसे करण कहते हैं। करण में तृतीया विभक्ति होती है।

उसकी पहचान 'से' या 'के द्वारा' है। 'रामः हस्तेन लिखति' यहाँ राम 'हाथ से' अपना कार्य पूरा कर रहा है, अतः हाथ करण है करण में तृतीया होती है।

विमर्श–आँख, कान, पैर, हाथ, दो होने के कारण इनका द्विवचनान्त प्रयोग होता है। 'अहं नेत्राभ्यां पश्यामि', बहुवचन में भी हो सकता है।

समीचन वाक्य–

(1) कृष्णः मुष्टिकया कंसम् अहन्।	कृष्ण ने मुक्के से कंस को मारा।
(2) यूयं कर्णाभ्यां (कर्णैः) प्रवचनं शृणुत।	तुम सब कानों से प्रवचन सुनते हो।
(3) बालकः नेत्राभ्यां पश्यति।	बालक नेत्रों से देखता है।
(4) उद्यमेन कार्यं सिद्ध्यति।	परिश्रम से कार्य सिद्ध होता है।

संस्कृत में अनुवाद कीजिए–

1. तुम लोग हाथ से कार्य करो। 2. कृषक बैलों से हल जोतते हैं। 3. हम लोग गेंद से खेलते हैं। 4. वे जल से सींचते हैं। 5. लड़कियाँ स्वर से गाती हैं। 6. लड़के पैरों से गेंद खेलते हैं। 7. मोहन कानों से बहरा है। 8. हम पुस्तक से पढ़ते हैं। 9. रामायण से पुण्य होता है। 10. महाभारत से मोक्ष प्राप्त होता है।

करण कारक (विशेष नियम)

नियम 1. साथ अर्थ वाले, समं, साकं, सार्धं, सह के योग में अप्रधान में तृतीया होती है। रमेशेन सह रामः प्रयाति। रमेश के साथ राम जाता है।

नियम 2. अङ्गविकार जिस अङ्ग द्वारा प्रतीत हो उसमें तृतीया होती है। जैसे– सः कर्णाभ्यां बधिरः, वह कानों से बहरा है।

नियम 3. पृथक्, विना, नाना, के योग में तृतीया होती है। जैसे– रामेण विना न जीवामि।

समीचीन वाक्य

1. सः बालकेन सह विद्यालयं गच्छति।	वह बालक के साथ विद्यालय जाता है।
2. रामः पादेन खञ्जः।	राम पैर से लंगड़ा है।
3. पुस्तकेन विना ज्ञानं नास्ति।	पुस्तक के बिना ज्ञान नहीं है।

संस्कृत में अनुवाद

1. मैं राम के साथ विद्यालय जाऊँगा। 2. सज्जनों के साथ प्रेम करो। 3. युधिष्ठिर के साथ पाण्डव भी वन गये। 4. झूठ बोलने से अपमान होता है। 5. यह चालक आँख से अंधा है। 6. हम रेल से भ्रमण करेंगे। 7. पुत्री के बिना घर सूना है। 8. विवेक के बिना जीवन ठीक नहीं होता। 9. हम लोगों को परिश्रम से खेलना चाहिए। 10. वह स्वभाव से सुन्दर है।

4. सम्प्रदान कारक (चतुर्थी विभक्ति)

जब कोई वस्तु किसी को सर्वदा के लिए दी जाय, तो प्राप्तकर्ता सम्प्रदान होता है, एवं उसमें चतुर्थी विभक्ति होती है।

जैसे– राजा विप्राय धनं ददाति। यहाँ 'विप्र' सम्प्रदान है, अतः सम्प्रदान में चतुर्थी का प्रयोग हुआ है।

सदा के लिए कोई वस्तु देना सम्प्रदान है – शिक्षकः छात्राय पुरस्कारं ददाति।

'रजकाय वस्त्रं ददाति' क्योंकि वस्त्र देकर वापस लेते हैं। अतः चतुर्थी नहीं प्रत्युत 'रजकस्य वस्त्रं ददाति' साधु होगा।

समीचीन वाक्य

1. मोहनः रामाय फलं ददाति।	मोहन राम के लिए फल देता है।
2. त्वं भगिन्यै जलम् आनय।	तुम बहन के लिए जल लाओ।
3. नदी परोपकाराय प्रवहति।	नदी परोपकार के लिए बहती है।
4. अहं कस्मै भोजनं ददामि।	मैं भोजन किसे देता हूँ।

संस्कृत में अनुवाद कीजिए–

1. तुम श्याम को पैसे दो। 2. प्यासे को पानी देना चाहिए। 3. पिता बालक के लिए फल लाता है। 4.खिलाड़ी देश के लिए क्रिकेट खेलते हैं। 5. अधिकारी कर्मचारी को पुरस्कृत करता है। 6. तुम मुझे लेखनी दो। 7. वह माँ के लिए कपड़े लाया। 8. हम भूखे को भोजन देंगे। 9. पाश्चात्त्य धन के लिए पढ़ते हैं। 10. भारतीय सेवा के लिए पढ़ते हैं।

चतुर्थी विभक्ति (विशेष नियम)

नियम 1. रुच् धातु के योग में प्रसन्न किए जाने वाले की सम्प्रदान संज्ञा होती है एवं उसमें चतुर्थी होती है।

जैसे– कृष्णाय मोदकं रोचते। कृष्ण को लड्डू अच्छा लगता है।

यहाँ 'कृष्ण' प्रसन्न किए जाने वाला है। अतः सम्प्रदान संज्ञा होकर चतुर्थी में कृष्णाय बनता है।

नियम 2. क्रुध् (क्रोध करना), द्रुह् (शत्रुता करना), ईर्ष्य (डाह करना), असूया (निन्दा करना) तथा इन अर्थ वाली अन्य धातुओं के योग में सम्प्रदान संज्ञा होती है, तथा सम्प्रदान में चतुर्थी होती है।

जैसे– 1. अध्यापकः छात्राय क्रुध्यति।

2. सीता रावणाय द्रुह्यति।

3. देवा राक्षसेभ्यः असूयन्ति।

चतुर्थी विभक्ति (उपपद के रूप में)

नियम 1. नमः, स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा, अलम्, वषट्, इन शब्दों के योग में चतुर्थी विभक्ति होती है।

जैसे–	1. शिवाय नमः।	शिव को नमस्कार है।
	2. राज्ञे स्वस्ति।	राजा का कल्याण हो।
	3. कृष्णाय स्वाहा।	कृष्ण के लिए स्वाहा।
	4. पितृभ्यः स्वधा।	पितरों के लिए स्वधा।
	5. छात्राय ओदनं रोचते।	छात्र को भात अच्छा लगता है।
	6. सः अग्रजाय ईर्ष्यति।	वह बड़े भाई से ईर्ष्या करता है।

संस्कृत में अनुवाद कीजिए–

1. रावण राम से ईर्ष्या करता है। 2. कृष्ण से वाणासुर द्रोह करता है। 3. छात्र पर क्रोध मत करो। 4. सज्जनों को शास्त्र अच्छा लगता है। 5. आपका कल्याण हो। 6. शिष्य गुरु को नमस्कार करते हैं। 7. तुम हमसे द्रोह करते हो। 8. बलभद्र को नमस्कार है। 9. सीता का कल्याण हो। 10. हमें पढ़ना अच्छा नहीं लगता है।

5. अपादान कारक (पञ्चमी विभक्ति + उपपद विभक्ति)

नियम 1. जिससे वस्तु का अलगाव हो उस कारक की अपादान संज्ञा होती है। अपादान में पञ्चमी विभक्ति होती है।

जैसे– वृक्षात् पत्रं पतति। पेड़ से पत्ता गिरता है।

यहाँ वृक्ष से पत्ते का अलगाव होने के कारण वृक्ष ध्रुव अपादान है और इसमें पञ्चमी विभक्ति का प्रयोग किया गया है।

नियम 2. भयार्थक एवं त्राणार्थक धातुओं के योग में 'भय हेतु' की अपादान संज्ञा होती है। अपादान में पञ्चमी विभक्ति होती है।

जैसे– गुरुः छात्रम् अज्ञानात् त्रायते। गुरु छात्र की अज्ञान से रक्षा करता है।

सः सर्पात् बिभेति। वह सर्प से डरता है।

नियम 3. वारणार्थक धातुओं के योग में जो इप्सित होता है उसकी अपादान संज्ञा होती है।

आरक्षकः चौरं कुमार्गात् वारयति। आरक्षक चोर को कुमार्ग से रोकता है।

विद्या पापात् निवारयति। विद्या पाप से बचाती है।

नियम 4. नियमपूर्वक विद्या स्वीकार करने में विद्याप्रदाता (प्रतिपादयिता) की अपादान संज्ञा होती है।

जैसे– उपाध्यायात् अधीते छात्रः। यहाँ उपाध्याय से नियमपूर्वक विद्या स्वीकार करने के कारण 'उपाध्याय' अपादान संज्ञक होकर, पञ्चमी में परिवर्तित होता है।

सतः अधीते। सज्जन से पढ़ता है।

पितुरधीते। पिता से पढ़ता है।

बालः गुरोः मीमांसां पठति। बालक गुरु से मीमांसा पढ़ता है।

पञ्चमी उपपद

नियम 1. अन्य, आरात्, इतर, ऋते, दिग्वाचक तथा कालवाचक शब्दों के योग में पञ्चमी विभक्ति होती है।

जैसे– नगरात् पूर्वं वनम् अस्ति। नगर से पूर्व वन है।

संस्कृत में अनुवाद कीजिए–

1. मैं गाँव से विद्यालय जाता हूँ। 2. तुम पेड़ से गिरते हो। 3. मैं यमुना से जल लाऊँगी। 4. आजकल चोर सिपाही से डरते हैं। 5. मैं गुरुजी से पढ़ता हूँ। 6. राम के अलावा मेरी कौन रक्षा करेगा। 7. प्राध्यापक छात्रों को महाविद्यालय से निकालते हैं। 8. धन के बिना जीवन नहीं है। 9. मेरे नगर से दूर यमुना नदी है। 10. चूहे बिल्ली से डरते हैं।

6. सम्बन्ध (षष्ठी विभक्ति)

नियम 1. कारक प्रातिपदिकार्थ से अतिरिक्त स्वस्वामिभाव इत्यादि सम्बन्ध शेष कहलाता है। शेष में षष्ठी विभक्ति होती है।

नोट – सम्बन्ध को कारक नहीं माना जाता है, क्योंकि क्रिया में सम्बन्ध का अन्वय नहीं होता है।

जहाँ सम्बन्ध प्रकट करना हो, वहाँ षष्ठी विभक्ति होती है।

सम्बन्धबोधक चिह्न हैं – का, के, की, रा, रे, री, ना, ने, नी, आदि। जैसे–रामस्य पुत्रः कुशः। यहाँ राम और कुश में सम्बन्ध दिखाया गया है।

नियम 2. तुल्यार्थक शब्दों, जैसे– तुल्य, सदृश, सम आदि के योग में षष्ठी या तृतीया विभक्ति होती है, विकल्प से।

मातुः मात्रा व सदृशः कोऽपि नास्ति।	माँ के समान कोई नहीं है।
जनकस्य जनकेन वा तुल्यः न कश्चित्।	पिता के समान कोई नहीं है।

समीचीन वाक्य

1. घटस्य जलं शीतलं भवति।	घड़े का जल ठंडा होता है।
2. भरतस्य पिता दशरथः आसीत्।	भरत के पिता दशरथ थे।
3. मम पुस्तकं कुत्र अस्ति।	मेरी पुस्तक कहाँ है।
4. शास्त्रस्य मर्यादां पालय।	शास्त्र की मर्यादा का पालन कीजिए।
5. रामः अध्ययनस्य हेतोः प्रयागे निवसति।	राम अध्ययन के लिए प्रयाग में रहता है।

संस्कृत में अनुवाद कीजिए–

1. रावण राम का शत्रु था। 2. वेदव्यास महाभारत के लेखक हैं। 3. दुष्टों की संगति नहीं करनी चाहिए। 4. तुमने अपनी सम्पत्ति दान कर दी। 5. कालिदास कुमारसंभवम् के लेखक थे। 6. भक्त शिव का ध्यान करता है। 7. गंगा का पानी धीरे-धीरे बहता है। 8. हमारा नाम शिवदास है। 9. गणेश जी जैसा कोई नहीं है। 10. गुरु के बिना ज्ञान नहीं होगा।

7. अधिकरण कारक (सप्तमी विभक्ति)

नियम 1. आधारोऽधिकरणम् – जो वस्तु जहाँ रहती है वह उसका आधार होता है या जिस स्थान में कार्य हो वह अधिकरण होता है। जैसे–मैं प्रयागराज में पढ़ता हूँ। अहं प्रयागराजे पठामि। यहाँ अध्ययन का कार्य प्रयागराज में हो रहा है।

नियम 2. स्नेह, आसक्ति, एवं सम्मान प्रदर्शित करने में सप्तमी होती है।

नियम 3. समूहवाचक शब्दों में तथा जिस समय या स्थान में कोई कार्य हो वहाँ सप्तमी होती है। जैसे–'कविषु वाल्मीकिः श्रेष्ठः' कवियों में वाल्मीकि श्रेष्ठ हैं। सर्वेन्द्रः द्वितीये दिवसे आगमिष्यति। सर्वेन्द्र दूसरे दिन आयेगा।

समीचीन वाक्य–

1. तडागे अरविन्दानि विकसन्ति।	तालाब में कमल खिलते हैं।
2. ते गङ्गायां स्नानं कुर्वन्ति।	वे गंगा में स्नान करते हैं।
3. मम भ्राता त्वयि स्निह्यति।	मेरा भाई तुम पर प्रेम करता है।
4. ईश्वरे भक्तिं कुर्यात्।	ईश्वर में भक्ति रखना चाहिए।
5. एतस्मिन् वर्षे वयं पठिष्यामः।	इस वर्ष हम पढ़ेंगे।

संस्कृत में अनुवाद कीजिए–

1. जंगलों में पशु रहते हैं। 2. अयोध्या में श्रीराम का मन्दिर है। 3. माता पुत्र पर स्नेह रखती है। 4. बगीचे में कोयल कूकती है। 5. हमारा जन्म भारत में हुआ। 6. देश में श्रद्धा होनी चाहिए। 7. पुराणों में भागवत श्रेष्ठ है। 8. इस वर्ष हमारे यहाँ रामलीला होगी। 9. भारत में सभी धर्म के लोग रहते हैं। 10. संसार में भारतवर्ष स्वर्ग है।

8. सम्बोधन (प्रथमा विभक्ति)

नियम 1. 'स्वाभिमुखीकृत्य ज्ञापनं सम्बोधनम्' – सम्बोधन में प्रथमा होती है।

जैसे–हे राम !, हे कृष्ण !, हे यादव !, हे हरे ! इत्यादि।

नियम 2. सर्वनाम में सम्बोधन नहीं होता है–

समीचीन वाक्य

1. भो पुत्र ! त्वं पठ।	हे पुत्र! तुम पढ़ो।
2. हे राम ! मां पाहि।	हे राम! मेरी रक्षा करो।
3. हे मातः ! रक्ष माम्।	हे माँ! मेरी रक्षा करो।

संस्कृत में अनुवाद कीजिए–

1. छात्रों ! श्रम से पढ़ो। 2. मित्र ! चित्र में क्या है ? 3. हे राम ! मेरी रक्षा करो। 4. गुरुदेव, आप सब जानते हैं। 5. भक्तों ! बैठ जाओ।

विभिन्न प्रयोगों के आधार पर अनुवाद के नियम

1. सर्वनाम का प्रयोग

1.	अस्माकं विद्यालयः कुत्र अस्ति ?	हमारा विद्यालय कहाँ है ?
2.	तस्य छात्रस्य नाम किम् ?	उस छात्र का क्या नाम है ?
3.	यस्य हृदये दया, सः सज्जनो भवति।	जिसके हृदय में दया है, वह सज्जन है।
4.	एतस्मै छात्राय पुस्तकं देहि।	इस छात्र को पुस्तक दो।
5.	तानि पुष्पाणि मह्यं ददातु।	वे पुष्प मुझे दो।
6.	तस्यां शताब्द्यां कः आसीत् ?	उस शताब्दी में कौन था ?
7.	कस्मिंश्चिद् ग्रामे निर्धनः आसीत् ?	किसी गाँव में निर्धन रहता था।
8.	कस्यचित् ग्रामस्य नाम 'विहारः' आसीत्।	किसी गाँव का नाम बिहार था।
9.	रामः तस्मै बालकाय फलं ददाति।	राम उस बालक को फल देता है।
10.	कस्यैचिद् बालिकायै ज्ञानं ददाति।	किसी बालिका के लिए ज्ञान देता है।

नियम 1. युष्मद् (तुम) अस्मद् (मैं) तद् (वह) एतद् (यह) इदम् (यह) अदस् (वह) किम् (कौन) यद् (जो) इत्यादि सर्वनाम हैं।

नियम 2. सर्वनाम का संज्ञा के स्थान पर प्रयोग होता है, अतः कारक, लिङ्ग और वचन विशेष्य के अनुसार होते हैं। यस्य छात्रस्य, तस्य देशस्य इत्यादि। इसी प्रकार सभी विभक्तियों में जानें।

नियम 3. किम् शब्द में 'चित्' एवं 'चन' प्रत्यय लगाकर किसी (अनजान) के अर्थ में विशेष्य के अनुसार प्रयोग होता है।

जैसे– कस्यचित् बालकस्य, कस्मिंश्चित् ग्रामे, कञ्चित् बालकम्।

कश्चन बालकः, काचित् बालिका, कयाचित् बालिकया। कस्यैचित् कथायै, कस्यचित् महाविद्यालयस्य, कस्मिंश्चित् विश्वविद्यालये।

इस प्रकार से विशेष्य विशेषण 'चित्' 'चन' प्रत्ययों का प्रयोग करके बना सकते हैं।

2. विशेषणों का प्रयोग

विशेषणों का प्रयोग विशेष्य के अनुसार होता है। विशेष्य के आधार पर लिंग, विभक्ति और वचन होते हैं।

यल्लिङ्गं यद्वचनं या च विभक्तिः विशेष्यस्य।

तल्लिङ्गं तद्वचनं सा च विभक्तिः विशेषणस्यापि।।

जैसे– 1. श्वेतः अश्वः, 2. पवित्रं जलम्, 3. शीतलायां छायायाम्, 4. उष्णेन जलेन, 5. निर्बलान् जनान्, 6. उत्तमः बालकः, 7. योद्धृणां जनानाम्, 8. कस्मैचित् देशाय।

3. उपसर्ग युक्त धातुओं का प्रयोग

नियम– उपसर्ग धातु में जुड़कर अर्थ परिवर्तन करते हैं। जैसे–

प्र + हरति = प्रहरति।

वि + हरति = विहरति।

सम् + हरति = संहरति।

आ + हरति = आहरति।

परि + हरति = परिहरति।

उपसर्गेण धात्वर्थो बलादन्यत्र नीयते।

प्रहाराहार-संहार-विहारपरिहारवत्।।

इसी तरह अन्य 22 उपसर्गों का प्रयोग करते हुए वाक्यों का निर्माण करें।

समीचीन वाक्य

1. रामः बाणेन रावणं प्रहरति।	राम बाण से रावण को मारते हैं।
2. सीता जनकपुरे विहरति।	सीता जनकपुर में विहार करती हैं।
3. कृष्णः दैत्यान् संहरति।	कृष्ण दैत्यों का संहार करते हैं।
4. सः जलम् आहरति।	वह जल लाता है।
5. बालः अवगुणं परिहरति।	बालक अवगुणों को छोड़ता है।

4. कृदन्त प्रयोग

'क्त्वा' एवं 'ल्यप्' प्रत्यय (पूर्वकालिक क्रिया)

नियम 1. प्रमुख क्रिया को करने के पहले जो क्रिया की जाती है, उसे पूर्वकालिक क्रिया कहते हैं। हिन्दी भाषा में ऐसी क्रियाओं में करके, या 'कर' जुड़ा होता है।

नियम 2. संस्कृत में 'करके' या 'कर' के अर्थ में 'क्त्वा' प्रत्यय जोड़ते हैं–

जैसे– पठ् + क्त्वा = पठित्वा = पढ़कर, लिखित्वा = लिखकर, हसित्वा = हँसकर इत्यादि।

नियम 3.–यदि धातु के पूर्व में उपसर्ग हो तो 'क्त्वा' को 'ल्यप्' कर देते हैं उसी पूर्वकालिक क्रिया के अर्थ में।

जैसे– उपविश्य = उप + विश् + क्त्वा – ल्यप् (बैठकर)
संगम्य = सम् + गम् + क्त्वा – ल्यप् (जाकर)
निर्गत्य = निर् + गम् + क्त्वा – ल्यप् (निकलकर)
संचित्य = सम् + चि + क्त्वा – ल्यप् (चुनकर)

'क्त्वा' एवं 'ल्यप्' प्रत्ययान्त अव्यय होते हैं, अतः इनके रूप नहीं चलते हैं।

समीचीन वाक्य

1. रामः खादित्वा प्रयागं गच्छति।	राम खाकर प्रयाग जाता है।
2. गुरुः उपदिश्य गृहमायाति।	गुरु उपदेश देकर घर आता है।
3. गुरुं प्रणम्य लिखति।	गुरु को प्रणाम करके लिखता है।
4. सः भोजनं कृत्वा शेते।	वह भोजन करके सोता है।

तुमुन् प्रत्यय (उत्तरकालिक क्रिया)

नियम 1. 'के लिए' इस अर्थ में 'तुमुन्' का प्रयोग किया जाता है।

ज्ञा + तुमुन् = ज्ञातुम्, हा + तुमुन् = हातुम्, गम् + तुम् = गन्तुम्

यहाँ ज्ञातुम् = जानने के लिए, हातुम् = छोड़ने के लिए, गन्तुम = जाने के लिए।

नियम 2. 'तुमुन्' प्रत्ययान्त शब्द अव्यय होते हैं। दोनों क्रियाओं का कर्ता एक होने पर ही 'तुमुन्' प्रत्यय होता है।

जैसे– सः पातुम् इच्छति। सः हातुम् इच्छति। रामः भोक्तुं प्रयाति। कृष्णः हासयितुं नृत्यति। रमा गातुं नृत्यति। इत्यादि।

'शतृ' एवं 'शानच्' प्रत्यय (वर्तमान कालिक)

नियम 1. जाता हुआ, हँसता हुआ, पढ़ता हुआ, इत्यादि अर्थ में शतृ एवं शानच् का प्रयोग होता है। शतृ शानच् प्रत्ययान्तों में लिङ्ग, वचन, एवं विभक्तियाँ होती हैं। 'शतृ' 'शानच्' प्रत्ययान्त विशेषण होते हैं। ये भविष्यत् काल में भी 'सत्' संज्ञक होकर प्रयुक्त होते हैं।

समीचीन वाक्य

1. रामः गच्छन् खादति।	राम जाता हुआ खाता है।
2. गीता गायन्ती नृत्यति।	गीता गाती हुई नाचती है।
3. रामः पठन् शेते।	राम पढ़ता हुआ सोता है।
4. सीता एधमाना वर्तते।	सीता बढ़ रही है।
5. गीता मोदमाना पठति।	गीता प्रसन्न होती हुई पढ़ती है।
6. रमेशः शयानः पठति।	रमेश सोते हुए पढ़ता है।

'क्त' एवं 'क्तवतु' प्रत्यय–भूतकालिक प्रत्यय

नियम 1. भूतकाल में 'क्त' एवं 'क्तवतु' प्रत्यय होते हैं।

'क्त' सामान्यतः कर्मवाच्य एवं भाववाच्य में होता है।

'क्तवतु' प्रत्यय केवल कर्तृवाच्य में होता है। इनके रूप तीनों लिङ्गों में चलते हैं।

जैसे– गम् + क्त = गतः पुंलिङ्ग में, 'गता' स्त्रीलिङ्ग में, 'गतम्' नपुंसकलिङ्ग में।

पठ् + क्त = 'पठितः' .... 'पठिता' .... 'पठितम्'

गम् + क्तवतु = 'गतवान्', पुंलिङ्ग में, 'गतवती' स्त्रीलिङ्ग, 'गतवत्' नपुंसकलिंग में।

हस् + क्तवतु = 'हसितवान्' पुंलिङ्ग में, 'हसितवती' स्त्रीलिङ्ग, 'हसितवत्' नपुंसकलिङ्ग में।

नोट–'क्त' प्रत्ययान्त शब्द रूप पुंलिङ्ग में रामवत्, स्त्रीलिङ्ग में रमावत्, नपुंसकलिङ्ग में जलवत्, चलेंगे।

'क्तवतु' प्रत्ययान्त शब्द रूप पुंलिङ्ग में गतवान्, गतवन्तौ, गतवन्तः, स्त्रीलिङ्ग में गतवती, गतवत्यौ, गतवत्यः, नपुंसकलिङ्ग में, गतवत् गतवती गतवन्ति, रूप चलते हैं।

इसी तरह अन्य रूपों का निर्माण करें।

समीचीन वाक्य

1. कृष्णेन जरासंधो हतः।	कृष्ण ने जरासंध को मारा।
2. बालकेन जलं पीतम्।	बालक ने जल पिया।
3. मया देहली दृष्टा।	मैंने दिल्ली देखा।
4. सः काशीं गतः, अथवा तेन काशी गता।	वह काशी गया।
5. सोहनः विश्वविद्यालयं गतवान्।	सोहन विश्वविद्यालय गया।

अभ्यास हेतु संस्कृत अनुवाद

1.	नदी के दोनों ओर आम के पेड़ हैं।	नदीम् उभयतः आम्रवृक्षाः सन्ति।
2.	अध्यापक छात्र से प्रश्न पूछता है।	अध्यापकः छात्रं प्रश्नं पृच्छति।
3.	देवदत्त स्वभाव से मधुर है।	देवदत्तः स्वभावेन मधुरः अस्ति।
4.	भगवान वैकुण्ठ में रहते हैं।	भगवान् वैकुण्ठम् अधिशेते।
5.	गुरु शिष्य पर क्रोध करता है।	गुरुः शिष्याय क्रुद्ध्यति।
6.	सीता राम के साथ वन में जाती है।	सीता रामेण सह वनं गच्छति।
7.	कुएँ का पानी ठण्डा होता है।	कूपस्य जलं शीतलं भवति।
8.	नदी कोस भर टेढ़ी है।	क्रोशं कुटिला नदी।
9.	छात्र पैर से लंगड़ा है।	छात्रः पादेन खञ्जः।
10.	गाँव के चारों ओर तालाब है।	ग्रामं परितः तडागः अस्ति।
11.	संस्कृत के कवियों में कालिदास श्रेष्ठ हैं।	संस्कृतकविषु कालिदासः श्रेष्ठः अस्ति।
12.	वह महीने भर निरन्तर पढ़ता है।	सः मासपर्यन्तं निरन्तरं पठति।
13.	मित्रों के साथ पढ़ने जाओ।	मित्रैः सह पठितुं गच्छ।
14.	वह घोड़े से गिर पड़ा।	सः अश्वात् अपतत्।
15.	भक्त हरि को भजता है।	भक्तः हरिं भजति।
16.	सिद्धार्थ कलम से लिखता है।	सिद्धार्थः लेखन्या लिखति।
17.	राजाओं में राम श्रेष्ठ हैं।	नृपेषु रामः श्रेष्ठः।
18.	ग्वाला गाय से दूध दुहता है।	गोपालः गां दुग्धं दोग्धि।
19.	तुम जल से मुख धोते हो।	त्वं जलेन मुखं प्रक्षालयसि।
20.	सुरेश आँख से काना है।	सुरेशः अक्ष्णा काणः अस्ति।
21.	गाँव के समीप विद्यालय है।	ग्रामं निकषा विद्यालयः अस्ति।
22.	पिता पुत्र पर क्रोध करता है।	पिता पुत्राय क्रुध्यति।

23. हिमालय से गंगा निकलती है। हिमालयात् गङ्गा प्रभवति।
24. सुरेश राम से पुस्तक माँगता है। सुरेशः रामं पुस्तकं याचते।
25. वह जल से हाथ धोता है। सः जलेन हस्तं प्रक्षालयति।
26. राम ने रावण को बाण से मारा। रामः रावणं बाणेन अहन्।
27. वह चोर से डरता है। सः चौराद् बिभेति।
28. मेरा मित्र कानों से बहरा है। मम मित्रं कर्णाभ्यां बधिरः।
29. गुरु को नमस्कार है। गुरवे नमः।
30. तुम लोग पत्र लिखोगे। यूयं पत्रं लिखिष्यथ।
31. बालिका चावल से खीर पकाती है। बालिका तण्डुलान् पायसं पचति।
32. मैं अपनी माता से फल माँगता हूँ। अहं स्वमातरं फलं याचे।
33. गणेश को लड्डू अच्छे लगते हैं। गणेशाय मोदकं रोचते।
34. सभी छात्र समय से विद्यालय जाते हैं। सर्वे छात्राः समयेन विद्यालयं गच्छन्ति।
35. विद्यालय के दोनों ओर वृक्ष हैं। विद्यालयम् उभयतः वृक्षाः सन्ति।
36. देवों को सामग्री अर्पित करो। देवेभ्यः सामग्रीं समर्पय।

■

2

कारक तथा विभक्ति

कारक – साधारणतः क्रिया से सम्बद्ध पद कारक कहलाते हैं– **'क्रियान्वयित्वं कारकत्वम्'** – यह कारक की परिभाषा है। इसे ठीक से समझने के लिए नीचे दिए वाक्य पर विचार करना होगा।

'वन से आकर पाण्डु के पुत्र अर्जुन ने धर्म-रक्षा के लिए कुरुक्षेत्र में कौरवों को बाण से मारा था।'

यहाँ मुख्य क्रिया पद 'मारना' है, शेष पदों का इसी पद से साक्षात् या परम्परया सम्बन्ध है। अतः ये सभी पद कारक कहलायेंगे। इन सभी क्रियाओं को करने वाला अर्जुन **कर्ता** है। क्रिया का प्रभाव जिस पर पड़ता है वह कर्म है, यहाँ कौरव **कर्म** कारक है। क्रिया की सिद्धि में सहायक बाण **करण** कारक है। धर्म की रक्षा के लिए कौरव मारे गए, अतः धर्मरक्षा **सम्प्रदान** कारक है। वन से आकर–यह **अपादान** कारक हुआ, और कुरुक्षेत्र **अधिकरण** कारक हुआ। यहाँ पाण्डु के पुत्र का सम्बन्ध मारना क्रिया से नहीं है अपितु कर्त्ता अर्जुन से है, अतः सम्बन्ध को कारक नहीं माना जाता। इस प्रकार छह कारक हैं–

कर्त्ता कर्म च करणं च सम्प्रदानं तथैव च।

अपादानमधिकरणं चेत्याहुः कारकाणि षट्।।

विभक्ति – कारकों का अर्थ जिसके द्वारा अभिव्यक्त होता है उसे विभक्ति कहते हैं। चूँकि कारक छह हैं अतः विभक्तियाँ भी छह होनी चाहिए किन्तु सम्बन्ध को लेकर विभक्तियों की संख्या कुल सात हैं, जिसे इस प्रकार प्रदर्शित किया जा सकता है–

कारक के चिह्न

विभक्ति	कारक	चिह्न
प्रथमा	कर्ता	ने
द्वितीया	कर्म	को
तृतीया	करण	से (के द्वारा)
चतुर्थी	सम्प्रदान	के लिए
पञ्चमी	अपादान	से (अलगाव)
षष्ठी	सम्बन्ध	का, के, की, रा, रे, री, ना, ने, नी
सप्तमी	अधिकरण	में, पर
प्रथमा	सम्बोधन	हे, भो, अये, अरे

चतुर्थी विभक्ति (सम्प्रदान कारक)

नियम 1. कर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानम् – दान कर्म के द्वारा जिसे भोक्ता बनाया जाय, वह कारक सम्प्रदान संज्ञक होता है।

नियम 2. चतुर्थी सम्प्रदाने – सम्प्रदान कारक में चतुर्थी विभक्ति होती है।

विमर्शः– सम्प्रदान – 'सम्यक् प्रदीयते स्वाधिकारं समाप्य समर्प्यते यस्मै तत् सम्प्रदानम्' दी जाने वाली वस्तु पर अपना अधिकार छोड़ने के साथ प्राप्तकर्ता के अधिकार को स्थापित कर देना सम्प्रदान है।

'रजकस्य वस्त्रं ददाति' धोबी को वस्त्र देता है। इस वाक्य में दाता वस्त्र से अपने स्वामित्व को हटाता नहीं है क्योंकि वस्त्र धुलने के बाद वह स्वयं ग्रहण कर लेता है इसलिए 'दा' धातु का योग होने पर भी 'रजक' की सम्प्रदान संज्ञा नहीं होती, सम्प्रदान संज्ञा के अभाव में 'चतुर्थी सम्प्रदाने' से चतुर्थी भी नहीं होती। 'षष्ठी शेषे' से षष्ठी होकर 'रजकस्य वस्त्रं ददाति' बन जाता है।

उदाहरण– धनिकः विप्राय गां ददाति। धनिक ब्राह्मण को गाय देता है।

दाता निर्धनेभ्यः वस्त्राणि यच्छति। दानी निर्धनों को वस्त्र देता है।

नोट– उपर्युक्त वाक्यों में विप्राय एवं निर्धनेभ्यः, पदों की 'कर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानम्' से सम्प्रदान संज्ञा होती है। उन पदों में 'चतुर्थी सम्प्रदाने' से चतुर्थी विभक्ति होती है।

नियम 3. रुच्यर्थानां प्रीयमाणः– रुचि–अर्थ वाले धातुओं के प्रयोग में प्रीयमाण (प्रसन्न होने वाला) की सम्प्रदान संज्ञा होती है।

उदाहरण–	हरये रोचते भक्तिः।	हरि को भक्ति अच्छी लगती है।
	रामाय ओदनं रोचते।	राम को भात अच्छा लगता है।
	छात्राय अध्ययनं रोचते।	छात्र को पढ़ना अच्छा लगता है।
	मह्यं दुग्धं रोचते।	मुझे दूध अच्छा लगता है।

स्पष्टीकरण – 'हरये रोचते भक्तिः' हरि को भक्ति अच्छी लगती है, इसमें रुच् धातु के प्रयोग में प्रीयमाण अर्थात् प्रसन्न होने वाला हरि है, अतः हरि की 'रुच्यर्थानां प्रीयमाणः' से सम्प्रदान संज्ञा होकर 'चतुर्थी सम्प्रदाने' से चतुर्थी विभक्ति होती है।

नियम 4. क्रुधद्रुहेर्ष्यासूयार्थानां यं प्रति कोपः– क्रुध–द्रुह–ईर्ष्या एवं असूया धातुओं तथा इन्हीं अर्थों वाली अन्य धातुओं के योग में जिसके प्रति कोप किया जाय उसकी सम्प्रदान संज्ञा होती है।

उदाहरण–	आरक्षकः चौराय क्रुध्यति।	सिपाही चोर पर क्रोध करता है।
	बालकः मित्राय द्रुहयति।	बालक मित्र से द्रोह करता है।
	मोहनः भार्यायै ईर्ष्यति।	मोहन भार्या से ईर्ष्या करता है।

अहं गुरवे न असूयामि।	मैं गुरु में दोष नहीं निकालता हूँ।
अनुजः अग्रजाय कुप्यति।	छोटा भाई बड़े भाई पर नाराज होता है।
गुरुः शिष्याय कुप्यति।	गुरु शिष्य पर क्रोध करता है।
दुष्टः सज्जनाय ईर्ष्यति।	दुष्ट सज्जन से ईर्ष्या करता है।

स्पष्टीकरण – यहाँ 'क्रुध्–द्रुह्-ईर्ष्यासूयार्थानां यं प्रति कोपः' सूत्र से क्रुध्, द्रुह्, ईर्ष्य्, असूय् आदि धातुओं का योग होने से क्रोध के विषय 'चोर' की सम्प्रदान संज्ञा हुई एवं 'चतुर्थी सम्प्रदाने' से चतुर्थी विभक्ति का प्रयोग हुआ।

नियम 5. स्पृहेरीप्सितः– 'स्पृह्' धातु के प्रयोग में ईप्सित (इष्ट वस्तु) की सम्प्रदान संज्ञा होती है। स्पृह् धातु का अर्थ चाहना होता है।

उदाहरण– रामः धनाय स्पृहयति। राम धन को चाहता है।

स्पष्टीकरण– 'रामः धनाय स्पृहयति' इस वाक्य में स्पृहा का विषय 'धन' है अतः 'धन' की 'स्पृहेरीप्सितः' से सम्प्रदान संज्ञा होकर 'चतुर्थी संप्रदाने' से चतुर्थी होकर रामः धनाय स्पृहयति बनता है।

नियम 6. नमः स्वस्तिस्वाहास्वधाऽलंवषड्योगाच्च

नमः-स्वस्ति-स्वाहा-स्वधा-अलम्-वषट् से युक्त शब्दों में चतुर्थी विभक्ति होती है।

जैसे– गुरवे नमः।	गुरु के लिए नमस्कार है।
शंकराय नमः।	शंकर जी को नमस्कार है।
पुत्राय स्वस्ति।	पुत्र का कल्याण हो।
रामाय स्वाहा।	राम के लिए स्वाहा। (आहुति दी जाती है।)
पितृभ्यः स्वधा।	पितरों के लिए स्वधा। (कव्य दिया जाता है।)
हरिः दैत्येभ्यः अलम्।	हरि दैत्यों के लिए पर्याप्त है।
इन्द्राय वषट्।	इन्द्र को हवि दी जाती है।

नोट– नमः (नमस्कार) स्वस्ति (कल्याण) स्वाहा (देवों को उद्देश्य कर देना) स्वधा (पितरों को उद्देश्य कर देना) अलम् (पर्याप्त) वषट् (इन्द्र को उद्देश्य कर देना) यह इन शब्दों का अर्थ है। इनमें किसी का भी योग किसी से होने पर साक्षात् चतुर्थी विभक्ति होती है। यह उपपदविभक्ति है।

पञ्चमी विभक्ति (अपादान कारक)

नियम 1. ध्रुवमपायेऽपादानम् – अपाय (विश्लेष) अर्थात् अलग होने अर्थ में ध्रुव (अवधिभूत) कारक की अपादान संज्ञा होती है।

नियम 2. अपादाने पञ्चमी – अपादान कारक में पञ्चमी विभक्ति होती है।

यथा–

रामः विद्यालयात् गच्छति।	राम विद्यालय से जाता है।
आकाशात् जलं पतति।	आकाश से जल गिरता है।
सः पर्वतात् पतति।	वह पर्वत से गिरता है।
सः चलतो वाहनात् पतति।	वह चलते हुए वाहन से गिरता है।

नोट– 'रामः विद्यालयात् गच्छति' यहाँ अवधिभूत विद्यालय है, अतः विद्यालय की 'ध्रुवमपायेऽपादानम्' से अपादान संज्ञा होकर 'अपादाने पंचमी' से पंचमी विभक्ति होकर 'विद्यालयात्' बन जाता है।

विशेष– ध्रुव-शब्द चल एवं अचल दोनों प्रकार का लिया जाता है, तभी 'धावतोऽश्वात् पतति' अर्थात् दौड़ते हुए घोड़े से गिरता है। इस प्रकार के उदाहरण सिद्ध होंगे।

नियम 3. जुगुप्सा-विराम-प्रमादार्थानामुपसंख्यानम्– जुगुप्सा (घृणा) विराम (रुकना), प्रमाद (आलस्य) अर्थ वाली धातुओं के प्रयोग में घृणा, विराम एवं प्रमाद के विषयभूत कारक की अपादान संज्ञा होती है।

उदाहरण–

पापात् जुगुप्सते	पाप से घृणा करता है।
पापात् विरमति	पाप से रुकता है।
धर्मात् प्रमाद्यति।	धर्म से प्रमाद करता है।
अनुशासनात् जुगुप्सते।	अनुशासन से घृणा करता है।

नियम 4. भीत्रार्थानां भयहेतुः– भय अर्थ वाली एवं रक्षणार्थक धातुओं के योग में भय के हेतु की अपादान संज्ञा होती है।

उदाहरण–

सर्पात् पुत्रं रक्षति।	सर्प से पुत्र की रक्षा करता है।
पुत्रः सिंहात् बिभेति।	पुत्र सिंह से डरता है।
पापाद् विरमति।	पाप करने से रोकता है।

नियम 5. आख्यातोपयोगे च – नियमपूर्वक विद्या स्वीकार करने में वक्ता (पढ़ाने वाले) की अपादान संज्ञा होती है।

सूत्र में आख्याता शब्द का अर्थ होता है, उपदेश करने वाला, वक्ता, प्रकृष्ट कथन करने वाला, 'उपयोगे' उपयोग शब्द का अर्थ 'नियमपूर्वक अध्ययन'।

उदाहरण–

सः गुरोः अध्ययनं करोति।	वह गुरु से अध्ययन करता है।
अहं गुरोः व्याकरणं पठामि।	मैं गुरु से व्याकरण पढ़ता हूँ।
सः उपाध्यायात् वेदमधीते।	वह गुरु से वेद पढ़ता है।

अपादान संज्ञक सभी प्रयोगों में 'अपादाने पञ्चमी' से पञ्चमी विभक्ति होगी।

षष्ठी विभक्ति

षष्ठी शेषे – कारक एवं प्रातिपदिकार्थ से भिन्न स्व-स्वामिभावादि सम्बन्ध शेष है। इस शेष अर्थ में षष्ठी विभक्ति होती है। षष्ठी कारक विभक्ति नहीं है। सम्बन्ध–सामान्य में इसका विधान किया जाता है। षष्ठी सम्बन्ध की विवक्षा होने पर की जाती है। सम्बन्ध अनेक हैं फिर भी चार प्रसिद्ध सम्बन्ध हैं–

उदाहरण–

1. स्वस्वामिभाव – साधोः धनम् (स्व–धन, स्वामी–साधु)
2. जन्यजनकभाव – पितुः पुत्रः (जन्य–पुत्र, जनक–पिता)
3. अवयवावयविभाव – यमुनायाः जलम् (अवयव–जल, अवयवी–यमुना)
4. स्थान्यादेशभाव – ब्रुवो वचि (ब्रू–स्थानी, वच्–आदेश)

नियम 2. षष्ठी हेतुप्रयोगे – हेतु शब्द का प्रयोग होने पर हेतु द्योत्य होने पर षष्ठी विभक्ति होती है।

उदाहरण–

सः भोजनस्य हेतोः निवसति।	वह भोजन के कारण रहता है।
सः सम्पत्तेः हेतोः सेवते।	वह सम्पत्ति के कारण सेवा करता है।
रामः व्यापारस्य हेतोः प्रयतते।	राम व्यापार के लिए प्रयत्न करता है।

नियम 3. क्तस्य च वर्तमाने – वर्तमान अर्थ में होने वाले 'क्त' प्रत्यय के योग में षष्ठी विभक्ति होती है।

उदाहरण–

राज्ञां मतो बुद्धः पूजितो वा।	राजा मुझे मानते है, जानते हैं, पूजते हैं।
सर्वेषाम् आदृतः गुरुः।	सबका सम्मानित गुरु।

नियम 4. षष्ठी चानादरे – जिसका अनादर करके कोई कार्य किया जाता है, उसमें षष्ठी या सप्तमी होती है। उदाहरण–

रुदतः शिशोः, रुदति वा शिशौ माता बहिरगच्छत्।

सप्तमी विभक्ति (अधिकरण कारक)

नियम 1. आधारोऽधिकरणम् – कर्तृनिष्ठ एवं कर्मनिष्ठ क्रिया के आधार की अधिकरण संज्ञा होती है।

नियम 2. सप्तम्यधिकरणे च – अधिकरण में सप्तमी विभक्ति होती है।

आधार – आधार तीन प्रकार का होता है– औपश्लेषिक, वैषयिक, अभिव्यापक।

औपश्लेषिक – संयोगादि संबंध के कारण आधेय के साथ संयोग, औपश्लेषिक है।

उदाहरण – रामः कटे आस्ते। यहाँ आसन क्रिया का आधार कटे हैं, अतः उसकी अधिकरण संज्ञा हुई और तब 'सप्तम्यधिकरणे च' से सप्तमी विभक्ति का प्रयोग हुआ।

वैषयिक – विषय से सम्बन्ध रखने वाला आधार वैषयिक है।

मोक्षे इच्छा अस्ति।	मोक्षविषयक इच्छा है।

अभिव्यापक– आधेय का जिसके साथ सर्वावयव सम्बन्ध हो वह अभिव्यापक होता है।

सर्वस्मिन् आत्मा अस्ति।	सभी में आत्मा है।
तिलेषु तैलम्।	तिलों में तेल।

कुशलः एवं निपुण शब्दों के योग में सप्तमी होती है।

मोहनः भागवते निपुणः।	मोहन भागवत में निपुण है।
रामः क्रीडने कुशलः।	राम खेल में कुशल है।

नियम 4. साध्वसाधुप्रयोगे च – साधु एवं असाधु शब्दों के योग में सप्तमी विभक्ति होती है।

उदाहरण–

कृष्णो मातरि साधुः।	कृष्ण माँ के लिए अच्छा है।
कृष्णो मातुलेऽसाधुः।	कृष्ण मामा के लिए ठीक नहीं है।

नियम 5. यतश्च निर्धारणम् – जाति, गुण, क्रिया या संज्ञा के द्वारा जब किसी वस्तु या व्यक्ति को अपने समुदाय से पृथक् करना हो वहाँ सप्तमी एवं षष्ठी विभक्ति होती है।

उदाहरण–

कवीनां कविषु वा वाल्मीकिः प्रथमः।	कवियों में वाल्मीकि प्रथम हैं।
नदीनां नदीषु वा गङ्गा श्रेष्ठा।	नदियों में गङ्गा श्रेष्ठ है।
बालकानां बालकेषु वा रमेशः उत्तमः।	बालकों में रमेश उत्तम है।
देवानां देवेषु वा गणेशः प्रथमपूज्यः।	देवों में गणेश जी प्रथम पूज्य हैं।

अभ्यासः

गुरवे रोचते भक्तिः।	गुरवे	सम्प्रदान	रुच्यर्थानां प्रीयमाणः
हितात् निवारयति।	हितात्	अपादान	वारणार्थानामीप्सितः
मनुष्याणां रघुः पटुतमः।	मनुष्याणाम्	षष्ठी	यतश्च निर्धारणम्
कविषु वाल्मीकिः श्रेष्ठः।	कविषु	सप्तमी	यतश्च निर्धारणम्
नर्मदा अमरकण्टकात् प्रभवति।	अमरकण्टकात्	पञ्चमी	भुवः प्रभवः
छात्रः गृहात् आयाति।	गृहात्	अपादान	ध्रुवमपायेऽपादानम्
नृपः बालकाय क्रुध्यति।	बालकाय	सम्प्रदान	क्रुधद्रुहेर्ष्यासूयार्थाο

वृक्षात् फलं पतति।	वृक्षात्	अपादान	ध्रुवमपायेऽपादनम्
गोषु कृष्णा बहुक्षीरा।	गोषु	सप्तमी	यतश्च निर्धारणम्
तस्मै रोचन्ते मोदकाः।	तस्मै	सम्प्रदान	रुच्यर्थानां प्रीयमाणः
बालकेषु मैत्रः पटुः।	बालकेषु	सप्तमी	यतश्च निर्धारणम्
गुरवे नमः।	गुरवे	चतुर्थी	नमःस्वस्तिस्वाहास्वधा0
वृक्षात् पत्राणि पतन्ति।	वृक्षात्	अपादान	ध्रुवमपायेऽपादानम्
मोदकं बालकेभ्यः रोचते।	बालकेभ्यः	सम्प्रदान	रुच्यर्थानां प्रीयमाणः
मोहनः वाहनात् पतति।	वाहनात्	अपादान	ध्रुवमपायेऽपादानम्
चौरात् बिभेति।	चौरात्	अपादान	भीत्रार्थानां भयहेतुः
गुरुः बालकाय क्रुध्यति।	बालकाय	सम्प्रदान	क्रुधद्रुहेर्ष्यासूयार्थानां यं प्रति कोपः
सोहनः पादेन खञ्जः।	पादेन	तृतीया	येनाङ्गविकारः
कविषु कालिदासः श्रेष्ठः।	कविषु	सप्तमी	यतश्च निर्धारणम्
निर्धनाय धनं ददाति।	निर्धनाय	चतुर्थी	चतुर्थी सम्प्रदाने
शिक्षकः शिष्याय क्रुध्यति।	शिष्याय	सम्प्रदान	क्रुधद्रुहेर्ष्यासूयार्थानां यं प्रति कोपः
चौरात् त्रायते।	चौरात्	अपादान	भीत्रार्थानां भयहेतुः
गुरवे नमः।	गुरवे	चतुर्थी	नमःस्वस्तिस्वाहास्वधा0
पापात् जुगुप्सते।	पापात्	अपादान	जुगुप्सा-विराम-प्रमादार्था0
रामाय नमः।	रामाय	चतुर्थी	नमःस्वस्तिस्वाहास्वधा0
विष्णवे नमः।	विष्णवे	चतुर्थी	नमःस्वस्ति-स्वाहास्वधा0
प्रजाभ्यः स्वस्ति।	प्रजाभ्यः	चतुर्थी	नमःस्वस्तिस्वाहास्वधा0
रावणः विमानात् भूमौ पतति।	विमानात्	अपादान	ध्रुवमपायेऽपादानम्
ब्राह्मणाय धनं ददाति।	ब्राह्मणाय	सम्प्रदान	कर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानम्
पुष्पेभ्यः स्पृहयति।	पुष्पेभ्यः	सम्प्रदान	स्पृहेरीप्सितः
सज्जनः सदा पापात् जुगुप्सते।	पापात्	पञ्चमी	जुगुप्साविरामप्रमादार्था0
कविषु भासः श्रेष्ठः।	कविषु	सप्तमी	यतश्च निर्धारणम्
साधु रामः पितरि।	पितरि	सप्तमी	साध्वसाधुप्रयोगे च
मित्राय मोदकं रोचते।	मित्राय	सम्प्रदान	रुच्यर्थानां प्रीयमाणः
गुरुः शिष्येषु स्निह्यति।	शिष्येषु	सप्तमी	सप्तम्यधिकरणे च
नेत्रेण काणः।	नेत्रेण	तृतीया	येनाङ्गविकारः
जनेभ्यः स्वस्ति।	जनेभ्यः	चतुर्थी	नमस्वस्तिस्वाहास्वधा0

शिक्षकात् अधीते।	शिक्षकात्	अपादान संज्ञा	आख्यातोपयोगे
गुरवे रोचते भक्तिः।	गुरवे	सम्प्रदान	रुच्यर्थानां प्रीयमाणः
धनात् जुगुप्सते।	धनात्	अपादान	जुगुप्सा-विराम-प्रमादार्था0
गां दोग्धि पयः।	गाम्	कर्म संज्ञा	अकथितं च
अक्ष्णा काणः।	अक्ष्णा	तृतीया	येनाङ्गविकारः
कृष्णं परितः गोपिकाः अतिष्ठन्।	कृष्णम्	द्वितीया	अभितः-परितः-समया0
बालकेषु गोविन्दः पटुतमः।	बालकेषु	सप्तमी	यतश्च निर्धारणम्
बालकाय मोदकाः रोचते।	बालकाय	सम्प्रदान	रुच्यर्थानां प्रीयमाणः
क्रोशं कुटिला नदी।	क्रोशम्	द्वितीया	कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे
गवां कृष्णा बहुक्षीरा।	गवाम्	षष्ठी	यतश्च निर्धारणम्
महोदयाय नमः।	महोदयाय	चतुर्थी	नमः-स्वस्ति-स्वाहा-स्वधा0
जनाः राज्ञे करं ददति।	राज्ञे	चतुर्थी	चतुर्थी सम्प्रदाने
शिशुः सर्पात् बिभेति।	सर्पात्	अपादान	भीत्रार्थानां भयहेतुः

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. 'बालिका भुवि तिष्ठति' इस वाक्य में **भुवि** पद मे कौन-सी विभक्ति और वचन है ?
   (क) पञ्चमी, बहुवचन (ख) द्वितीया, एकवचन (ग) तृतीया, द्विवचन (घ) सप्तमी, एकवचन
2. 'बालकाय स्वस्ति' इस वाक्य के **बालकाय** पद में कौन-सी विभक्ति है ?
   (क) प्रथमा (ख) तृतीया (ग) चतुर्थी (घ) सप्तमी
3. 'पुष्पेभ्यः स्पृहयति' वाक्य में **'पुष्पेभ्यः'** में कौन-सी विभक्ति एवं वचन है ?
   (क) सप्तमी, एकवचन (ख) द्वितीया, बहुवचन (ग) चतुर्थी, बहुवचन (घ) षष्ठी, बहुवचन
4. 'नमः शिवाय' इस वाक्य का **शिवाय** पद में कौन-सी विभक्ति है ?
   (क) तृतीया (ख) चतुर्थी (ग) पञ्चमी (घ) षष्ठी
5. 'सीतायाः रामः प्रियः आसीत्' इस वाक्य में **सीतायाः** पद में कौन-सी विभक्ति है ?
   (क) चतुर्थी (ख) तृतीया (ग) षष्ठी (घ) इनमें से कोई नहीं
6. 'राजा विप्रेभ्यः धनं ददाति' इस वाक्य में **विप्रेभ्यः** पद में विभक्ति तथा वचन है–
   (क) तृतीया, बहुवचन (ख) द्वितीया, बहुवचन (ग) चतुर्थी, बहुवचन (घ) षष्ठी, बहुवचन
7. 'प्रजाभ्यः स्वस्ति' यहाँ **प्रजाभ्यः** पद में कौन-सी विभक्ति है ?
   (क) द्वितीया (ख) चतुर्थी (ग) तृतीया (घ) सप्तमी

8. 'बलिः याचकेभ्यः सर्वस्वं ददाति' यहाँ **याचकेभ्यः** इस रेखाङ्कित पद में विभक्ति है–
(क) तृतीया (ख) चतुर्थी (ग) सप्तमी (घ) द्वितीया

9. 'विष्णवे नमः' – इस वाक्य में **विष्णवे** पद में कौन-सी विभक्ति है ?
(क) षष्ठी (ख) चतुर्थी (ग) तृतीया (घ) द्वितीया

10. 'बालकः अश्वात् पतति'– इस वाक्य में **अश्वात्** पद में विभक्ति वचन है–
(क) तृतीया, एकवचन (ख) द्वितीया, द्विवचन (ग) पञ्चमी, एकवचन (घ) षष्ठी, बहुवचन

11. 'छात्रः अध्ययनस्य हेतोः निवसति'–वाक्य में प्रयुक्त **अध्ययनस्य** पद में विभक्ति तथा वचन हैं।
(क) तृतीया, द्विवचन (ख) चतुर्थी, बहुवचन (ग) षष्ठी, एकवचन (घ) पञ्चमी, एकवचन

12. 'बालकः सर्पाद् बिभेति' वाक्य में **सर्पाद्** पद में कौन-सी विभक्ति है ?
(क) तृतीया (ख) पञ्चमी (ग) द्वितीया (घ) इनमें से कोई नहीं

13. 'कवीनां कालिदासः श्रेष्ठः' इस वाक्य में **'कवीनाम्'** में विभक्ति वचन है–
(क) द्वितीया, बहुवचन (ख) षष्ठी, बहुवचन (ग) तृतीया, एकवचन (घ) पञ्चमी, द्विवचन

14. **'हरये रोचते भक्तिः'** इस वाक्य में **हरये** पद में कौन-सी विभक्ति है ?
(क) चतुर्थी (ख) प्रथमा (ग) पञ्चमी (घ) इनमें से कोई नहीं

15. 'गङ्गे! तव दर्शनात् मुक्तिः' इस वाक्य में **दर्शनात्** पद में कौन-सी विभक्ति है ?
(क) सप्तमी (ख) पञ्चमी (ग) प्रथमा (घ) इनमें से कोई नहीं

16. 'स्वस्ति भवते' वाक्य में **भवते** पद में विभक्ति है–
(क) षष्ठी (ख) द्वितीया (ग) चतुर्थी (घ) तृतीया

17. 'दुष्टः सज्जनाय द्रुह्यति' इस वाक्य में **सज्जनाय** पद में कौन-सी विभक्ति है ?
(क) द्वितीया (ख) तृतीया (ग) चतुर्थी (घ) पञ्चमी

18. 'मातुः निलीयते कृष्णः' इस वाक्य में **मातुः** पद में विभक्ति वचन है?
(क) तृतीया, एकवचन (ख) पञ्चमी, एकवचन (ग) चतुर्थी, एकवचन (घ) सप्तमी, एकवचन

19. 'पापात् विरमति' वाक्य के **'पापात्'** पद में विभक्ति और वचन है?
(क) द्वितीया, एकचन (ख) पञ्चमी, एकवचन (ग) चतुर्थी, एकवचन (घ) सप्तमी, एकवचन

20. 'नमो गुरुभ्यः' में **गुरुभ्यः** पद में कौन-सी विभक्ति है ?
(क) द्वितीया (ख) तृतीया (ग) चतुर्थी (घ) षष्ठी

3

समास

'समसनं समासः' अर्थात् अनेक पदों का एकीभूत होना समास है। 'समास' शब्द का शाब्दिक अर्थ है– संक्षेप। जब दो या दो से अधिक पद आपस में मिलकर एक नये पद का निर्माण करते हैं, तो वह समास होता है। समास होने के बाद विभक्तियों का लोप होकर एक नया पद बनता है। इस कारिका के द्वारा समास को समझाया गया है–

पदानां संगतार्थानां मिलितानां परस्परम्।
योऽयमेकपदीभावः समासः स प्रकीर्तितः।।

जैसे– कृष्णस्य सुतः = कृष्णसुतः
पीतम् अम्बरं यस्य सः = पीताम्बरः

बड़े भागों को छोटा करना ही समास का मुख्य लक्ष्य है।

विग्रह – 'वृत्त्यर्थावबोधकं वाक्यं विग्रहः'' वृत्ति के अर्थ को अभिव्यक्त करने वाले वाक्य को विग्रह कहा जाता है।

विग्रह वाक्य के द्वारा समास (वृत्ति) में आये हुए पदों को अलग-अलग करके अर्थ प्रकट किया जाता है।

जैसे–कृष्णसुतः, इस समस्त पद का विग्रह कृष्णस्य सुतः, पीताम्बरः इस समस्त पद का विग्रह पीतम् अम्बरं यस्य सः, इत्यादि। विग्रह भी दो प्रकार का होता है– लौकिक एवं अलौकिक।

लौकिक विग्रह – जो लोक में प्रयोग के योग्य होता है। जैसे– राजपुरुषः इसका विग्रह– राज्ञः पुरुषः, कृष्णसुतः इसका कृष्णस्य सुतः।

अलौकिक विग्रह – लोक में प्रयोग के अयोग्य मात्र शास्त्रीय प्रक्रिया के निर्वाहक वाक्य को अलौकिक विग्रह कहते हैं।

जैसे– राजपुरुषः का अलौकिक विग्रह – 'राजन् ङस् पुरुष सु' कृष्णसुतः का अलौकिक विग्रह कृष्ण ङस् सुत सु।

समास के प्रकार

''समासः पञ्चधा'' समास पाँच प्रकार का होता है–

1. केवलसमास
2. अव्ययीभाव समास
3. तत्पुरुष समास
4. बहुव्रीहि समास
5. द्वन्द्व समास

सामान्य रूप से समास छह प्रकार का होता है, किन्तु सिद्धान्त पक्ष में पाँच ही प्रकार हैं।

1. अव्ययीभाव समास
2. तत्पुरुष समास
3. कर्मधारय समास
4. द्विगुसमास
5. बहुव्रीहि समास
6. द्वन्द्व समास

पाठ्क्रम के अनुसार हमें अव्ययीभाव, द्विगु एवं द्वन्द्व समासों का अध्ययन करना है।

1. अव्ययीभाव समास

'पूर्वपदार्थप्रधानोऽव्ययीभावः' जिस समास में पूर्व पदार्थ प्रधान हो तथा प्रायः अव्यय हो, उसे अव्ययीभाव समास कहते हैं।

नोट – इसका पूर्व पद प्रायः अव्यय होता है, दूसरा पद संज्ञा होता है। सम्पूर्ण पद क्रिया-विशेषण होकर अव्यय के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। अव्ययीभाव समास अव्यय होकर नपुंसकलिङ्ग हो जाता है।

यह नित्य समास होता है। अविग्रहोऽस्वपदविग्रहो वा नित्यसमासः।

समस्त पद	**समास विग्रह**	**हिन्दी अर्थ**
अधिहरि	हरौ इति	हरि के अधीन
उपनगरम्	नगरस्य समीपम्	नगर के पास
निर्मक्षिकम्	मक्षिकाणाम् अभावः	मक्खियों का अभाव
अतिहिमम्	हिमस्य अत्ययः	हिम का नाश
प्रतिमासम्	मासं मासं प्रति	प्रत्येक मास

नियम (1) 'अव्ययं विभक्ति-समीप-समृद्धि-व्यृद्धि-अर्थाभाव-अत्यय-असम्प्रति-शब्दप्रादुर्भाव-पश्चाद्-यथानुपूर्व्य-यौगपद्य-सादृश्य-सम्पत्ति-साकल्यान्तवचनेषु'–

अव्यय का इन 16 अर्थों में वर्तमान सुबन्त के साथ समास हो।

जैसे–

समस्त पद	**विग्रह**	**अर्थ**	**सूत्र के अनुसार अव्यय का अर्थ**
अधिहरि	हरौ इति	हरि के अधीन	विभक्ति के अर्थ में
सुमद्रम्	मद्राणां समृद्धिः	मद्रों की समृद्धि	समृद्धि अर्थ में
उपरामम्	रामस्य समीपम्	राम के समीप	समीप अर्थ में

दुर्यवनम्	यवनानां व्यृद्धिः	यवनों की अवनति	व्यृद्धि अर्थ में
निर्विघ्नम्	विघ्नानाम् अभावः	विघ्नों का अभाव	अभाव अर्थ में
निष्प्राणम्	प्राणानाम् अभावः	प्राणों का अभाव	अभाव अर्थ में
अतिहिमम्	हिमस्य अत्ययः	हिम का नाश	अत्यय (नाश) अर्थ में
अतिनिद्रम्	निद्रा सम्प्रति न युज्यते	इस समय सोना उचित नहीं है	असम्प्रति अर्थ में
इतिहरि	हरिशब्दस्य प्रकाशः	हरि शब्द का प्रकाश	प्रकाश अर्थ में
इतिकपि	कपिशब्दस्य प्रकाशः	कपि शब्द का प्रकाश	प्रकाश अर्थ में
अनुकृष्णम्	कृष्णस्य पश्चात्	कृष्ण के पीछे	पश्चात् अर्थ में
अनुलक्ष्मणम्	लक्ष्मणस्य पश्चात्	लक्ष्मण के पीछे	पश्चात् अर्थ में
अनुरूपम्	रूपस्य योग्यम्	रूप के योग्य	यथार्थ योग्यता अर्थ में
प्रत्येकम्	एकम् एकं प्रति	प्रति एक	यथार्थ वीप्सा अर्थ में
प्रतिमासम्	मासं मासं प्रति	प्रति मास	यथार्थ वीप्सा अर्थ में
यथाशक्ति	शक्तिम् अनतिक्रम्य	शक्ति के अनुसार	अनतिक्रम्य अर्थ में
यथासम्भवम्	सम्भवम् अनतिक्रम्य	सम्भावना के अनुसार	अनतिक्रम्य अर्थ में
अनुज्येष्ठम्	ज्येष्ठस्य आनुपूर्व्येण	ज्येष्ठ क्रम के अनुसार	आनुपूर्व्य (क्रम) अर्थ में
सचक्रम	चक्रेण युगपत्	चक्र के साथ साथ	यौगपद्य अर्थ में
सच्छत्रम्	छत्रेण युगपत्	छत्र के साथ साथ	यौगपद्य अर्थ में
सहरि	हरेः सादृश्यम्	हरि के समान	सादृश्य अर्थ में
समति	मतेः सादृश्यम्	मति से समान	सादृश्य अर्थ में
सक्षत्रम्	क्षत्राणां सम्पत्तिः	क्षत्रियों की सम्पत्ति	सम्पत्ति अर्थ में
सतृणम्	तृणम् अपि अपरित्यज्य	तिनके को भी न छोड़कर	साकल्य अर्थ में
ससुन्दरकाण्डम्	सुन्दरकाण्डपर्यन्तम्	सुन्दरकाण्ड तक	पर्यन्त अर्थ में
अनुगुरु	गुरोः पश्चात्	गुरु के पीछे	पश्चात् अर्थ में

नियम (2) नदीभिश्च – नदीवाचक शब्दों के साथ संख्यावाचक शब्दों का समास होता है।

पञ्चनदम्	पञ्चानां नदीनां समाहारः	पांच नदियों का समाहार	नदी के अर्थ में
पञ्चगङ्गम्	पञ्चानां गङ्गानां समाहारः	पाँच गङ्गाओं का समाहार	नदी के अर्थ में
द्वियमुनम्	द्वयोः यमुनयोः समाहारः	दो यमुनाओं का समाहार	नदी के अर्थ में
द्विगोदावरम्	द्वयोः गोदावर्योः समाहारः	दो गोदावरियों का समाहार	नदी के अर्थ में
त्रिकावेरि	तिसृणां कावेरीणां समाहारः	तीन कावेरियों का समाहार	नदी के अर्थ में

नियम (3) अव्ययीभावे शरत्प्रभृतिभ्यः – शरद् आदि शब्दों से अव्ययीभाव समास में समासान्त 'टच्' (अ) प्रत्यय होता है।

उपशरदम्	शरदः–समीपम्	शरद के समीप
उपानसम्	अनसः–समीपम्	गाड़ी के समीप
उपमनसम्	मनसः–समीपम्	मन के समीप
उपचेतसम्	चेतसः–समीपम्	चित्त के समीप

नियम (4) अनश्च – 'अन्' अन्त से अव्ययीभाव में समास में 'टच्' प्रत्यय होता है।

नोट– जिस प्रातिपदिक के अन्त में 'अन्' हो वह अन्नन्त कहलाता है। जैसे– राजन्, आत्मन् आदि।

उपराजम्	राज्ञः समीपम्	राजा के पास
अध्यात्मम्	आत्मनि	आत्मा में

नियम (5) नपुंसकादन्यतरस्याम् – अन् है अन्त में जिसके ऐसे अन्नन्त नपुंसकलिंग से 'टच्' प्रत्यय विकल्प से होता है।

उपचर्मम्	चर्मणः समीपम्	चर्म के समीप
उपकर्मम्	कर्मणः समीपम्	कर्म के समीप
उपदामम्	दाम्नः समीपम्	दाम (रस्सी) के समीप

2. द्विगु समास

संख्यापूर्वो द्विगुः – जब समानाधिकरण तत्पुरुष में प्रथम पद संख्यावाचक हो, तो उसे द्विगु समास कहते हैं। 'कर्मधारयभेदो द्विगुः' यह कर्मधारय का भेद माना जाता है। इस समास में विग्रह करने पर समाहार (समूह) का बोध होता है। यथा–

पञ्चगवम्	पञ्चानां गवां समाहारः	पाँच गायों का समूह
सहस्राब्दी	सहस्राणाम् अब्दानां समाहारः	हजार वर्षों का समूह
नवरात्रम्	नवानां रात्रीणां समाहारः	नव रात्रियों का समूह
द्विराष्ट्रम्	द्वयोः राष्ट्रयोः समाहारः	दो देशों का समूह
चतुर्युगम्	चतुर्ण्णां युगानां समाहारः	चार युगों का समूह
चतुष्पथम्	चतुर्ण्णां पथां समाहारः (चौराहा)	चार मार्गों का समूह
पञ्चतन्त्रम्	पञ्चानां तन्त्राणां समाहारः	पाँच तन्त्रों का समूह
पञ्चपात्रम्	पञ्चानां पात्राणां समाहारः	पाँच पात्रों का समूह
त्रिलोकी	त्रयाणां लोकानां समाहारः	तीन लोकों का समूह
त्रिवेणी	तिसृणां वेणीनां समाहारः	तीन जलधाराओं का समूह

3. द्वन्द्व समास

'द्वौ द्वौ मिलित्वा सहविवक्षावशात् एकक्रियान्वयीभवनं द्वन्द्वसमासः'।

जहाँ दो या अनेक पद सहविवक्षा के कारण अपनी प्रधानता बनाये रखते हुए एक क्रिया में अन्वित होते हैं, वहाँ द्वन्द्व समास होता है। यह समास विकल्प से होता है। 'चकारबहुलो द्वन्द्वः'।

नियम 1. चार्थे द्वन्द्वः– 'च' अर्थ में वर्तमान अनेक सुबन्तों का समास होता है, वह द्वन्द्व कहलाता है।

विमर्शः – 'चार्थे द्वन्द्वः' इस सूत्र में चकार के चार अर्थ होते हैं–

समुच्चय, अन्वाचय, इतरेतरयोग एवं समाहारः।

समुच्चयः– परस्परनिरपेक्षस्य अनेकस्य एकस्मिन् अन्वयः।

जैसे– ईश्वरं गुरुं च भजस्व। (इनमें असामर्थ्य के कारण समास नहीं)

अन्वाचयः– अन्यतरस्य आनुषङ्गिकत्वेन अन्वयः।

जैसे– भिक्षाम् अट, गां च आनय (असामर्थ्य के कारण समास नहीं)

इतरेतरयोगः – मिलितानाम् अन्वयः। (समास होता है)

जैसे– धवखदिरौ छिन्धि।

समाहारः – समाहरणं समाहारः। (समास होता है।)

जहाँ सभी पदार्थों की अवयवगत संख्या छिप जाय या समाप्त हो जाय एवं समुदाय की संख्या बनी रहे, उस समूह को समाहार कहते है।

जैसे– संज्ञापरिभाषम्।

अतः समुच्चयार्थक, अन्वाचयार्थक च के साथ समास नहीं होता, शेष इतरेतरयोग, एवं समाहार अर्थ में ही समास होता है। एकशेष भी द्वन्द्व समास होता है।

(क) इतरेतरयोग द्वन्द्व – जहाँ दोनों पदों का अपना-अपना अस्तित्व होता है, वहाँ इतरेतरयोग द्वन्द्व होता है।

जैसे– **समस्त पद**	**समास विग्रह**	**हिन्दी अर्थ**
शिवकेशवौ	शिवश्च केशवश्च	शिव और केशव
शिवरामौ	शिवः च रामः च	शिव और राम
देवासुरौ	देवश्च असुरश्च	देव और असुर
भीमार्जुनौ	भीमश्च अर्जुनश्च	भीम और अर्जुन
हरिगुरू	हरिश्च गुरुश्च	हरि और गुरु
पार्वतीपरमेश्वरौ	पार्वती च परमेश्वरश्च	पार्वती और परमेश्वर
सज्जनदुर्जनौ	सज्जनश्च दुर्जनश्च	सज्जन और दुर्जन
रामसीते	रामश्च सीता च	राम और सीता
नकुलसहदेवौ	नकुलश्च सहदेवश्च	नकुल और सहदेव

(ख) समाहारद्वन्द्व – यहाँ न तो पूर्व पद प्रधान होगा न उत्तर पद प्रधान होगा अपितु दोनों के समाहार का प्राधान्य होगा।

समस्त पद	समास विग्रह	हिन्दी अर्थ
संज्ञापरिभाषम्	संज्ञा च परिभाषा च	संज्ञा एवं परिभाषा
दधिघृतम्	दधि च घृतम् च	दही और घी
अहिनकुलम्	अहिश्च नकुलश्च	सर्प और नेवला
गङ्गाशोणम्	गङ्गा च शोणश्च	गङ्गा और शोण
रथिकाश्वारोहम्	रथिकः च अश्वारोहः च	रथिक और अश्वारोही
भेरीपटहम्	भेरी च पटहश्च	भेरी और पटह
यूकालिक्षम्	यूका च लिक्षा च	यूका और लिक्षा

(ग) एकशेष द्वन्द्व – जहाँ दो या अधिक पदों का समास होने पर एक शेष होकर लुप्त हुए पदों के अर्थ का भी बोध होता है उसे एकशेष द्वन्द्व कहा जाता है।

समस्त पद	समास विग्रह	हिन्दी अर्थ
पितरौ	माता च पिता च	माता और पिता
रामाः	रामश्च रामश्च रामश्च	राम राम और राम (बहुवचन)

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. 'उपनगरम्' इत्यत्र कः विग्रहः कीदृशः ?
   (क) नगरस्य समीपम् (ख) नगरे उप (ग) उपस्य नगरम् (घ) कोऽपि न
2. 'प्रतिमासम्' इत्यस्य विग्रहो भवति।
   (क) मासं मासं प्रति (ख) मासेन मासम् (ग) मासाय प्रति (घ) एतेषु कोऽपि न
3. 'सुमद्रम्' इत्यत्र कस्मिन्नर्थे समासः ?
   (क) समृद्ध्यर्थे (ख) अभावे (ग) अव्यये (घ) अत्यये
4. 'निर्विघ्नम्' इत्यत्र कः समासः ?
   (क) द्विगुः (ख) द्वन्द्वः (ग) तत्पुरुषः (घ) अव्ययीभावः
5. 'अध्यात्मम्' इत्यस्य विग्रहः कः ?
   (क) आत्मनि इति (ख) आत्मनि (ग) आत्मनः च (घ) आत्मा अधि
6. 'उपकर्मम्' इत्यत्र कः समासः ?
   (क) द्विगुः (ख) तत्पुरुषः (ग) अव्ययीभावः (घ) प्रादितत्पुरुषः
7. संख्यापूर्वकः समासः कः ?
   (क) द्विगुः (ख) द्वन्द्वः (ग) बहुव्रीहिः (घ) तत्पुरुषः

8. 'पञ्चगवम्' अत्र कीदृशो विग्रहः ?
(क) पञ्चानां गवां समाहारः (ख) पञ्चसु गोः (ग) पञ्चम् अम् (घ) कोऽपि न

9. 'द्वियमुनम्' इत्यत्र कः समासः ?
(क) तत्पुरुषः (ख) द्विगुः (ग) द्वन्द्वः (घ) अव्ययीभावः

10. 'सहस्राब्दी' अत्र कः समासः ?
(क) द्विगुः (ख) द्वन्द्वः (ग) अव्ययीभावः (घ) कोऽपि न

11. 'अतिहिमम्' अस्य पदस्य को विग्रहः ?
(क) हिमस्य अत्ययः (ख) हिमस्य आधिक्यम् (ग) हिमस्य न्यूनता (घ) कोऽपि न

12. 'दुर्यवनम्' इत्यत्र कस्मिन् अर्थे समासः ?
(क) व्यृद्धिरित्यर्थे (ख) अभावे (ग) सादृश्ये (घ) यथार्थे

13. 'यथासंभवम्' अत्र कः समासः ?
(क) अव्ययीभावः (ख) द्वन्द्वः (ग) तत्पुरुषः (घ) द्विगुः

14. 'सतृणम्' अत्र कस्मिन् अर्थे समासः ?
(क) साकल्ये (ख) अभावे (ग) विभक्तौ (घ) अन्ते

15. 'अहिनकुलम्' अत्र कः समासः ?
(क) द्वन्द्वः (ख) तत्पुरुषः (ग) द्विगुः (घ) द्वन्द्वरहितः

16. 'पितरौ' इत्यस्य विग्रहो भवति।
(क) माता च पिता च (ख) मात्रा च पित्रा वा (ग) मातुः सह (घ) कोऽपि न

17. 'चार्थे द्वन्द्वः' इत्यत्र चकारार्थः कतिधः ?
(क) चतुर्विधः (ख) द्विविधः (ग) पञ्चविधः (घ) त्रिविधः

18. 'ईश्वरं गुरुं च भजस्व' उदाहरणम् अस्ति–
(क) समुच्चयस्य (ख) अन्वाचयस्य (ग) इतरेतरस्य (घ) कस्यापि न

19. 'अहिनकुलम्' इत्यत्र समासोऽस्ति।
(क) द्विगुः (ख) द्वन्द्वः (ग) तत्पुरुषः (घ) अव्ययीभावः

20. उभयपदार्थप्रधानः समासः कः ?
(क) द्विगुः (ख) अव्ययीभावः (ग) बहुव्रीहिः (घ) द्वन्द्वः

■

4

सन्धि

व्यञ्जन–सन्धि – व्यञ्जन के बाद स्वर अथवा व्यञ्जन आने पर, व्यञ्जन वर्ण में जो विकार (परिवर्तन) होता है, उसे व्यञ्जन सन्धि कहते हैं। पाणिनीय व्याकरण के अनुसार संस्कृत के समस्त व्यञ्जन 'हल्' प्रत्याहार के अन्तर्गत आते हैं, इसलिए व्यञ्जनों को हल् भी कहा जाता है। अतः व्यञ्जन सन्धि का दूसरा नाम हल् सन्धि भी है।

1. श्चुत्व सन्धि (स्तोः श्चुना श्चुः) – स् या तवर्ग (त्, थ्, द्, ध् न्) का श् या चवर्ग (च्, छ्, ज्, झ्, ञ्) के साथ (आगे या पीछे) योग होने पर, स् का श् तथा तवर्ग का चवर्ग में परिवर्तन हो जाता है।

उदाहरण–

मनस्	+ चलति	= मनश्चलति
सत्	+ चित्	= सच्चित्
हरिस्	+ शेते	= हरिश्शेते
सत्	+ जनः	= सज्जनः
शार्ङ्गिन्	+ जय	= शार्ङ्गिञ्जय
उत्	+ चारणम्	= उच्चारणम्
उत्	+ ज्वलम्	= उज्ज्वलम्
जगत्	+ जननी	= जगज्जननी

2. ष्टुत्व सन्धि (ष्टुना ष्टुः) – स् या त वर्ग (त्, थ्, द्, ध्, न्) का ष् या ट वर्ग (ट्, ठ, ड्, ढ्, ण्) के साथ (आगे या पीछे) योग होने पर स् का ष् तथा तवर्ग का टवर्ग में परिवर्तन हो जाता है।

उदाहरण–

रामस्	+ षष्ठः	= रामषष्ठः
हरिस्	+ टीकते	= हरिष्टीकते
तत्	+ टीका	= तट्टीका
उद्	+ डयनम्	= उड्डयनम्
कृष्	+ नः	= कृष्णः
दुष्	+ तः	= दुष्टः
आकृष्	+ तः	= आकृष्टः

3. जश्त्व सन्धि = झल् प्रत्याहार के वर्णों के स्थान पर जश् प्रत्याहार के वर्णों का हो जाना 'जश्त्व' कहलाता है। झल् प्रत्याहार में वर्गों के प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ वर्ण एवं ऊष्म (श् ष् स् ह्) वर्ण आते हैं। जश् प्रत्याहार में वर्गों के तृतीय वर्ण आते हैं।

झल् = क्, ख्, ग्, घ्, च्, छ्, ज्, झ्, ट्, ठ्, ड्, ढ्, त्, थ्, द्, ध्, प्, फ्, ब्, भ्, श्, ष्, स्, ह्

जश् = ग्, ज्, ड्, द्, ब्

अतः संक्षेप में वर्गों के प्रथम, द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ वर्णों के स्थान पर वर्ग का तीसरा वर्ण हो जाता है। ऊष्म वर्णों में ष् के स्थान पर ड् होता है। अन्य का उदाहरण प्रायः नहीं मिलता। यह जश्त्व दो स्थितियों में होता है।

1. पदान्त में – झलां जशोऽन्ते
2. झश् प्रत्याहार (वर्गों के तृतीय एवं चतुर्थ वर्ण) परे होने पर

(क) पदान्त जश्त्व सन्धि (झलां जशोऽन्ते) – यदि झल् प्रत्याहार का कोई वर्ण पद के अन्त में हो तो उसके स्थान पर जश्त्व हो जाता है। अथवा पदान्त में स्थित वर्गों के प्रथम, द्वितीय, तृतीय या चतुर्थ वर्ण के स्थान पर, वर्ग का तृतीय वर्ण हो जाता है।

जैसे– वाक् + ईशः (क् ग्) = वागीशः
जगत् + ईशः (त् द्) = जगदीशः
दिक् + अम्बरः (क् ग्) = दिगम्बरः
षट् + आननः (ट् ड्) = षडाननः

नोट – प्रातिपदिकों एवं धातुओं में क्रमशः सुप् एवं तिङ् प्रत्यय लगाने से पद बनता है।

(ख) अपदान्त जश्त्व सन्धि (झलां जश् झशि) – झल् प्रत्याहार के वर्ण के बाद यदि झश् प्रत्याहार का वर्ण हो, तो भी झल् के स्थान पर जश् हो जाता है। दूसरे शब्दों में वर्गों के प्रथम, द्वितीय, तृतीय, या चतुर्थ वर्ण के बाद यदि वर्गों का तृतीय या चतुर्थ वर्ण आये तो प्रथम, द्वितीय, तृतीय या चतुर्थ वर्ण के स्थान पर तृतीय वर्ण हो जाता है।

जैसे– क्रुध् + धः = क्रुद्धः
शुध् + धः = शुद्धः
लभ् + धम् = लब्धम्

4. चर्त्व सन्धि (खरि च) – खर् प्रत्याहार परे रहने पर झल् प्रत्याहार के स्थान पर चर् आदेश होता है। यदि वर्गों के प्रथम, द्वितीय, तृतीय या चतुर्थ वर्ण के बाद वर्गों का प्रथम, द्वितीय या ऊष्म (श्, ष्, स्, ह्) वर्ण आये तो प्रथम, द्वितीय, तृतीय या चतुर्थ वर्ण के स्थान पर अपने ही वर्ग का प्रथम वर्ण हो जाता है।

सद् + कारः (द् त्) = सत्कारः
दिग् + पालः (ग् क्) = दिक्पालः
सद् + पात्रम् (द् त्) = सत्पात्रम्

5. अनुस्वारसन्धि (मोऽनुस्वारः) – पदान्त 'म्' के बाद कोई भी व्यञ्जन आता है, तो 'म्' के स्थान पर अनुस्वार (ं) हो जाता है। उदाहरण–

हरिम् + वन्दे = हरिं वन्दे

रामम् + भजामि = रामं भजामि

त्वम् + करोषि = त्वं करोषि

6. परसवर्णसन्धि (अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः) – अनुस्वार (ं) के बाद श्, ष्, स्, ह् के अतिरिक्त कोई भी व्यञ्जन आये तो अनुस्वार के स्थान में परसवर्ण हो जाता है। सरल शब्दों में कहा जा सकता है कि अनुस्वार के बाद कोई भी वर्गीय व्यञ्जन (क् से लेकर म् तक) आये तो, अनुस्वार के स्थान में, आगे वाले वर्ण के वर्ग का पाँचवाँ अक्षर हो जाता है। अपदान्त में यह नित्य (हमेशा) तथा पदान्त मे विकल्प से होता है। (वा पदान्तस्य)

उदाहरण–

अं + कितः	= अङ्कितः		
सं + कल्पः	= सङ्कल्पः	अपदान्त होने पर नित्य अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः	
शां + तः	= शान्तः		
कुं + ठितः	= कुण्ठितः		
गं + गा	= गङ्गा		

पदान्त का उदाहण–

त्वं + करोषि	= त्वङ्करोषि	वा पदान्तस्य
त्वं करोषि		(विकल्प से)

7. लत्व सन्धि (तोर्लि) – यदि तवर्ग के किसी वर्ण के बाद ल् हो तो, तवर्ग के वर्ण के स्थान पर ल् हो जाता है। केवल न् के बाद ल् आने पर, न् के स्थान पर अनुनासिक ल् (लँ) होता है। लँ का आनुनासिक्य चिह्न पूर्व वर्ण पर पड़ता है।

उदाहरण– उद्	+ लिखितम्	= उल्लिखितम्	
उद्	+ लङ्घनम्	= उल्लङ्घनम्	
तत्	+ लीनः	= तल्लीनः	
उत्	+ लेखः	= उल्लेखः	
विद्वान्	+ लिखति	= विद्वाँल्लिखति	

विसर्गसन्धि – विसर्ग (:) के पश्चात् स्वर या व्यञ्जन वर्ण आने पर विसर्ग के स्थान पर होने वाले परिवर्तन (विकार) को विसर्ग सन्धि कहते हैं।

1. सत्व सन्धि – (विसर्जनीयस्य सः) यदि विसर्ग के बाद खर् प्रत्याहार के वर्ण (अर्थात् प्रत्येक वर्ग के प्रथम, द्वितीय वर्ण तथा श्, ष्, स्) हो तो विसर्ग (:) के स्थान पर स् हो जाता है।

बालकः + तरति = बालकस्तरति

इतः + ततः = इतस्ततः

निः + चल <u>सत्व सन्धि से</u> निस् + चल = निश्चलः

दुः + तरः = दुस्तरः

कः + चित्, <u>सत्व</u> कस् + चित् = कश्चित्

निः + सन्देहम् = निस्सन्देहम्
पुरः + कार = पुरस्कार
नमः + ते = नमस्ते

2. रुत्व सन्धि – (ससजुषो रुः) – पदान्त (पद के अन्त में स्थित) स् के स्थान पर रु हो जाता है। रु के उ का लोप हो जाने से केवल र् बचता है।

कविस् + अयम् (रुत्व) = कविरयम्
ऋषिस् + वदति (रुत्व) = ऋषिर्वदति
गुरोस् + धनम् (रुत्व) = गुरोर्धनम्
भानुस् + इह (रुत्व) = भानुरिह
गुरुस् + अत्र, (रुत्व) = गुरुरत्र

3. उत्व सन्धि – रु के स्थान पर उ हो जाने को उत्व सन्धि कहते हैं। यह उत्व निम्नलिखित दो प्रकार से (सूत्रों से) होता हैं।

(क) अतो रोरप्लुतादप्लुते – यदि रु के पूर्व एवं पश्चात् ह्रस्व अकार (अ) हो तो रु के स्थान पर उ हो जाता है। अर्थात् अ + रु + अ = अ + उ + अ

ध्यातव्य है कि अ + उ + अ ऐसी स्थिति होने पर प्रथम के अ + उ में गुण सन्धि होकर ओ प्राप्त होता है। पुनः ओ + अ ऐसी स्थिति में पूर्वरूप सन्धि होकर ओ(ऽ) प्राप्त होता है। जैसे–

शिवस् + अर्च्यः	देवस् + अपि
रुत्व होकर	रुत्व होकर
शिव रु अर्च्यः	देव + रु अपि
उत्व होकर	उत्व होकर
शिव उ अर्च्यः	देव उ अपि
गुण होने पर	गुण होने पर
शिवो अर्च्यः	देवो अपि
पूर्वरूप होने पर	पूर्व रूप होने पर
शिवोऽर्च्यः	देवोऽपि

(ख) हशि च – यदि रु के पूर्व अ (ह्रस्व अकार) तथा बाद में हश् प्रत्याहार (वर्गों के तृतीय, चतुर्थ और पञ्चम वर्ण एवं य्, व्, र् ल्, ह्) का कोई वर्ण हो तो रु के स्थान पर उ हो जाता है।

यहाँ भी उपर्युक्त की भाँति उत्व के बाद गुण होकर ओ प्राप्त होता है, किन्तु बाद में अ न होने के कारण पूर्व रूप नहीं हो पाता।

रामस् + नमति	शिवस् वन्द्यः
रुत्व होकर	रुत्व होकर
राम रु नमति	शिव रु वन्द्यः
उत्व होकर	उत्व होकर
राम उ नमति	शिव उ वन्द्यः

गुण होकर	गुण होकर
रामो नमति	शिवो वन्द्यः

4. र्लोप सन्धि (रोरि) – यदि र् के बाद र् हो तो पूर्व र् का लोप हो जाता है। जैसे– बालकार् रमन्ते = बालका रमन्ते।

5. लोप निमित्तक दीर्घ (ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः) – रोरि द्वारा जिस र् का लोप किया गया है, उसके ठीक पहले यदि अ, इ, उ इन तीनों में से कोई स्वर हो, तो उसको दीर्घ कर दिया जाता है।

उदाहरण–

हरिस् रम्यः	पुनर् रमते
रुत्व करने पर	'र' लोप करने पर
हरिर् रम्यः	पुन रमते
'र' लोप करने पर	लोप निमित्तक दीर्घ करने पर
हरि रम्यः	पुना रमते
लोप निमित्तिक दीर्घ करने पर	
हरी रम्यः	

6. खरवसानयोर्विसर्जनीयः – यदि र् पद के अन्त में आये अथवा र् के बाद खर् प्रत्याहार (वर्गों के प्रथम एवं द्वितीय वर्ण तथा श्, ष्, स्) का कोई वर्ण आये तो र् के स्थान में विसर्ग (:) हो जाता है।

रामस् खादति रुत्व रामर् खादति रामः खादति

पुनर् पृच्छति पुनः पृच्छति

7. वा शरि – यदि विसर्ग के बाद शर् प्रत्याहार (श्, ष्, स्) का कोई वर्ण हो तो, विसर्ग के स्थान पर विकल्प से स् होता है।

मुनिः + शेते मुनिस् शेते श्चुत्व मुनिश्शेते

रामः + षष्ठः रामस् षष्ठः ष्टुत्व रामष्षष्ठः

बहुविकल्पीयः प्रश्नः

1. 'तल्लयः' इत्यत्र केन सूत्रेण सन्धिः अभवत् ?
   (क) खरि च (ख) स्तोश्चुनाश्चुः (ग) तोर्लि (घ) आद्गुणः
2. विसर्गसन्धेः उदाहरणमस्ति–
   (क) मुनिरिति (ख) तच्चित्रम् (ग) परीक्षणम् (घ) तल्लयः
3. 'शान्तः' इत्यत्र किं सूत्रम् सन्धिम् अकरोत् ?
   (क) झलां जशोऽन्ते (ख) मोऽनुस्वारः (ग) अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः (घ) खरि च
4. 'हरिरिह' इत्यस्य सन्धिविच्छेदः.....
   (क) हरि + रिह (ख) हरिः + इह (ग) हरी + इह (घ) हरिः + रिह

5. 'सच्चरितम्' पदस्य सन्धि-विच्छेदः अस्ति–
(क) सच् + चरितम् (ख) सत्य + चरितम् (ग) सत् + चरितम् (घ) सच्चरि + तम्

6. 'रामष्टीकते' इति पदे केन सूत्रेण सन्धिः अभूत्–
(क) विसर्जनीयस्य सः (ख) खरि च (ग) स्तोश्चुना श्चुः (घ) ष्टुना ष्टुः

7. 'दिगम्बरः' पदस्य सन्धिविच्छेदः अस्ति–
(क) दिग् + अम्बरः (ख) दिक् + अम्बरः (ग) दिक + अम्बरः (घ) दिक + अम्बर

8. 'दिगम्बरः' पदे केन सूत्रेण सन्धिः भवति ?
(क) झलां जश् झशि (ख) झलां जशोऽन्ते (ग) खरि च (घ) तोर्लि

9. 'उच्चारणम्' इत्यत्र केन सूत्रेण सन्धिः भवति–
(क) ष्टुना ष्टुः (ख) वा शरि (ग) स्तोश्चुना श्चुः (घ) शात्

10. 'षडाननः' पदस्य विच्छेदः कः ?
(क) षड् + आननः (ख) षट् + आननः (ग) षड + आननः (घ) षडा + आननः

11. 'रामो गच्छति' इत्यत्र केन सूत्रेण सन्धिकार्यम् भवति ?
(क) अतो रोरप्लुतादप्लुते (ख) हशि च (ग) आद्गुणः (घ) मोऽनुस्वारः

12. सत्कारः इत्यत्र केन सूत्रेण सन्धिः अस्ति ?
(क) तोर्लि (ख) खरि च (ग) झलां जश् झशि (घ) हशि च

13. शिवस् + अर्च्यः = ?
(क) शिवार्च्यः (ख) शिवोऽर्च्यः (ग) शिवसर्च्यः (घ) शिवेऽर्च्यः

14. मुनिः + शेते इत्यस्य संधियुक्तं पदं किम् ?
(क) मुनिः शेते (ख) मुनिश्शेते (ग) (क) एवं (ख) (घ) न किमपि

15. 'हरिर् + रम्यः' इत्यस्य सन्धियुक्तं पदं किम् ?
(क) हरिर्रम्यः (ख) हरी रम्यः (ग) हरि + ऱरम्यः (घ) पूर्वोक्तेषु न किमपि

16. 'अङ्कितः' इत्यत्र केन सूत्रेण सन्धिः अभवत् ?
(क) मोऽनुस्वारः (ख) अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः (ग) हशि च (घ) झलां जशोऽन्ते

17. 'हरिस् + शेते' अत्र कः सन्धिः भविष्यति?
(क) श्चुत्वसन्धिः (ख) चर्त्वसन्धिः (ग) रुत्वसन्धिः (घ) ष्टुत्वसन्धिः

18. 'नमस्ते' अत्र कः सन्धिः
(क) विसर्जनीयस्य सः (ख) वा शरि (ग) ह्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः (घ) खरवसानयोर्विसर्जनीयः

19. 'रामर् + खादति = रामः खादति' इत्यत्र केन सूत्रेण रकारस्थाने विसर्गः अभवत्?
(क) विसर्जनीयस्य सः (ख) खरवसानयोर्विसर्जनीयः (ग) हशि च (घ) रोरि

■

5

शब्दरूप

नपुंसकलिङ्गः

1. 'गृह' (अकारान्त नपुंसकलिङ्गः)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	गृहम्	गृहे	गृहाणि
द्वितीया	गृहम्	गृहे	गृहाणि
तृतीया	गृहेण	गृहाभ्याम्	गृहैः
चतुर्थी	गृहाय	गृहाभ्याम्	गृहेभ्यः
पञ्चमी	गृहात्	गृहाभ्याम्	गृहेभ्यः
षष्ठी	गृहस्य	गृहयोः	गृहाणाम्
सप्तमी	गृहे	गृहयोः	गृहेषु
सम्बोधन	हे गृह !	हे गृहे !	हे गृहाणि !

2. 'वारि' (इकारान्त नपुंसकलिङ्गः)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	वारि	वारिणी	वारीणि
द्वितीया	वारि	वारिणी	वारीणि
तृतीया	वारिणा	वारिभ्याम्	वारिभिः
चतुर्थी	वारिणे	वारिभ्याम्	वारिभ्यः
पञ्चमी	वारिणः	वारिभ्याम्	वारिभ्यः
षष्ठी	वारिणः	वारिणोः	वारीणाम्
सप्तमी	वारिणि	वारिणोः	वारिषु
सम्बोधन	हे वारे ! / हे वारि !	हे वारिणी !	हे वारीणि !

3. 'दधि' (इकारान्त नपुंसकलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	दधि	दधिनी	दधीनि
द्वितीया	दधि	दधिनी	दधीनि
तृतीया	दध्ना	दधिभ्याम्	दधिभिः
चतुर्थी	दध्ने	दधिभ्याम्	दधिभ्यः
पञ्चमी	दध्नः	दधिभ्याम्	दधिभ्यः
षष्ठी	दध्नः	दध्नोः	दध्नाम्
सप्तमी	दध्नि/दधनि	दध्नोः	दधिषु
सम्बोधन	हे दधे !/हे दधि !	हे दधिनी !	हे दधीनि !

4. 'मधु' (उकारान्त नपुंसकलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	मधु	मधुनी	मधूनि
द्वितीया	मधु	मधुनी	मधूनि
तृतीया	मधुना	मधुभ्याम्	मधुभिः
चतुर्थी	मधुने	मधुभ्याम्	मधुभ्यः
पञ्चमी	मधुनः	मधुभ्याम्	मधुभ्यः
षष्ठी	मधुनः	मधुनोः	मधूनाम्
सप्तमी	मधुनि	मधुनोः	मधुषु
सम्बोधन	हे मधो !/हे मधु !	हे मधुनी !	हे मधूनि !

5. जगत् (तकारान्त नपुंसकलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	जगत्	जगती	जगन्ति
द्वितीया	जगत्	जगती	जगन्ति
तृतीया	जगता	जगद्भ्याम्	जगद्भिः
चतुर्थी	जगते	जगद्भ्याम्	जगद्भ्यः
पञ्चमी	जगतः	जगद्भ्याम्	जगद्भ्यः
षष्ठी	जगतः	जगतोः	जगताम्
सप्तमी	जगति	जगतोः	जगत्सु
सम्बोधन	हे जगत् !	हे जगती !	हे जगन्ति !

6. 'नामन्' (नकारान्त नपुंसकलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	नाम	नामनी/नाम्नी	नामानि

द्वितीया	नाम	नामनी/नाम्नी	नामानि
तृतीया	नाम्ना	नामभ्याम्	नामभिः
चतुर्थी	नाम्ने	नामभ्याम्	नामभ्यः
पञ्चमी	नाम्नः	नामभ्याम्	नामभ्यः
षष्ठी	नाम्नः	नाम्नोः	नाम्नाम्
सप्तमी	नाम्नि/नामनि	नाम्नोः	नामसु
सम्बोधन	हे नाम !/नामन् !	हे नाम्नी !/नामनी!	हे नामानि !

7. 'मनस्' (सकारान्त नपुंसकलिङ्ग)

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	मनः	मनसी	मनांसि
द्वितीया	मनः	मनसी	मनांसि
तृतीया	मनसा	मनोभ्याम्	मनोभिः
चतुर्थी	मनसे	मनोभ्याम्	मनोभ्यः
पञ्चमी	मनसः	मनोभ्याम्	मनोभ्यः
षष्ठी	मनसः	मनसोः	मनसाम्
सप्तमी	मनसि	मनसोः	मनस्सु/मनःसु
सम्बोधन	हे मनः !	हे मनसी !	हे मनांसि !

8. 'ब्रह्मन्' (नकारान्त नपुंसकलिंङ्ग)

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	ब्रह्म	ब्रह्मणी	ब्रह्माणि
द्वितीया	ब्रह्म	ब्रह्मणी	ब्रह्माणि
तृतीया	ब्रह्मणा	ब्रह्मभ्याम्	ब्रह्मभिः
चतुर्थी	ब्रह्मणे	ब्रह्मभ्याम्	ब्रह्मभ्यः
पञ्चमी	ब्रह्मणः	ब्रह्मभ्याम्	ब्रह्मभ्यः
षष्ठी	ब्रह्मणः	ब्रह्मणोः	ब्रह्मणाम्
सप्तमी	ब्रह्मणि	ब्रह्मणोः	ब्रह्मसु
सम्बोधन	हे ब्रह्मन् !	हे ब्रह्मणी !	हे ब्रह्माणि !

9. 'धनुस्' (सकारान्त नपुंसकलिङ्ग)

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	धनुः	धनुषी	धनूंषि
द्वितीया	धनुः	धनुषी	धनूंषि
तृतीया	धनुषा	धनुर्भ्याम्	धनुर्भिः
चतुर्थी	धनुषे	धनुर्भ्याम्	धनुर्भ्यः

पञ्चमी	धनुषः	धनुर्भ्याम्	धनुर्भ्यः
षष्ठी	धनुषः	धनुषोः	धनुषाम्
सप्तमी	धनुषि	धनुषोः	धनुष्षु, धनुःषु
सम्बोधन	हे धनुः !	हे धनुषी !	हे धनूंषि !

सर्वनाम

1. सर्व-सब (पुंलिङ्गः)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सर्वः	सर्वौ	सर्वे
द्वितीया	सर्वम्	सर्वौ	सर्वान्
तृतीया	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
चतुर्थी	सर्वस्मै	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
पञ्चमी	सर्वस्मात्	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
षष्ठी	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
सप्तमी	सर्वस्मिन्	सर्वयोः	सर्वेषु

सर्व (स्त्रीलिङ्गः)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सर्वा	सर्वे	सर्वाः
द्वितीया	सर्वाम्	सर्वे	सर्वाः
तृतीया	सर्वया	सर्वाभ्याम्	सर्वाभिः
चतुर्थी	सर्वस्यै	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
पञ्चमी	सर्वस्याः	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
षष्ठी	सर्वस्याः	सर्वयोः	सर्वासाम्
सप्तमी	सर्वस्याम्	सर्वयोः	सर्वासु

सर्व (नपुंसकलिङ्गः)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि
द्वितीया	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि
तृतीया	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
चतुर्थी	सर्वस्मै	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
पञ्चमी	सर्वस्मात्	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
षष्ठी	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
सप्तमी	सर्वस्मिन्	सर्वयोः	सर्वेषु

2. तद्–वह (पुंलिङ्ग:)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सः	तौ	ते
द्वितीया	तम्	तौ	तान्
तृतीया	तेन	ताभ्याम्	तैः
चतुर्थी	तस्मै	ताभ्याम्	तेभ्यः
पञ्चमी	तस्मात्	ताभ्याम्	तेभ्यः
षष्ठी	तस्य	तयोः	तेषाम्
सप्तमी	तस्मिन्	तयोः	तेषु

तद् (स्त्रीलिङ्ग:)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सा	ते	ताः
द्वितीया	ताम्	ते	ताः
तृतीया	तया	ताभ्याम्	ताभिः
चतुर्थी	तस्यै	ताभ्याम्	ताभ्यः
पञ्चमी	तस्याः	ताभ्याम्	ताभ्यः
षष्ठी	तस्याः	तयोः	तासाम्
सप्तमी	तस्याम्	तयोः	तासु

तद् (नपुंसकलिङ्ग:)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	तत्	ते	तानि
द्वितीया	तत्	ते	तानि
तृतीया	तेन	ताभ्याम्	तैः
चतुर्थी	तस्मै	ताभ्याम्	तेभ्यः
पञ्चमी	तस्मात्	ताभ्याम्	तेभ्यः
षष्ठी	तस्य	तयोः	तेषाम्
सप्तमी	तस्मिन्	तयोः	तेषु

3. यद्–जो (पुंलिङ्ग:)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	यः	यौ	ये
द्वितीया	यम्	यौ	यान्
तृतीया	येन	याभ्याम्	यैः

चतुर्थी	यस्मै	याभ्याम्	येभ्यः
पञ्चमी	यस्मात्	याभ्याम्	येभ्यः
षष्ठी	यस्य	ययोः	येषाम्
सप्तमी	यस्मिन्	ययोः	येषु

यद् (स्त्रीलिङ्ग)

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	या	ये	याः
द्वितीया	याम्	ये	याः
तृतीया	यया	याभ्याम्	याभिः
चतुर्थी	यस्यै	याभ्याम्	याभ्यः
पञ्चमी	यस्याः	याभ्याम्	याभ्यः
षष्ठी	यस्याः	ययोः	यासाम्
सप्तमी	यस्याम्	ययोः	यासु

यद् (नपुंसकलिङ्ग)

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	यत्	ये	यानि
द्वितीया	यत्	ये	यानि
तृतीया	येन	याभ्याम्	यैः
चतुर्थी	यस्मै	याभ्याम्	येभ्यः
पञ्चमी	यस्मात्	याभ्याम्	येभ्यः
षष्ठी	यस्य	ययोः	येषाम्
सप्तमी	यस्मिन्	ययोः	येषु

4. किम्–क्या, कौन (पुंलिङ्ग)

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	कः	कौ	के
द्वितीया	कम्	कौ	कान्
तृतीया	केन	काभ्याम्	कैः
चतुर्थी	कस्मै	काभ्याम्	केभ्यः
पञ्चमी	कस्मात्	काभ्याम्	केभ्यः
षष्ठी	कस्य	कयोः	केषाम्
सप्तमी	कस्मिन्	कयोः	केषु

किम् (स्त्रीलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	का	के	काः
द्वितीया	काम्	के	काः
तृतीया	कया	काभ्याम्	काभिः
चतुर्थी	कस्यै	काभ्याम्	काभ्यः
पञ्चमी	कस्याः	काभ्याम्	काभ्यः
षष्ठी	कस्याः	कयोः	कासाम्
सप्तमी	कस्याम्	कयोः	कासु

किम् (नपुंसकलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	किम्	के	कानि
द्वितीया	किम्	के	कानि
तृतीया	केन	काभ्याम्	कैः
चतुर्थी	कस्मै	काभ्याम्	केभ्यः
पञ्चमी	कस्मात्	काभ्याम्	केभ्यः
षष्ठी	कस्य	कयोः	केषाम्
सप्तमी	कस्मिन्	कयोः	केषु

5. युष्मद्– तुम (तीनों लिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	त्वम्	युवाम्	यूयम्
द्वितीया	त्वाम्/त्वा	युवाम्/वाम्	युष्मान्/वः
तृतीया	त्वया	युवाभ्याम्	युष्माभिः
चतुर्थी	तुभ्यम्/ते	युवाभ्याम्/वाम्	युष्मभ्यम्/वः
पञ्चमी	त्वत्	युवाभ्याम्	युष्मत्
षष्ठी	तव/ते	युवयोः/वाम्	युष्माकम्/वः
सप्तमी	त्वयि	युवयोः	युष्मासु

6. अस्मद्–मैं (तीनों लिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अहम्	आवाम्	वयम्
द्वितीया	माम्, मा	आवाम्, नौ	अस्मान्, नः
तृतीया	मया	आवाभ्याम्	अस्माभिः

चतुर्थी	मह्यम्, मे	आवाभ्याम्, नौ	अस्मभ्यम्, नः
पञ्चमी	मत्	आवाभ्याम्	अस्मत्
षष्ठी	मम, मे	आवयोः, नौ	अस्माकम्, नः
सप्तमी	मयि	आवयोः	अस्मासु

7. इदम्–यह (पुंलिङ्ग)

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	अयम्	इमौ	इमे
द्वितीया	इमम्, एनम्	इमौ, एनौ	इमान्, एनान्
तृतीया	अनेन, एनेन	आभ्याम्	एभिः
चतुर्थी	अस्मै	आभ्याम्	एभ्यः
पञ्चमी	अस्मात्	आभ्याम्	एभ्यः
षष्ठी	अस्य	अनयोः, एनयोः	एषाम्
सप्तमी	अस्मिन्	अनयोः, एनयोः	एषु

8. एतद्–यह (पुंलिङ्ग)

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	एषः	एतौ	एते
द्वितीया	एतम्, एनम्	एतौ, एनौ	एतान्, एनान्
तृतीया	एतेन, एनेन	एताभ्याम्	एतैः
चतुर्थी	एतस्मै	एताभ्याम्	एतेभ्यः
पञ्चमी	एतस्मात्	एताभ्याम्	एतेभ्यः
षष्ठी	एतस्य	एतयोः	एतेषाम्
सप्तमी	एतस्मिन्	एतयोः	एतेषु

एतत्–यह (स्त्रीलिङ्ग)

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	एषा	एते	एताः
द्वितीया	एताम्	एते	एताः
तृतीया	एतया	एताभ्याम्	एताभिः
चतुर्थी	एतस्यै	एताभ्याम्	एताभ्यः

पञ्चमी	एतस्याः	एताभ्याम्	एताभ्यः
षष्ठी	एतस्याः	एतयोः	एतासाम्
सप्तमी	एतस्याम्	एतयोः	एतासु

एतत्–यह (नपुंसकलिङ्ग)

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	एतत्-द्	एते	एतानि
द्वितीया	एतत्-द्	एते	एतानि
तृतीया	एतेन	एताभ्याम्	एतैः
चतुर्थी	एतस्मै	एताभ्याम्	एतेभ्यः
पञ्चमी	एतस्मात्-द्	एताभ्याम्	एतेभ्यः
षष्ठी	एतस्य	एतयोः	एतेषाम्
सप्तमी	एतस्मिन्	एतयोः	एतेषु

9. अदस्–वह (पुंलिङ्ग)

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	असौ	अमू	अमी
द्वितीया	अमुम्	अमू	अमून्
तृतीया	अमुना	अमूभ्याम्	अमीभिः
चतुर्थी	अमुष्मै	अमूभ्याम्	अमीभ्यः
पञ्चमी	अमुष्मात्	अमूभ्याम्	अमीभ्यः
षष्ठी	अमुष्य	अमुयोः	अमीषाम्
सप्तमी	अमुष्मिन्	अमुयोः	अमीषु

अदस्–वह (स्त्रीलिङ्ग)

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	असौ	अमू	अमूः
द्वितीया	अमुम्	अमू	अमूः
तृतीया	अमुया	अमूभ्याम्	अमूभिः
चतुर्थी	अमुष्यै	अमूभ्याम्	अमूभ्यः
पञ्चमी	अमुष्याः	अमूभ्याम्	अमूभ्यः

षष्ठी	अमुष्याः	अमुयोः	अमूषाम्
सप्तमी	अमुष्याम्	अमुयोः	अमूषु

अदस–वह (नपुंसकलिङ्गः)

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	अदः	अमू	अमूनि
द्वितीया	अदः	अमू	अमूनि
तृतीया	अमुना	अमूभ्याम्	अमीभिः
चतुर्थी	अमुष्मै	अमूभ्याम्	अमीभ्यः
पञ्चमी	अमुष्मात्-द्	अमूभ्याम्	अमीभ्यः
षष्ठी	अमुष्य	अमुयोः	अमीषाम्
सप्तमी	अमुष्मिन्	अमुयोः	अमीषु

10. भवत्–आप (पुंलिङ्गः)

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	भवान्	भवन्तौ	भवन्तः
द्वितीया	भवन्तम्	भवन्तौ	भवतः
तृतीया	भवता	भवद्भ्याम्	भवद्भिः
चतुर्थी	भवते	भवद्भ्याम्	भवद्भ्यः
पञ्चमी	भवतः	भवद्भ्याम्	भवद्भ्यः
षष्ठी	भवतः	भवतोः	भवताम्
सप्तमी	भवति	भवतोः	भवत्सु
सम्बोधन	हे भवन् !	हे भवन्तौ !	हे भवन्तः !

भवत्–आप (स्त्रीलिङ्गः)

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	भवती	भवत्यौ	भवत्यः
द्वितीया	भवतीम्	भवत्यौ	भवतीः
तृतीया	भवत्या	भवतीभ्याम्	भवतीभिः
चतुर्थी	भवत्यै	भवतीभ्याम्	भवतीभ्यः
पञ्चमी	भवत्याः	भवतीभ्याम्	भवतीभ्यः

षष्ठी	भवत्याः	भवत्योः	भवतीनाम्
सप्तमी	भवत्याम्	भवत्योः	भवतीषु
सम्बोधन	हे भवति !	हे भवत्यौ !	हे भवत्यः !

भवत् (नपुंसकलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	भवत्/भवद्	भवती	भवन्ति
द्वितीया	भवत्/भवद्	भवती	भवन्ति
तृतीया	भवता	भवद्भ्याम्	भवद्भिः
चतुर्थी	भवते	भवद्भ्याम्	भवद्भ्यः
पञ्चमी	भवतः	भवद्भ्याम्	भवद्भ्यः
षष्ठी	भवतः	भवतोः	भवताम्
सप्तमी	भवति	भवतोः	भवत्सु
सम्बोधन	हे भवत् !	हे भवती !	हे भवन्ति !

(ङ) एक से सौ तक के संख्यावाचक शब्द

1. एकः	2. द्वौ	3. त्रयः	4. चत्वारः
5. पञ्च	6. षट्	7. सप्त	8. अष्ट, अष्टौ
9. नव	10. दश	11. एकादश	12. द्वादश
13. त्रयोदश	14. चतुर्दश	15. पञ्चदश	16. षोडश
17. सप्तदश	18. अष्टादश	19. नवदश, एकोनविंशतिः, ऊनविंशति, एकान्नविंशति	
20. विंशतिः	21. एकविंशतिः	22. द्वाविंशतिः	23. त्रयोविंशतिः
24. चतुर्विंशतिः	25. पञ्चविंशतिः	26. षड्विंशतिः	27. सप्तविंशतिः
28. अष्टाविंशतिः	29. नवविंशतिः, एकोनत्रिंशत्, ऊनत्रिंशत्, एकान्नत्रिंशत्		
30. त्रिंशत्	31. एकत्रिंशत्	32. द्वात्रिंशत्	33. त्रयस्त्रिंशत्
34. चतुस्त्रिंशत्	35. पञ्चत्रिंशत्	36. षट्त्रिंशत्	37. सप्तत्रिंशत्
38. अष्टात्रिंशत्	39. नवत्रिंशत्, एकोनचत्वारिंशत्, ऊनचत्वारिंशत्, एकान्नचत्वारिंशत		
40. चत्वारिंशत्	41. एकचत्वारिंशत्	42. द्विचत्वारिंशत्	43. त्रिचत्वारिंशत्
44. चतुश्चत्वारिंशत्	45. पञ्चचत्वारिंशत्	46. षट्चत्वारिंशत्	47. सप्तचत्वारिंशत्
48. अष्टचत्वारिंशत्	49. नवचत्वारिंशत्, एकोनपञ्चाशत्, ऊनपञ्चाशत्, एकान्नपञ्चाशत्		

50. पञ्चाशत्	51. एकपञ्चाशत्	52. द्विपञ्चाशत्	53. त्रिपञ्चाशत्
54. चतुःपञ्चाशत्	55. पञ्चपञ्चाशत्	56. षट्पञ्चाशत्	57. सप्तपञ्चाशत्
58. अष्टपञ्चाशत्	59. नवपञ्चाशत्, एकोनषष्टि, ऊनषष्टि, एकान्नषष्टि		
60. षष्टिः	61. एकषष्टिः	62. द्विषष्टिः	63. त्रिषष्टिः
64. चतुष्षष्टिः	65. पञ्चषष्टिः	66. षट्षष्टिः	67. सप्तषष्टिः
68. अष्टषष्टिः	69. नवषष्टिः, एकोनसप्तति या ऊनसप्तति या एकान्नसप्तति		
70. सप्ततिः	71. एकसप्ततिः	72. द्विसप्ततिः	73. त्रिसप्ततिः
74. चतुःसप्ततिः	75. पञ्चसप्ततिः	76. षट्सप्ततिः	77. सप्तसप्ततिः
78. अष्टसप्ततिः	79. नवसप्ततिः, एकोनाशीति, ऊनाशीति या एकान्नशीति		
80. अशीतिः	81. एकाशीतिः	82. द्व्यशीतिः	83. त्र्यशीतिः
84. चतुरशीतिः	85. पञ्चाशीतिः	86. षडशीतिः	87. सप्ताशीतिः
88. अष्टाशीतिः	89. नवाशीतिः, एकोननवति, ऊननवति या एकान्ननवति		
90. नवतिः	91. एकनवतिः	92. द्विनवतिः	93. त्रिनवतिः
94. चतुर्नवतिः	95. पञ्चनवतिः	96. षण्णवतिः	97. सप्तनवतिः
98. अष्टनवतिः	99. नवनवतिः	100. शतम्।	

कति (पुंलिङ्ग, स्त्रीलिङ्ग, नपुंसकलिङ्ग)

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	–	–	कति
द्वितीया	–	–	कति
तृतीया	–	–	कतिभिः
चतुर्थी	–	–	कतिभ्यः
पंचमी	–	–	कतिभ्यः
षष्ठी	–	–	कतीनाम्
सप्तमी	–	–	कतिषु

नोट–संख्यावाचक कति शब्द का प्रयोग बहुवचन में ही होता है।

बहुविकल्पीयः प्रश्नः

1. 'गृह' शब्द का षष्ठी बहुवचन में रूप होता है–

(क) गृहस्य (ख) गृहेषु (ग) गृहाणाम् (घ) गृहाणि

2. 'वारि' शब्द का सप्तमी द्विवचन में रूप होगा–
(क) वारिणा (ख) वारिणी (ग) वारिणोः (घ) वारीणि

3. 'मनस्' शब्द का द्वितीया एकवचन में रूप होगा–
(क) मनसा (ख) मनः (ग) मनसे (घ) मनसि

4. 'धनुर्भिः' धनुष शब्द के किस विभक्ति और वचन का रूप है ?
(क) तृतीया विभक्ति, बहुवचन (ख) चतुर्थी विभक्ति, बहुवचन
(ग) पंचमी विभक्ति, एकवचन (घ) षष्ठी विभक्ति, बहुवचन

5. 'भवत्' पुंलिङ्ग शब्द का सप्तमी एकवचन होगा–
(क) भवति (ख) भवतः (ग) भवताम् (घ) भवतोः

6. 'ब्रह्मन्' शब्द का सप्तमी एकवचन–
(क) ब्राह्मणोः (ख) ब्राह्मणे (ग) ब्राह्मणा (घ) ब्रह्मणि

7. 'सरित्' शब्द का पञ्चमी एकवचन होगा–
(क) सरिति (ख) सरितः (ग) सरिसु (घ) सरितम्

8. 'अस्मद्' शब्द का पञ्चमी एकवचन रूप है–
(क) मया (ख) मत् (ग) मम (घ) मयि

9. 'अमीषाम्' किस विभक्ति वचन का रूप है–
(क) प्रथमा द्विवचन (ख) षष्ठी बहुवचन (ग) सप्तमी द्विवचन (घ) प्रथमा एकवचन

10. 'मनस्' शब्द तृतीया एकवचन–
(क) मनसा (ख) मनः (ग) मनांसि (घ) मनसा

11. कवि शब्दस्य 'कवी' इति रूपम् कुत्र-कुत्र भवति–
(क) प्रथमा/द्वितीया द्विवचन (ख) प्रथमा/तृतीया बहुवचन
(ग) द्वितीया/चतुर्थी बहुवचन (घ) षष्ठी/सप्तमी बहुवचन

12. विंशतिः इत्यस्य अर्थः भवति–
(क) 30 (ख) 20 (ग) 21 (घ) 19

■

6

धातुरूप

आत्मनेपद

1. लभ् (प्राप्त करना, पाना)

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	लभते	लभेते	लभन्ते
मध्यम पुरुष	लभसे	लभेथे	लभध्वे
उत्तम पुरुष	लभे	लभावहे	लभामहे

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	लप्स्यते	लप्स्येते	लप्स्यन्ते
मध्यम पुरुष	लप्स्यसे	लप्स्येथे	लप्स्यध्वे
उत्तम पुरुष	लप्स्ये	लप्स्यावहे	लप्स्यामहे

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अलभत	अलभेताम्	अलभन्त
मध्यम पुरुष	अलभथाः	अलभेथाम्	अलभध्वम्
उत्तम पुरुष	अलभे	अलभावहि	अलभामहि

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	लभताम्	लभेताम्	लभन्ताम्
मध्यम पुरुष	लभस्व	लभेथाम्	लभध्वम्
उत्तम पुरुष	लभै	लभावहै	लभामहै

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	लभेत	लभेयाताम्	लभेरन्
मध्यम पुरुष	लभेथाः	लभेयाथाम्	लभेध्वम्
उत्तम पुरुष	लभेय	लभेवहि	लभेमहि

2. वृध् (बढ़ना)

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वर्धते	वर्धेते	वर्धन्ते
मध्यम पुरुष	वर्धसे	वर्धेथे	वर्धध्वे
उत्तम पुरुष	वर्धे	वर्धावहे	वर्धामहे

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वर्धिस्यते	वर्धिस्येते	वर्धिस्यन्ते
मध्यम पुरुष	वर्धिस्यसे	वर्धिस्येथे	वर्धिस्यध्वे
उत्तम पुरुष	वर्धिस्ये	वर्धिस्यावहे	वर्धिस्यामहे

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अवर्धत	अवर्धेताम्	अवर्धन्त
मध्यम पुरुष	अवर्धथाः	अवर्धेथाम्	अवर्धध्वम्
उत्तम पुरुष	अवर्धे	अवर्धावहि	अवर्धामहि

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वर्धताम्	वर्धेताम्	वर्धन्ताम्
मध्यम पुरुष	वर्धस्व	वर्धेथाम्	वर्धध्वम्
उत्तम पुरुष	वर्धै	वर्धावहै	वर्धामहै

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वर्धेत	वर्धेयाताम्	वर्धेरन्
मध्यम पुरुष	वर्धेथाः	वर्धेयाथाम्	वर्धेध्वम्
उत्तम पुरुष	वर्धेय	वर्धेवहि	वर्धेमहि

3. भाष् (स्पष्ट बोलना)

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भाषते	भाषेते	भाषन्ते
मध्यम पुरुष	भाषसे	भाषेथे	भाषध्वे
उत्तम पुरुष	भाषे	भाषावहे	भाषामहे

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भाषिष्यते	भाषिष्येते	भाषिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	भाषिष्यसे	भाषिष्येथे	भाषिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	भाषिष्ये	भाषिष्यावहे	भाषिष्यामहे

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अभाषत	अभाषेताम्	अभाषन्त
मध्यम पुरुष	अभाषथाः	अभाषेथाम्	अभाषध्वम्
उत्तम पुरुष	अभाषे	अभाषावहि	अभाषामहि

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भाषेत	भाषेयाताम्	भाषेरन्
मध्यम पुरुष	भाषेथाः	भाषेयाथाम्	भाषेध्वम्
उत्तम पुरुष	भाषेय	भाषेवहि	भाषेमहि

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भाषताम्	भाषेताम्	भाषन्ताम्
मध्यम पुरुष	भाषस्व	भाषेथाम्	भाषध्वम्
उत्तम पुरुष	भाषै	भाषावहै	भाषामहै

4. शी (सोना)

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	शेते	शयाते	शेरते
मध्यम पुरुष	शेषे	शयाथे	शेध्वे
उत्तम पुरुष	शये	शेवहे	शेमहे

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	शयिष्यते	शयिष्येते	शयिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	शयिष्यसे	शयिष्येथे	शयिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	शयिष्ये	शयिष्यावहे	शयिष्यामहे

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अशेत	अशयाताम्	अशेरत
मध्यम पुरुष	अशेथाः	अशयाथाम्	अशेध्वम्
उत्तम पुरुष	अशयि	अशेवहि	अशेमहि

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	शेताम्	शयाताम्	शेरताम्
मध्यम पुरुष	शेष्व	शयाथाम्	शेध्वम्
उत्तम पुरुष	शयै	शयावहै	शयामहै

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	शयीत	शयीयाताम्	शयीरन्
मध्यम पुरुष	शयीथाः	शयीयाथाम्	शयीध्वम्
उत्तम पुरुष	शयीय	शयीवहि	शयीमहि

5. विद् (होना)

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	विद्यते	विद्येते	विद्यन्ते
मध्यम पुरुष	विद्यसे	विद्येथे	विद्यध्वे
उत्तम पुरुष	विद्ये	विद्यावहे	विद्यामहे

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वेत्स्यते	वेत्स्येते	वेत्स्यन्ते
मध्यम पुरुष	वेत्स्यसे	वेत्स्येथे	वेत्स्यध्वे
उत्तम पुरुष	वेत्स्ये	वेत्स्यावहे	वेत्स्यामहे

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अविद्यत	अविद्येताम्	अविद्यन्त
मध्यम पुरुष	अविद्यथाः	अविद्येथाम्	अविद्यध्वम्
उत्तम पुरुष	अविद्ये	अविद्यावहि	अविद्यामहि

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	विद्यताम्	विद्येताम्	विद्यन्ताम्
मध्यम पुरुष	विद्यस्व	विद्येथाम्	विद्यध्वम्
उत्तम पुरुष	विद्यै	विद्यावहै	विद्यामहै

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	विद्येत	विद्येयाताम्	विद्येरन्
मध्यम पुरुष	विद्येथाः	विद्येयाथाम्	विद्येध्वम्
उत्तम पुरुष	विद्येय	विद्येवहि	विद्येमहि

6. सेव् (सेव करना)

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सेवते	सेवेते	सेवन्ते
मध्यम पुरुष	सेवसे	सेवेथे	सेवध्वे
उत्तम पुरुष	सेवे	सेवावहे	सेवामहे

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सेविष्यते	सेविष्येते	सेविष्यन्ते
मध्यम पुरुष	सेविष्यसे	सेविष्येथे	सेविष्यध्वे
उत्तम पुरुष	सेविष्ये	सेविष्यावहे	सेविष्यामहे

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	असेवत	असेवेताम्	असेवन्त
मध्यम पुरुष	असेवथाः	असेवेथाम्	असेवध्वम्
उत्तम पुरुष	असेवे	असेवावहि	असेवामहि

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सेवताम्	सेवेताम्	सेवन्ताम्
मध्यम पुरुष	सेवस्व	सेवेथाम्	सेवध्वम्
उत्तम पुरुष	सेवै	सेवावहै	सेवामहै

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सेवेत	सेवेयाताम्	सेवेरन्
मध्यम पुरुष	सेवेथाः	सेवेयाथाम्	सेवेध्वम्
उत्तम पुरुष	सेवेय	सेवेवहि	सेवेमहि

उभयपदी धातु रूप

1. नी (नय्) ले जाना (परस्मैपद)

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नयति	नयतः	नयन्ति
मध्यम पुरुष	नयसि	नयथः	नयथ
उत्तम पुरुष	नयामि	नयावः	नयामः

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नेष्यति	नेष्यतः	नेष्यन्ति
मध्यम पुरुष	नेष्यसि	नेष्यथः	नेष्यथ
उत्तम पुरुष	नेष्यामि	नेष्यावः	नेष्यामः

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अनयत्	अनयताम्	अनयन
मध्यम पुरुष	अनयः	अनयतम्	अनयत
उत्तम पुरुष	अनयम्	अनयाव	अनयाम

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नयतु, नयतात्	नयताम्	नयन्तु
मध्यम पुरुष	नय, नयतात्	नयतम्	नयत
उत्तम पुरुष	नयानि	नयाव	नयाम

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नयेत्	नयेताम्	नयेयुः
मध्यम पुरुष	नयेः	नयेतम्	नयेत
उत्तम पुरुष	नयेयम्	नयेव	नयेम

नी (नय्) ले जाना (आत्मनेपद)

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नयते	नयेते	नयन्ते
मध्यम पुरुष	नयसे	नयेथे	नयध्वे
उत्तम पुरुष	नये	नयावहे	नयामहे

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नेष्यते	नेष्येते	नेष्यन्ते
मध्यम पुरुष	नेष्यसे	नेष्येथे	नेष्यध्वे
उत्तम पुरुष	नेष्ये	नेष्यावहे	नेष्यामहे

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अनयत	अनयेताम्	अनयन्त
मध्यम पुरुष	अनयथाः	अनयेथाम्	अनयध्वम्
उत्तम पुरुष	अनये	अनयावहि	अनयामहि

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नयताम्	नयेताम्	नयन्ताम्
मध्यम पुरुष	नयस्व	नयेथाम्	नयध्वम्
उत्तम पुरुष	नयै	नयावहै	नयामहै

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	नयेत	नयेयाताम्	नयेरन्
मध्यम पुरुष	नयेथाः	नयेयाथाम्	नयेध्वम्
उत्तम पुरुष	नयेय	नयेवहि	नयेमहि

2. याच् (माँगना) (परस्मैपद)

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	याचति	याचतः	याचन्ति
मध्यम पुरुष	याचसि	याचथः	याचथ
उत्तम पुरुष	याचामि	याचावः	याचामः

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	याचिष्यति	याचिष्यतः	याचिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	याचिष्यसि	याचिष्यथः	याचिष्यथ
उत्तम पुरुष	याचिष्यामि	याचिष्यावः	याचिष्यामः

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अयाचत्	अयाचताम्	अयाचन्
मध्यम पुरुष	अयाचः	अयाचतम्	अयाचत
उत्तम पुरुष	अयाचम्	अयाचाव	अयाचाम

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	याचतु	याचताम्	याचन्तु
मध्यम पुरुष	याच	याचतम्	याचत
उत्तम पुरुष	याचानि	याचाव	याचाम्

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	याचेत्	याचेताम्	याचेयुः
मध्यम पुरुष	याचेः	याचेतम्	याचेत
उत्तम पुरुष	याचेयम्	याचेव	याचेम

याच् (माँगना) (आत्मनेपद)

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	याचते	याचेते	याचन्ते
मध्यम पुरुष	याचसे	याचेथे	याचध्वे
उत्तम पुरुष	याचे	याचावहे	याचामहे

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	याचिष्यते	याचिष्येते	याचिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	याचिष्यसे	याचिष्येथे	याचिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	याचिष्ये	याचिष्यावहे	याचिष्यामहे

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अयाचत	अयाचेताम्	अयाचन्त
मध्यम पुरुष	अयाचथाः	अयाचेथाम्	अयाचध्वम्
उत्तम पुरुष	अयाचे	अयाचावहि	अयाचामहि

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	याचताम्	याचेताम्	याचन्ताम्
मध्यम पुरुष	याचस्व	याचेथाम्	याचध्वम्
उत्तम पुरुष	याचै	याचावहै	याचामहै

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	याचेत	याचेयाताम्	याचेरन्
मध्यम पुरुष	याचेथाः	याचेयाथाम्	याचेध्वम्
उत्तम पुरुष	याचेय	याचेवहि	याचेमहि

3. दा (दान देना) (परस्मैपद)

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ददाति	दत्तः	ददति
मध्यम पुरुष	ददासि	दत्थः	दत्थ
उत्तम पुरुष	ददामि	दद्वः	दद्मः

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दास्यति	दास्यतः	दास्यन्ति
मध्यम पुरुष	दास्यसि	दास्यथः	दास्यथ
उत्तम पुरुष	दास्यामि	दास्यावः	दास्यामः

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अददात्	अदत्ताम्	अददुः
मध्यम पुरुष	अददाः	अदत्तम्	अदत्त
उत्तम पुरुष	अददाम्	अदद्व	अदद्म

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ददातु, दत्तात्	दत्ताम्	ददतु
मध्यम पुरुष	देहि, दत्तात्	दत्तम्	दत्त
उत्तम पुरुष	ददानि	ददाव	ददाम

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दद्यात्	दद्याताम्	दद्युः
मध्यम पुरुष	दद्याः	दद्यातम्	दद्यात
उत्तम पुरुष	दद्याम्	दद्याव	दद्याम

आत्मनेपद

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दत्ते	ददाते	ददते
मध्यम पुरुष	दत्से	ददाथे	दद्ध्वे
उत्तम पुरुष	ददे	दद्वहे	दद्महे

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दास्यते	दास्येते	दास्यन्ते
मध्यम पुरुष	दास्यसे	दास्येथे	दास्यध्वे
उत्तम पुरुष	दास्ये	दास्यावहे	दास्यामहे

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अदत्त	अददाताम्	अददत
मध्यम पुरुष	अदत्थाः	अददाथाम्	अदद्ध्वम्
उत्तम पुरुष	अददि	अदद्वहि	अदद्महि

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दत्ताम्	ददाताम्	ददताम्
मध्यम पुरुष	दत्स्व	ददाथाम्	दद्ध्वम्
उत्तम पुरुष	ददै	ददावहै	ददामहै

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ददीत	ददीयाताम्	ददीरन्
मध्यम पुरुष	ददीथाः	ददीयाथाम्	ददीध्वम्
उत्तम पुरुष	ददीय	ददीवहि	ददीमहि

4. ग्रह् (ग्रहण करना) (परस्मैपद)

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गृह्णाति	गृह्णीतः	गृह्णन्ति
मध्यम पुरुष	गृह्णासि	गृह्णीथः	गृह्णीथ
उत्तम पुरुष	गृह्णामि	गृह्णीवः	गृह्णीमः

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ग्रहीष्यति	ग्रहीष्यतः	ग्रहीष्यन्ति
मध्यम पुरुष	ग्रहीष्यसि	ग्रहीष्यथः	ग्रहीष्यथ
उत्तम पुरुष	ग्रहीष्यामि	ग्रहीष्यावः	ग्रहीष्यामः

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अगृह्णात्	अगृह्णीताम्	अगृह्णन्
मध्यम पुरुष	अगृह्णाः	अगृह्णीतम्	अगृह्णीत
उत्तम पुरुष	अगृह्णाम	अगृह्णीव	अगृहणीम्

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गृह्णातु, गृह्णीतात्	गृह्णीताम्	गृह्णन्तु
मध्यम पुरुष	गृहाण, गृह्णीतात्	गृह्णीतम्	गृह्णीत
उत्तम पुरुष	गृह्णानि	गृह्णाव	गृह्णाम

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गृह्णीयात्	गृह्णीयाताम्	गृह्णीयुः
मध्यम पुरुष	गृह्णीयाः	गृह्णीयातम्	गृह्णीयात
उत्तम पुरुष	गृह्णीयाम्	गृह्णीयाव	गृह्णीयाम

आत्मनेपद

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गृह्णीते	गृह्णाते	गृह्णन्ते
मध्यम पुरुष	गृह्णीषे	गृह्णाथे	गृह्णध्वे
उत्तम पुरुष	गृह्णे	गृह्णीवहे	गृह्णीमहे

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ग्रहीष्यते	ग्रहीष्येते	ग्रहीष्यन्ते
मध्यम पुरुष	ग्रहीष्यसे	ग्रहीष्येथे	ग्रहीष्यध्वे
उत्तम पुरुष	ग्रहीष्ये	ग्रहीष्यावहे	ग्रहीष्यामहे

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अगृह्णीत	अगृह्णाताम्	अगृह्णत
मध्यम पुरुष	अगृह्णीथाः	अगृह्णाथाम्	अगृह्णीध्वम्
उत्तम पुरुष	अगृह्णि	अगृह्णीवहि	अगृह्णीमहि

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गृह्णीताम्	गृहणताम्	गृह्णताम्
मध्यम पुरुष	गृह्णीष्व	गृहणथाम्	गृह्णीध्वम्
उत्तम पुरुष	गृह्णै	गृह्णावहै	गृह्णामहै

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	गृह्णीत	गृह्णीयाताम्	गृह्णीरन्
मध्यम पुरुष	गृह्णीथाः	गृह्णीयाथाम्	गह्णीध्वम्
उत्तम पुरुष	गृह्णीय	गृह्णीवहि	गृह्णीमहि

5. ज्ञा (जानना) (परस्मैपद)

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जानाति	जानीतः	जानन्ति
मध्यम पुरुष	जानासि	जानीथः	जानीथ
उत्तम पुरुष	जानामि	जानीवः	जानीमः

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ज्ञास्यति	ज्ञास्यतः	ज्ञास्यन्ति
मध्यम पुरुष	ज्ञास्यसि	ज्ञास्यथः	ज्ञास्यथ
उत्तम पुरुष	ज्ञास्यामि	ज्ञास्यावः	ज्ञास्यामः

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अजानात्	अजानीताम्	अजानन्
मध्यम पुरुष	अजानाः	अजानीतम्	अजानीत
उत्तम पुरुष	अजानम्	अजानीव	अजानीम

लोट् लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जानातु, जानीतात्	जानीताम्	जानन्तु
मध्यम पुरुष	जानीहि, जानीतात्	जानीतम्	जानीत
उत्तम पुरुष	जानानि	जानाव	जानाम

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जानीयात्	जानीयाताम्	जानीयुः
मध्यम पुरुष	जानीयाः	जानीयातम्	जानीयात
उत्तम पुरुष	जानीयाम्	जानीयाव	जानीयाम

आत्मनेपद

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जानीते	जानाते	जानते
मध्यम पुरुष	जानीषे	जानाथे	जानीध्वे
उत्तम पुरुष	जाने	जानीवहे	जानीमहे

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	ज्ञास्यते	ज्ञास्येते	ज्ञास्यन्ते
मध्यम पुरुष	ज्ञास्यसे	ज्ञास्येथे	ज्ञास्यध्वे
उत्तम पुरुष	ज्ञास्ये	ज्ञास्यावहे	ज्ञास्यामहे

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अजानीत्	अजानाताम्	अजानत
मध्यम पुरुष	अजानीथाः	अजानाथाम्	अजानीध्वम्
उत्तम पुरुष	अजानि	अजानीवहि	अजानीमहि

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जानीताम्	जानाताम्	जानताम्
मध्यम पुरुष	जानीष्व	जानाथाम्	जानीध्वम्
उत्तम पुरुष	जानै	जानावहै	जानामहै

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	जानीत	जानीयाताम्	जानीरन्
मध्यम पुरुष	जानीथाः	जीनायाथाम्	जानीध्वम्
उत्तम पुरुष	जानीय	जानीवहि	जानीमहि

6. चुर् (चुराना) (परस्मैपद)

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयति	चोरयतः	चोरयन्ति
मध्यम पुरुष	चोरयसि	चोरयथः	चोरयथ
उत्तम पुरुष	चोरयामि	चोरयावः	चोरयामः

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयिष्यति	चोरयिष्यतः	चोरयिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	चोरयिष्यसि	चोरयिष्यथः	चोरयिष्यथ
उत्तम पुरुष	चोरयिष्यामि	चोरयिष्यावः	चोरयिष्यामः

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अचोरयत्	अचोरयताम्	अचोरयन्
मध्यम पुरुष	अचोरयः	अचोरयतम्	अचोरयत
उत्तम पुरुष	अचोरयम्	अचोरयाव	अचोरयाम

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयतु, चोरयतात्	चोरयताम्	चोरयन्तु
मध्यम पुरुष	चोरय, चोरयतात्	चोरयतम्	चोरयत
उत्तम पुरुष	चोरयाणि	चोरयाव	चोरयाम

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयेत्	चोरयेताम्	चोरयेयुः
मध्यम पुरुष	चोरयेः	चोरयेतम्	चोरयेत
उत्तम पुरुष	चोरयेयम्	चोरयेव	चोरयेम

आत्मनेपद

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयते	चोरयेते	चोरयन्ते
मध्यम पुरुष	चोरयसे	चोरयेथे	चोरयध्वे
उत्तम पुरुष	चोरये	चोरयावहे	चोरयामहे

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयिष्यते	चोरयिष्येते	चोरयिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	चोरयिष्यसे	चोरयिष्येथे	चोरयिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	चोरयिष्ये	चोरयिष्यावहे	चोरयिष्यामहे

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अचोरयत	अचोरयेताम्	अचोरयन्त
मध्यम पुरुष	अचोरयथाः	अचोरयेथाम्	अचोरयध्वम्
उत्तम पुरुष	अचोरये	अचोरयावहि	आचोरयामहि

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयताम्	चोरयेताम्	चोरयन्ताम्
मध्यम पुरुष	चोरयस्व	चोरयेथाम्	चोरयध्वम्
उत्तम पुरुष	चोरयै	चोरयावहै	चोरयामहै

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	चोरयेत	चोरयेयाताम्	चोरयेरन्
मध्यम पुरुष	चोरयेथाः	चोरयेयाथाम्	चोरयेध्वम्
उत्तम पुरुष	चोरयेय	चोरयेवहि	चोरयेमहि

7. श्रि (सहारा लेना) (परस्मैपद)

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	श्रयति	श्रयतः	श्रयन्ति
मध्यम पुरुष	श्रयसि	श्रायथः	श्रयथ
उत्तम पुरुष	श्रयामि	श्रयावः	श्रयामः

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	श्रयिष्यति	श्रयिष्यतः	श्रयिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	श्रयिष्यसि	श्रयिष्यथः	श्रयिष्यथ
उत्तम पुरुष	श्रयिष्यामि	श्रयिष्यावः	श्रयिष्यामः

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अश्रयत्	अश्रयताम्	अश्रयन्
मध्यम पुरुष	अश्रयः	अश्रयतम्	अश्रयत
उत्तम पुरुष	अश्रयम्	अश्रयाव	अश्रयाम

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	श्रयतु, श्रयतात्	श्रयताम्	श्रयन्तु
मध्यम पुरुष	श्रय, श्रयतात्	श्रयतम्	श्रयत
उत्तम पुरुष	श्रयानि	श्रयाव	श्रयाम

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	श्रयेत्	श्रयेताम्	श्रयेयुः
मध्यम पुरुष	श्रयेः	श्रयेतम्	श्रयेत
उत्तम पुरुष	श्रयेयम्	श्रयेव	श्रयेम

आत्मनेपद

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	श्रयते	श्रयेते	श्रयन्ते
मध्यम पुरुष	श्रयसे	श्रयेथे	श्रयध्वे
उत्तम पुरुष	श्रये	श्रयावहे	श्रयामहे

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	श्रयिष्यते	श्रयिष्येते	श्रयिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	श्रयिष्यसे	श्रयिष्येथे	श्रयिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	श्रयिष्ये	श्रयिष्यावहे	श्रयिष्यामहे

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अश्रयत	अश्रयेताम्	अश्रयन्त
मध्यम पुरुष	अश्रयथाः	अश्रयेथाम्	अश्रयध्वम्
उत्तम पुरुष	अश्रये	अश्रयावहि	अश्रयामहि

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	श्रयताम्	श्रयेताम्	श्रयन्ताम्
मध्यम पुरुष	श्रयस्व	श्रयेथाम्	श्रयध्वम्
उत्तम पुरुष	श्रयै	श्रयावहै	श्रयामहै

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	श्रयेत	श्रयेयाताम्	श्रयेरन्
मध्यम पुरुष	श्रयेथाः	श्रयेयाथाम्	श्रयेध्वम्
उत्तम पुरुष	श्रयेय	श्रयेवहि	श्रयेमहि

8. क्री (मोल लेना) (परस्मैपद)

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	क्रीणाति	क्रीणीतः	क्रीणन्ति
मध्यम पुरुष	क्रीणासि	क्रीणीथः	क्रीणीथ
उत्तम पुरुष	क्रीणामि	क्रीणीवः	क्रीणीमः

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	क्रेष्यति	क्रेष्यतः	क्रेष्यन्ति
मध्यम पुरुष	क्रेष्यसि	क्रेष्यथः	क्रेष्यथ
उत्तम पुरुष	क्रेष्यामि	क्रेष्यावः	क्रेष्यामः

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अक्रीणात्	अक्रीणीताम्	अक्रीणन्
मध्यम पुरुष	अक्रीणाः	अक्रीणीतम्	अक्रीणीत
उत्तम पुरुष	अक्रीणाम्	अक्रीणीव	अक्रीणीम

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	क्रीणातु, क्रीणीतात्	क्रीणीताम्	क्रीणन्तु
मध्यम पुरुष	क्रीणीहि, क्रीणीतात्	क्रीणीतम्	क्रीणीत
उत्तम पुरुष	क्रीणानि	क्रीणाव	क्रीणाम्

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	क्रीणीयात्	क्रीणीयाताम्	क्रीणीयुः
मध्यम पुरुष	क्रीणीयाः	क्रीणीयातम्	क्रीणीयात
उत्तम पुरुष	क्रीणीयाम्	क्रीणीयाव	क्रीणीयाम

आत्मनेपद

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	क्रीणीते	क्रीणाते	क्रीणते
मध्यम पुरुष	क्रीणीषे	क्रीणाथे	क्रीणीध्वे
उत्तम पुरुष	क्रीणे	क्रीणीवहे	क्रीणीमहे

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	क्रेष्यते	क्रेष्येते	क्रेष्यन्ते
मध्यम पुरुष	क्रेष्यसे	क्रेष्येथे	क्रेष्यध्वे
उत्तम पुरुष	क्रेष्ये	क्रेष्यावहे	क्रेष्यामहे

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अक्रीणीत	अक्रीणाताम्	अक्रीणत
मध्यम पुरुष	अक्रीणीथाः	अक्रीणाथाम्	अक्रीणीध्वम्
उत्तम पुरुष	अक्रीणि	अक्रीणीवहि	अक्रीणीमहि

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	क्रीणीताम्	क्रीणाताम्	क्रीणताम्
मध्यम पुरुष	क्रीणीष्व	क्रीणाथाम्	क्रीणीध्वम्
उत्तम पुरुष	क्रीणै	क्रीणावहै	क्रीणामहै

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	क्रीणीत	क्रीणीयाताम्	क्रीणीरन्
मध्यम पुरुष	क्रीणीथाः	क्रीणीयाथाम्	क्रीणीध्वम्
उत्तम पुरुष	क्रीणीय	क्रीणीवहि	क्रीणीमहि

9. धा (धारण करना, पोषण करना) (परस्मैपद)

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दधाति	धत्तः	दधति
मध्यम पुरुष	दधासि	धत्थः	धत्थ
उत्तम पुरुष	दधामि	दध्वः	दध्मः

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	धास्यति	धास्यतः	धास्यन्ति
मध्यम पुरुष	धास्यसि	धास्यथः	धास्यथ
उत्तम पुरुष	धास्यामि	धास्यावः	धास्यामः

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अदधात्	अधत्ताम्	अदधुः
मध्यम पुरुष	अदधाः	अधत्तम्	अधत्त
उत्तम पुरुष	अदधाम्	अदध्व	अदध्म

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दधातु, धत्तात्	धत्ताम्	दधतु
मध्यम पुरुष	धेहि, धत्तात्	धत्तम्	धत्त
उत्तम पुरुष	दधानि	दधाव	दधाम

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दध्यात्	दध्याताम्	दध्युः
मध्यम पुरुष	दध्याः	दध्यातम्	दध्यात
उत्तम पुरुष	दध्याम्	दध्याव	दध्याम

आत्मनेपद

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	धत्ते	दधाते	दधते
मध्यम पुरुष	धत्से	दधाथे	दद्ध्वे
उत्तम पुरुष	दधे	दध्वहे	दध्महे

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	धास्यते	धास्येते	धास्यन्ते
मध्यम पुरुष	धास्यसे	धास्येथे	धास्यध्वे
उत्तम पुरुष	धास्ये	धास्यावहे	धास्यामहे

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अधत्त	अदधाताम्	अदधत
मध्यम पुरुष	अधत्थाः	अदधाथाम्	अधद्ध्वम्
उत्तम पुरुष	अदधि	अदध्वहि	अदध्महि

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	धत्ताम्	दधाताम्	दधताम्
मध्यम पुरुष	धत्स्व	दधाथाम्	धद्ध्वम्
उत्तम पुरुष	दधै	दधावहै	दधामहै

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	दधीत	दधीयाताम्	दधीरन्
मध्यम पुरुष	दधीथाः	दधीयाथाम्	दधीध्वम्
उत्तम पुरुष	दधीय	दधीवहि	दधीमहि

10. कृ (करना) (परस्मैपद)

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	करोति	कुरुतः	कुर्वन्ति
मध्यम पुरुष	करोषि	कुरुथः	कुरुथ
उत्तम पुरुष	करोमि	कुर्वः	कुर्मः

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	करिष्यति	करिष्यतः	करिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	करिष्यसि	करिष्यथः	करिष्यथ
उत्तम पुरुष	करिष्यामि	करिष्यावः	करिष्यामः

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अकरोत्	अकुरुताम्	अकुर्वन्
मध्यम पुरुष	अकरोः	अकुरुतम्	अकुरुत
उत्तम पुरुष	अकरवम्	अकुर्व	अकुर्म

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	करोतु, कुरुतात्	कुरुताम्	कुर्वन्तु
मध्यम पुरुष	कुरु, कुरुतात्	कुरुतम्	कुरुत
उत्तम पुरुष	करवाणि	करवाव	करवाम

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	कुर्यात्	कुर्याताम्	कुर्युः
मध्यम पुरुष	कुर्याः	कुर्यातम्	कुर्यात
उत्तम पुरुष	कुर्याम्	कुर्याव	कुर्याम

आत्मनेपद

लट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	कुरुते	कुर्वाते	कुर्वते
मध्यम पुरुष	कुरुषे	कुर्वाथे	कुरुध्वे
उत्तम पुरुष	कुर्वे	कुर्वहे	कुर्महे

लृट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	करिष्यते	करिष्येते	करिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	करिष्यसे	करिष्येथे	करिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	करिष्ये	करिष्यावहे	करिष्यामहे

लङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	अकुरुत	अकुर्वाताम्	अकुर्वत
मध्यम पुरुष	अकुरुथाः	अकुर्वाथाम्	अकुरुध्वम्
उत्तम पुरुष	अकुर्वि	अकुर्वहि	अकुर्महि

लोट्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	कुरुताम्	कुर्वाताम्	कुर्वताम्
मध्यम पुरुष	कुरुष्व	कुर्वाथाम्	कुरुध्वम्
उत्तम पुरुष	करवै	करवावहै	करवामहै

विधिलिङ्लकार

पुरुष	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	कुर्वीत	कुर्वीयाताम्	कुर्वीरन्
मध्यम पुरुष	कुर्वीथाः	कुर्वीयाथाम्	कुर्वीध्वम्
उत्तम पुरुष	कुर्वीय	कुर्वीवहि	कुर्वीमहि

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. 'लभ्' धातोः 'लभेय' इति रूपम् भवति–
   (क) लृट्लकारस्य प्रथमपुरुषैकवचने (ख) विधिलिङ्लकारस्य उत्तमपुरुषैकवचने
   (ग) लङ्लकारस्य प्रथमपुरुषैकवचने (घ) लोट्लकारस्य मध्यमपुरुषैकवचने
2. 'सेव्' धातोः लङ्लकारप्रथमपुरुषैकवचनम्–
   (क) असेवेत (ख) असेवत (ग) असेवताम् (घ) असेवतः
3. 'लभ्' धातोः लृट्लकारस्य मध्यमपुरुषैकवचनम्–
   (क) लप्स्यसे (ख) लप्स्यते (ग) लप्स्यध्वे (घ) लप्स्येते
4. 'भाषते' इत्यस्य इत्यत्र कः लकारः ?
   (क) लट् (ख) लृट् (ग) लट् (घ) लट्
5. 'चोरयत' रूप है–
   (क) लट्लकार (ख) लोट्लकार (ग) लङ्लकार (घ) लृट्लकार
6. 'नी' धातु, लृट्लकार, मध्यम पुरुष, द्विवचन का रूप है–
   (क) नेष्यथः (ख) नयत (ग) नयति (घ) नयताम्
7. 'वृध्' धातु, लोट्लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन का रूप होगा–
   (क) वर्धते (ख) वर्धताम् (ग) वर्धस्व (घ) वर्धे
8. 'धा' धातु, लोट्लकार, उत्तमपुरुष, एकवचन का रूप होगा–
   (क) दधति (ख) दधामि (ग) दधासि (घ) दधाति
9. 'क्री' धातु के लृट्लकार, मध्यमपुरुष, एकवचन का रूप होगा–
   (क) क्रेष्यति (ख) क्रेष्यथ (ग) क्रेष्यसि (घ) क्रीणाति
10. 'श्रि' धातु के लट्लकार, उत्तमपुरुष, एकवचन का रूप होगा–
    (क) श्रयति (ख) श्रयसि (ग) श्रयामि (घ) श्रयथ

■

7 प्रत्ययः

प्रति उपसर्ग पूर्वक इण् गतौ धातु से 'एरच्' सूत्र से अच् प्रत्यय करने पर प्रत्यय शब्द निष्पन्न होता है।

व्याकरण शास्त्र के अनुसार प्रत्यय की परिभाषाएँ–

1. प्रकृति से परे जिसका विधान किया जाय वह सार्थक शब्द विशेष प्रत्यय है।

2. महाभाष्य के अनुसार – **''स्वीयम् अर्थं प्रत्याययति''** जो अपने अर्थ का बोध कराता है वह प्रत्यय है।

3. **''प्रतीयते विधीयते इति प्रत्यय''** अर्थात् अर्थविशेष का बोध कराने के लिए प्रकृति से परे जिसका विधान किया जाता है उसे प्रत्यय कहते हैं। मुख्य रुप से प्रत्यय दो प्रकार के होते हैं – कृत् एवं तद्धित।

कृत् प्रत्यय– धातु से जिन प्रत्ययों का विधान किया जाता है, उन्हें कृत् प्रत्यय कहते हैं।

तद्धित प्रत्यय– ''तस्मै ताभ्यां तेभ्यो वा हिताः तद्धिताः'', जो प्रकृत्यर्थ के हित में हों, उन्हें तद्धित प्रत्यय कहते हैं।

अर्थात् जिनका विधान संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, अव्यय आदि से किया जाय, उन्हें तद्धित प्रत्यय कहते है।

1. ल्युट् प्रत्यय– 'नपुंसके भावे क्तः' 'ल्युट् च'

भाव में 'ल्युट्' एवं 'क्त' प्रत्यय होते है, तथा इनसे निष्पन्न शब्द नपुंसक लिंग में होते हैं। 'ल्युट्' में अनुबन्धलोप होने के बाद 'यु' शेष बचता है, तत्पश्चात् 'यु' को **'युवोरनाकौ'** से 'अन' होकर 'गमनम्' आदि प्रयोग बनते हैं।

यथा–

दा	+	ल्युट्	= दानम्
हस्	+	ल्युट्	= हसनम्
चल्	+	ल्युट्	= चलनम्
गम्	+	ल्युट्	= गमनम्
वद्	+	ल्युट्	= वदनम्
पठ्	+	ल्युट्	= पठनम्
ज्ञा	+	ल्युट्	= ज्ञानम्
नी	+	ल्युट्	= नयनम्
विश्	+	ल्युट्	= वेशनम्
ग्रह्	+	ल्युट्	= ग्रहणम्

लम्ब् + ल्युट् = लम्बनम्
नृत् + ल्युट् = नर्तनम्
नम् + ल्युट् = नमनम्
भू + ल्युट् = भवनम्
मन् + ल्युट् = मननम्

2. ण्वुल् (अक) प्रत्यय – धातु से 'ण्वुल्' प्रत्यय जुड़कर कर्ता के अर्थ में संज्ञा शब्द बनाता है। अनुबन्धलोप के पश्चात् युवोरनाकौ सूत्र से 'वु' का अक हो जाता है और धातु को गुण या वृद्धि होकर रूप सिद्ध होता है।

यथा– कृ + ण्वुल् (अक) = कारकः
श्रु + ण्वुल् (अक) = श्रावकः
नी + ण्वुल् (अक) = नायकः
गै + ण्वुल् (अक) = गायकः
पठ् + ण्वुल् (अक) = पाठकः
लिख् + ण्वुल् (अक) = लेखकः
दृश् + ण्वुल् (अक) = दर्शकः
धाव् + ण्वुल् (अक) = धावकः
दा + ण्वुल् (अक) = दायकः
पच् + ण्वुल् (अक) = पाचकः
स्मृ + ण्वुल् (अक) = स्मारकः
सेव् + ण्वुल् (अक) = सेवकः
मुच् + ण्वुल् (अक) = मोचकः
शुष् + ण्वुल् (अक) = शोषकः
हृ + ण्वुल् (अक) = हारकः

(3) तव्यत्–तव्यानीयरः – भाव एवं कर्म अर्थ में तव्यत्-तव्य एवं अनीयर् प्रत्यय होते हैं। 'तव्यत्' में 'तव्य' एवं 'अनीयर्' में 'अनीय' शेष रहता है। सामान्य रूप से 'चाहिए' अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। इनके तीनों लिङ्गों में रूप चलते हैं।

यथा– हस् + अनीयर् = हसनीयम्
वद् + अनीयर् = वदनीयम्
छिद् + अनीयर् = छेदनीयम्
चल् + अनीयर् = चलनीयम्

पठ् + अनीयर् = पठनीयम्
भू + अनीयर् = भवनीयम्
श्रु + अनीयर् = श्रवणीयम्
कृ + अनीयर् = करणीयम्
हृ + अनीयर् = हरणीयम्
चि + अनीयर् = चयनीयम्
पा + अनीयर् = पानीयम्
घ्रा + अनीयर् = घ्राणीयम्
कथ् + अनीयर् = कथनीयम्

तव्यत् एवं तव्य के उदाहरण–

कृ + तव्यत् = कर्तव्यम्
छिद् + तव्यत् = छेत्तव्यम्
हस् + तव्यत् = हसितव्यम्
भृ + तव्यत् = भर्तव्यम्
दृश् + तव्यत् = द्रष्टव्यम्
प्रच्छ् + तव्यत् = प्रष्टव्यम्

4. टाप् प्रत्यय – 'अजाद्यतष्टाप्' अजादि एवं अदन्त शब्दों से स्त्रीत्व द्योतित होने पर 'टाप्' प्रत्यय होता है। इस प्रत्यय का प्रयोग अजादिगण पठित अदन्त शब्दों से होता है। 'टाप्' में अनुबन्धलोप करने पर 'आ' शेष रहता है।

अज + टाप् = अजा
मूषक + टाप् = मूषिका
अश्व + टाप् = अश्वा
कुशल + टाप् = कुशला
बाल + टाप् = बाला
चटक + टाप् = चटका
एडक + टाप् = एडका
कोकिल + टाप् = कोकिला

'टाप्' प्रत्यय जोड़ने पर यदि शब्द के अन्त में 'क' हो उसके पूर्व 'अ' हो तो इसे 'इ' हो जाता है। 'प्रत्ययस्थात् कात् पूर्वस्यात इदाप्यसुपः' इस सूत्र से 'इत्व' होता है।

नाटक	+ टाप्	=	नाटिका
कारक	+ टाप्	=	कारिका
चारक	+ टाप्	=	चारिका
गायक	+ टाप्	=	गायिका
धावक	+ टाप्	=	धाविका
अध्यापक	+ टाप्	=	अध्यापिका
बालक	+ टाप्	=	बालिका

5. क्त्वा प्रत्यय – दो क्रियाओं का कर्ता एक होने पर पूर्वकालिक क्रिया के अर्थ में होता है। 'क्त्वा' प्रत्ययान्त अव्यय होते हैं।

भू	+ क्त्वा	=	भूत्वा
हस्	+ क्त्वा	=	हसित्वा
चल्	+ क्त्वा	=	चलित्वा
वद्	+ क्त्वा	=	उदित्वा
पा	+ क्त्वा	=	पीत्वा
हा	+ क्त्वा	=	हात्वा
स्था	+ क्त्वा	=	स्थित्वा
धा	+ क्त्वा	=	हित्वा
श्रु	+ क्त्वा	=	श्रुत्वा
भि	+ क्त्वा	=	भित्वा
जि	+ क्त्वा	=	जित्वा
त्यज्	+ क्त्वा	=	त्यक्त्वा
कथ्	+ क्त्वा	=	कथयित्वा
लभ्	+ क्त्वा	=	लब्ध्वा

6. तुमुन्–प्रत्यय् – यह चतुर्थी बोध के लिए प्रयुक्त होता है, 'के लिए' इस अर्थ का बोध कराता है। इसमें दोनों क्रियाओं का कर्ता एक ही होता है, तथा 'तुमुन्' प्रत्यययान्त शब्द अव्यय होते हैं।

भू	+ तुमुन्	=	भवितुम्
गम्	+ तुमुन्	=	गन्तुम्
पा	+ तुमुन्	=	पातुम्
घ्रा	+ तुमुन्	=	घ्रातुम्
हा	+ तुमुन्	=	हातुम्

दृश् + तुमुन् = द्रष्टुम्
दा + तुमुन् = दातुम्
लभ् + तुमुन् = लब्धुम्
ज्ञा + तुमुन् = ज्ञातुम्
कृ + तुमुन् = कर्तुम्
जि + तुमुन् = जेतुम्
श्रु + तुमुन् = श्रोतुम्
प्रच्छ् + तुमुन् = प्रष्टुम्
त्यज् + तुमुन् = त्यक्तुम्

7. ङीष् प्रत्यय – 'षिद्गौरादिभ्यश्च' – षित् प्रत्ययान्त एवं गौरादिगण पठित शब्दों से ङीष् प्रत्यय होता है स्त्रीलिंग में।

गौर + ङीष् = गौरी
नट + ङीष् = नटी
तट + ङीष् = तटी
शूद्र + ङीष् = शूद्री
नर्तक + ङीष् = नर्तकी
मातामह + ङीष् = मातामही
मतस्य + ङीष् = मत्सी
चन्द्रमुख + ङीष् = चन्द्रमुखी
शिखण्ड + ङीष् = शिखण्डी
पितामह + ङीष् = पितामही

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. 'दानीयम्' पद में धातु और प्रत्यय है–
   (क) दा + नीय (ख) दा + तुमुन् (ग) दा + क्त (घ) दा + अनीयर्
2. 'दृश्' धातु में 'तुमुन्' प्रत्यय का योग करने पर बनता है–
   (क) दर्शितुम् (ख) पश्यतुम् (ग) द्रष्टुम् (घ) दृष्टम्
3. 'गन्तव्यम्' शब्द में धातु और प्रत्यय है–
   (क) गम् + तुमुन् (ख) गम् + अनीयर् (ग) गम् + तव्यत् (घ) गम् + शानच्
4. 'नेतुम्' शब्द में प्रयुक्त प्रकृति–प्रत्यय हैं–
   (क) ने + तुमुन् (ख) नी + तुमुन् (ग) नै + तुमुन् (घ) नय् + तुमुन्
5. 'पठनीयम्' पद में धातु और प्रत्यय हैं–
   (क) पठ् + अनीयर् (ख) पठ् + तुमुन् (ग) पठ् + शतृ (घ) इनमें से कोई नहीं
6. 'स्था' धातु में 'क्त्वा' प्रत्यय लगने पर बनता है–
   (क) स्थाक्त्वा (ख) स्थित्वा (ग) तिष्ठित्वा (घ) स्थात्वा

7. 'गन्तुम्' पद में प्रयुक्त प्रकृति–प्रत्यय है–
(क) गम् + तुमुन् (ख) गन् + तुम् (ग) गम् + तुम् (घ) गन् + तुमुन्

8. 'गमनम्' शब्द में प्रयुक्त प्रकृति-प्रत्यय है–
(क) गम् + ल्युट् (ख) गम् + युच् (ग) गम् + अन् (घ) गम् + शानच्

9. 'शी' धातु में ल्युट् प्रत्यय लगाने पर रूप बनेगा–
(क) शयनम् (ख) शेनम् (ग) शील्युट् (घ) शील्यु

10. 'गत्वा' शब्द में प्रयुक्त प्रकृति-प्रत्यय है–
(क) गम् + शतृ (ख) गच्छ + शानच् (ग) गच्छ + शतृ (घ) गम् + क्त्वा

11. 'पठित्वा' शब्द में प्रयुक्त प्रकृति-प्रत्यय है–
(क) पठ् + क्त (ख) पठ् + शतृ (ग) पठ् + क्त्वा (घ) पठ् + क्तवतु

12. 'गम्' धातु से क्त्वा प्रत्यय का प्रयोग करने पर होता है–
(क) गतः (ख) गतवान् (ग) गत्वा (घ) गमित्वा

13. 'लभ्' धातु में क्त्वा प्रत्यय का रूप होगा–
(क) लभित्वा (ख) लब्धवा (ग) लाभित्वा (घ) इनमें से कोई नहीं

14. 'पा' धातु में क्त्वा प्रत्यय का रूप होगा–
(क) पीतम् (ख) पीतः (ग) पीत्वा (घ) पातुम्

15. 'भू' धातू में तुमुन् प्रत्यय करने पर रूप होता है–
(क) भूतम् (ख) भवतुम् (ग) भवितुम् (घ) इनमें से कोई नहीं

16. 'धा' धातु में 'क्त्वा' प्रत्यय पर रूप होता है–
(क) धात्वा (ख) हित्वा (ग) धूत्वा (घ) धोत्वा

17. 'रुद्' धातु से 'ल्युट्' प्रत्यय करने पर रूप होता है–
(क) रुदनम् (ख) रोदनम् (ग) रोचनम् (घ) रोधनम्

18. 'पातुम्' पद में प्रकृति-प्रत्यय है–
(क) पा + क्तिन (ख) पा + तुमुन् (ग) पा + ल्युट् (घ) पा + क्त्वा

19. 'ज्ञा' धातु में 'क्त्वा' प्रत्यय लगाने पर रूप बनेगा–
(क) ज्ञातुम् (ख) ज्ञात्वा (ग) ज्ञातम् (घ) ज्ञेयम्

20. 'दा' धातु में 'तुमुन्' प्रत्यय लगने पर रूप होगा–
(क) ददत् (ख) दत्त्वा (ग) दातुम् (घ) देयात्

21. 'पा' धातु में 'तुमुन्' प्रत्यय लगने पर रुप होगा–
(क) पीतम् (ख) पीत्वा (ग) पानीयम् (घ) पातुम्

22. 'दा' धातु में 'ल्युट्' प्रत्यय करने पर रूप होगा–
(क) दातुम् (ख) दत्वा (ग) दानीयम् (घ) दानम्

■

8

वाच्य–परिवर्तन

वाच्य – जिससे यह पता चलता है कि वाक्य में कर्ता, कर्म, या भाव में किसकी प्रधानता है, उसे वाच्य कहते हैं।

वाच्य प्रकार – 1. कर्तृवाच्य, 2. कर्मवाच्य, 3. भाववाच्य।

1. कर्तृवाच्य – जिस वाक्य में कर्ता प्रधान होता है तथा क्रिया का प्रयोग कर्ता के अनुरूप पुरुष एवं वचन देखकर किया जाता है, उसे कर्तृवाच्य कहते है।

जैसे– नरः फलं खादति। इस वाक्य में फल खाने का कार्य 'नर' कर रहा है अतः 'नर' कर्ता है, अतः कर्ता 'नर' में प्रथमा विभक्ति होकर 'नरः' बना, पुनः कर्ता नरः के अनुसार प्रथम पुरुष, एकवचन की क्रिया 'खादति' हुई कर्म फल में 'द्वितीया' हुई।

रामः रामायणं पठति।
मोहनः ओदनं पचति।
अहं प्रयागं गच्छामि।

इन सभी वाक्यों में, पठति, पचति, गच्छामि, क्रियायें अपने-अपने कर्ताओं के अनुसार प्रयुक्त हैं। सभी वाक्यों में कर्ता की प्रधानता होने से कर्ता में प्रथमा, एवं क्रियाएँ कर्ताओं के अनुरूप पुरुष एवं वचन में प्रयुक्त हैं। सभी कर्मों में द्वितीया विभक्ति है।

नियम – कर्तृवाच्य में 'कर्ता' उक्त होता है, अतः उक्त कर्ता में 'प्रथमा' तथा 'कर्म' अनुक्त होता है अतः 'अनुक्त' कर्म में 'द्वितीया' विभक्ति होती है, तथा कर्ता के अनुसार उपयुक्त क्रिया का प्रयोग किया जाता है।

'रामः गृहं गच्छति' इस वाक्य में 'राम' कर्ता है जो कि उक्त है, उक्त 'कर्ता' होने पर कर्ता 'राम' में प्रथमा विभक्ति होकर रामः बनता है, तथा 'कर्म' अनुक्त है 'गृह' अतः 'कर्मणि द्वितीया' से अनुक्त कर्म में द्वितीया होकर रामः गृहं गच्छति। क्रिया का प्रयोग कर्ता के अनुसार होता है।

2. कर्मवाच्य – जिस वाक्य में कर्म की प्रधानता होती है उसे कर्मवाच्य कहते हैं। कर्मवाच्य के वाक्यों में क्रिया कर्म के अनुसार प्रयुक्त होती है।

नियम – कर्मवाच्य में कर्म के उक्त होने से कर्म में प्रथमा विभक्ति होती है, तथा कर्ता के अनुक्त होने से, 'अनुक्ते कर्तरि तृतीया' तृतीया विभक्ति होती है, तथा क्रिया सदैव प्रधान के अनुसार ही होती है, अतः कर्मवाच्य में कर्म की प्रधानता के कारण कर्म की अनुगामिनी क्रियाएँ होगी।

जैसे– रामेण रावणः हन्यते। इस वाक्य में 'कर्म' रावण है अतः कर्मवाच्य में 'कर्म' के उक्त होने से 'कर्म रावण' में प्रथमा विभक्ति होगी तथा 'कर्ता' राम अनुक्त होगा, अतः अनुक्त कर्ता में तृतीया विभक्ति होगी तथा क्रिया कर्म के अनुसार होगी। इसका कर्तृवाच्य में रूप होगा 'रामः रावणं हन्ति।'

अहं फलानि खादामि	मया फलानि खाद्यन्ते।
त्वं ग्रामं गच्छसि	त्वया ग्रामः गम्यते।
सीता पुस्तकं पठति	सीतया पुस्तकं पठ्यते।

इन वाक्यों में कर्मवाच्य में कर्ता में 'तृतीया' एवं 'कर्म' में प्रथमा होकर क्रियायें कर्म के अनुसार प्रयुक्त है।

कर्तृवाच्य से कर्मवाच्य बनाने के नियम–

कर्मवाच्य में कर्म की प्रधानता होती है अतः कर्म में प्रथमा विभक्ति ही होगी।

कर्मवाच्य में क्रिया सदैव आत्मनेपद में होती है।

कर्मवाच्य में कर्म के उक्त होने पर सदैव प्रथमा, एवं कर्ता के अनुक्त होने पर सदैव तृतीया विभक्ति होती है।

कर्मवाच्य की क्रिया बनाने के लिए सार्वधातुक लकारों (लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ्) में 'सार्वधातु + के यक्' से 'यक् प्रत्यय' अनुबन्ध लोप होने पर 'य' शेष रहता है, अतः 'य' जोड़कर क्रियापदों को बनाते हैं–जैसे– पठ् + य = पठ्य

पठ् + य + ते = पठ्यते	पठ्यताम्, अपठ्यत, पठ्येत
लिख् + य + ते = लिख्यते	लिख्यताम्, अलिख्यत, लिख्येत
चल् + य + ते = चल्यते	चल्यताम्, अचल्यत, चल्येत
गम् + य + ते = गम्यते	गम्यताम्, अगम्यत, गम्येत
कथ् + य + ते = कथ्यते	कथ्यताम्, अकथ्यत, कथ्येत

आकारान्त धातुओं (औपदेशिक या आतिदेशिक) में प्रायः आ को 'ई' होता है पा, दा, धा, मा, स्था, हा, घ्रा, गा, इत्यादि धातुओं को क्रमशः पी, दी, घी, मी, स्थी, ही, घ्री, गी, होकर पीयते, दीयते, घीयते, मीयते, स्थीयते, हीयते, घ्रीयते, गीयते, रूप बनते हैं।

यदि य, व, से प्रारम्भ होने वाली धातुएँ है तो उन्हें क्रमशः 'इ', और 'उ' होता है। सम्प्रसारण होकर यज् (इज्) वच् (उच्) वस् (उस्) इत्यादि किन्तु यह आनुमानिक नहीं प्रत्युत सूत्र के अनुसार जानें।

ह्रस्व 'इ' एवं 'उ' को दीर्घ कर देते हैं।

श्रु + य + ते = श्रूयते

स्तु + य + ते = स्तूयते

जि + य + ते = जीयते

क्षि + य + ते = क्षीयते

प्री + य + ते = प्रीयते

इत्यादि रूप बनते हैं।

कुछ समीचीन वाक्य–

रामेण फलं चीयते।
कृष्णेन शत्रुः जीयते।
मया पत्रं लिख्यते।
सीतया गीता पठ्यते।
रमया क्रीड़ा क्रियते।
साधुना तपः आचर्यते।
छात्रेण जलं पीयते।
मया ग्रन्थः लिख्यते।
छात्रेण पयः पीयते।
क्रीडकेन प्रहारः क्रियते।
पितामहेन पूजा क्रियते।
मात्रा सेतुसमुद्रं दृश्यते।

भाववाच्य – भाववाच्य अकर्मक धातुओं से ही बनाया जाता है। इसमें भी कर्ता में तृतीया होती है। भाववाच्य का कर्ता किसी भी लिङ्ग वचन का हो उसकी क्रिया में एकवचन ही होता है।

अकर्मकधातुओं को जाने–

लज्जा-सत्ता-स्थिति-जागरणंवृद्धि-क्षय-भय-जीवित-मरणम्
शयन-क्रीडा-रुचि-दीप्त्यर्थं धातुगणं तमकर्मकमाहुः।।

इन अर्थोंवाली धातुएँ अकर्मक हैं, इनसे सदैव भाववाच्य ही होगा।

जैसे–	मया हस्यते।	अस्माभिः शय्यते।
	मया दीप्यते।	भवद्भिः क्रीड्यते।
	त्वया लज्यते।	छात्राभ्यां रुच्यते।
	भवता भूयते।	सर्वैः वर्ध्यते।
	बालिकया भीयते।	संसारेण क्षीयते।

इत्यादि वाक्यों को जानें–

कर्तृवाच्य से भाववाच्य बनाना।
भाववाच्य में भी क्रियापद में आत्मनेपद होता है।
कर्ता में तृतीया एवं क्रिया सदैव एकवचन ही होती है।
भाववाच्य केवल अकर्मक क्रिया से ही कर्तृवाच्य से भाववाच्य में होगा।

कुछ विशेष नियम–

'गौणे कर्मणि दुह्यादेः प्रधाने नी-ह्व-कृष्-वहाम्।
बुद्धिभक्ष्यार्थयोः शब्दकर्मणां च निजेच्छया।।
प्रयोज्यकर्मण्यन्येषां ण्यन्तानां लादयो मताः।

अभी तक एक कर्म वाले वाक्यों का नियम देखा किन्तु द्विकर्मक धातु में कैसे करें, इस पर स्पष्टीकरण–दो कर्म होने पर गौण कर्म में 'दुहादि द्वादश' धातुओं के योग में गौण कर्म में ही लकार होकर प्रथमा होती है– जैसे– गुरुः छात्रं प्रश्नं प्रच्छति। यहाँ गौण कर्म छात्र है अतः इसमें ही लकार होकर प्रथमा होगी तो–

गुरुणा छात्रः प्रश्नं पृच्छ्यते, रामेण गौः पयः दुह्यते आदि।

नी, ह्व, कृष् तथा वह्, धातुओं के योग में प्रधान कर्म में प्रथमा होगी।

रामः ग्रामम् अजां नयति।	रामेण ग्रामम् अजा नीयते।
कृष्णः नगरं पुस्तकं हरति।	कृष्णेन नगरं पुस्तकं ह्रियते।

बुद्धि एवं भक्ष्यार्थक धातुओं के योग में तथा शब्दकर्मकों के योग में स्वेच्छा से गौण या मुख्य कर्म में प्रथमा कर सकते हैं।

यथा– गुरुः छात्रं धर्मं बोधयति।
गुरुणा छात्रं धर्मः बोध्यते।
गुरुणा छात्रः धर्मं बोध्यते।
दोनों वाक्य सही है।

णिजन्त द्विकर्मक धातुओं से कर्मवाच्य में प्रयोज्य कर्म में प्रथमा विभक्ति होती है।

गोविन्दः भृत्यं ग्रामं गमयति। गोविन्देन भृत्यः ग्रामं गम्यते।

यहाँ प्रयोज्य कर्म भृत्य उसमें प्रथमा हुई कर्मवाच्य में।

रामः बालकं रामायणं पाठयति। रामेण बालकः रामायणं पाठ्यते। प्रयोज्य कर्म 'बालक' उसमें प्रथमा।

वाच्य परिवर्तन के अन्य उदाहरण

सः पुस्तकं पठति।	तेन पुस्तकं पठ्यते।
अहं जलं पिबामि।	मया जलं पीयते।
अहं पुष्पं जिघ्रामि।	मया पुष्पं घ्रीयते।
अहं हसामि।	मया हस्यते।
रजकः गर्दभं ताडयति।	रजकेन गर्दभः ताड्यते।
सीता गीतां पठति।	सीतया गीता पठ्यते।
कविः काव्यं करोति।	कविना काव्यं क्रियते।
कृषकः जलं पिबति।	कृषकेण जलं पीयते।

सा गच्छति।	तया गम्यते।
त्वं पत्रं विलिखसि।	त्वया पत्रं विलिख्यते।
छात्रा गीतां पश्यति।	छात्रया गीता दृश्यते।
अहं त्वां पश्यामि।	मया त्वं दृश्यसे।
त्वं मां पश्यसि।	त्वया अहं दृश्ये।
सीता तं पश्यत।	सीतया सः दृश्यते।
गीता गानं करोति।	गीतया गानं क्रियते।
कोमलः पत्रं लिखति।	कोमलेन पत्रं लिख्यते।
सीता पुस्तकम् अपठत्।	सीतया पुस्तकम् अपठ्यत्।
रामः शेते।	रामेण शय्यते।
गोपालः गां पयः दोग्धि।	गोपालेन गौः पयः दुह्यते।
भिक्षुकः रामं भिक्षां याचते।	भिक्षुकेण रामः भिक्षां याच्यते।
शिक्षकः छात्रं अपाठयत्।	शिक्षकेण छात्रोऽपाठ्यत्।
मल्लः व्यायामं करोति।	मल्लेन व्यायामः क्रियते।
बालकः धावति।	बालकेन धाव्यते।
सिद्धार्थः रामायणं गायति।	सिद्धार्थेन रामायणं गीयते।
छात्राः हसन्ति।	छात्राभिः हस्यते।
छात्रः कीर्तनं करोति।	छात्रेण कीर्तनं क्रियते।
बालकः मोहनं पश्यति।	बालकेन मोहनः दृश्यते।
सीता माम् पश्यति।	सीतया अहं दृश्ये।
रामः त्वां पाठयति।	रामेण त्वं पाठ्यसे।
कृष्णः भगवन्तं पश्यति।	कृष्णेन भगवान् दृश्यते।
रामः भगवन्तं पूजयति।	रामेण भगवान् पूज्यते।
सः भवन्तं हसति।	तेन भवान् हस्यते।
गीता गंगास्नानं करोति।	गीतया गंगास्नानं कियते।
पाणिनिः अष्टाध्यायीं करोति।	पाणिनिना अष्टाध्यायी क्रियते।
पतञ्जलिः महाभाष्यम् अलिखत्।	पतञ्जलिना महाभाष्यम् अलिख्यत।
व्यासः महाभारतम् अकरोत्।	व्यासेन महाभारतम् अक्रियत।

अभ्यासकार्यम्

निम्नलिखित वाक्यों में वाच्य परिवर्तन करें–

1. रामः पत्रं पठति। .....।
2. अहं गृहं गच्छामि। .....।
3. सा हसति। .....।
4. मोहनः ग्रामं गच्छति। .....।
5. तेन दुग्धं पीयते। .....।
6. सिद्धार्थः चित्रपटं पश्यति। .....।
7. मात्रा ओदनः पच्यते। .....।
8. सः पुस्तकं नयति। .....।
9. बालकैः हस्यते। .....।
10. बालकः रामायणं पठति। .....।
11. छात्राः पुस्तकं पठन्ति। .....।
12. बालिका नृत्यं करोति। .....।
13. रामेण तीव्रं हस्यते। .....।
14. बालकेन गम्यते। .....।
15. अहं लिखामि। .....।

■